आकर-ग्रंथमाला—१

भिखारीदास

(प्रथम खंड)

संपादक

विश्वनाथप्रसाद मिश्र

नागरी प्रचारिणी सभा काशी

आकर-ग्रंथमाला—१

भिखारीदास

(ग्रंथावली)

प्रथम खंड

(रससारांश, शृंगारनिर्णय, छंदार्णव)

संपादक
विश्वनाथप्रसाद मिश्र

नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

माला का परिचय

नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी हीरक-जयंती के अवसर पर जिन भिन्न-भिन्न साहित्यिक अनुष्ठानों का श्रीगणेश करना निश्चित किया था उनमें से एक कार्य हिंदी के आकर-ग्रंथों के सुसंपादित संस्करणों की पुस्तकमाला प्रकाशित करना भी था। जयंतियों अथवा बड़े-बड़े आयोजनों पर एकमात्र उत्सव आदि न कर स्थायी महत्त्व के ऐसे रचनात्मक कार्य करना सभा की परंपरा रही है जिनसे भाषा और साहित्य की ठोस सेवा हो। इसी दृष्टि से सभा ने हीरक-जयंती के पूर्व एक योजना बनाकर विभिन्न राज्य सरकारों और केंद्रीय सरकार के पास भेजी थी। इस योजना में सभा की वर्तमान विभिन्न प्रवृत्तियों को संपुष्ट करने के अतिरिक्त कतिपय नवीन कार्यों की रूपरेखा देकर आर्थिक संरक्षण के लिए सरकारों से आग्रह किया गया था जिनमें से केंद्रीय सरकार ने हिंदी-शब्दसागर के संशोधन-परिवर्धन तथा आकर - ग्रंथों की एक माला के प्रकाशन में विशेष रुचि दिखलाई और ६-३-५४ को सभा की हीरक-जयंती का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रपति देशरत्न डा० राजेंद्रप्रसाद जी ने घोषित किया—'मैं आपके निश्चयों का, विशेषकर इन दो (शब्दसागर-संशोधन तथा आकर-ग्रंथमाला) का स्वागत करता हूँ। भारत सरकार की ओर से शब्द-सागर का नया संस्करण तैयार करने के सहायतार्थ एक लाख रुपए की सहायता, जो पाँच वर्षों में, बीस-बीस हजार करके दिए जायँगे, देने का निश्चय हुआ है। इसी तरह से मौलिक प्राचीन ग्रंथों के प्रकाशन के लिए पचीस हजार रुपए भी, पाँच वर्षों में पाँच-पाँच हजार करके, सहायता दी जायगी। मैं आशा करता हूँ कि इस सहायता से आपका काम कुछ सुगम हो जायगा और आप इस काम में अग्रसर होंगे।'

केंद्रीय शिक्षामंत्रालय ने ११-५-५४ को एफ ४-३-५४ एच ४ संख्यक एतत्संबंधी राजाज्ञा निकाली। राजाज्ञा की शर्तों के अनुसार

इस माला के लिए संपादक-मंडल का संघटन तथा इसमेँ प्रकाश्य एक सौ उत्तमोत्तम ग्रंथोँ का निर्धारण कर लिया गया है। संपादक-मंडल तथा ग्रंथ-सूची की संपुष्टि भी केंद्रीय शिक्षामंत्रालय ने कर दी है। ज्योँ-ज्योँ ग्रंथ तैयार होते चलेँगे, इस माला मेँ प्रकाशित होते रहेँगे। हिंदी के प्राचीन साहित्य को इस प्रकार उच्च स्तर के विद्यार्थियोँ, शोधकर्ताओँ तथा इतर अध्येताओँ के लिए सुलभ करके केंद्रीय सरकार ने जो स्तुत्य कार्य किया है उसके लिए वह धन्यवादार्ह है।

———

संपादन-सामग्री

शिवसिंहसरोज में *भिखारीदास* (*दास*) के पाँच ग्रंथों का उल्लेख है—*छंदार्णव*, *रससारांश*, *काव्यनिर्णय*, *शृंगारनिर्णय* और *बागबहार*। *मिश्रबंधु-विनोद* में *बागबहार* के संबंध में लिखा है—"वे (प्रतापगढ़ के राजा प्रतापबहादुर सिंह) कहते हैं कि *बागबहार* नामक कोई ग्रंथ *दासजी* ने नहीं बनाया। उनका मत है कि शायद लोग *नामप्रकाश* को *बागबहार* कहते हों। हमने भी *बागबहार* कहीं नहीं देखा और जान पड़ता है कि राजा साहब का अनुमान यथार्थ है—(प्रथम संस्करण)।"

प्रतापगढ़ के राजाओं की प्रशिस्त में लिखी गई *प्रतापसोमवंशावली* में सात ग्रंथों का नाम लिया गया है—

प्रथम काव्यनिर्नय **को जानो। पुनि** सिँगारनिर्नय **तहँ मानो ॥**
छंदोर्नव **अरु** विष्णुपुराना। रससारांस **ग्रंथ जग जाना ॥**
अमरकोस **अरु** सतरँजसतिका **। रच्यो लहन हित मोद सुमतिका ॥**
नृपति अजीतसिंह खुजवाई। संचित कियो अमित सुख पाई ॥

खोज (काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा संचालित) की खोज यह है—

१—*अमरतिलक* (२६-३१ ए, बी)
२—*अमरकोश-नामप्रकाश* (४७-२६१ क)
३—*अलंकार* (४७-२६१ ख)
४—*काव्यनिर्णय* (०३-६१; २०-१७ ए, बी; पं २२-२२; २३-५५ डी, ई; २६-६१ ई, एफ, जी, एच, आई, ओ; ४७-२६१ ग)
५—*छंदप्रकाश* (०३-३२)
६—*छंदार्णव* (०३-३१; २०-१७ सी; २३-५५ ए, बी, सी; २६-६१ सी, डी; ४७-२६१·घ)
७—*मात्रा-प्रस्तार वर्णमर्कटी* (४७-२६१ ङ)
८—*रससारांश* (०४-२१; २३-५५ एफ, जी; २६-६१ जे, के, पी; ४७-२६१ च, छ, ज)

९—*विष्णुपुराण* (०९-२७ बी; २६-६१ क्यू, आर; ४७-२६१ झ)
१०—*शतरंजशतिका* (०९-२७ ए; ४७-२६१ ञ)
११—*शृंगारनिर्णय* (०३-४६; २३-५५ एच, आई; २६-६१ एल, एम, एन)

खोज (४७-२६१ झ) में साहित्यान्वेषक ने *विष्णुपुराण* की सूचना का उद्धरण यों दिया है—

"श्री राजा अजीतसिंह नगर प्रतापगढ़ाधीश ने प्रकृत अनेक निबंध बहुद्योग से एकत्र संचय किए हैं। इन निबंधों का उत्पादक नगर प्रतापगढ़ के ईशान दिक् सीमा समीप ट्योंगा ग्रामनिवासी कायस्थकुलभूषण महाकवि असीमोपमाश्रय उक्त नगर राज्याधिकारी श्री राजा अजीतसिंह के सापिंड्य महाराज हिंदूपति जिनको अद्य समय शताधिक १५९ उनसठि वर्ष व्यतीत भए हैं......तदाज्ञावलंबी......भिखारीदास हैं। यह निबंध अत्युत्तम है......। जैसा वज्रमणि चक्रभ्रमि के आरोपण से उत्कृष्ट आभा को प्राप्त होवै......पुनः यह भाषानिबंध मुद्रित होकर प्रचलित होने के पूर्व......राजा अजीतसिंह बैकुंठपदारूढ़ हो गए... इनकी इच्छा पूर्ण होने के हेतु से......तदात्मज श्री राजा प्रतापबहादुर सिंह ने इस निबंध को मुंशी नवलकिशोर साहब (सी० आई० ई०) के यंत्रालय में मुद्रित कराए हैं ......किंच रससारांश, शृंगारनिर्णय, काव्यनिर्णय इन निबंधों का नगर गढ़ाधिष्ठित यंत्रालय गुलशन अहमदी नामक......मुंशी अहमद हुसेन साहब डिप्टी इंस्पेक्टर मदारिस नगर निवासी स्थापित में आरोपित करवा के किले प्रतापगढ़ के सरस्वती भंडार में स्थिर किए हैं......कवि पंडित......रसिकजनों के विनोदार्थ राजा साहब हर्षपूर्वक प्रेषित करत हैं......पुनः भिखारीदास रचित अमरकोश, शतरंजशतिका भाषाशिरोमणि निबंधद्वय आरोपण कराने का विचार है।......यह सूचना अग्रिम के हेतु लघु से निश्चित कर दी गई है।"

इसमें आए *भाषाशिरोमणि निबंधद्वय* को, जो वस्तुतः *अमरकोश* और *शतरंजशतिका* के विशेषणमात्र हैं, एक साहित्यान्वेषक ने दो स्वतंत्र ग्रंथ समझ लिया। *निबंध* शब्द का व्यवहार किसी कृति के लिए परंपरा में रूढ़ है। *तुलसीदास* का *मानस* भी निबंध ही है—'भाषा*निबंध*मतिमंजुलमातनोति'। इसलिये ये कोई नए ग्रंथ नहीं।

ग्रंथोँ का विस्तृत विचार नीचे किया जाता है—

बागबहार

इस ग्रंथ का नाम श्रीशिवसिंह सेंगर ने अपने *सरोज* मेँ दिया है। अन्यत्र इसका किसी ने उल्लेख नहीँ किया। श्रीसेंगर को *दास* के आश्रयदाता के 'हिंदूपति' नाम के कारण यह भी भ्रम हो गया है कि *भिखारीदास* बुंदेलखंडी थे। हिंदूपति नाम के एक राजा पन्ना मेँ हुए हैँ। इन्हीँ के भाई श्री खेतसिंह के दरबार मेँ बोधा कवि (रीतिमुक्त) थे। ये प्रसिद्ध वीर छत्रसाल के प्रपौत्र थे। *बागबहार* के संबंध मेँ भी इसी प्रकार के भ्रम की संभावना है। किसी अन्य *दास* कवि का यह ग्रंथ *भिखारीदास* के नाम पर चढ़ गया होगा। *शिवसिंहसरोज* मेँ दीनदयाल गिरि के नाम पर भी एक *बागबहार* दिया है। कहीँ दीन-दास का घालमेल हो जाने से एक ग्रंथ दो स्थानोँ पर तो नहीँ चढ़ गया। यह कहना कि *नामप्रकाश* या *अमरकोश* का ही नाम *बागबहार* है समझ मेँ नहीँ आता। *बागबहार* का अर्थ नामकोश किसी प्रकार नहीँ निकलता। इसलिए यह निर्णय भी ठीक नहीँ जान पड़ता। उस ग्रंथ (*नामप्रकाश*) मेँ *बागबहार* नाम का उल्लेख कहीँ नहीँ है। इस प्रकार न तो यह भिखारीदास की कृति है और न यह उनके *नामप्रकाश* का पर्याय नाम है।

विष्णुपुराण

यह संस्कृत *विष्णुपुराण* का भाषानुवाद है। इसका आरंभिक अंश योँ है—

(छप्पै)

जो इंद्रिन को ईस बिस्वभावन जगदीस्वर।
जो प्रधान बुध्यादि सकल जग को प्रपंचकर।
परम पुरुष पूरबज सृष्टि थिति लय को कारन।
बिस्नु पुंडरीकाक्ष मुक्तिप्रद भुक्तिसुधारन।
जेहि दास ब्रह्म अक्षर कहिय, जो गुन-उदधि-तरंगमय।
तेहि सुमिरि सुमिरि पायन परिय करिय जयति जय जयति जय॥

(दोहा)

बिनय बिस्नु ब्रह्मादि पुनि गुरुचरनन सिर नाइ।
बातैँ बिस्नुपुरान की भाषा कहौँ बनाइ॥ १॥
पुनि अध्यायनि सोरठा किय छप्पै प्रति अंस।
आठ आठ तुक चौपई अनियम छंद प्रसंस॥ २॥

अंत मैँ यह है—

यह सब तुष्टुप छंद मैँ दस सहस्र परिमान।
दास संस्कृत तेँ कियो भाषा परम ललाम॥

इसमैँ निर्माणकाल का उल्लेख नहीँ है। मिश्रबंधुओँ का अनुमान है कि शिथिल रचना के कारण यह *दास* की पहली कृति जान पड़ती है। *अमरकोश* का अनुवाद १७९५ मैँ किया गया है। इसके पूर्व १७९१ मैँ वे *रससारांश* लिख चुके थे। इसलिए यह कल्पना सत्य नहीँ जान पड़ती। *नामप्रकाश* के भाषानुवाद के साथ *विष्णुपुराण* के भाषानुवाद का कार्य भी छेड़ा गया हो यह संभावना की जा सकती है।

नामप्रकाश

यह संस्कृत *अमरकोश* का भाषानुवाद है। इसका आरंभिक अंश यौँ है—

आदि गुरु लायक बिनायक-चरनरज
अंजन सौँ रंजित सुमति दृष्टि करिकै।
देखिकै अमरकोस तिलक अनेकनि सौँ
बूझिकै बुधन जो सकत सेष-सरि कै।
संसकृत नामनि के अर्थ निज जानि जानि
औरो नाम आनि भाषाग्रंथन सौँ हरिकै।
वाही क्रम सबके समझिबे के कारन
प्रकासो दास भाषाजोग छंदबृंद भरिकै॥ १॥

(दोहा)

सुगम ठानिबो संसकृत बिद्याबल नहिँ नेक।
पाहन-सुतिय-करन-चरन-सरन भरोसो एक॥ २॥
ज्योँ अहिमुख बिष सीपमुख मुक्त स्वातिजल होइ।
बिगरत कुमुख सुमुख बनत त्योँ ही अक्षर सोइ॥ ३॥
देखि न मानव दोष कहुँ स्वर को फेर तुकंत।
सब्द असुद्धो होइ तौ सोधि लीजियो संत॥ ४॥

अनुक्रमनी (दोहा)

स जु सु भिन्न वो स्वर मिलित सब्दांतन मो दीन्ह।
कहूँ ब्यक्ति संजोगियौ कहूँ दीर्घ लघु कीन्ह॥ ५॥

(कुंडलिया)

नाम न लेखहु प्राहि कहि गहि लहि पुनि सुनि और।
जानि मानि पहिचानि गुनि आनि ठानि सब ठौर।
ठौर देखि अवरेखि लेखि सु बिसेषि धीर धरि।
ठीक अलीक उताल हाल बिख्यात ताकु करि।
टेर राखि अभिलाषि आसु बद बाद सही भनि।
सहित जुक्ति जुत उक्ति छंद पूर्‌यो इन नामनि ॥ ६ ॥

(दोहा)

य ज रि ऋ स श ष ख छ क्ष न ण ग्य ज्ञ ङ ग ठान्यो एक।
भाषावर्नन बूझिकै कियो न बर्नबिबेक ॥ ७ ॥
एकै सब्द कि दोइ त्रय यह भ्रम उपजत देखि।
नामन की संख्या धरी लीजै सुमति सरेखि ॥ ८ ॥
सत्रह सै पंचानबे अगहन को सित पक्ष।
तेरसि मंगल को भयो नामप्रकाश प्रत्यक्ष ॥ ९ ॥

(छप्पय)

स्वर्ग ब्योम दिग काल बुद्धि सब्दादि नाट्य लहि।
पातालो अरु नरक चारि दस प्रथम कांड कहि।
भू पुर सैल बनौषधी 'रु सिंहादि त्रीय पुनि।
ब्रह्म क्षत्रियो बैस्य सूद्र दस दु तृतीय सुनि।
सचि सेष निघ्न संकीरनो अनेकार्थ त्रय बर्ग लिय।
तजि सासन भाषाजोग लखि पूरन नामप्रकास किय ॥ १० ॥

इसकी पुष्पिका यों है—

इति श्रीभिखारीदासकृते सोमवंशावतंसश्री १०८ महाराजछत्रधारी-सिंहात्मजश्रीबाबूहिंदूपतिसंमते अमरतिलके नामप्रकाशे तृतीयकांडे **अनेकार्थवर्गसंपूर्णम्।**

इससे स्पष्ट है कि इसका नाम *नामप्रकाश* ही है। *अमरतिलक* उसका विशेषण है। यह *अमरकोश* का तिलक है। एक भाषा से दूसरी भाषा में करने को भी *तिलक* शब्द से व्यक्त करते थे। *बिहारीसतसैया* के भाषांतर को भी *तिलक* कहा गया है। यह केवल *अमरकोश* का भाषा तिलक भर नहीं है। 'औरौ नाम आनि भाषाग्रंथन सौं हरिकै' से पता चलता है कि मुंशीजी ने हिंदी के शब्द भी जहाँ तहाँ जोड़े हैं। जैसे—

सोंठि के नाम

(दोहा)

बिस्व बिस्वभेषज अपर सुंठी नागर जानि ।
नाम महौषध पाँच है भाषा सोंठि बखानि ॥

संवत् १७९५ मैं नामप्रकाश पूर्ण हुआ ।

शतरंजशतिका

यह शतरंज के खेल पर लिखी पुस्तक है। इसके आरंभ मैं यह गणेश-स्तुति है—

राजन्ह श्रीप्रद मंत्रिन्ह मंत्रद सूर सुबुध्यनि कौं जु सहायक ।
उंदुर-अस्व अरूढ़ ह्वै प्यादह्रू दौरिकै दास मनोरथदायक ।
चौसठि चारु कलानि को लाभु बिसातिन बूझिये बंदि बिनायक ।
सिंधुर आनन संकटभानन ध्यान सदा सतरंजन्ह लायक ॥१॥

फिर परमपुरुष की वंदना यौं है—

(दोहा)

परम पुरुष के पाय परि, पाय सुमति सानंद ।
दास रचै सतरंज की, सतिका आनँदकंद ॥ २ ॥

इसके अनंतर ग्रंथ का आरंभ हो जाता है। *खोज* मैं जिस *शतरंजशतिका* का विवरण दिया गया है वह केवल ५ पन्ने की पुस्तक है। उसका परिमाण १३० श्लोक है। ग्रंथ की पुष्पिका यौं है—

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते सतरंजसतिका संपूर्णम्। शुभमस्तु । श्रीराधाकृष्णाय ।

इस प्रति की पूरी प्रतिलिपि मेरे पास है। ४९ छंदौं के अनंतर एक अध्याय समाप्त होता है जिसकी पुष्पिका इस प्रकार है—

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते सतरंजसतिकायां मंगलाचरणवर्णनो नाम प्रथमोध्यायः ॥ १ ॥

इसके अनंतर जो दूसरा अध्याय चला वह १० छंदौं के अनंतर ही एकाएक समाप्त हो गया और 'लिखक' ने 'संपूर्णम्' लिख दिया। इस प्रकार इस प्रति मैं ५९ छंद हैं। इसलिए यदि 'शतिका' का अर्थ 'सौ छंद' हो तो अभी कम से कम ४० छंदौं की कमी रह जाती है।

*भिखारीदास*जी की ग्रंथावली का संपादन करने के बीच श्रीउदयशंकर शास्त्री ने *शतरंजशतिका* की एक खंडित प्रति मेरे पास देखने को भेजी।

यह बीच बीच मेँ खंडित है। पर पूर्ण फिर भी नहीँ हुई है। प्रथम अध्याय के पाँचवे छंद का अंतिम अंश इसके आरंभ मेँ है। प्रथम अध्याय पूर्वोक्त प्रति से मिलता है। इसमेँ प्रथम अध्याय की पुष्पिका योँ है—

इति श्रीसतरंजसतिकायां ग्रंथारंभवर्णनं नाम प्रथमोध्यायः।

इसके अनतंर दूसरा अध्याय आरंभ होता है। इसके नवेँ छंद के आधे पर ही पहली प्रति समाप्त कर दी गई है। इसमेँ इस अध्याय के केवल ३२॥ छंद मिलते हैँ। इसके बाद प्रति खंडित है। इसलिए यह नहीँ कहा जा सकता कि दूसरे अध्याय मेँ ठीक-ठीक कितने छंद हैँ। तीसरे अध्याय का आरंभ नहीँ है पर अंत १३ छंदोँ पर होता है।

इसकी पुष्पिका योँ है—

इति श्रीसतरंजसतिकायां संकटबिजयसाधारणबर्णनं नाम सप्त-बिधाने तृतीय अध्यायः॥ ३॥

फिर प्रति खंडित है पर चतुर्थ अध्याय की पुष्पिका का अंश मिल जाता है—

इति सतरंजसतिकायां संकटबिजयरथार्पित द्वादसबिधानबर्णनं नाम चतुर्थो अध्यायः॥ ४॥

चौथा अध्याय १६ छंदोँ का है। पाँचवेँ, छठे, सातवेँ अध्यायोँ की पुष्पिका खंडित होने से नहीँ है। पर आठवेँ अध्याय की पुष्पिका योँ मिलती है—

इति श्रीसतरंजसतिकायां सामर्थिखंडित एकादसप्रकारबर्ननं नाम अष्टमो अध्यायः॥ ८॥

इसमेँ १७ छंद हैँ। नवेँ अध्याय के छंद ६ तक प्रति है। यदि इस खंडित प्रति मेँ ५,६,७ अध्यायोँ की कोई छंदसंख्या न मानी जाय तो भी १३५॥ छंद हो जाते हैँ। इसलिए स्पष्ट है कि 'शतिका' का अर्थ 'सौ छंद' कथमपि नहीँ है। चार पाँच सौ छंद से कम का कोई ग्रंथ *दास* का नहीँ है। अनुमान से यह ग्रंथ भी बड़ा होगा। मेरी धारणा है कि शतरंज पर *दास* का यह ग्रंथ सौ छोटे बड़े अध्यायोँ मेँ रहा होगा। 'शतिका' का अर्थ सौ अध्यायोँ की पुस्तक ही जान पड़ता है।

इस पुस्तक मेँ जैसी बारीकी मुंशीजी ने दिखाई है उससे यह भी अनुमान होता है कि इस विद्या की कोई पोथी उन्होँने फारसी या संस्कृत मेँ देखी होगी उसी के आधार पर इसका निर्माण किया होगा। अपने

अनुभव की बातें भी रखी होंगी। इसलिए इसका निर्माणकाल भी *विष्णुपुराण* और *नामप्रकाश* के आसपास माना जाना चाहिए।

नामप्रकाश, *विष्णुपुराण* और *शतरंजशतिका* का संग्रह प्रस्तुत *भिखारीदास-ग्रंथावली* में नहीं किया गया। प्रथम दो तो अनुवाद मात्र हैं। तीसरी यदि अनुवाद न भी हो तो उसका साहित्यिक महत्त्व नहीं। फिर भी उसे प्रकाशित किया जा सकता था यदि कोई पूरा हस्तलेख मिल जाता। इसलिए केवल चार साहित्यिक ग्रंथों का ही संनिवेश इस ग्रंथावली में किया गया है। *आकर-ग्रंथमाला* के परामर्शमंडल के निश्चयानुसार एक खंड को लगभग ३०० पृष्ठों का होना चाहिए। इसलिए प्रथम खंड में सुभीते के विचार से *रससारांश*, *शृंगारनिर्णय* और *छंदार्णव* रखे गए हैं और दूसरे खंड में *काव्यनिर्णय*। कालक्रम से *रससारांश*, *छंदार्णव*, *काव्यनिर्णय* और *शृंगारनिर्णय* यों होना चाहिए। *रससारांश* के अनंतर *शृंगारनिर्णय* रखना अच्छा लगा, फिर *छंदार्णव*। ये ग्रंथ जिस क्रम से ग्रंथावली में रखे गए हैं उसी क्रम से इनकी संपादन-सामग्री का विस्तृत विचार किया जाता है।

रससारांश

खोज में इसकी आठ प्रतियों का पता चला है—

१—पूर्ण, लिपिकाल सं० १८४३; प्राप्तिस्थान—काशिराज का पुस्तकालय (०४-२१)।

२—पूर्ण, लिपिकाल सं० १६४२; प्राप्ति०—श्रीविपिनबिहारी मिश्र, ब्रजराज पुस्तकालय, गंधौली, सिधौली, सीतापुर (२३-५५ एफ)।

३—पूर्ण, लिपिकाल अनुल्लिखित; प्राप्ति०—ठाकुर महावीरबक्स सिंह तालुकेदार, कोठारा कलाँ, सुलतानपुर (२३-५५ जी)।

४—खंडित (आदि के २४ पन्ने नहीं हैं) लिपि०-सं० १६११; प्राप्ति०—श्रीभागीरथीप्रसाद, उसका, प्रतापगढ़ (२६-६१ जे)।

इस प्रति के लेखक भीख कविराय हैं—

> ग्रंथ रसनि को सार यह, दास रच्यो हरषाइ।
> सो बाबू सलतंत कहँ लिख्यो भीख कबिराइ ॥

५—पूर्ण, लिपि० -सं० १६१६; प्राप्ति०—महाराजा लाइब्रेरी, प्रतापगढ़ (२६-६१ के)।

६—पूर्ण, लिपि०–सं० १८७६; प्राप्ति०–श्री लालताप्रसाद पांडेय, सदहा, रेंडी गारापुर, प्रतापगढ़ (४७-२६१ च)।
७—पूर्ण, मुद्रित (लीथो) सं० १८६१ वि०; गुलशन अहमदी प्रेस मेँ छपी (४७-२६१ छ)।
८—पूर्ण, लिपि०–१६१० वि०; प्राप्ति०–श्रीचक्रपाल त्रिपाठी, राजातारा, लालगंज, प्रतापगढ़ (४७-२६१ ज)।

इस विवरण से स्पष्ट है कि सबसे प्राचीन लिपिकाल की पुस्तक संख्या १ (०४-२१) है। तदनंतर संख्या ६ सबसे प्राचीन दूसरी प्रति सं० १८७६ लिपिकाल की है (४७-२६१ च)। यह उसी शाखा की है जिसकी पहली सं० १८४३ वाली। क्रम मेँ तीसरी प्राचीन प्रति खोजविभाग की सूचना के अनुसार सातवीँ संख्यावाली है। पर इसमेँ साहित्यान्वेषक को भ्रम हो गया है। गुलशन अहमदी प्रेस प्रतापगढ़ मेँ जो प्रति छपी वह सन् १८६१ ई० मेँ लीथो मेँ छपी थी अर्थात् संवत् १६४८ मेँ। इस प्रकार वह सबसे बाद की ठहरती है। इसमेँ स्पष्ट उल्लेख है कि यह सं० १६३३ के हस्तलेख के आधार पर है। इसके अंत मेँ छपा है—

हस्ताक्षर पंडित शंकरदत्त तिवारी साकिन मौजे खखई। पंडित कबि सन बिन्ती मोरि। टूट अक्षर बाँचब जोरि। श्रीसंबत १६३३ आषाढ़पद मासे शुक्लपक्षे १० तिथौ शनिवासरे प्रातःकाल समये समाप्तमिदम्।

इसके नीचे लीथो लिखनेवाले का उल्लेख है—

हस्ताक्षर खैरातअली मास्टर जिला स्कूल प्रतापगढ़, २५।४।६१

इस प्रकार मुद्रण से यह सबसे पीछे की और लिपिकाल से व्रजराज पुस्तकालयवाली प्रति से पूर्व है।

सं० १६१० वाली प्रति प्रथम संख्या (सं० १८४३ वाली प्रति) की ही परंपरा की है। सं० १६११ वाली *भीखं कविराय* की लिखी प्रति *नागरी-प्रचारिणी सभा* के पुस्तकालय मेँ सुरक्षित है। इसकी शाखा प्रथम संख्या की प्रति और लीथोवाली दोनोँ से भिन्न है।

सं० १६१६ वाली प्रति के जो उद्धरण दिए गए हैँ उनसे यह निर्णय करना कठिन है कि यह किस शाखा की है। पर अनुमान है कि यह भी प्रथम शाखा की ही प्रति होगी। सं० १६४२ वाली व्रजराज पुस्तकालय की प्रति प्रथम शाखा की ही है। ठाकुर महेश्वरबक्स वाली अज्ञात लिपिकाल

की प्रति की शाखा भी वही है। प्रस्तुत ग्रंथावली के *रससारांश* के संपादन के लिए सभी ग्रंथस्वामियों को प्रति या प्रतिलिपि भेजने का अनुग्रह करने के लिए पत्र दिए गए। पर प्रति या प्रतिलिपि भेजना तो दूर रहा किसी ने उत्तर तक नहीं दिया। इसी लिए इस ग्रंथ का संपादन निम्नलिखित चार प्रतियों के आधार पर करना पड़ा—

काशि०—काशिराज के पुस्तकालय की प्रति, लिपिकाल सं० १८४३ (खोज—०४–२१)।

सर०—सरस्वतीभंडार, काशीराज की प्रति, लिपिकाल, सं० १८७१ के आस-पास।

सभा—नागरीप्रचारिणी सभा की प्रति, लिपिकाल सं० १६११ (भीख कविरायवाली खंडित प्रति) (खोज—२६-६१ जे)।

लीथो—लीथो में गुलशन अहमदी प्रेस, प्रतापगढ़ में सं० १६३३ के हस्तलेख से सं० १६४८ (सन् १८६१ ई०) में मुद्रित (खोज—४७-२६१६)।

यों तो चारो प्रतियों का पाठ यथास्थान भिन्न हो जाता है पर लीथो का पाठ आरंभ की तीन प्रतियों से बहुधा भिन्न है। लीथोवाली प्रति में बहुत सी अशुद्धियाँ तो मुद्रण की हो गई हैं। सर० नामक प्रति के संबंध में यह जान लेना आवश्यक है कि *भिखारीदास* के चारो साहित्यिक ग्रंथ इसमें एक ही जिल्द में संगृहीत हैं। एक ही समय के लिखकों के लिखे हुए हैं। *काव्यनिर्णय* के अंत में लिपिकाल सं० १८७१ दिया गया है। अन्यत्र लिपिकाल का उल्लेख नहीं है। इसी जिल्द में *छंदार्णव* के अंत में *छंदप्रकाश* भी दिया है जो *छंदार्णव* के छंदों का केवल प्रस्तार बतलाता है।

शृंगारनिर्णय

खोज को इसकी केवल छह प्रतियों का पता है—

१—पूर्ण, लिपिकाल, अनुल्लिखित; प्राप्ति०—काशिराज का पुस्तकालय (खोज, ०३–४६)।

२—खंडित, लिपिकाल १६३६; प्राप्ति०—व्रजराज पुस्तकालय, सीतापुर (खोज, २३–५५ एच)।

३—पूर्ण, लिपि० अनुल्लिखित; प्राप्ति०—श्री भैया संतबक्स सिंह, गुठवारा, बहराइच (खोज, २३–५५ आई)।

४—पूर्ण, लिपि० १८६७; प्राप्ति०—महाराजा लाइब्रेरी, प्रतापगढ़ (खोज, २६–६१ एल)।

५—पूर्ण, लिपि० १६४७ वि०; प्राप्ति०—श्रीकृष्णविहारीजी मिश्र, माडेल हाउस, लखनऊ (खोज, २६–६१ एम)।

६—पूर्ण, लिपि० अनुल्लिखित; प्राप्ति०—श्रीरामबहादुर सिंह, बढ़वा, प्रतापगढ़ (२६–६१ एन)।

इनमें प्रथम वही है जो काशिराज के पुस्तकालय में सुरक्षित है। इसमें *भिखारीदास* के सभी साहित्यिक ग्रंथ एक ही समय के एक ही जिल्द में हैं। *शृंगारनिर्णय* में लिपिकाल अनुल्लिखित है, पर *काव्यनिर्णय* में १८७१ दिया गया है। अतः इसका लेखन १८७१ के पहले हुआ होगा। *शृंगारनिर्णय* के अनंतर *काव्यनिर्णय* की प्रतिलिपि की गई है इसलिए इसमें सबसे पहले *रससारांश* है (४८ पन्ना), फिर *शृंगारनिर्णय* (४६ पन्ना), फिर *काव्यनिर्णय* (१७१ पन्ना), फिर *छंदार्णव* (६७ पन्ना) अंत में *छंदप्रकाश* (५ पन्ना)। इसलिए *रससारांश* और *शृंगारनिर्णय* सं० १८७१ के पूर्व या उसी वर्ष और *छंदार्णव* सं० १८७१ या उस वर्ष के अनंतर १८७२ में लिखा गया होगा। इस प्रकार *रससारांश* के सभी ज्ञात हस्तलेखों से यह प्राचीनतम है। संख्या दो की खंडित प्रति और संख्या ४ की १८६७ वाली प्रति इससे बहुत कुछ मिलती है। संख्या ५ का १६४७ वाला हस्तलेख संख्या ४ से मिलता है। इसलिए यह भी उसी परंपरा का है। संख्या ३ की प्रति, जिसका लिपिकाल अज्ञात है, भारतजीवन प्रेस के छपे संस्करण (सं० १६५६ के आस-पास मुद्रित) से मिलती है। संख्या ६ के उद्धरण खोज में छापे नहीं गए हैं। पर लिखा है कि यह प्रति संख्या ४ वाले हस्तलेख से मिलती है। संवत् १६३३ के हस्तलेख के आधार पर प्रतापगढ़ के गुलशन अहमदी प्रेस से लीथो में सं० १६४८ (सन् १८६१) में मुद्रित संस्करण के पाठों की शाखा दोनों से बहुधा भिन्न है। इसके लिए तीन प्रतियाँ आधार रखी गई हैं—

सर०—सरस्वतीभंडार (काशीराज) का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८७१ के पूर्व

लीथो—गुलशन अहमदी प्रेस, प्रतापगढ़ से सन् १८६१ में मुद्रित।

भार०—भारतजीवन प्रेस में सं० १६५६ के लगभग मुद्रित प्रति।

छंदार्णव

खोज से *छंदार्णव* की आठ प्रतियों का पता लगता है—

१—पूर्ण, लिपिकाल सं० १८७१ के अनंतर; प्राप्ति०—काशिराज का पुस्तकालय। (खोज, ३-३१)।

२—अपूर्ण, लिपि० अज्ञात, प्राप्ति०—श्री बैजनाथ हलवाई, असनी, फतेहपुर (खोज, २०-१७ सी)।

३—पूर्ण, लिपि० सं० १६०४; प्राप्ति०—महाराज भगवानबक्स सिंह, अमेठी, सुलतानपुर (खोज, २३-५५ ए)। *

४—पूर्ण, लिपि० अज्ञात; प्राप्ति०—बाबूपद्मबक्स सिंह तालुकेदार, लबेदपुर, बहराइच (खोज, २३-५५ बी)।

५—पूर्ण, लिपि०— × ; प्राप्ति०—ठाकुर नौनिहालसिंह सेंगर, काँठा, उन्नाव (खोज, २३-५५ सी)।

६—पूर्ण, लिपि० सं० १८८१; प्राप्ति—श्री यज्ञदत्तलाल कायस्थ, नौबस्त, दातागंज, प्रतापगढ़ (खोज, २६-६१ सी)।

७—पूर्ण, लिपि० सं० १६४२; प्राप्ति०—श्री लक्ष्मीकांत तिवारी रईस, बसुआपुर, लक्ष्मीकांतगंज, प्रतापगढ़ (खोज, २६-६१ डी)।

८—पूर्ण, लिपि० सं० १६०६; प्राप्ति०—श्री आद्याशंकर त्रिपाठी, रुधौली, सखतहा, जौनपुर (खोज, ४७-२६१ घ)।

इनमें प्रथम वही है जो महाराज बनारस के सरस्वतीभंडार पुस्तकालय में *भिखारीदास* की साहित्यिक ग्रंथावली के हस्तलेखोंवाली जिल्द में सुरक्षित है। संख्या ५ वाली प्रति के अतिरिक्त शेष सभी हस्तलेख इसी से मिलते हैं। यह हस्तलेख प्राचीनतम है।

छंदार्णव के संपादन में इसका उपयोग किया गया है। इसका नाम *सर०* है। इसके अतिरिक्त *छंदार्णव* पहले लीथो पर छपा था। प्रतापगढ़ से *भिखारीदास* के सभी ग्रंथ *शतरंजशतिका* को छोड़कर लीथो में छपे हैं। पर *छंदार्णव* की प्रतापगढ़वाली लीथो की प्रति प्रयत्न करने पर भी प्राप्त न हो सकी। लीथो की दूसरी प्रति काशी के किसी छापेखाने से छपी थी। इस प्रति का संपादन में उपयोग किया गया है। यह प्रति अनुमान से सं० १६२३ के लगभग छपी होगी। इस प्रति के अंत में इसके शोधन-कर्ता का उल्लेख यों है—

घने दिनन को ग्रंथ यह बिगरयो हतो बनाइ।
ताहि सुधारयो सुद्ध करि दुर्गादत्त चित लाइ॥

---

* *खोज* में इसका लिपिकाल १६१४ माना गया है। पर पुष्पिका में 'बत्सर उनइस सै चतुर वर्तमान संजोग' पाठ है जिससे १६०४ ही संवत् ठीक जान पड़ता है।

आदौ जैपुर नगर को अब कासी मैँ बास।
भाषा संस्कृत दुहुन मैँ राखहुँ अति अभ्यास॥
गौड़ द्विजबरा जाहिरो दुर्गादत्त सु नाम।
प्राचीनन के ग्रंथ को सोधेहु चारो जाम॥

इसी शोधित प्रति को पहले नवलकिशोर प्रेस ने सं० १६३१ मैँ लीथो मैँ मुद्रित किया। फिर उसकी कई आवृत्तियाँ हुईँ। सं० १६८५ मैँ नवीँ बार मुद्रित प्रति का उपयोग उक्त लीथोवाली इसी प्रेस की प्रति के अतिरिक्त इसके संपादन मैँ किया गया है। इसमैँ जिस आवृत्ति मैँ हो शोधन कुछ और हुआ। यह शोधन सं० १६५५ के पूर्व हो गया होगा। क्योँकि सं० १६५५ मैँ वेंकटेश्वर प्रेस से जो संस्करण प्रकाशित हुआ है वह नवलकिशोर प्रेस के इस मुद्रित संस्करण से एकदम मिलता है। इस प्रकार *छंदार्णव* के संपादन मैँ इन प्रतियाँ को उपयोग हुआ है—

सर०—सरस्वतीभंडार वाली प्रति सं० १८७१ के अनंतर लिखित।

लीथो—लीथो मैँ काशी मैँ सं० १६२३ के आसपास छपी प्रति। जयपुर-निवासी गौड़ ब्राह्मण दुर्गादत्त द्वारा शोधित।

नवल १—नवलकिशोर प्रेस (लखनऊ) मैँ लीथो मैँ सं० १६३१ मैँ छपी प्रति।

नवल २—नवलकिशोर प्रेस मैँ सं० १६८५ मैँ नवीँ बार मुद्रित। पुनः शोधित प्रति।

वेंक०—वेंकटेश्वर प्रेस (मुंबई) मैँ सं० १६५५ मैँ मुद्रित प्रति।

छंदार्णव हिंदी के पुराने पिंगल - ग्रंथोँ मैँ बहुप्रचलित है। ऐसा व्यवस्थित और विस्तृत पिंगल दूसरा नहीँ मिलता। काशिराज के यहाँ जब सं० १८७१ मैँ *भिखारीदास*जी के साहित्यिक ग्रंथोँ की प्रतिलिपि हो रही थी तब इस पिंगल के प्रस्तार आदि को संक्षेप मैँ समझाने के लिए काशीराज के किसी दरबारी कवि ने *छंदप्रकाश* नाम से इसमैँ परिशिष्ट जोड़ दिया। खोज (०३-३२) मैँ यह *भिखारीदास* जी का स्वतंत्र ग्रंथ मान लिया गया है। पर इसमैँ स्पष्ट उल्लेख है—

(दोहा)

गनपति गौरी संभु को पग बंदौँ यह जोइ।
जासु अनुग्रह अगम तेँ सुगम बुध्धि कौँ होइ॥ १॥

श्रीमहराजनि मुकुटमनि उदितनरायन भूप।
संभुपुरी कासी सुथल ताको राज अनूप॥ २॥

(सोरठा)

रहत जासु दरबार सात दीप के अवनिपति ।
रच्यौ ताहि करतार तिन्ह मधि उदित दिनेस सो ॥ ३ ॥

(दोहा)

रज सत दाया दान मैं रसमै राजित बीर ।
जगपालक घालक खलनि महाराज रनधीर ॥ ४ ॥

(सोरठा)

सुकबि भिखारीदास कियौ ग्रंथ छंदारनौ ।
तिन छंदनि को प्रकास भो महराज - पसंद-हित ॥ ५ ॥

इसके अनंतर मात्राछंदों का प्रस्तार है। दो मात्रा से ४६ मात्रा तक। एक मात्रा का कोई छंद नहीं है। प्रत्येक छंद की मात्रा, वृत्ति और छंदसंख्या दी गई है। ३३, ३४, ३५, ३६, ३९, ४१, ४२, ४३ और ४४ मात्रा की छंदसंख्या नहीं है। *छंदार्णव* मैं जितने छंद आए हैं उन्हीं की संख्या छंदसंख्या मैं दी गई है। कुल २३३ जोड़ दिया गया है। इसके अनंतर वर्णप्रस्तार दिया गया है--एक वर्ण से ४८ वर्ण तक। ५, २८, २९, ३५, ३७, ३८, ४०, ४१, ४३, ४४, ४६, ४७ की छंदसंख्या नहीं है। वर्णप्रस्तार की छंदसंख्या का जोड़ १२८ है। दोनों का जोड़ ३६१ है।

• *मात्रा-प्रस्तार वर्णमर्कटी* (खोज, ४७-२६१ ङ) *छंदार्णव* की तीसरी तरंग मात्र है, कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं।

काव्यनिर्णय

खोज मैं *काव्यनिर्णय* की ११ प्रतियों का पता चला है—

१—पूर्ण, लिपि० सं० १८७१; प्राप्ति०—काशिराज का पुस्तकालय (खोज, ०३-६१)।

२—पूर्ण, लिपि० सं० १९१६; प्राप्ति०—श्रीरामशंकर, खड़गूपुर, गोंडा (खोज, २०–१७ ए)।

३—पूर्ण, लिपि० सं० १९५३; प्राप्ति०—श्रीकन्हैयालाल महापात्र, असनी, फतेहपुर (खोज, २०–१७ बी)।

४—पूर्ण, लिपि० सं० १९०४; प्राप्ति०—महाराज भगवानबक्स सिंह, अमेठी, सुलतानपुर (खोज, २३–५५ डी)।

५—पूर्ण, लिपि० सं० १६०५; प्राप्ति०—राजा लालताबक्स सिंह, नीलगाँव, सीतापुर (खोज, २३–५५ ई)।

६—पूर्ण, लिपि० सं० १८७५; प्राप्ति०—श्रीशिवदत्त वाजपेयी, मोहनलाल गंज, लखनऊ (खोज, २६–६१ ई)।

७—पूर्ण, लिपि० सं० १६२६; प्राप्ति०—कुँवर नरहरदत्त सिंह, सँडीला, मछरहटा, सीतापुर (खोज, २६–६१ एफ)।

८—पूर्ण, लिपि० सं० १६३६; प्राप्ति०—श्रीकृष्णबिहारी जी मिश्र, माडल हाउस, लखनऊ (खोज, २६–६१ जी)।

६—पूर्ण, लिपि० सं० १६३६; प्राप्ति०—श्रीरामबहादुर सिंह, बदवा, प्रतापगढ़ (खोज, २६–६१ एच)।

१०—पूर्ण, लिपि० अज्ञात; प्राप्ति०—मुंशी व्रजबहादुरलाल, प्रतापगढ़ (खोज, २६–६१ आई)।

११—पूर्ण, लिपि० सं० १६३६; प्राप्ति०—श्रीकृष्णबिहारीजी मिश्र, व्रजराज पुस्तकालय, गंधौली, सीतापुर (खोज, ४७-२६१ ज)।

इनमें से ८ और ११ तो एक ही प्रति है। भिन्न-भिन्न समय में उसके विवरण भिन्न-भिन्न स्थानों पर लखनऊ और सीतापुर में लिए गए हैं। संख्या ८ और ६ एक ही मूल प्रति की दो विभिन्न प्रतिलिपियाँ जान पड़ती हैं। ऐसा चलन था कि यदि किसी प्राचीन पुस्तक से प्रतिलिपि की जाती थी तो आधारवाली मूल प्रति का संवत् ज्यों का त्यों दे दिया जाता था, भले ही प्रतिलिपि बाद में हुई हो। यहाँ ऐसी ही संभावना जान पड़ती है। प्रतापगढ़वाली प्रति से व्रजराज पुस्तकालयवाली प्रति उतराई गई या इसका विपर्यास हुआ इसका निश्चय प्रतियों को देखे बिना नहीं हो सकता। इन सबमें प्रथम प्रति सबसे प्राचीन है।

अलंकार (खोज, ४७–२६१ ख) *काव्यनिर्णय* का आठवाँ उल्लास मात्र है, कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं।

इनके अतिरिक्त *खोज* (२६–६१ ओ) में *तेरिज काव्यनिर्णय* भी है। यह *काव्यनिर्णय* का सार-संक्षेप है। सार-संक्षेप करने में उदाहरण हटा दिए गए हैं। मूल लक्षण (सिद्धांत मात्र) रखे गए हैं। इसका प्राप्तिस्थान महाराजा लाइब्रेरी प्रतापगढ़ है। लिपिकाल सं० १६१५ है।

तेरिज रससारांश के संबंध में खोज-विभाग का विवरण-पत्र यह सूचना देता है—

"यह पुस्तक भिखारीदास (दास) जी के रससारांश नामक पुस्तक की खतियौनी है। मूल दोहे ले लिए गए हैं और बाकी विस्तार छोड़ दिया गया है।"

यही *तेरिज काव्यनिर्णय* के संबंध में भी समझना चाहिए। *तेरिज* या *तेरीज* शब्द का अर्थ कोश में 'लेख्यपत्रसंग्रह, लेखासार' दिया है। अँगरेजी में 'ऐन ऐब्सट्रैक्ट आव् दि डाकूमेंट्स्, ऐन ऐब्सट्रैक्ट अकाउंट कंपाइल्ड फ्राम अदर डिटेल्ड अकाउंट्स्' दिया है। अन्यत्र 'ऐन ऐब्सट्रैक्ट आव् लांग लिस्ट आव् अकाउंट्स् (विल्सन)'—(देखिए डिक्शनरी आव् दि हिंदुस्तानी लैंग्वेज बाइ फार्ब्स)। मध्यकाल में यह शब्द बहुत चलता था, जैसे तेरीज गोशवारा, जिंसवार असामीवार, तेरीज जमाखर्च, तेरीज असामीवार आदि। यह शब्द कैसे बना। नागरीप्रचारिणी सभा का कोश-विभाग इसे *तर्ज़* या *तिराज़* (अरबी) से निकालता है जिसका अर्थ ढंग और तहरीर होता है।

प्रश्न होता है कि यह *तेरीज* या सारसंग्रह स्वयम् *भिखारीदास* ने किया या किसी और ने। इन दोनों (*तेरिज रससारांश* और *तेरिज काव्यनिर्णय*) के अभी तक दो ही हस्तलेख मिले हैं। एक एक प्रत्येक का। *तेरिज रससारांश* की पुष्पिका यों है—

इति श्रीरससारांश कै तेरिज संपूर्ण शुभमस्तु सिद्धरस्तु ॥ संबत १९१४॥ मार्गमासे कृष्णपक्षे अमावस्यां सोमवासरे दशषत दुरगा लाल हेतवे भवानीबकस सिंह जीव, समाप्ताः।

'*तेरिज काव्यनिर्णय*' की पुष्पिका यों है—

"संबत १९१५ दसषत दुरगाप्रसाद कायस्थस्य हेतवे श्रीलाल भवानीबक्स सिंह जीव।"

इन दोनों तेरिजों में कहीं यह नहीं लिखा है कि कौन सार-संकलन कर रहा है। जान पड़ता है कि मुंशी *भिखारीदास* ने स्वयम् यह 'खतिऔनी' नहीं की है। मुंशी दुर्गाप्रसाद ने ही श्रीलाल भवानीबक्ससिंह जीव हेतवे यह सार-संकलन किया है। पुष्पिका प्रतिलिपि की नहीं, तेरिज-लिपि के लिए है। उसका *काव्यनिर्णय* के संपादन में विशेष उपयोग नहीं जान पड़ता। *भिखारीदास* के ये दो नए ग्रंथ नहीं हैं।

काव्यनिर्णय के संपादन में जिन प्रतियों का उपयोग किया गया वे ये हैं—

सर०—सरस्वतीभंडार, काशीराजवाला हस्तलेख।

भारत—भारतजीवन प्रेस से सं० १९५६ मेँ प्रथम बार प्रकाशित प्रति।

वेंक०—वेंकटेश्वर प्रेस (मुंबई) से सं० १९८२ मेँ प्रकाशित प्रति।

बेल०—बेलवेडियर प्रेस (प्रयाग) से सं० १९८३ मेँ प्रथम बार प्रकाशित प्रति।

मुद्रित प्रतियोँ को लेने मेँ विशेष प्रयोजन यह है कि प्रत्येक प्रति मेँ आधारभूत प्राचीन हस्तलेखोँ के संबंध मेँ महत्त्वपूर्ण उल्लेख हैँ। भारत-जीवन प्रेसवाली पुस्तक की भूमिका मेँ श्रीरामकृष्ण वर्मा लिखते हैँ—

"इस ग्रंथ के छापने की अनुमति श्रीयुत अयोध्यापति आनरेब्ल महाराजा प्रतापनारायण सिंह बहादुर के० सी० आई० ई० ने हमको दी और उन्हीँ के दर्बार से एक हस्तलिखित प्राचीन कापी भी हमको प्राप्त हुई। दूसरी कापी श्रीमान् राजासाहब राजा राजराजेश्वरी प्रसादसिंह बहादुर सूर्यपुरानरेश ने हमको दी, और इन्हीँ दोनोँ कापियोँ की सहायता से यह ग्रंथ छपा है।"

वेंकटेश्वर प्रेस वाली प्रति की प्रस्तावना कहती है—

"प्रायः ऐसे प्राचीन कवियोँ की काव्य प्रकाश करने का साहस इस यंत्रालय ने विद्वज्जनोँ के अनुरोध से किया है जिसमेँ अपने प्राचीन कवियोँ की काव्य लुप्त न हो। इस ग्रंथ को डुमराँवनिवासी पं० नकछेदी तिवारी जी से व आगरावाले कुँवर उत्तमसिंह जी से शुद्ध कराया है और मुद्रित होते कार्यालय मेँ भी भली भाँति शुद्ध कर प्रकाश किया है।"

बेलवेडियर प्रेस (प्रयाग) की प्रस्तावना मेँ टीकाकार श्रीमहावीर प्रसाद मालवीय 'वीर' लिखते हैँ—

"पूर्व मेँ एक बार हमने काव्यनिर्णय की विस्तृत टीका लिखने का प्रयत्न किया था, उस समय वेंकटेश्वर तथा भारतजीवन की मुद्रित प्रतियाँ प्राप्त हुई थीँ।......दैवयोग से अयोध्या जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वहाँ कविवर लछिरामजी से भेँट हुई। उन्होँने... काव्यनिर्णय की हस्तलिखित एक पुरानी प्रति प्रदान की।...... उन्होँने (राजा प्रतापबहादुर सिंह ने) प्रतापगढ़ के एक लेथो प्रेस

की छपी काव्यनिर्णय, रससारांश और शृंगारनिर्णय की एक एक प्रतियाँ भेजने की कृपा की।"

प्रतापगढ़ से लीथो में छपी भी एक प्रति है। पर उसका उपयोग नहीं किया जा सका।

× × ×

जिन जिन संस्करणों का उपयोग और जिन जिन हस्तलेखों का प्रयोग किया गया है उन उन के संपादकों और स्वामियों के प्रति मैं विनम्र भाव से कृतज्ञता-ज्ञापन करता हूँ। तत्रभवान् काशिराज महाराज श्रीविभूतिनारायण सिंह जी के प्रति विशेष कृतज्ञ हूँ जिनके सरस्वतीभंडार से श्रीभिखारीदास के ग्रंथों के सर्वाधिक प्राचीन हस्तलेख यथावंछित समय के लिए प्राप्त हो सके। इसके प्रस्तुत करने में कार्यगत सहायता पहुँचानेवालों में प्रमुख रूप से उल्लेख्य ये भविष्णु व्यक्ति हैं—आकर-ग्रंथमाला के संपादक-सहायक श्रीभुवनेश्वर गौड़ जिन्होंने अनुक्रमणिका, प्रतीकसूची, शब्दसूची प्रस्तुत की, संपादन-सहायक श्रीरामादास जिन्होंने आदि से अंत तक पाठांतर मिलाए तथा सर्वश्री विष्णुस्वरूप, उदयशंकर सिंह, प्रेमचंद्र मिश्र, कृष्णकुमार वाजपेयी जो समय समय पर पाठांतर, प्रतिलिपि, अपेक्षित ग्रंथ-संकलन एवम् सामग्री-संग्रहार्थ यात्रा में योगदान करते रहे।

अंत में अपने साकेतवासी गुरुदेव लाला भगवानदीनजी को प्रणतिपुरस्सर वारंवार स्मरण करता हूँ जिनका अमोघ आशीर्वाद पाकर मैं प्राचीन काव्यों में अभिनिवेश प्राप्त कर सका और जो श्रीभिखारीदास के अवतार ही माने जाते थे।

वाणी-वितान भवन
ब्रह्मनाल, बनारस-१
मकर संक्रांति, २०१२ वि०

विश्वनाथप्रसाद मिश्र

अनुक्रमणिका

रससारांश

(१ से ८५)

शृंगारनिर्णय

(८७ से १६१)

छंदार्णव

(१६३ से २७५)

संकेत

रससारांश

काशि०—काशिराज के पुस्तकालय का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८४३ ।

सर०—सरस्वती-भंडार (रामनगर, काशीराज) का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८७१ के पूर्व ।

सभा—नागरीप्रचारिणी सभा (काशी) के आर्यभाषा - पुस्तकालय का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १६११ ।

लीथो—लीथो मैँ गुलशन अहमदी प्रेस (प्रतापगढ़) मैँ संवत् १६३३ के हस्तलेख से सं० १६४८ मैँ मुद्रित ।

सर्वत्र—उपरिलिखित सभी प्रतियाँ ।

शृंगारनिर्णय

सर०—सरस्वती-भंडार (रामनगर, काशीराज) का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८७१ के पूर्व ।

लीथो—लीथो मैँ गुलशन अहमदी प्रेस (प्रतापगढ़) मैँ सं० १६३३ के हस्तलेख से सं० १६४८ मैँ मुद्रित ।

भार०—भारतजीवन प्रेस (बनारस) मैँ मुद्रित, सं० १६५६ के आसपास ।

छंदार्णव

सर०—सरस्वती-भंडार (रामनगर, काशीराज) का हस्तलेख, लिपिकाल सं० १८७१ के अनंतर ।

लीथो—लीथो मैँ सं० १६२३ के आसपास काशी मैँ मुद्रित ।

नवल १—नवलकिशोर प्रेस (लखनऊ) मैँ लीथो मैँ सं० १६३१ मैँ मुद्रित ।

नवल २—नवलकिशोर प्रेस (लखनऊ) मैँ सं० १६८५ मैँ नवीँ बार मुद्रित, संशोधित संस्करण ।

नवल०—नवल १ और नवल २ ।
वेंक०—वेंकटेश्वर प्रेस (मुंबई) मैँ सं० १९५५ मैँ मुद्रित ।
वही—पूर्वगामी संकेत ।

चिह्न

+—हस्तलेख मैँ संशोधित पाठ ।
÷—हस्तलेख का मूल पाठ ।
×—हस्तलेख मैँ अभावसूचक ।
’ —अक्षरलोप-सूचक ।
०—शब्दलोपन-सूचक ।
[ ]—प्रस्तावित ।
ऽ —लघु-उच्चारण-सूचक ।
ष़ —ख ।

———

संपादकीय

हिंदी-साहित्य का अन्य भारतीय साहित्यों में सबसे अधिक महत्त्व उसके प्राचीन आकर (क्लैसिकल) ग्रंथों के कारण है। हिंदी-साहित्य के मध्य-काल में इतने प्रचुर आकर-ग्रंथों का प्रणयन हुआ जितने अन्य किसी साहित्य में, यहाँ तक कि संस्कृत में भी, नहीं प्रणीत हुए। इनका बहुलांश अद्यावधि हस्तलिखित रूप में ही पड़ा है। आधुनिक मुद्रण-कला के चलन-प्रचलन के साथ ही इन्हें छापकर व्यावसायिक दृष्टि से प्रकाशित करने की प्रवृत्ति जगी। पहले प्रस्तर-छाप में कई छापेखानों ने इनमें से कुछ को छापा। फिर मुद्रायंत्रों का प्रसरण होने पर उनमें भी प्रायः उसी दृष्टि से इनमें से कतिपय का मुद्रण हुआ। अधिक संख्या में ऐसे ग्रंथ छापनेवालों में प्रमुख लाइट, भारतजीवन, वेंकटेश्वर, नवलकिशोर, बंगवासी आदि छापे-खाने रहे हैं। प्रस्तर-छाप का प्रसार तो जिलों तक में हो गया था। भिखारीदास के प्रायः सभी ग्रंथ सबसे पहले प्रतापगढ़ के गुलशन अहमदी छापेखाने में छपे। इन छापघरों में छपे इन ग्रंथों के प्रकाशन में उनको सुलभ बनाने को लालसा ही प्रबल थी। कोई सुनिश्चित योजना उन्हें छापते हुए और संपादन की कोई सुव्यवस्था उन्हें प्रस्तुत करते हुए दृष्टिपथ में नहीं रखी गई। उस समय हस्तलेखों की उपलब्धि और एक ही ग्रंथ के अनेक हस्तलेखों की उपलब्धि भी दुरूह एवम् दुस्साध्य थी। पर ग्रंथों के महत्त्व का कुछ भी ध्यान न रखा जाता रहा हो सो नहीं या संपादन कराया ही न जाता रहा हो, वह भी नहीं। परंपरा से जिन कवियों की या ग्रंथों की सुख्याति थी उन्हीं की ओर विशेष ध्यान दिया गया। संपादन बहुधा संस्कृत के पंडित किया करते थे, जो 'बे-दरद' को 'बेद-रद' समझ लेते, जिसका पता पार्श्वस्थ छपी टिप्पनी से चलता है। फिर भी तत्कालिक उस कार्य के लिए हम उनके अत्यंत कृतज्ञ हैं। जितने प्राचीन ग्रंथों का उस समय मुद्रण-प्रकाशन हुआ उसका शतांश भी आज हम वैविध्य की दृष्टि से मुद्रित-प्रकाशित नहीं कर पा रहे हैं। उनकी दी हुई नीवँ पर अधिकतर हमारे नए भवन खड़े होते आ रहे हैं।

लाइट प्रेस और भारतजीवन के संस्करण अपेक्षाकृत अच्छे माने जाते रहे हैं। पर उनमें शब्द-अर्थ के साहित्य के बदले केवल शब्द पर अधिक ध्यान दिया जाता था। काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने प्राचीन ग्रंथमाला के अंतर्गत जब से ऐसे ग्रंथों के प्रकाशन का सूत्रपात किया तब से शब्द के साथ-साथ अर्थ का भी कुछ ध्यान रखा जाने लगा। फिर तो तुलसीदास, सूरदास और मलिक मुहम्मद जायसी की ग्रंथावलियों के प्रकाशन द्वारा शब्दार्थ के साहित्य पर बहुत कुछ ध्यान देकर सभा ने प्राचीन ग्रंथों के संपादन का परिनिष्ठित समारंभ कर दिया। इसके अनंतर प्राचीन ग्रंथों के प्रकाशन की निश्चित योजना की ओर भी ध्यान दिया गया। नागरी-प्रचारिणी सभा का, साथ ही व्यावसायिक प्रकाशनों में से भी किसी किसी का, ध्यान इधर गया। गंगा पुस्तकमाला ने भी प्राचीन काव्यों के संपादित संस्करण निश्चित योजना के अंतर्गत प्रकाशित करने का विज्ञापन किया था। कुछ ग्रंथ प्रकाशित भी किए। पर पूरी योजना न सभा में कार्यान्वित हो सकी, न अन्यत्र।

हिंदी के प्राचीन ग्रंथों के सुसंपादित संस्करण प्रकाशित करने का सुअवसर आए आए तब तक प्राचीन ग्रंथों के पाठशोध के संबंध में वैज्ञानिक विधि का प्रवाह चल पड़ा। संस्कृत के महाभारत और वाल्मीकीय रामायण के वैज्ञानिक संस्करणों के संपादन-प्रकाशन का महाप्रयास हिंदीवालों के सामने आदर्श रूप में आया। इससे अनेक और प्रामाणिक हस्तलेखों के आधार पर प्राचीन ग्रंथों के संपादन की ओर हिंदीवालों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हुआ। शब्द पर अधिक और अर्थानुसंधान पर अपेक्षाकृत कम ध्यान देते हुए कुछ प्रयास हुए, जिनसे हिंदी-साहित्य में प्राचीन काव्य के पाठशोध और संपादन के क्षेत्र में जागरूकता एवम् जागर्ति के दर्शन होने लगे। इस क्षेत्र में कार्य करनेवाले विद्वान् उँगलियों पर गिने जा सकते हैं, सबकी तो चरचा ही क्या, अधिकतर साहित्यज्ञों की अभिरुचि प्राचीन ग्रंथों के संपादन की ओर नहीं है। साहित्यिकों की नई पीढ़ी कारयित्री प्रतिभा को अधिक उभार रही है और उससे छुट्टी पाती है तो आलोचना-रस में जा डूबती है। प्राचीन ग्रंथों का अनुशीलन, संपादन आदि अधिकतर पुरानी पीढ़ी के ही मत्थे मढ़ दिया गया है। पुराना काम पुराने करें नया काम नए। बँटवारा ठीक प्रतीत होता है। उधर प्राचीन ग्रंथों के पाठशोध में परिश्रम अधिक है और प्राप्ति थोड़ी। पहाड़ खोदकर चुहिया पानी है। न यश ही अधिक और न अर्थोपलब्धि ही पुष्कल। संतोष यही है कि कुछ सज्जन सब

भिखारीदास रीतिकाल के आचार्यों में प्रमुख हैं अपनी मौलिक संयोजना के कारण। इनके ग्रंथ पहले मुद्रित अवश्य हो चुके हैं पर बहुत दिनों से अप्राप्य हैं। दो खंडों में यह ग्रंथावली निकल रही है। प्रथम खंड में रससारांश, शृंगारनिर्णय और छंदार्णव तीन ग्रंथ हैं। दूसरे खंड में अकेला काव्यनिर्णय है। इनके अन्य ग्रंथ भी हैं पर उनका साहित्यिक महत्त्व और उनमें मौलिकता का तत्त्व इन ग्रंथों का समानशील नहीं है, इससे वे इसमें संमिलित नहीं किए गए।

भिखारीदास-ग्रंथावली के 'अभिधान' की अर्थयोजना में सहायता पहुँचानेवाले इतने नवयुवक धन्यवादार्ह-आशीर्वादार्ह हैं—सर्वश्री चंद्रशेखर शुक्ल (बृहत् कोशविभाग), श्यामनारायण तिवारी 'श्याम' (संक्षिप्त कोशविभाग), रामबली पांडेय (आकर-ग्रंथमाला के वर्तमान संपादक-सहायक)।

वाणी-वितान भवन
ब्रह्मनाल, वाराणसी-१
शारदीय नवरात्र,
सं० २०१३ वि०

विश्वनाथप्रसाद मिश्र
संपादक
आकर-ग्रंथमाला

भिखारीदास

(ग्रंथावली)

प्रथम खंड

रससारांश

रससारांश

(दोहा)

प्रथम मंगलाचरन को तीनि आतमक जानि।
नमस्कार अरु ध्यान पुनि आसिरबाद बखानि ॥ १ ॥

नमस्कारात्मक मंगलाचरण, यथा

कदन अनेकन बिघन को एकरदन गनराउ।
बंदनजुत बंदन करौं पुष्कर पुष्करपाउ ॥ २ ॥

ध्यानात्मक मंगलाचरण, यथा (छप्पय)

बक्रतुंड कुंडलितसुंड नगबलित पांडुरद।
अलिघुमंड-मंडलित दानमंडित सुगंधमद।
बाहुदंड उद्दंड दुष्टमुंडनि अमुंडकर।
बिघ्नखंड कर खंड ओज सत-मारतंड-बर।
श्रीखंडपरसुनंदन सुखद 'दास' चंड चंडीतनय।
अभिलाष लाख लाहन समुझि राखु आखुबाहन हृदय ॥ ३ ॥

आशीर्वादात्मक मंगलाचरण, यथा (सोरठा)

करौ चंद-अवतंस, मो मन कौं अगमौ सुगम।
काढ़ौं 'रससारांस' सुमति-मथानी मथनु करि ॥ ४ ॥

वस्तुनिर्देश-कथन (दोहा)

जान्यो चहै जु थोरेही रस-कबित्त को बंस।
तिन्ह रसिकन्ह के हेतु यह कीन्ह्यो रससारंस ॥ ५ ॥

(सोरठा)

बानी लता अनूप, काब्य-अमृतरस-फल फली।
प्रगट करै कबिभूप, स्वादबेत्ता रसिकजन ॥ ६ ॥

---

[३] कुंडलित०—कुंडलि भसुंड (सर०)। दान—गंड (काशि०)।
[५] जान्यो०—चाहत जानि जु (लीथो)।
[६] रस०—फल रस फल्यो (लीथो)।

(दोहा)

अधर-मधुरता, कठिनता-कुच, तीक्षनता-त्यौर।
रस-कबित्त-परिपकता जानै रसिक न और ॥ ७ ॥
रसिक कहावैं ते जिन्हैं रस-बातन तेँ हेत।
रस बातैं ताकौं कहत जो रसिकनि सुख देत ॥ ८ ॥

नवरस-नाम-कथन

नवरस प्रथम सिँगार पुनि हास करुन अरु बीर।
अद्भुत रुद्र बिभत्स भय सांत सुनौ कबि धीर ॥ ९ ॥

रस को विभाव-अनुभाव-स्थायीभाव-कथन

जासौं रस उत्पन्न है सो बिभाव उर आनि।
आलंबन-उद्दीपनौ सो द्वै बिधि पहिचानि ॥१०॥
कहूँ क्रिया कहुँ बचन तेँ कहूँ चेषटा देखि।
जी की गति जानी परै सो अनुभाव बिसेखि ॥११॥
एक एक प्रतिरसन मैँ उपजै हिये बिकार।
ताको थाई नाम है बरनत बुद्धिउदार ॥१२॥

अथ शृंगाररस-लक्षण

बरनि नायिका - नायकहि दरसालंबन - नीति।
सोई रस सृंगार है ताको थाई प्रीति ॥१३॥

अथ शृंगाररस-आलंबन-विभाव को उदाहरण

राधा राधारमन को रस सिँगार मैँ अंग।
उन्ह पर वारौं कोटि रति उन्ह पर कोटि अनंग ॥१४॥

आलंबन-विभाव-नायिका-लक्षण

सुंदरता-बरननु तरुनि सुमति नायिका सोइ।
सोभा कांति सुदीप्ति जुत बरनत हैँ सब कोइ ॥१५॥

शोभा-कांति-सुदीप्ति को लक्षण

सोभा रूप 'रु साहिबी झलक बिमलता कांति।
दीपति उजियारी अपर अधिकारी बहु भाँति ॥१६॥

---

[८] बेत्ता—बेदता (काशि०, सर०, लीथो)। तेँ—सोँ (काशि०, सर०)।

शोभा को उदाहरण (कबित्त)

कमला सी चेरी हैं घनेरी बैठीं आसपास
बिमला सी आगैं दरपन दरसावती।
चित्ररेखा मेनका सी चमर डोलावैं
लिये अंक उरबसी ऐसी बीरन खवावती।
रति ऐसी रंभा सी सची सी मिलि ताल भर
मंजु सुर मंजुघोषा ऐसी ढिग गावती।
मध्य छबि न्यारी प्यारी बिलसै प्रजंक पर
भारती निहारि हारी उपमा न पावती ॥ १७॥

कांति को उदाहरण (दोहा)

रूपो पावत कनक-दुति कनक-प्रभा मिलि जाइ।
मुकुतनि कौं तिय तनु करै मनि कपूर के भाइ ॥१८॥
कीन्हो अमल सुदेस तन अतन नृपति अति धीर।
दुहुँ दिसि द्वै द्वै लखि परैं करन-सँजोगी बीर ॥१९॥

दीप्ति को उदाहरण

पहिरि बिमल भूषन बसन बैठी बाल प्रजंक।
मानो उड़गन जोन्हजुत आयो अवनि मयंक ॥२०॥

नायिकाभेद-कथन

सुकिया परकीया अपर गनिका धर्मनि जानि।
पतिव्रता लज्जा सुकृत सील सुकीया बानि ॥२१॥

स्वकीया, यथा

मनसा बाचा कर्मना करि कान्हर सौं प्रीति।
पारबती-सीता-सती-रीति लई तूँ जीति ॥२२॥
सील सुधाई सुघरई सुभ गुन सकुच सनेह।
सुबरन-बरनि सुहाग सौं सनी बनी तुअ देह ॥२३॥

---

[१७] दरपन—द्वै दर्पन (सर०)।
[१८] मिलि—मिटि (सर०) । जाइ—जात (लीथो)। भाइ—भाँत (वही)।
[२१] पति०—पतिव्रत लज्जा सुकृत गुन (सर०)।

मुग्धादिभेद

होत बहिक्रम भेद तेँ जिती नायिका मित्त।
लक्षन सब क्रम तेँ कहौँ लक्षि सुनौ दै चित्त ॥२४॥

मुग्धाभेदयुक्त मध्या-प्रौढ़ा के लक्षण (सवैया)

जोबन-आगम मुग्ध वही बिन जाने अज्ञात प्रभापट ओढ़ै।
जानि परै सु है जोबना ज्ञात नबोढ़ डरै पिय-संग न पोढ़ै।
थोरऊ प्रीतम सौँ जो पत्याइ कहैँ कबि ताहि बिस्रब्धनवोढ़ै।
मध्यहि लाज मनोज बराबरि प्रीतम-प्रीति-प्रबीन सो प्रोढ़ै ॥२५॥

मुग्धा, यथा (दोहा)

जितन चह्यो उरजनि अचल, कटि कटि-केहरि बेस।
श्रुति-परसन तिय-दृग चले छवा-छुवन कौँ केस ॥२६॥

(कबित्त)

कहा जौ न जान्यो जात अंकुर उरोजनि को
बंकुर न मान्यो जात लोचन बिसाल को।
परिवा-ससी लौँ वै सुभागिनि लखी मैँ आजु
कालिह बढ़ि दरसैहै रूप-बिधु बाल को।
हास के बिलास अलि आँगी पहिरत सोई
संभवत तनि जैबो तंबू ततकाल को।
करियै बधायो लाल सैसव सिधायो आयो
बाल - तन पेसखेमा मैन - महिपाल को ॥ २७ ॥
उरज उलाकनिहूँ आगम जनायो आनि
बसन सँभारिबे की तऊ न तलास सी।
गति की चपलता दई है 'दास' नैननि कौँ
तऊ न तजत पग लीन्हे वह आस सी।

---

[२४] सब-कहि (सर०)। दै-धरि (काशि०)। [२५] डरै-ररै (काशि०)। [२७] कहा-कही (काशि०)। करियै-करियौ (सर०)। पेसखेमा-पेसखान (काशि०)। [२८] चपलता०-चपलताई भई (काशि०, सर०)।

चाहतँ सलाह करि नेवाती नितंब अब
लूट्यो लंक-पुर चढ़ि बढ़ि तजि त्रास सी।
सब तन जोबन अमीर की दुहाई फिरी
रही लरिकाई अड़ि अचल मवास सी ॥ २८ ॥

(दोहा)

भगी चपलता मंद गति लगी पगन मैं जाइ।
हतन बालपन को कियो अतन बाल-तन आइ ॥ २९ ॥

अज्ञातयौवना, यथा

खेलति कित करि चेत चित बिगलित बसन सँभारु।
उरजनि कर्‍यो उभारु अब उर जनि करै उघारु ॥ ३० ॥
सखियाँ कहैं सु साँच है लगत कान्ह की डीठि।
कालि जु मो तन तकि रह्यो उभर्‍यो आजु सा ईठि ॥ ३१ ॥

ज्ञातयौवना, यथा

करि चंदन की खौरि दै बंदन बेंदी भाल।
दरपन री दिन द्वैक तें दरपन देखति बाल ॥ ३२ ॥

(सवैया)

कान सौं लागी बतान कछू हँसि लेन लगी मन मीठी जुबान सौं।
बान सौं मार्‍यो मनोज अबैं कहि आवत नेक उरोज-उठान सौं।
ठान सौं लागी चलै दुति दूनी बढ़ी मुख की सुषमा सरसान सौं।
सान सौं डीठि चलै लगी जोरि दोऊ दृग कोर गई मिलि कान सौं ॥३३॥

नवोढ़ा, यथा (दोहा)

स्याम-संक पंकजमुखी चकै निरखि निसि-रंग।
चौंकि भजै निज छाँह तकि तजै न गुरजन-संग ॥ ३४ ॥

---

[२९] हतन—हनन (लीथो)।
[३०] कर्‍यो—कियो (सर०)।
[३१] सखियाँ०—सखिजन कहत (काशि०)।
[३२] दरपन भरी—दरप भरी (काशि०, लीथो)।
[३४] चकै—जकै (काशि०)।

विश्रब्धनवोढ़ा, यथा

डरत डरत सौँहैं भई सौ सौ सौँहैं खात।
फिरी सुमन धरि ढिग, सु मन धरी न पिय की बात ॥ ३५ ॥
बितवति रजनि सलाम करि करि करि कोटि कलाम।
सुनत सौगुनो सुरत तेँ सुख पावत सुखधाम ॥ ३६ ॥

मध्या, यथा

जदपि करत रतिराज तेहि निदरि निदरि सब काज।
तदपि रहत तिय के हिये किये निलजई लाज ॥ ३७ ॥
तिय-हिय सही दुटूक है तुम्हैं चाहि सुखधाम।
रही एक मैं लाज भरि दूजे मैं भरि काम ॥ ३८ ॥

प्रौढ़ा, यथा

मुख सौँ मुख, उर सौँ उरज पिय-गातनि सौँ गात।
तज्यो न भावति भाव तिहि आवत भयो बिभात ॥ ३९ ॥

मुग्धा-मध्या-प्रौढ़ा के लक्षण, सब ठौर को साधारण

मुग्धा दुहुँ बयसंधि मिलि मध्या जोबन पूर।
प्रौढ़ा सिगरी जानई प्रीति - भाव - दस्तूर ॥ ४० ॥
मध्या-प्रौढ़ा-भेद बहु सो नहि कह्यौं बिसेखि।
छबि रति मैं अनुभाव मैं चर भावन मैं देखि ॥ ४१ ॥

---

[३५] न पिय–नायिकी (सर०) ।
[३६] बितवति–चितवति (काशि०, लीथो) ।
[३७] तेहि–ते (काशि०+) ।
[३८] रही–रहव (लीथो) ।
[३९] इसके अनंतर काशि० में यह दोहा अधिक है—
ए करकस गड़ि जात हैं मिलत स्याम मृदु गात।
योँ बिचारि बर नारि को उर भूषन न सुहात ॥
[४०] मिलि-भय (काशि०) । दस्तूर–दलसूर (सर०) । चर–बर (काशि०, लीथो) ।

प्रगल्भवचना-लक्षण

जो नायक सौं रस लिये मध्या बोलै बोल।
प्रगलभबचना कहत हैं तासौं सुमति अमोल ॥ ४२ ॥
दृढ़ हूजै छूजै न तन पूजैगो चित चाइ।
ढिग सजनी रजनी न गत बजनी बजनी पाइ ॥ ४३ ॥
सदन सदन जन के रहे मदन मदन के माति।
लाज छाड़ि आए कहूँ दिनहूँ परति न साँति ॥ ४४ ॥

धीरादिभेद

मानभेद तें तीनि बिधि मध्या प्रौढ़ा मानि।
धीरा और अधीर तिय धीराधीरा जानि ॥ ४५ ॥

मध्या-धीरादि-लक्षण

ब्यंगि बचन धीरा कहै प्रगट रिसाइ अधीर।
तीजी मध्या दुहुँ मिलित बोलै ह्वै दलगीर ॥४६॥

मध्या-धीरा, यथा

हम तुम तन द्वै प्रान इक आज फुर्‍यो बलबीर।
लाग्यो हिय नख रावरे मेरे हिय मैं पीर ॥४७॥

---

[४४] के-सों (सर०)। छाड़ि-धरे (काशि०)। परत-परी (वही)।

[४७] इसके अनंतर काशि० और सर० में यह कबित्त अधिक है—

तैं जो हिय निरखि सनख अनुमान्यो सो हौं
निरखत लीन्ह्यो है अनख अनुमानियै।
तोहि अरसीली से हैं जग में रसीले गात
ए हैं सीलसदन असील जिय जानियै।
बाहर हो निरगुन माल दरसावै हिय
अंतर सगुन जो गुनिन में बखानियै।
आली तूँ कहति है कुरंग दृग प्यारे के
सु आले हैं सुरंग अवलोकि उर आनियै ॥

लाग्यो०—लागत ये (सर०)।

मध्या-अधीरा, यथा (सवैया)

सोहै महाउर को रँग भाल मैं लाल बिलोचन रूप छकोहैं।
को है बढ़ावत पँच ढिलौहैं हराहू के दाग न होत लजौहैं।
जो है कछू अँग मैं रँग औ ढँग सो सब वाही के प्रेम पगोहैं।
गोहैं ये रावरी जी को जलाइबो सो हैं भुलाइबो आइबो सौहैं ॥४८॥

मध्या-धीराधीर, यथा (दोहा)

हौं अपनो तन मन दियो जाके हित बृजनाथ।
सो हीरो तुम सँति ही दियो सौति के हाथ ॥४९॥

प्रौढ़ा-धीरादि-लच्चण

एक दुरावै कोप कौं एक उरहने देइ।
प्रौढ़ा धीराधीर तिय दूनो लक्षन लेइ ॥५०॥

प्रौढ़ा-धीरा, यथा

याही तैं जिय जानि गो मान हिये को लाल।
अरसीली ढीली मिलनि मिली रसीली बाल ॥ ५१ ॥

प्रौढ़ा-अधीरा, यथा

ग्वाल बाल के सँग जगे भए लाल-दृग लाल।
ऐगुन बूझि हनो सखी करि दृग लाल मृनाल ॥ ५२ ॥
सुमन चलावति मानिनी सखी कहति जदुराइ।
ओट रहौ मृदु गात मैं चोट न कहुँ लगि जाइ ॥ ५३ ॥

प्रौढ़ा-धीराधीर, यथा

अंकु भरै आदरु करै धरै अरोष-बिधान।
लोयन कोयन लाल पै प्रगटे गोए मान ॥ ५४ ॥

---

[४८] को०—कागर (सर०)।
[४९] हीरो—हमरो (काशि० +)।
[५२] दृग लाल—दृग अरुन (सर०)।

अपरं च

प्रौढ़ा धीराधीर ज्यों मध्या धीरा मानि।
देख्यो कबित-बिचार मैं प्रगट ब्यंगि रचनानि ॥ ५५ ॥

यथा

प्रानप्रिया ही कर जु दै खत लै आए भाल।
ठयो नयो ब्यौहार यह राजराज बृजपाल ॥ ५६ ॥

अथ ज्येष्ठा-कनिष्ठा-लक्षण

जाहि करै पिय प्यार अति ताही ज्येष्ठा जानि।
जापर कछु घटि प्रेम है ताहि कनिष्ठा मानि ॥ ५७ ॥

यथा

हासी-मिसु बर बाल के दृग मूदे दुहुँ हाथ।
सैननि मैं बातैं करै स्याम सलोनी साथ ॥ ५८ ॥

अथ परकीया-लक्षण

परनायक-अनुराग चित परकीया सो लेखि।
चीन्हि चतुर बात क्रिया दृष्टिचेष्टा देखि ॥ ५६ ॥

दृष्टिचेष्टा की परकीया, यथा

तुरत चतुरता करत अलि गुरजन-संग लखै न।
परसि जात हरि-गात है सरसि जात तिय-नैन ॥ ६० ॥

असाध्या-परकीया-लक्षण

जार-मिलन सौं बचि रहै ताहि कहत कबि लोइ।
काऊ असाध्या परकिया अधम सुकीया कोइ ॥ ६१ ॥

---

[५५] कबित–चित्त (लीथो)।
[५६] भाल–लाल (सर०)।
[५७] घटि०–अति प्रेम नहिँ (लीथो); घटि प्रीति है (सर०)।
[५६] चित–तिय (लीथो)।
[६०] अलि–अति (लीथो)।

भेद

गुरजनभीता दूतिका - बर्जित धर्मसभीत।
अतिकांत्या खलबेष्टिता गनौ असाध्या मीत ॥ ६२ ॥

गुरुजनभीता, यथा

बसत नयन - पुतरीन मैं मोहन - बदन - मयंक।
उर दुरजन ह्वै अड़ि रही गुर गुरजन की संक ॥ ६३ ॥

दूतीबर्जिता, यथा

तुम सी सौं हिय की कहत रही रहत जिय भीति।
मोहि अली निज छाँह की नहीं परति परतीति ॥ ६४ ॥

धर्मसभीता, यथा

सखि सोभा सरबर निरखि मन-गयंद बलवान।
जोरन करि तोरन चहत कुल को ज्ञान-अलान ॥ ६५ ॥

अतिकांत्या, यथा

मुख कौं डरै चकोर तैं सुक तैं अधर 'रु दंत।
स्वास लेत भौंरनि डरै नवला रहै एकंत ॥ ६६ ॥

खलवेष्टिता, यथा

इहाँ बचै को बावरी कान्ह नाम कहि रंच।
चरचि चरचि चरचनि बिना रचै पंच परिपंच ॥ ६७ ॥

साध्या-परकीया-लक्षण

बृद्धबधू रोगीबधू बालकबधू बखानि।
ग्रामबधू आदिक सकल साध्या - लक्षन जानि ॥ ६८ ॥

उदाहरण (सवैया)

छैल छबीले रसीले हौ तौ तुम आपनी प्यारी के भाग के भाय सौं।
आपने भालहि काहे कौं दूखिये और को चंदन चाहि बनाय सौं।

---

[६४] सीं सौं—सो सौं (काशि०)।
[६६] अधर०—अधरनु (लीथो०)।
[६७] कहि—लै (लीथो०)।

लाल कहा तुमकोँ छतिलाभ हमैं चित चाय सोँ औ बित चाय सोँ ।
बावरो बूढ़ो बुरो बहिरो तौ हमारो है प्यारो तिहारी बलाय सोँ ॥६६॥

दुःसाध्या-परकीया-लक्षण (दोहा)

बड़े जतन जारहि मिलै दुहसाध्या है सोइ ।
सामादिकौ उपाय सब यामैँ सोभित होइ ॥ ७० ॥
तो लगि जगि सब निसनि पगि प्रेम रह्यो धरि ध्यान ।
बलि अब परसन होहि चलि देहि सुदरसन-दान ॥ ७१ ॥

ऊढ़ा-अनूढ़ा-लक्षण

ऊढ़ा ब्याही और सोँ प्रीति और सोँ चाहि ।
बिन ब्याहे परपुरुष - रत वहै अनूढ़ा आहि ॥ ७२ ॥

ऊढ़ा, यथा

मन विचारि बृजराज सोँ झूठेहु लगै कलंक ।
गोप-बधू फिरि फिरि लखति भादौँ चौथि-मयंक ॥ ७३ ॥

अनूढा, यथा

को जानै सजनी कितै पाती पठई तात ।
बर बृजराज समान को तुम यह कहति न बात ॥ ७४ ॥

उद्‌बुद्धा-उद्‌बोधिता-लक्षण

मिलन-पेच आपुहि करै उद्‌बुद्धा है सोइ ।
जो नायक - पेचनि मिलै उद्बोधिता सा होइ । ७५ ।

उद्बुद्धा, यथा

करहि दौर वहि ओर तूँ और जतन सब चूक ।
मनमोहन - पद-परस बिनु मिटै न हिय की हूक ॥ ७६ ॥

---

[७१] निसनि–रैनि (सर०) । रह्यो–रहे (वही) ।
[७२] चाहि–जाहि (सर०, लीथो) ।
[७५] आपुहि–आपुन (काशि०) ।

उद्‌बोधिता, यथा

आज सोहानी मो कही बानी आनी कान।
लियो तिहारी पातियो दीन्ह्यो प्यारी पान ॥ ७७ ॥

परकीया के प्रकृति-भेद

सुनिये परकीयानि मैं प्रकृति जो षट बिधि होइ।
तिनके बारह नाम धरि बरनत हौं जिय जोइ ॥ ७८ ॥

(छप्पय)

गुप्ता - सुरत - छपाव भयो होने व्रतमानहि।
नारि बिदग्धा बचन - क्रिया - चतुराई ठानहि।
कुलटा बहु मित्रिनी मुदित मुदिता बांछित लहि।
सुरत - हेत लहि सखी कहत लक्षिता प्रकासहि।
संकेत मिटो, अब क्यौं मिलिहि हौं न गई तहँ गयो पिय।
कबि त्रिबिधि अनुसयाना कहैं तीनि भाँति पछिताइ हिय ॥७९॥

भूतगुप्ता, यथा (दोहा)

कौन साँच करि मानिहै अलि अचरज की बात।
ये गुलाब की पाँखुरी परौं खरौंटैं गात ॥ ८० ॥

भविष्यगुप्ता, यथा

भँवर डसै कंटक लगै चलै कुचरचा गाँउँ।
नँदनंदन के बाग मैं कहे सुमन कौं जाँउँ ॥ ८१ ॥

वर्तमानगुप्ता, यथा

दुति लखि छ्वै हैं चोरिनी दुरी जु हैं सब संग।
रहौ दुराए मोहिं तुम स्याम साँवरे अंग ॥ ८२ ॥

---

[७७] पातियो—पाति अरु (सर०)।
[७८] जो—सो (काशि०)।
[७९] लहि०—लखि सखिन (सर०)।
[८०] पाँखुरी—पाँखुरिन (काशि०, सर०)।
[८१] नँद०—नंदनंद (काशि०)। कहे—कहाँ (वही); कहा (सर०)।

बचनबिदग्धा, यथा

खरी लाल सोरी अली नहि सोहाइ कछु मोहि।
हरी मिलै तौ लाइयै अरी निहोरौं तोहि॥ ८३॥
सजनी तरसत रहत हैं दरसत बनत न हाल।
कहौं पीर कैसैं मिटै परे नयन जुग लाल॥ ८४॥
छोड़ि दियो इहि बाग कौं बगवानहूँ अभार।
आइ स्याम घन थँभि रहे करियै कौन बिचार॥ ८५॥

क्रियाबिदग्धा, यथा

सैन - उतर सैननि दियो गन्यो न भीर बिसाल।
बाल सुधारयो बँदुली पाग छुवत लखि लाल॥ ८६॥
लिखि दरसायो प्रिय सखिहि आजु ल्याइ नँदलाल।
दूजी बाँचत लखि लिख्यो मुकुत-माल-हित हाल॥ ८७॥

कुलटा, यथा

सुरा सुधा ढ़र तुअ नजरि तू मोहनी सुभाइ।
अछकन्ह देति छकाइ है सर-मरेन्ह कौं ज्याइ॥ ८८॥

मुदिता, यथा

कहन बिथा जिय की लली चली अली-आगार।
मग मिलि गो जिय-भावतो बाढ़्यो हरष अपार॥ ८९॥
अद्भुत अतुल उछाह दिन गुरलोगनि उरदाह।
लघु पति लखि दुलही-हिये दीरघ होत उछाह॥ ९०॥

हेतुलक्षिता, यथा

तैं कछु कह्यो गोपाल सौं तिरछौंहों अँखियानि।
लखि लीन्ही उनमानि मैं लखि लीन्ही उन मानि॥ ९१॥

---

[८३] अरी—अली (सर०)।
[८४] कहौं—कहै (काशि०)। परे—पर्‍यो (वही, सर०)।
[८५] करियै—बहियै (काशि०)।
[८६] भीर—भीत (सर०)। लखि—सखि (काशि०)।
[८७] माल—मौल (काशि०)। हित—कहि (वही)।
[८८] तुअ—तू (लीथो)। सर—मार (लीथो)।

सुरतलक्षिता, यथा

प्रगट कहै ढीली कसनि चुवत स्वेदकन-जाल।
ऐननैनि ऐनी भई बेनी गुही गुपाल ॥ ९२ ॥

लक्षिता, यथा

औरनि की आँखैं दुखैं तौ दुख करै बलाइ।
स्याम सलोने रूप त राख्यो दृगनि बसाइ ॥ ९३ ॥

अनुशयाना प्रथम, यथा

लखि लखि बन-बेलीन के पीरे पीरे पात।
जाति नवेली बाल के परी पियरई गात ॥ ९४ ॥
कहा होत बढ़ि बावरो भलो बुरो जिय जोहि।
कुंज-किनारे कौं हतै नारे धृग धृग तोहि ॥ ९५ ॥
को मति देइ किसान कौं मेरे जिय की जानि।
खरी ऊख रस पाइयै परी ऊख-रस हानि ॥ ९६ ॥

अनुशयाना दूजी, यथा

मिल्यो सगुन पिय घर चलत अब कत होत मलीन।
लखे कलस-कुच रसभरे परे लाल-चख-मीन ॥ ९७ ॥

अनुशयाना तीजी, यथा

भई बिकल सुधि-बुधि गई तई बिरह की ज्वाल।
हुन्यो सकल सुख सिर धुन्यो सुन्यो केलिथल लाल ॥ ९८ ॥
सीस रसिक-सिरमौर के लखि रसाल को मौर।
वही ठौर कौं समुझि तिय हिय गहि रही मरोर ॥ ९९ ॥

अपरं च

कछु पुनि अंतरभाव तें कही नायिका जाहि।
बिना नियम सब तियन में सुन्यो कबीसन पाहि ॥ १०० ॥

---

[९३] तैं—हो (सर०)।
[९५] हतै—हरै (काशि०, सर०)।
[९९] मौर—बौर (लीथो)। वही—कही (सर०)।

भेदकथन

कामवती अनुरागिनी प्रेमअसक्ता धन्य।
तीनि गर्बिता मानिनी सुरतदुखिता अन्य ॥ १०१ ॥

कामवती, यथा

निज उरजनि मीड़त रहै अलिन गहै लपटाइ।
स्याम लहे बिनु बावरी कामदहनि नहि जाइ ॥ १०२ ॥

अनुरागिनी, यथा

माल छबीले लाल को उर तैं धरति न दूरि।
वाहि रहति वहई भई प्रान-सजीवन-मूरि ॥ १०३ ॥
बेनी गूँधति लखि जियै दरपन जाकी छाँह।
कहा दसा ह्वैहै दई ताके बिछुरन माँह ॥ १०४ ॥

प्रेमासक्ता, यथा

अपनाइतहूँ सौं नहीं अब परतीत बिचारि।
मो नैननि मनु मेरई राख्यो हरि मैं डारि ॥ १०५ ॥
मन कौं और न भावतो छोड़ि भावतो और।
नेकु नहीं बरजो रहै जाइ मिलै बरजोर ॥ १०६ ॥
जने घने सुख स्याम लखि गने न गुरजन गेह।
कियो मने माने न ये नैना सने सनेह ॥ १०७ ॥

गर्बिता, यथा

ज्यौं ज्यौं पिय पगनत सुनति आसमुद्र छितिराउ।
त्यौं त्यौं गर्बीले दृगनि प्रिया लखति निज पाउ ॥ १०८ ॥

रूपगर्बिता, यथा

दुरे अँध्यारी कोठरी तनद्युति देति लखाइ।
बचौं अलिन की भीर सौं आली कौन उपाइ ॥ १०९ ॥

---

[१०१] धन्य–गम्य (काशि०); मन्य (लीथो)।
[१०५] हूँ सौं नही –होतै बनही (लीथो)। मेरई–मोरई (वही)।
[१०७] मने–मना (सर०)।
[१०८] सुनति–सनत (सर०)।
[१०९] लखाइ–देखाइ (सर०)।

प्रेमगर्विता, यथा

सखि तेरो प्यारो भलो दिन न्यारो ह्वै जात।
मोतेँ नहि बलबीर कौँ पल बिलगात सोहात ॥ ११० ॥

गुणगर्विता, यथा

अरी मोहनै मोहि दै कि तौ मोहि दै बीन।
करौं घरी आधीन मैँ करौँ हरी आधीन ॥ १११ ॥

मानवती, यथा

गई एँठि तियभ्रुअ धनुष नवत न जतन अनेक।
लाल जाइ कीजै सरल हृदय आँच की सेँक ॥ ११२ ॥

अन्यसंभोगदुःखिता, यथा

यह केसरि के दार मैँ लागी इती अबार।
केसर के सर कुच लगे नहि ढिग हरि केदार ॥ ११३ ॥
स्वेद थकी पुलकित जकी कंपित तनु कँपि भीत।
अधर निरंग बकी बसन बदल्यो हेत प्रतीत ॥ ११४ ॥
अली भले तनसुख लह्यो मेरैँ हर्ष बिसेषि।
मनभावन की यह बिमल बकसी सारी देखि ॥ ११५ ॥
रोम रोम प्रति सौतितन लखि लखि पतिरति-भाइ।
तियहिय रिसि-दावा बढ़ै दावा ज्योँ तृन पाइ ॥ ११६ ॥

अथ अष्टनायिका-लक्षण, अवस्थाभेद तेँ

आठ अवस्थाभेद तेँ दस बिधि बरनी नारि।
लक्षन सबके देखिकै क्रम तेँ लक्षि निहारि ॥ ११७ ॥

(छप्पय)

पीउ बस्य स्वाधीन, मिलै कहुँ रमि खंडित पति।
बिप्रलब्ध संकेत सून देखति दुख प्रगटति।

---

[११०] इसके अनंतर काशि० और सर० में यह दोहा अधिक है—
सकल अंग बिहवल करै करै न गुरजन-भीति।
सैनहि में राख्यो चहै नाह नीद की रीति ॥
[११२] कीजै०—सीधी करौ (सर०)। सरल—सूल (काशि०)।
[११३] यह—वह (काशि०); तैं (सर०)। लागी—लाई (सर०)।

पिय-आगम-सुख-सोच बाससेज्या उत्का तिय।
कलही झुकि पछिताइ मिलनु साधै अभिसारिय।
दै अवधि गयो परदेस पिय प्रोषितपतिका सहति दुख।
दुख चलत प्रबत्स्यत्प्रेयसी आगतपति आगमन-सुख ॥ ११८ ॥

स्वाधीनपतिका, यथा (दोहा)

भूषित संभु-स्वयंभु-सिर जिनके पग की धूरि।
हठ करि पाय झँवावती तिन सौं तिय मगरूरि ॥ ११६ ॥

परकीया

दाँउ घात लै आइये लखिये ठाँउ कुठाँउ।
नाँउ धरै बिनु जाने ही नाँउ चवाई गाँउ ॥ १२० ॥
अनुरागिनि की रीति यह गनै न ठौर कुठौर।
पितु-अंकहु निधरक तकत मित्र पद्मिनी ओर ॥ १२१ ॥

खंडिता, यथा

भाल अधर नैननि लसै जावक अंजन पीक।
न्हान कियेँ मिटि जाइगी लाल बनी छबि ठीक ॥ १२२ ॥
आए लाल सहेट तेँ मान्यो मैँ सु बिसेषि।
किंसुक-दल हिय मैँ लग्यो नखरेखा सम देखि ॥ १२३ ॥

विप्रलब्धा, यथा

फिरी बारि बृषभान की लखि न निकेत सुजान।
बदनचंद दिनचंद भो सीतभानु बृषभानु ॥ १२४ ॥
अस्रु ढरे संकेत लखि परे सकज्जल गात।
बिथा लिख्यो निज बाल सो बलि चंपक के पात ॥ १२५ ॥

---

[११८] सहति–सही (काशि०); सहित (लीथो)।
[१२०] नाउँ०–लाल जने ही बिन धरै (काशि०, लीथो)।
[१२२] लाल–कान्ह (काशि०)।
[१२३] लग्यो–लगे (सर०)।
[१२४] फिरी०–चली लली (सर०)।
[१२५] बिथा०—लिख्यो सो बाल निज दु [+ख] बिथा (काशि०); कछू लिख्यो सो लखि पर्‌यो (सर०)।

वासकसज्जा, यथा

जानि जाम जामिनि गई पिय - आगम अनुमानि ।
झपि नैननि तिय सैन मिस बिदा करी सखियानि ॥ १२६ ॥
बैठ ठानि सब अलिन सोँ पिय सहेट-थल जानि ।
सुंदरि मान सयान धरि ड्योढ़ी पौढ़ी आनि ॥ १२७ ॥

उत्कंठिता, यथा

निसिमुख आई देखिकै ससिमुख आई भाति ।
चली जाति पिय राति लखि लली जाति पियराति ॥ १२८ ॥
आजु मिलत हरि बंचकहि नजरि बंद करि लेउँ ।
जतन कराऊँ प्रात सोँ अब कहुँ जान न देउँ ॥ १२९ ॥
नहे और के नेह करि रहे आपने धाम ।
कितै रमि रहे अलि कितै बिरमि रहे घनस्याम ॥ १३० ॥

कलहांतरिता, यथा

कहे आनही आन के हौँ भरि रही अयान ।
आन करौँ अब कान्ह सोँ कबहूँ करौँ न मान ॥ १३१ ॥

(सवैया)

नेह लगावत रूखी परी नत देखि गही अति उन्नतताई ।
प्रीति बढ़ावत बैरु बढ़ायो तूँ कोमलि बात गही कठिनाई ।
जेती करी अनभावती तैँ मनभावती तेती सजाइ कोँ पाई ।
भाकसी भौन भयो ससि सूर मलै बिष ज्यौँ सर सेज सुहाई ॥ १३२ ॥

(दोहा)

कुल सोँ मुहुँ मोरे बन्यो बोर्‌यो लाज जहाजु ।
हरि सोँ हित जोर्‌यो दई सोऊ तोर्‌यो आजु ॥ १३३ ॥

अभिसारिका, यथा (सवैया)

निसि स्याम सजे पट स्याम सबै तऊ सिंजित सोरन ही सोँ डरै ।
गहि अंगहि अंग अडोल कियो बलयानि को बोल सुन्यो न परै ।

---

[१२७] धरि—करि (सर०) ।
[१२९] हरि—वहि (सर०) ।
[१३४] सोरनही—सोरन हूँ (सर०) ।

जलजातमुखी प्रिय के थल जात लजात हरैं हरैं पाव धरै।
गुरु लोगनि को लगु आहट लै हठि किंकिनिया कटि सौं पकरै ॥१३४॥

(दोहा)

जिहि तनु दियो जु नहि दुरै निसि यहि नीलहि चीर।
तिहि बिधि ताहि अभिसारिकै दियो भँवर की भीर॥ १३५ ॥
भलैं चल्यो मिलि जोन्ह-रँग पट भूषन दुति अंग।
मुख न उघारै बिधुबदनि जैहै उघरि प्रसंग॥ १३६ ॥
कारी रजनि उज्यारहूँ तनदुति बढ़ै अपार।
बिधि करि दियो निहारु अब दिनहि बन्यो अभिसार॥ १३७ ॥

प्रोषितपतिका, यथा

हरि तन तजि मिलतो तुम्हैं प्रानप्रिया को प्रान।
रहती जौ न घरी घरी अवधि परी दरम्यान॥ १३८ ॥
वही कदंब कलिंदजा वही केतकी-कुंज।
सखि लखिये घनस्याम बिनु सबमैं पावक-पुंज॥ १३९ ॥

आगतपतिका, यथा (कबित्त)

धौरे धौरहर पर अमल प्रजंक धरि
दूरि लौं बगारि दीन्ह्यो चाँदनी सुछंद कौं।
फूलनि फैलाइ पट-भूषन पहिरि सेत
सेज पर बैठी मिलि स्याम सुखकंद कौं।
मृदु मुसुकाइ हिमकर तन हेरतहीं
कहिबे कौं दाँउ पर्‍यो प्यारे नंदनंद कौं।
कारो मुख कीन्हे जात दुरन दिगंत अब
काहे कौं लजावति है प्यारी चंद मंद कौं॥ १४० ॥

(सवैया)

देखादेखी भई ग्वैंडहि गाँउ के बोलिबे की पैं न दाँउ रही है।
साधि घरी घर जैबो भलो कहि द्वारही प्यारे सलाह गही है।
आपने आपने भौन गए न दुहून की चातुरी जात कही है।
ह्याँ मिसिही मिसिकै रिसिकै गृहलोग सौं न्यारो ह्वै प्यारी रही है ॥१४१॥

को लगु०–आहट लै हठि किंकिनिया (लीथो)।

[१३५] नीलहि–निसलहि (लीथो); नीले (काशि०)। बिधि०–बीते (लीथो)। दियो–दई (सर०)।

आगच्छत्पतिका-लक्षण (दोहा)

आगच्छत्पतिका जहाँ प्रीतम आवनहार।
पत्री सगुन सँदेस तेँ उपजै हर्ष अपार ॥ १४२ ॥

यथा (कबित्त)

कंचन कटोरे खीर खाँड भरि भरि तेरे
हेत उठि भोर ही अटान पर धारिहौं।
आपने ही हार तेँ निकारि नीको मोती कंठ
भूषन सँवारि नीको तेरे गल डारिहौं।
एरे कारे काग तेरे सगुन सुभाय आज
जौ मैँ इन अँखियन प्रीतम निहारिहौं।
और प्रान प्यारे पै नेवछावरि करौंगी, मैं
लै तन मन धन प्रान तोहि पर वारिहौं ॥ १४३ ॥

प्रवत्स्यत्प्रेयसी (दोहा)

प्रात चलत परदेस कौं तेरो पति परभात।
तूँ चलि रहिहै अगमनै कै बनिहै सँग जात ॥ १४४ ॥

(सवैया)

भूख औ प्यास सबै बिसरी जब तेँ यह कानन बात बजी है।
आपने प्रान पयान गुनै सु जु प्यारे पयान की साज सजी है।
बेगि चलौ दुरि देखौ दसा यह जानि मैँ लाल तुम्हैँ बरजी है।
रावरे जौ पलु आधे गहे तौ सो राधे न जीहै न जीहै न जीहै ॥ १४५ ॥

(दोहा)

फेरि फिरन कौँ कान्ह कत करत पयान अकाथ।
रही रोकि मग ग्वारनी नेहकारनी साथ ॥ १४६ ॥

---

[१४२] पत्री–सपनो (सर०)।
[१४३] धन–यन [जन] (सर०)।
[१४४] अगमनै–आगमन (काशि०, लीथो)।
[१४५] औ०–पियास (काशि०)।

तिनि तिनि बिधि मुग्धादि को भेद दसौ मैं मानि।
डरु लज्जा अरु काम तें बुधजन लैहैं जानि॥ १४७॥

इति अष्टनायिका

अथ उत्तमा-मध्यमा-अधमा-लक्षण

होइ नहीं ह्वै करि छुटै नाहकहूँ जहँ मान।
कही उत्तमा मध्यमा अधमा तीनि प्रमान॥ १४८॥

उत्तमा, यथा

जावक को रँग भाल तें अधर तें कज्जल-लीक।
पट गोयो तिय पोंछिकै पिय-नैननि तें पीक॥ १४९॥
जाको जावक सिर धरौ प्यारे सहित सनेह।
हमकों अंजन उचित है उन चरनन की खेह॥ १५०॥

मध्यमा, यथा

बदन-प्रभाकर लाल लखि बिकस्यो उर-अरबिंद।
कह्यो रह्यो क्यौं निसि बस्यो हुत्यो जु मान-मलिंद॥ १५१॥

अधमा, यथा

नाह-गुनाह कहूँ नहीं नाहकहूँ जहँ मानु।
देख्यो बहुतेरो न बहु तेरो सरिस अयानु॥ १५२॥
दरपन मैं निज छाँह सँग लखि प्रीतम की छाँह।
खरी ललाई रोस की ल्याई अँखियन माँह॥ १५३॥

इति स्वकीया परकीया

अथ गणिका-लक्षण

केवल धन सौं प्रीति बहु गनिका सोई लेखि।
येई सब यामैं गुनौ गर्बितादि सु बिसेषि॥ १५४॥

---

[१४७] जानि०—जानिकै बारक मैं (सर०)। जौ पलु०—के बिरहा पल आधे सो (काशि० +); पंथ गहे पग आधे के (सर०)।
[१५०] है०—तिन चरनन तर की (काशि०, सर०)।
[१५१] कह्यो०—कहौ रहै (काशि०)।
[१५२] देख्यो—देखो (लीथो)।
[१५४] बहु—जिन्ह (काशि०, सर०)।

बिस्तर जानि न मैं कह्यौं उदाहरन सब मित्त ।
धन रति ब्यंगि लखाउ हित कीन्ह्यो एक कबित्त ॥ १५५ ॥

(सवैया)

ढिग आइकै बैठी सिंगार सज नख तें सिख लौं मुकता - लरियाँ
मुसुकाइकै नैन नचाइकै गाइ कियो बस बैन गुवालरियाँ ।
दरसावत लाल कौं बाल नई जु सजैं सिर भूषन झालरियाँ ।
छबि होती भली गजमोती के बीच जु होतीं बड़ी बड़ी लालरियाँ ॥१५६॥

अथ चतुर्विध नायिका

पद्मिनी-चित्रिणी-हस्तिनी-शंखिनी-लक्षण

भई पद्म-सौगंध सौं अंग जाकी वही पद्मिनी नाइका बर्न्य कीजै ।
रली राग चित्रोपमा चित्रिनी है सबै भेद तौ कोक सौं जानि लीजै ।
कहे संखिनी हस्तिनी नाम जो हैं सो तौ ग्राम्य नारीनहीं मैं गनीजै ।
इन्हैं सुभ्र सोभामई काव्य के बीच केहूँ नहीं बर्निबो चित्त दीजै ॥१५७॥

इति नायिका

अथ नायक-लक्षण (दोहा)

छबिमै गुनमै ग्यानमै धनमै धीरधुरीन ।
नायक रजमै रसनि मै दान दया लौ-लीन ॥ १५८ ॥

(कबित्त)

अंगनि अनूप मरकत मनि संचि संचि
मदन - बिरंचि निज हाथनि बनायो है ।
जानै नयजूह बलबिद्यनि को ब्यूह
सील - सुषमा - समूह करुनायतन ठायो है ।
चंदन की खौर उर खीन कटितट 'दास'
केसरि - रँगनि पट निपट सोहायो है ।
इंदीवरबदन गोबिंद गोपबृंदन मैं
इंदुजुत नखत बिनिंद छबि पायो है ॥ १५९ ॥

(दोहा)

चितवनि चित चोरै अली अति अनंद की दानि ।
नंदनंद मुखचंद की मंद मंद मुसुकानि ॥ १६० ॥

पति-उपपति-वैशिक-लक्षण

निज तिय सौं परतियन सौं अरु गनिका सौं प्रीति।
पति उपपति बैसिक त्रिबिधि नायक कहै सुरीति ॥ १६१ ॥

पति नायक, यथा

पियत रहत नित दुलहिया-बदनसुधाधर - जोति।
प्यारे नैन - चकोर कौं कबहूँ निसा न होति ॥ १६२ ॥
कल न परै पलकौ भटू लटू कियो तुव नेह।
गोरे मुहुँ मन गड़ि रह्यो रहै अगोरे गेह ॥ १६३ ॥

उपपति, यथा

सुरस भरे मानसहु तैं ऐंचि लियो झख-चित्त।
मृगनैनी बेनी भई मोहि कुबेनी मित्त ॥ १६४ ॥

(सवैया)

हेरत घातैं फिरै चहुघा तैं औनात है बातैं दवाल तरी सौं।
साधे रहै जिय राधे रसीली दृगाधे निहारै न काहू दरी सौं।
देखति हौं अलबेले विचित्र कौं आली चरित्र मैं चारि घरी सौं।
आहट पाइ रहै ठहराइ न डीठि डोलाइ सकै झँझरी सौं ॥१६५॥

वैशिक, यथा (दोहा)

सुबरनबरनी लै गई बिहसति मन - धन साथ।
कहा करौं कैसे जियौं कछू न मेरे हाथ ॥ १६६ ॥

अनकूल-दक्षिण-शठ-धृष्ट-लक्षण

इक-तियब्रत अनुकूल है दच्छिन सील समान।
सठ कपटी मिठबोलनो ढीठो धृष्ट निदान ॥ १६७ ॥

अनुकूल, यथा

पगु झाँवत भूषन सजत लखत हुकुम की आस।
राधेपति कहिये तुम्हैं कैधौं राधेदास ॥ १६८ ॥

---

[१६५] अलवेले—अलवेली (काशि०, लीथो)। बिचित्र—चरित्र (लीथो)।

दक्षिण, यथा

बर बृजबनितन को हियो बिमल आरसी-भाइ ।
मूरति मोहनलाल की सबमैं परति लखाइ ॥ १६९ ॥
सब तिय निज निज प्रेममय मन मन गुनै स-नेह ।
लाल आरसी मैं लखै सबको बदन सनेह ॥ १७० ॥
मोहू पास जु हास की बातैं कहत लजात ।
तेहि सखि बहु नायक कहै कहै न लायक बात ॥ १७१ ॥

शठ नायक, यथा

तो उर बचन सरोस कढ़ि अधरनि आइ मिठाइ ।
मिलै खटाई मधुरईं खरो स्वाद सरसाइ ॥ १७२ ॥
मूँदि जात है आभरन सजत गात छबि चारु ।
मो रुचि राख्यो दूरि करि भामिनि भूषन भारु ॥ १७३ ॥
रिस रसाइ सरसाइ रस बतिया कहत बनाइ ।
देह लगावत लाइ फिरि नेह लगावत आइ ॥ १७४ ॥

धृष्ट नायक, यथा

सीस पिछौरी और की छला और को हाथ ।
चले मनावन भावती भलैं बने बृजनाथ ॥ १७५ ॥
कुलटन सौं रसकेलि करि रति-श्रम-जल सौं न्हाइ ।
लाज-लीक पिय दृगनि सौं दीन्हो धोइ बहाइ ॥ १७६ ॥

मानी-प्रोषित-चतुर-नायक-लक्षण

मानी ठानै मान जो बिरही प्रोषित जानि ।
बचनबिदग्ध क्रियाचतुर नायक चतुर बखानि ॥ १७७ ॥

---

[१७०] गुनै–गुहै (लीथो) । स-नेह–सप्रेम (काशि०, सर०) । वदन सनेह–बदन सनेम (वही) ।
[१७२] कढ़ि–ढिग (सर०) ।
[१७४] रसाइ०–सरसाइ रस हरस (सर०) । देह–हियैं (वही) ।
[१७५] और–कौन (सर०) भावती–भांवतिहि (वही) ।
[१७६] जल०–स्वेद अन्हाइ (सर०) । दीन्हो–दीन्ही (काशि०, सर०) ।

मानी, यथा

करि उपाउ बलि जाउँ पुनि मान धरौ मन मानि।
बोरन चाहत फेरि बृज बाल बरषि असुवानि॥ १७८॥

प्रोषित, यथा

स्यामा सुगति सुबंस की आठौ गाँठि अनूप।
छुटी हाथ तैँ पातरी प्यारी छरी-स्वरूप॥ १७९॥
लखि जु रंक सकलंक भो पंकज रंक मयंक।
कब प्रजंक सु मयंकमुखि भरबी अंक निसंक॥ १८०॥

वचनचतुर, यथा

कालिंदीतट लेहु लै कदमकुंज की छाँह।
कहाँ दही लै जात हौ दहन दुपहरी माँह॥ १८१॥
गहत न एक सु द्यौस इहि बिमल बुद्धि जिन पाँहि।
परघर बालनि जड़ जनक पठवत अगहन माँहि॥ १८२॥
नेहभरे दीपति बरै फूल झरै बतिआनि।
लखी लाल तुम बाल नहिँ दीपमालिका जानि॥ १८३॥

क्रिपाचतुर, यथा

चली भवन कौँ भामिनी जानि जामिनी जाम।
पहुँचैबे मिस सँग लगे रूप-रगमगे स्याम॥ १८४॥
चाँल ऐये आतुर कहूँ न्हैये जाइ यकंत।
भये नये जापक न ये करिहैँ जप को अंत॥ १८५॥

उत्तम-मध्यम-अधम-नायक-लच्छण

उत्तम मनुहारिन करै मानै मानिनि-संक।
मध्यम समयी अधम निजु अरथी निलजु निसंक॥ १८६॥

उत्तम, यथा

बाल रिसौँहैँ ह्वै रही भौँहैँ-धनुष चढ़ाइ।
लाल सँकित पीछे खरे सकत न सौँहैँ जाइ॥ १८७॥

---

[१८०] जु—सु (लीथो)।
[१८२] जनक—गनक (काशि०, सर०)।
[१८४] रगमगे—रंगमय (सर०)।

मध्यम नायक, यथा

चरचा करी बिदेस पिय क्यौं हौं मिसु ह्वै आपु ।
सुनि मानिनि उठि अंक मैं आइ लगी चुपचापु ॥ १८८ ॥

अधम नायक, यथा

काह करौं कपटी छली तापर निलज निसंक ।
मान कियेहूँ मोहिं सखि भरत बऱ्याई अंक ॥ १८९ ॥

नायक-सखा-लक्षण

पीठिमर्द बिट चेटकी बिदुष और अनभिज्ञ ।
चतुर सखा नायक तिन्हैं जानत कबिताबिज्ञ ॥ १९० ॥

(अरिल्ल)

पीठमर्द करै झूठ मान जो है फुरो ।
सो बिट जो अति कामकला बिच चातुरो ।
चेटकु देइ भुलाइ करै जु सुपास कौं ।
तौन बिदूषक जौन करै परिहास कौं ॥ १९१ ॥

(दोहा)

ताहि कहै अनभिज्ञ हैं है जु न संज्ञा दक्ष ।
सुन्यो सखा पुनि नायकहु लखि लीजहु कहुँ लक्ष ॥ १९२ ॥
यहि बिधि औरौ जानिये जितने तिय के जोग ।
तितने नायक होतु पै नहि बरनत कबि लोग ॥ १९३ ॥

दर्शन-वर्णन

दरसन चारि प्रकार को सौंतुख सपनो चित्र ।
श्रवन सहित लक्षन प्रगट उदाहरन सुनि मित्र ॥ १९४ ॥

---

[१८८] पिय०—की पिय क्यौं हू मिस आपु (काशि०, सर०) ।
[१८९] काह—कहा (सर०) । कियेहूँ—ठानेहू (वही) । भरत—गहति (वही)
[१९०] काशि० में नहीं है ।
[१९२] कहै—कहत (काशि०, सर०) । पुनि-पइ (लीथो) ।
[१९३] काशि० में नहीं है ।

सौंतुख-दर्शन

पद-पुष्कर ह्वै दाहिने कुच कांत्या गिरि लाइ।
बदन-सुरसती सेइ दृग बेनी बस्यो बजाइ ॥ १६५ ॥
परी हठीली हरि नजरि जूरो बाँधत जाइ।
भुज अभरन मैं करन मैं चिकुरन मैं लपटाइ ॥ १६६ ॥

स्वप्न-दर्शन

नँदनंदन सपने लख्यो कहूँ नदी के तीर।
जागि करति तिय ठौरहीं नदी दृगनि के नीर ॥ १६७ ॥

चित्र-दर्शन

तन-सुधि-बुधि दीन्हो रितै चितै चित्रहीँ बाल।
जानत नहीँ समीप ही खरे लाल गोपाल ॥ १६८ ॥

श्रवण-दर्शन

मनमोहन-छबि प्रगट करि सखी तिहारे बैन।
तेहि दर्सन कौँ नैन हैँ श्रवन हमारे ऐन ॥ १६९ ॥

इति आलंबन विभाव

अथ उद्दीपन-विभाव-वर्णन

सखी दूतिका प्रथमहीँ उद्दीपन मैँ जानि।
बरनौँ जाति-प्रमान जो चतुराई की खानि ॥ २०० ॥

धाइ सखी, यथा

तन की ताप बुझाइहौँ ल्याइ सीतता-धाम।
सोच तजौ हौँ धाइ हौँ करिहौँ पूरन काम ॥ २०१ ॥

जनी, यथा

ठकुराइनि अवलोकिये मुकुतमाल की भाँति।
बैठी तरुन तमाल पर बिमल बकन की पाँति ॥ २०२ ॥

नाइनि, यथा

लाल महाउर अनखुले लली लगै तुव पाइ।
मलिन बिमल तन नाह के करहि न नेह लगाइ ॥ २०३ ॥

---

[१६५] पद०--पट-पुटकर (काशि०)।

नटी, यथा

दूरि रसिक पति-बरत करि चढ़ी कालि मैं बंस।
फेरि न तुम फेरो कियो वहि दिसि बृज-अवतंस॥ २०४॥

सोनारिनि

बनी लाल मनभावती पहुँची मेरे धाम।
अब तुमहूँ तूरन चलौ पूरन करिये काम॥ २०५॥

परोसिनि

लखी जु ही मो भौन ढिग कनकलता तुम लाल।
अब वह बरषति रहति है निसि दिन मुकतामाल॥ २०६॥
कै चलि आगि परोस की दूरि करौ घनस्याम।
कै हमकौं कहि दीजिये बस औरहाँ ग्राम॥ २०७॥

चुरिहारिनि

लाल चुरी तेरे अली लागी निपट मलीन।
हरियारो करि देउँगी हौं तो हुकुम-अधीन॥ २०८॥

पटइनि

बड़े बड़े दाना लगे हैं जेहि सुमिरन माहि।
लली भली तेहि बीच मैं गाँठि राखिबी नाहि॥ २०९॥

बरइनि

बरइहि निसा करार नहि करत चितायो चेतु।
पान धरति मैं आजु धन मिलिहैं बनिहै हेतु॥ २१०॥
भागिमान सुनि राधिके तो समान को आन।
कान्ह पान साज्यो करै बैठो जासु दुकान॥ २११॥

---

[२०५] तूरन–नूरन (काशि०)।

[२०६] लता–बरन (सर०)। वह–सो (वही)।

[२०९] लली–अली (सर०)

[२१०] करार–कराइ (लीथो)। करत०–सुनत बितायो (वही); करत बितायो (सर०)। मिलिहैं–मिलहीं (काशि०, सर०)।

[२११] बैठो–बैठे (काशि०)।
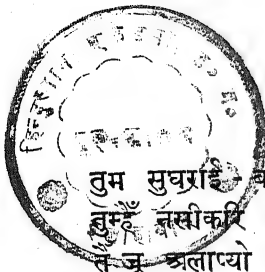
रामजनी

तुम सुघराई-बस कियो लाल घनेरी बाम।
तुम्हैँ बसीकरि मेरियै ललित गूजरी स्याम ॥ २१२ ॥
तैं जु अलाप्यो मोहिँ मिलि वहै अपूरब राग।
सुनि हरि पूरब राग सौं गहै पूर बैराग ॥ २१३ ॥

संन्यासिनि

को बरजै लीन्हे रहौ सकति कुलभगति बाम।
गोरी पिय की रति बिना नहि पूजै मन-काम ॥ २१४ ॥

चितेरिनि

बहु दिन तैं आधीन लखि मैं लिखि दियो बनाइ।
चित्र चितै तुव चित्रिनी भए चित्र जदुराइ ॥ २१५ ॥

(सवैया)

फूल्यो सरोज बनाइकै ऊपर तापर खंजन द्वै थिरकाइहौँ।
बीच अनोखो सुवा उनयो इक बिंब को लालच देहौँ बताइहौँ।
श्रीफल से फल द्वैक निहारिकै रीझिहौ लाल कहौँ समुझाइहौँ।
कंचन की लतिका इक आजु अनूप बनाइ तुम्हैँ दरसाइहौँ ॥ २१६॥

धोबिनि (दोहा)

निपटहि भर्‍यो सनेह तूँ हरि निसि अंग लगाइ।
लली पीतपट - मलिनई कैसैँ मेटी जाइ ॥ २१७ ॥

रँगरेजिनि

निसि आए रँग पाइहौ अब ही मोहै काम।
आवति ह्वैहै बसन कौं राजलाडिली बाम ॥ २१८ ॥

कुदेरिनि

तेरी रुचि के हैँ लट्टू लाल मेरे ही धाम।
भली खेलिबे की समै कहौ तो ल्याऊँ बाम ॥ २१९ ॥

---

[२१२] रामजनी—गंधर्बिनी (लीथो)।
[२१७] निसि-मिलि (सर०)। मेटी—मेट्यौ (वही)।
[२१८] मोहै—मोकौँ (सभा)।
[२१९] कहौ—कहि (सभा)।

अहीरिनि

करौ जु हरि सौं परचयन आपुन गोरस लेहु।
माख न मानौ राधिके दही बृथा ही देहु ॥ २२० ॥

बैदिनी

मैन-बिथा जानति भटू नारी धरै न धीर।
होइ बरी जुरसाल की तहाँ जाइ मिटि पीर ॥ २२१ ॥

गंधिनि

सरस नेह की बात हौँ तो पै कहत डेराति।
बिनय करत धन मिलन की तू रूखी परि जाति ॥ २२२॥

मालिनि

जेहि सुमनहि तूँ राधिके लायो करि अनुराग।
सोई तोरत सावँरो आपुहि आयो बाग ॥ २२३ ॥

(कबित्त)

जोहैं जाहि चाँदनी की लागत मलीन छबि
चंपक गुलाब सोनजुही जो तिहारी है।
जामते रसाल लाल करुनाकदंब बीते
बाढ़िहै नवेली सुनि केतकी सिधारी है।
कहै 'दास' देखौ इहि तपन वृषादित की
कैसी बिधि जाति दुपहरिया नवारी है।
प्रफुलित कीजिये बरषि रस बनमाली
जाति कुँभिलाति बृषभानजू की बारी है ॥ २२४ ॥

(दोहा)

मेरे कर तें छीनि लै हरि सुनि तेरो हार।
निज गूँध्यो कंपित करनि कैसो बन्यो सुढार ॥ २२५ ॥

---

[२२१] धरै–धरत (सर०, सभा)।
[२२२] परि–है (सभा)।
[२२३] जेहि–जो (लीथो)। सुमनहि–सुमनन (सर०)।
[२२४] कदंब–कएब (सर०)। बाढ़िहै–चढ़िहै (काशि०)।

अथ सखी-लक्षण

तिय पिय की हितकारिनी अंतरवर्तिनि होइ।
और बिदग्धा सहचरी सखी कहावै सोइ ॥ २२६ ॥

हितकारिणी सखी (कबित्त)

बिमल अँगौछे पोंछि भूषन सुधारि सिर
आँगुरिन फोरि तिन तोरि तोरि डारती।
उर नखछद रदछदनि मैं रदछद
पेखि पेखि प्यारे कौं झुकति झझकारती।
भई अनखौंहो अवलोकति लली कौं फेरि
अंगन सँवारती डिठौना दै निहारती।
गात की गोराई पर सहज भाराई पर
सारी सुंदराई पर राई-लोन वारती ॥ २२७ ॥

अंतर्वर्तिनी, यथा (दोहा)

बात चलति अति तन तपत बात चलत सियराइ।
बेदन बूझति है न यह बैद न बूझति हाइ ॥ २२८ ॥

बिदग्धा सखी, यथा

बरज्यो कर सुक लेत मैं याही बर उहि ठौर।
लग्यो ठौर ही ठौर खत लगी और की और ॥ २२९ ॥
आवत अंजन अधर दै भाल महाउर लाल।
हँसी खिसी ह्वै जाइ जौ सही गुनै कहुँ बाल ॥ २३० ॥

सहचरी, यथा

मुदित सकल तिय कुमुदिनी निरखि निरखि बृज-इंदु।
बलि मुद्रित कत होत है तुव दृग ज्यौं अरबिंदु ॥ २३१ ॥

२२७] फोरि०—फोरि फोरि तृन तोरि (सभा)
[२२८] तन०—तपति पति (काशि०, सर०, सभा)।
[२२९] याही०—यही बार यहि (सभा)।
[२३०] गुनै—गुनौ (काशि०)।

दूती-लक्षण

पठई आवै और की दूती कहिये सोइ।
अपनी पठई होत है बान-दूतिका जोइ ॥ २३२ ॥

दूती-भेद

अनसिखई सिखई मिली सिखई एकहि जाइ।
उत्तम मध्यम अधम यौं तीनि दूतिका भाइ ॥ २३३ ॥

उत्तम दूती, यथा

हिय हजार महिला भरी वहै अमाति न स्याम।
करति जाति छामोदरी देह छाम तैं छाम ॥ २३४ ॥
बिलखि न हरि बिद्रुम कहत तुव अधरन बिन जान।
स्वाद न जानै तेहि लगै मिसिरी फटिक समान ॥ २३५ ॥

मध्यम दूती, यथा

कहत मुखागर बाल के रहत बन्यो नहिँ गेहु।
जरत बाँचि आई ललन बाँचि पाति ही लेहु ॥ २३६ ॥

अधम दूती, यथा

लाल तुम्हैँ मनभावती दीन्ह्यो सुमन पठाइ।
माँग्यो ज्वर की औषधी कहौ कहौँ त्यौँ जाइ ॥ २३७ ॥

बानदूती-लक्षण

हित की, हित अरु अहित की, अरु अहितै की बात।
कहै बानदूतीन के गुन तीन्यौ गनि जात ॥ २३८ ॥

हित, यथा

कियो चहौ बनमाल तौ आजु रहौ इहि धाम।
फूलमाल कौँ आइहै फूलमाल सी बाम ॥ २३९ ॥

---

[२३२] है–सो (सर०, सभा)।
[२३४] भरी–खभरि (सर०)। न–किन (वही)।
[२३५] जानै–जानत (सर०, सभा)। लगै–लगत (वही)।
[२३७] माँग्यो–माँगे ज्वर के औषधै (काशि०, लीथो)।
[२३९] तौ–जौर (सर०)।

हिताहित, यथा

पहिरि स्याम पट स्याम निसि क्यौं आवै बर बाल।
होउ कितोऊ निबिड़ तम दुरत न बरत मसाल ॥ २४० ॥

अहित, यथा

पावति बंदनहीन अरु दावन वैरु बिसाल।
है न बरी असतीन क्यौं चहौ एकतहि लाल ॥ २४१ ॥

अपरं च उद्दीपन-भेद

सुरितु चंद सुर बास सुभ फल अरु फूल-समाजु।
अवलोकन आलाप मृदु सब उद्दीपन-साजु ॥ २४२ ॥

ऋतु वा चंद को उदाहरण (कबित्त)

परम उदार महाराज रितुराज आजु
बिमल जहानु करिबे की रुचि ठाई है।
सीतकर-रजक रजाइ पाइ ताही समै
अंबर की सोभा करि उज्जल दिखाई है।
छटा जनि जानौ तरु अटा औ दिवालनि मैं
ब्यौंत करि आछी बिधि वाही सौं मढ़ाई है।
चहूँ ओर अवनि बिराजै अवदात देखौ
ऐसी अदभुत एक चाँदनी बिछाई है ॥ २४३ ॥

सुर को उद्दीपन—(कबित्त)

भूल्यो खान-पान भूली सुधि बुधि ज्ञान-ध्यान
लोगनि कौं भूलि गयो बासु औ निवासु री।
चकि रहीं गैयाँ चारा चौंचनि चिरैयाँ भरि
चितवै निचल नैन चेत-चित नासु री।
द्वै घरी सौं मरी सी परी है बृषभानजाई
जीवत जनावै बहि आवैं दृग आँसु री।
कान्हर तें कैसहूँ छुड़ाइ लै री मेरी आली
कब की बिसासिनि बगारैं बिषु बाँसुरी ॥ २४४ ॥

[२४३] सीत—स्वेत (सर०)। मैं—पै (वही)।
[२४४] बहि—कहै (लीथो); बहे (सर०, सभा)।

सुवास फल फूल को उद्दीपन (सवैया)

भाँतिन भाँतिन फूल बिराजत अंगन अंगन की छबि धारी।
'दास' सुबास-बिभूषित देखिये गुंजत भौंरन की अधिकारी।
चारु सदाफल श्रीफल मैं उरजातन की छबि जात निहारी।
सुंदर स्याम बिलास करौ सुभ सुंदर रूप बनी फुलवारी ॥ २४५ ॥

अवलोकन को उद्दीपन

हारि गो बैद उपावनि कौं करि एकनि कौं बिरहागि सौं बारि गो।
बारि गो एक की भूख और प्यास कछू मृदु हास सौं मोहनी डारि गो।
डारि गो मानो कछू गथ तें इमि ब्याकुल कै इक गोपकुमारि गो।
मारि गो एक कौं मैन के बाननि साँवरो साननि नेकु निहारि गो ॥२४६॥

आलाप मृदु को उद्दीपन (दोहा)

उद्दीपन आलाप ये रससमूह सरसाइ।
प्रीतम तिय सखि दूतिका चार्‌यौ उक्ति सुभाइ ॥ २४७ ॥
मंडन सिक्षा गुनकथन उपालंभ परिहास।
स्तुति निंदा पत्री बिनय बिरह-प्रबोध-प्रकास ॥ २४८ ॥

मंडन, यथा (कबित्त)

पहिरत रावरे धरति यह लाल सारी
जोति जरतारिहू तें अधिक सोहाई है।
नाकमोती निंदत पदुमराग-रंगनि कौं
खुलित ललित मिलि अधर-ललाई है।
औरै तन भूषन सजत निज सोभा- हित
भामिनी तू भूषननि सोभा सरसाई है।
लागत बिमल गात रूपन को आभरन
आभा बढ़ि जात जातरूप तें सवाई है ॥ २४९ ॥

---

[२४५] धारी—भारी (लीथो)। जात—जान (काशि०)।
[२४६] कौं—कैं (सर०, सभा)। करि—उर (वही)। को—के (सर०, सभा, लीथो)। सौं—मौं (काशि०)। मैन—नैन (सर०)।
[२४७] सुभाइ—सुहाइ (सर०)।
[२४९] निंदत—निंदक (लीथो)। निज—नित (काशि०)।

शिक्षा, यथा (दोहा)

गहि बंसी मन-मीन कौं ऐंचि लेत बरजोर।
डारि देत दुख-जाल मैं अलि यह महर-किसोर ॥ २५० ॥
फिरि न बिसारी बिसरिहै कियैं कोरि उपचार।
बीर सुनत कत बाँसुरी बारबार कढ़ि बार ॥ २५१ ॥

(कवित्त)

इत बर नारी बनि गुरजन-बीच ह्वै ह्वै
सुमन छरी लै कर करी रस-ढारने।
उत मनमोहन सखा लै संग रंग रचि
करत अबीर पिचकारिन सौं मारने।
एरी मिसु फागुन के उदित यह तेरो भाग
हरषि हिये को सोच सकल नवारने।
चलि चलि बौरी बेगि होरी को समाज सजि
आजु तजि लाज बृजराजहि निहारने ॥ २५२ ॥

गुणकथन (सवैया)

बाहिर होति है जाहिर जोति यौं गोपकुमारिन की अवली मैं।
जैसे बिसाल मसाल की दीपति दीपति दीपसमूह-थली मैं।
मोहन रावरी केतिक बात मैं मोहि रही बृषभान-लली मैं।
भाँति भली बतलात अली-सँग जात चली मुसुकात गली मैं ॥ २५३ ॥

उपालंभ (दोहा)

अहे मोहनै ज्यौं हनै दृग-बिषबान चलाइ।
त्यौं किन जाइ जिवाइये अधर-सुधारस प्याइ ॥ २५४ ॥

---

[२५१] फिरि—यौं (काशि०, सर०); अब न (सभा)।
[२५२] गुरजन—गूजरिनि (लीथो)। करी—कढै (काशि० लीथो); करकस (सर०)। चलि—चालु चलि (लीथो)।
[२५४] ज्यौं—जो (सभा०, लीथो)। जिवाइये—ब ज्याइये (सर०, सभा)।

बिथा बढ़ै उपचारहू जिनके सहजै घाइ ।
कहरु कियो तिन मैं दियो कज्जल-जहरु लगाइ ॥ २५५ ॥

परिहास, यथा

हरिनख हरि निसि सहत हैं गहत संक कछु नाहि ।
नए उरज करिकुंभ ए भए तरुनि-तन माहि ॥ २५६ ॥
चंद्रावलि चंपकलता चंद्रभाग ललिता हु ।
बहसि बहसि मिलयो सबनि हसि हसि धरि धरि बाहु ॥ २५७ ॥

स्तुति, यथा (सवैया)

तेरे ही नीको लगै मृग नैननि तोही कौं सत्य सुधाधर मानैं ।
तोही सौं होत निसा हरि कौं हम तोहि कलानिधि काम की जानैं ।
तेरे अनूपम आनन की पदवी इहि कौं सब देत सयानैं ।
तू ही है बाम गोबिंद को लोचन चंदहि तौ मतिमंद बखानैं ॥ २५८ ॥

(दोहा)

अद्भुत अहिनी यह बड़ी बेनी सुषमा खानि ।
दरसतहीं हित ही भरै परसतहीं सुखदानि ॥ २५९ ॥

---

[२५६] इसके अनंतर काशि० सर०, सभा में यह कबित्त अधिक है-

सिंह कटि मेख'ला' स्यों कुंभ कुच मिथुन त्यों
मुखबास अलि गुंजै भौंहैं धनु सीक है ।
बृष'भान' कन्या मीन-नैनी सुबरन अंगी
नजरि तुला में तौलौं रति सी रतीक है ।
ह्वै है बिलगात उर करक कटाछन तें
चहियै गलग्रह तें लोग सुघरीक है ।
कुंडल मकर वारे सों लगी लगन अब
बारहो लगन को बनाउ बन्यो ठीक है ॥

[२५७] बहसि०—बिहँसि बिहँसि (लीथो) सबनि-दुहुन (सर०, सभा) । धरि०—गहि गहि (सर०) ।

[२५८] नीकों०—नीके लखे (काशि०) ।

[२५९] हित०—तौ हित (सभा०) ।

निंदा, यथा (सवैया)

भोरी किसोरी सु जानै कहा उकसौंहँ उरोज भयो दुख भारो।
बूझिये धौं किन मंत्र सिखायो भयो कब तें ब्रन झारनहारो।
झारतु है कर कुंकुम लाइकै देख्यौं मैं जाइकै कौतुक सारो।
खोटो महा यह ढोटो भयो अब छोटो न जानो जसोमति बारो ॥ २६० ॥

(दोहा)

धरो छिनक गिरि हाथ तुम तिय-उर थिर ह्वै मेरु।
देखि सरस सुबरनबरनि स्याम होहु किन जेरु ॥ २६१ ॥
हियो भर्‌यो बिरहागि सौं दियो तुम्हैं तहँ बास।
मोहन मिलि तुम सौं तऊ चाहति सकल सुपास ॥ २६२ ॥

पत्री, यथा

जानि बृथा जिय की बिथा लाजनि लिखी न जाइ।
पतित प्रान बिन प्रानप्रिय तन मैं रह्यो बजाइ ॥ २६३ ॥
तम-दुख-हारिनि रबि कि दृग-सीतलकारिनि चंद।
बिरह-कतल-काती किधौं पाती आनँदकंद ॥ २६४ ॥
बारिधार सी बरत की बूड़त की जलजान।
बिरह-मृतक-संजीवनी पठई पति पतिया न ॥ २६५ ॥

विनय, यथा

बिनय पानि जोरैं करौं तजहि बानि यह बीर।
तुव कर लागत कोर-नख होति लला-ही पीर ॥ २६६ ॥
लखि रसमय चख-झख लगे कढ़त बढ़त अति पीर।
भई सुबेनी रावरी नई कुबेनी बीर ॥ २६७ ॥

विरहनिवेदन, यथा

जिन्हैं कहत तुम सीतकर मलयज जलज अतूल।
यईं उहाँ के रजनिचर अहिसंगी बिस-फूल ॥ २६८ ॥

---

[२६०] अब–यह (लीथो)। छोटो–ढोटो (काशि०)।
[२६५] बरत०–बर भवर तकि बूड़त जलजान (सभा)।
[२६६] तजहि०–सजहि पानि (काशि०)। लला०–लालहिय (वही)।
[२६७] चख–अब (काशि०)। अति–यह (लीथो)। भई–बनी (वही)। नई–मोहि (वही)।

प्रबोध

आजु कह्यो बृषभानजू उन सम दूजो है न
अब नारी तुव लखन कौं आवत है रसऐन ॥ २६९ ॥

सखीकर्म

सखीकृत संकेत-संयोग-कथन

रस बढ़ाइ करि देति हैं सखी दरस-संजोग ।
बचन क्रिया की चातुरीं समुझौ सकल प्रयोग ॥ २७० ॥

रसोत्कर्षण

अवसि तुम्हैं जौ आवनो साँझ समय बृजनाथ ।
राखि जाउ तौ तरुनि-कुचद्वय-संकर-सिर हाथ ॥ २७१ ॥

दर्शन, यथा

देखति आषाढ़ी प्रभा सखी बिसाखा संग ।
लाल लखौ जिहि जपत निति तपत कनकदुति अंग ॥ २७२ ॥

संयोग, यथा

गौरीपूजन कौं गई बौरी औरी बाल ।
तू चलि बलि यहि धौहरे मूरतिवंत गोपाल ॥ २७३ ॥
भले मोहनी मोहनै करि बनकुंज मिलापु ।
फले मनोरथ दुहुँन के चली फूल कौं आपु ॥ २७४ ॥

उक्ति-भेद

पिय तिय तिय पिय सौं कहैं तिय सखि सखि सौं तीय ।
सखि सखि सौं सखि पीय सौं कहैं सखी सौं पीय ॥ २७५ ॥

---

[२६९] कह्यो–नंद (काशि०) ।
[२७१] तुम्है–आजु (सर०, सभा) । आवनो–आइबे (काशि०) । जाउ०–जाइयै कुच (काशि०, सर०, सभा) । संकर–कांत्या (सभा) । सिर–गिरि (वही) ।
[२७२] निति–निज (सभा) ।
[२७५] कहै०–सखी तिय सों (काशि०) ।

कहूँ प्रस्न उत्तर कहूँ प्रस्नोत्तर कहुँ होइ।
स्वतःसंभवी होत कहुँ उक्ति इती बिधि जोइ ॥ २७६ ॥

प्रश्न, यथा

दृग-कमलन की इंदिरा मन-मानस की हंस।
कत बिमान-बनितानि को करति न मान-बिधंस ॥ २७७ ॥

उत्तर, यथा

स्वास-बास अलिगन घिरैं लोग जगै अलि सोर।
तनदुति दरसावै तिन्हैं क्यों आवै इहि ठौर ॥ २७८ ॥

प्रश्नोत्तर, यथा

किये बहुत उपचार मैं सखि कल पलक परै न।
पीत बसन कों चोप तें रहौ लगाए नैन ॥ २७९ ॥

स्वतःसंभवी

सब जग फिरि आवत हुत्यो छिन मेरे मन नीच।
अब क्यों रह्यो भुलाइ है तन्वी-तन के बीच ॥ २८० ॥

इति विभाव

इहि बिधि रस सृंगार को गनौ बिभाव समस्तु।
तिहि बिनु रस ठहरै नहीं निरालंब ज्यों बस्तु ॥ २८१ ॥
आलंबन बिनु कैसेहूँ नहि ठहरै रस-अंग।
उद्दीपन तें बढ़त ज्यों पावक पवन-प्रसंग ॥ २८२ ॥

अथ शृंगाररस को भेद अनुभावयुक्त कथन

सुभ संजोग बियोग मिलि है सिँगार द्वै भाइ।
काहू श्रम मिश्रित मिलै दीन्हो चारि गनाइ ॥ २८३ ॥

---

[२७६] कहुँ–है (सभा०)। इती–रती (काशि०)।
[२७७] मन–भनि (काशि०)।
[२७९] उपचार०–हिय लाज सखि कल पल एक (लीथो)।
[२८०] मेरे–मैं ये (सर०, सभा)।
[२८२] अंग–रंग (सर०)।

संयोग श्रृंगार वा सामान्य श्रृंगार को लच्छण

मिलि बिहरैं दंपति जहाँ सो संजोग सिंगारु।
भिन्न भिन्न छबि बरनिये सो सामान्य बिचारु ॥ २८४ ॥

संयोग श्रृंगार, यथा

तिय-तन-दुति बिपरीति-रति प्रतिबिंबित ह्वै जाइ।
परत साँवरे अंग को हरित रंग दरसाइ ॥ २८५ ॥

सुरतांत, यथा (सवैया)

क्यौंहूँ नहीं बिलगात सोहात लजात औ बात गुने मुसुकात हैं।
तेरी सौं खात हैं लोचन रात हैं सारस-पातहू तें सरसात हैं।
राधिका माधौ उठे परभात हैं नैन अघात हैं पेखि प्रभा तहँ।
लागि गरें अँगिरात जँभात हैं आरस गात भरे गिरि जात हैं ॥ २८६ ॥

(दोहा)

प्रात रात-रति-रगमगी उठि अँगिराति रसाल।
सुखसागर अवगाहि थकि थाह लेति जनु बाल ॥ २८७ ॥

संयोग-संकेत-वर्णन

सूने-सदन सखी-सदन बन बाटिका समेत।
क्रियाचातुरी होत पुनि बहुत सँजोग-सँकेत ॥ २८८ ॥

सूने सदन को मिलन

कस्यो अंक लहि सून गृह रस्यो प्रेमरस नाह।
कियो रसीली बसि बिहसि ढीली चितवनि माह ॥ २८९ ॥

---

[२८५] रति—लखि (लीथो)।
[२८६] खात हैं—खात हौं (सर०); खात हीं (सभा)।
[२८७] जनु—मनु (सर०)।
[२८९] इसके अनंतर काशि० में यह गद्यांश है—यौं नाम लिये तें सखी-सदन बन बाटिका दिक जानबी।

क्रियाचातुरी को संयोग (सवैया)

द्वार खरो भयो भावतो नेह तेँ मेह तेँ आयो उनै अँधियारो।
ऐसे मैँ चातुर आतुर ह्वै मुरली-सुर दै कियो नेक इसारो।
ह्वाँ मनभावती मंदहि मंद गई करिबे कहँ बंद कवारो।
अग मैँ लाइ निसंक ह्वै जाइ प्रजंक बैठाइ लियो पिय प्यारो॥ २९०॥

अथ सामान्य शृंगार मेँ हाव-लच्छण (दोहा)

सम संयोग सिँगारहूँ तिय-कौतुक है हाव।
जाते लखिये प्रीति को बिबिधि भाँति अनुभाव॥ २९१॥
क्रिया बचनु अरु चेष्टै जहँ बरनत कबि कोइ।
ताहू कौँ हावै कहँ अनुभव होइ न होइ॥ २९२॥

हावन के लच्छण (छप्पय)

चितवनि हसनि बिलास ललित सोभा-प्रकासकर।
बिभ्रम संभ्रम-काज बिहित आड़ै लज्जा उर।
किलकिंचित बहु भाव हिये अंगनि मोट्टाइत।
केलि-कलह कुट्टमित कपट-नादर बिबोक चित।
बिच्छित्ति बिना कै थोरही भूषन-पट सोभा बढ़ति।
पिय स्वाँग करै तिय-प्रेम-बस कहियत लीला हाव गति॥ २९३॥

बिलास हाव (दोहा)

भृकुटि अधर को फेरिबो बंक बिलोकनि हास।
मनमोहन को मन हर्‌यो तिय को सकल बिलास॥ २९४॥

(कबित्त)

पै बिनु पनिच बिनु कर की कसीस बिनु
चलत इसारे यह जिनको प्रमान हैँ।

---

[२९०] उनै–जौने (लीथो)। मंदहि०–बंदहि बंद (सर०)। मैँ लाइ–लगाइ (लीथो)।

[२९२] चेष्टै–चेष्टा (सर०); चेष्ट ते (सभा)। अनुभव०–मन मैँ अनुभव होइ (काशि०); अनुभव जोई होइ (सभा)।

[२९४] बिलास–सुपास (सर०)।

आँखिन अड़त आइ उर मैं गड़त घाइ
परत न देखे पीर करत अमान हैं।
बंक अवलोकनि के बान औरई बिधान
कज्जलकलित जामैं जहर समान हैं।
तासौं बरबस बेधैं मेरे चित चंचल कौं
भामिनी ये भौंहैं कैसी कहरु कमान हैं ॥ २९५ ॥

(दोहा)

छ्वै गो अंगहि अंग कहुँ कहा करैगी ग्वारि।
यहि बिधि नंदकुमार पर न दरि अधर सुकुमारि ॥ २९६ ॥
फिरि फिरि चितवावत ललन फिरि फिरि देत हसाइ।
सुधा-सुमन-बरषा निरखि हरष हिये सरसाइ ॥ २९७ ॥

ललित हाव

पट भूषन सुकुमारता थल जल बाग बिहार।
लाल मनोहर बाल को सकल ललित ब्यौहार ॥ २९८ ॥
बाला-भाल प्रभा लहै बर बंदन को बिंदु।
इंदुबधूहि गह्यो मनो गोद मोदजुत इंदु ॥ २९९ ॥
गिलमनहूँ बिहरै न तू लली निपट मृदु अंग।
चुवन चहत एड़ीन सौं ईंगुर कैसो रंग ॥ ३०० ॥
मूदे दृग सरसाइ दुति दुर्‍यो देति दरसाइ।
बलि तुव सँग दृगमिहिचनी खेलै कौनि उपाइ ॥ ३०१ ॥
जानि न बेली बृंद मैं नारि नवेली जाइ।
सोनजुही के बरन तन कलरव बचन सुभाइ ॥ ३०२ ॥

---

[२९५] घाइ–धाइ (सर०)। देखे–पेखे (वही)।
बरबस–बरबट (वही)। कैसी–तेरी (काशि० +)।
[२९६] न–नि (सर०)।
[२९८] सकल–सकुत (सभा)।
[२९९] लहै–लसै (लीथो)।
[३००] लली–अली (सर०, सभा)।
[३०२] के–ते (लीथो)।

चलि दबि या डरु अलिन के लली दुरावत अंग।
तऊ देह दीपति लिये जात गुंजरत संग॥ ३०३॥

विभ्रम हाव

अदल-बदल भूषन प्रिया यातें परत लखाइ।
नूपुर कटि ढीलो भयो सर्कासि किंकिनी पाइ॥ ३०४॥

विहृत हाव

मोँ बसि होइ तौ बसि रहै मोहन मूरति मैन।
उर तेँ उत्कंठा बढ़ै कढ़ै न मुख तेँ बैन॥ ३०५॥
अँचवन दियो न आजु अलि हरि-छबि-अमी अघाइ।
आड़्यो प्यासे दृगनि कौँ लाज निगोड़ी आइ॥ ३०६॥

किलकिंचित् हाव

बाँह गही ठठकी सकी पकी छकी सी ईठि।
चकी जकी बिथकी थकी तकी झुकी सी डीठि॥ ३०७॥

मोट्टाइत हाव

करनि करन कंडू करति पग अँगुठा भुव लेखि।
तिय अँगिराति जँभाति छकि मनमोहन-छबि देखि॥ ३०८॥
काली नथि ल्यायो समुझि वा दिनवाली बात।
आली बनमाली लखेँ थरथरात मो गात॥ ३०९॥

कुट्टमित हाव

नहीँ नहीँ सुनि नहि रह्यो नेह-नहनि मैँ नाह।
त्यौँ त्यौँ भारति मोद सौँ ज्यौँ ज्यौँ झारति बाँह॥ ३१०॥

---

[३०३] चलि दबि या डरु—चली द्रबि कर (लीथो)।
[३०४] पाइ—जाइ (सर०)।
[३०५] उर तेँ—उत्तर (सभा)।
[३०७] सकी—लकी (काशि०)। पकी—थको (सर०, सभा०, लीथो)।
[३०८] कंडू—कंड करन (काशि०); कुंडी करति (लीथो); कँड कूरतिय (सर०)।

बिब्बोक हाव

लगि-लगि बिहरि न साँवरो बिमल हमारो गात।
तुव तन की झाईं परँ लगि कलंक सो जात ॥ ३११ ॥
गुंज गरँ गाँथँ धरँ माथँ मोर परवान।
एतनेहीँ ठिकु ठान पर एतो बड़ो गुमान ॥ ३१२ ॥
ज्योँ ज्योँ बिनवै पगु परै बृथाँ मानहूँ पीय।
त्योँ त्योँ रुख रूखी करै लगी तमासे तीय ॥ ३१३ ॥

विच्छित्ति हाव

देह दुरावत बाल जनि करै आभरन-जाल।
दै सौतिन-दृग-मदहरनि मृगमद-बँदी भाल ॥ ३१४ ॥

लीला हाव

सजि सिंगार सब रावरे सिर धरि मोर पखान।
आजु लेत मनमोहनी घरही मैँ दधि दान ॥ ३१५ ॥
उत हेरौ हेरत किते ओढ़े सुबरन-काँति।
पीत पिछौरी रावरी वहै जरकसी भाँति ॥ ३१६ ॥

अपरंच हाव-भेद (छप्पय)

मूरखता कछु मुग्ध क्रियाचातुर्ज सु बोधक।
तपन दुक्ख मय बचन चकित ह्वै जात कछुक जक।
हसित हँसी आइबो कुतूहल कौतुक पैबो।
बचन हाव उद्दीप्त केलि करि हास खिझैबो।
बौरई प्रेम विक्षेप कहि रूपगर्ब लखि मद कहेउ।
दस हाव बिदित पहिले गुनौ फेरि सुनौ दस हाव येउ ॥ ३१७ ॥

---

[३११] साँवरो-साँवरे (सर०, सभा)। हमारो-हमारे (वही)।
[३१२] एतने हीँ-इते बड़े (सर०, सभा)।
[३१३] मानहूँ-मानहीँ (लीथो)।
[३१४] देह०-छबिति (सर०)। दुरावत-दुरावहि (सभा)। जनि-निज (लीथो)।
[३१५] घर ही-घरहू (सर०, सभा)।
[३१६] वहै-वही (सर०, लीथो)।
[३१७] बौरई-जहँ बौरि (सभा)। लखि-सखि (वही)।

मुग्ध हाव

पहिरत होत कपूरमनि कर के धरत प्रबाल।
मोहिं दई मनभावते कैसी मुक्तामाल ॥ ३१८ ॥

बोधक हाव

लखि ललचौंहै गहि रहे केलि तरुनि बृजनाथ।
दियो जानि तिय जानिमनि रजनी सजनी हाथ ॥ ३१९ ॥

तपन हाव

लाल अधर में को सुधा मधुर किये बिनु पान।
कहा अधर मैं लेत हौ धर मैं रहत न प्रान ॥ ३२० ॥
दई निरदई यह बिरहमई निरमई देह।
ये अलि ज्यौं बाहर बसे त्यौं ही आए गेह ॥ ३२१ ॥

चकित हाव

दह दिसि आए घेरि घन गई अँध्यारी फैलि।
झपटि सुबाल रसाल सौं लपटि गई ज्यौं बेलि ॥ ३२२ ॥

हसित हाव

रुख रूखी करत न बनै बिहसे नैन निदान।
तन पुलक्यो फरक्यो अधर उघरयो मिथ्या-मान ॥ ३२३ ॥
अनिमिष दृग नखसिख बनिक रही गवारि निहारि।
मुरि मुसुकानी नवबधू मुख पर अंचल डारि ॥ ३२४ ॥

कुतूहल हाव

रह्यो अधगुह्यो हार कर दौरी सुनत गोपाल।
गुलिक गिरे जनु फल झरे कनक-बेलि बर बाल ॥ ३२५ ॥

---

[३१८] होत–होइ (सर०)।
[३२०] किये–करै (लीथो)।
[३२२] दह–दुहु (लीथो)
[३२३] बनै–बन्यो (सर०, सभा)। कुतूहल हाव का उदाहरण लीथो में नहीं है। हसित हाव का दूसरा उदाहरण वहाँ कुतूहल का माना गया है।
[३२५] गिरे–गिरयो (सर०, सभा)। झरे–झरयो (वही)।

उद्दीप्त हाव

अनख-भरी धुनि अलिन की बचन अलीक अमान।
कान्ह निहारे रावरे सब सुनिये दै कान ॥ ३२६ ॥
पा पकरो बेनी तजो धरमै करिये आजु।
भोर होत मनभावतो भलो भूलि सुभ काजु ॥ ३२७ ॥

केलि हाव

भरि पिचकी पिय पाग मैं बोरयो रंग गुलाल।
जनु अपने अनुराग की दई बानगी बाल ॥ ३२८ ॥
जँवत धरयो दुराइ लै प्यारे को परिधान।
मागति मैं बिहसति नटति करति आन की आन ॥ ३२९ ॥

विक्षेप हाव

सुद्धि बुद्धि को भूलिबो इत उत बृथा चितौनि।
अधर भृकुटि को फेरिबो बिक्षेपहिं की ठौनि ॥ ३३० ॥
निरखि भई मोहनमई सुधि बुधि गई हिराइ।
संगति छूटी अलिन की चली स्याम-सँग जाइ ॥ ३३१ ॥
आवति निकट निहारिकै मान-सिखावनिहारि।
हौं रिसाति तुम कीजियहु बहु मनुहारि मुरारि ॥ ३३२ ॥

मद हाव

सारसनैनी रसभरी लखति आरसी ओर।
छकी छाँह छबि-छाँह ही छकयो नंदकिसोर ॥ ३३३ ॥

---

[३२६] सुनिये०—सुनियत है (सर०)।

[३२८] बोरयो—डारयो (काशि०)। बानगी—चुनौटी (सर०); नगीला (सभा)।

[३२९] जेँवत—जब तेँ (लीथो)।

[३३०] भूलिबो—फेरिबो (सर०, सभा)।

[३३१] चली—चकी (काशि०)।

[३३३] रस—मद (सर०)।

अथ हेलाहाव-लक्षण

प्रीति भाव प्रौढ़त्व मैँ जहँ छूटति सब लाज।
सम संजोग सिंगारहू उपजै हेला साज ॥ ३३४ ॥

बाल बहस करि लाज सोँ बैरिनि समुझि निदान।
हरि सोँ बर बिपरीति रति करति अधर मधुपान ॥ ३३५ ॥

(सोरठा)

सखि सिखवै कुलकानि पीठि दिये हाँ हाँ करै।
उत अनिमिष अँखियान मोहनरूप - सुधा भरै ॥ ३३६ ॥

अपरं च (दोहा)

उदारिज्ज माधुर्ज पुनि प्रगलभता धीरत्व।
ये भूषन तरुनीन के अनुभावहि मैँ सत्व ॥ ३३७ ॥

औदार्य

महाप्रेम रसबस परै उदारिज्ज कहि ताहि।
जीवन धन कुल लाज की जहाँ नहाँ परवाहि ॥ ३३८ ॥
जौ मोहन-मुखचंद मैँ होइ मरे मनु लीन।
तौऽब कौमुदी-भार मैँ छार करौँ तन छीन ॥ ३३९ ॥
तोरि तोरि लै ललित कर मुकुतमाल रमनीय।
दारिम के मिस हरि सुकहि रहति चुनावति तीय ॥ ३४० ॥
दूरि जात भजि भूरि सिख चूरि जाति कुलकानि।
मनमोहन सजनी जहाँ आनि परत अँखियानि ॥ ३४१ ॥
सोर घैरु को नहि गनै निरखत नंदकिसोर।
लखति चारु मुख ओर कछु करत बिचारु न और ॥३४२॥

---

[३३४] प्रौढ़त्व–प्रौढ़ोक्ति (सर०, सभा)। छूटति–छूटी (लीथो)।
[३३५] रति–हूँ (काशि०); सजि (सर०, सभा)।
[३३६] भरै–पियै (सर०, सभा)।
[३३८] लाज–कानि (लीथो)।
[३४०] तोरि०–तोरि जो ढीले (लीथो)। के–त्योँ (सर०, सभा)।
[३४१] आनि०–आपनि परत अपानि (सर०)।
[३४२] गनै–बनै (लीथो)।

माधुर्य, यथा

सोभा सहज सुभाय की नवता सील सनेह।
ये तिय के माधुर्ज हैं जानत त्यौरन तेह॥ ३४३॥
सबनि बसन भूषन सजे अपने अपने चाड़।
मन मोहति प्यारी दिये वा दिनवारी आड़॥ ३४४॥
मनमोहन आगे कहा मातु बनैगो ऐन।
भौंहनि सों रूखी परै रूखे होत न नैन॥ ३४५॥

प्रगल्भता-धीरत्व-लक्षण

कहुँ सुभाव प्रौढ़ानि को प्रगलभता जिय जानि।
कै पतिब्रत कै प्रेम दृढ़ सो धीरत्व बखानि॥ ३४६॥

प्रगल्भता, यथा

जिय की जरनि बुझाइकै पाइ समय भिदि भीर।
पुलकित तन बलबीर पर डारे जात अबीर॥ ३४७॥
फिरि फिरि भरि भरि भुज गहति चहति सहित अनुराग।
मधुर मदन मनहरनि छबि बरनि बरनि निज भाग॥ ३४८॥

धीरत्व, यथा

सूरो तजै न सूरता दीबो तजै न दानि।
कुलटा तजै न कुल-अटनि कुलजा तजै न कानि॥ ३४९॥
केलिरसनि सों मैं रँग्यौं हियो स्याम रँग माहि।
दियो लाख अरकै सुखै सखी छूटिबे नाहि॥ ३५०॥

अथ साधारण अनुभाव

जदपि हाव हेला सकल अनुभावहि की रीति।
साधारन अनुभाव जहँ प्रगटै चेष्टनि प्रीति॥ ३५१॥

---

[३४४] बसन—सबन (सभा)। वारी—वाली (सर०, सभा०, लीथो)।
[३४५] भौंहनि—मोहूँ (सर०, सभा, लीथो)।
[३४६] प्रगल्भता०—प्रगल्भ मानिय (काशि०)। कै प्रेम—को प्रेम (लीथो)।
[३४७-३४८] ये दोनों छंद काशि० में नहीं हैं। मन—छबि (लीथो)। निज—छबि (वही)।
[३५१] जदपि—तदपि (लीथो)। जहँ—है (काशि०)।

यथा

फिटकत लाल गुलाल लखि लली अली डरपाइ ।
बरज्यो ललचौंहैं चखनि रसना दसन दबाइ ॥ ३५२ ॥

सात्त्विक भाव

उपजत जे अनुभाव मैं आठ रीति परतच्छ ।
तासौं सात्विक कहत हैं जिनकी मति अति स्वच्छ ॥ ३५३ ॥
स्तंभ स्वेद रोमांच अरु स्वरभंगहि करि पाठ ।
बहुरि कंप बैबर्न्य है अश्रु प्रलय जुत आठ ॥ ३५४ ॥

स्तंभ, यथा

सब तन की सुधि स्याम मैं लगी लोचननि साथ ।
खात बिरी मुख की मुखहि रही हाथ की हाथ ॥ ३५५ ॥
परी घरी नोरहि रही नोरैं लखि सुखदानि ।
हँसी ससीमुख मैं लसी रसी रसीली पानि ॥ ३५६ ॥

स्वेद, यथा

कैसो चंदन बाल के लाल चढ़ाए गात ।
रहत पसीना न्हात को अजहूँ लौं न सुखात ॥ ३५७ ॥

रोमांच, यथा

तजौ खेलि सुकुमारि यह निपट कहौं कर जोरि ।
लगे गेंद उर गात सब गए ददौरे दौरि ॥ ३५८ ॥

स्वरभंग, यथा

निकस्यो कंपित कंठस्वर निरखे स्याम प्रबीन ।
गुआ लगी कहि ग्वालि यौं डारि दियो महि बीन ॥ ३५९ ॥

---

[३५३] मैं–तैं (लीथो) । अति–है (सभा) ।
[३५६] पानि–बानि (लीथो) ।
[३५७] कैसो–केसरि (लीथो) । को–सो (काशि०) ।
[३५९] बीन–खीन (काशि०) । गुआ०–ग्वाल गोप कहि ग्वारियौ (सर०); धुवाँ लगी कहि ग्वारियो (सभा) ।

कंप भाव

अहो आज गरमी-बस न काहू बसन सोहात।
सीत सताए रीति अति कत कंपित तुव गात ॥ ३६० ॥

वैवर्ण्य, यथा

धरे हिये मैं साँवरी मूरति सनी सनेह।
कहँ अमल तैं रावरी भई भाँवरी देह ॥ ३६१ ॥
लगी लगनि बलबीर सौं दुरेऽब क्यौं बलबीर।
सुबरन-तन-पीरी करै परगट मन की पीर ॥ ३६२ ॥

अश्रु, यथा

तुम दर्सन दुरलभ दई भई सु हर्षित हाल।
ललन वारती तिय पलनि भरि भरि मुक्तामाल ॥ ३६३ ॥

प्रलय, यथा

डीठि डुलै न कहूँ भई मोहित मोहन माहि।
परम सुभगता निरखि सखि धरम तजै को नाहि ॥ ३६४ ॥
बूझति कहति न बचन कछु एकटक रहति निहारि।
किहि इहि गोरी कौं दई दई ठगौरी डारि ॥ ३६५ ॥

प्रीतिभाव-वर्णन

केवल बर्नन प्रीति को जहाँ करै कबि कोइ।
प्रीतिभाव-बर्नन सु तौ सब तें न्यारो होइ ॥ ३६६ ॥

---

[३६०] गरमी०—गरमीय बस (सभा)।
[३६१] साँवरी—रावरी (सर०); रावरे (सभा)।
[३६२] सौं०—की बस्यो दूर (सभा)। परगट—प्रगट मान (लीथो)।
[३६३] तिय—तिह (लीथो)। इसके अनंतर काशि० में यह दोहा अधिक है—

प्रलय, यथा

अनिमिष दृग कर पद अचल बोलति हसति न बाल।
उत चितयो चित्रित भई चितवति तुम्हैं गोपाल ॥

[३६५] दई—भई (लीथो)।
[३६६] जहाँ—जहीं (लीथो)। करै—कहै (सभा)। तें—सौं (वही)।

यथा

बढ़त बरतहू दिवस निसि प्रगट परत लखि नाहि।
नयो नेह निरखै न यो तिय-तन-दीपक माहि॥ ३६७॥
मिलि बिछुरत बिछुरत मिलत तजि चकई-चकवान।
रतिरस-पारावार को पावत पार न आन॥ ३६८॥

अथ बियोग-शृंगार-लक्षण

जहँ दंपति के मिलन बिनु होत बिथाबिस्तार।
उपजत अंतर भाव बहु सो बियोग सृंगार॥ ३६९॥

यथा

क्षीरफेन सी सैनहू पीर घनी सरसात।
चौसर चंदन चाँदनी पिय बिनु जारै गात॥ ३७०॥

बियोग-शृंगार-भेद

है बियोग बिधि चारि को पहिले मानु बिचारि।
पूरबराग प्रबास पुनि करुना उर मैं धारि॥ ३७१॥

मान-भेद

इरषा गरब उदोत तैं होत दंपतिहि मानु।
गुर लघु मध्यम सहित सो तीनि भाँति को जानु॥ ३७२॥
लखि सचिन्ह मुख नाम सुनि बोलत देखत देखि।
गुर मध्यम लघु मान प्यौ आन-बाम-रत लेखि॥ ३७३॥

गुरु मान, यथा

स्याम-पिछौरी छोर मैं पेखि स्यामता लागि।
लगे महाउर आँगुरिन लगी महा उर आगि॥ ३७४॥
इष्ट-देवता लौं लग्यो जिय जीहा जहि नाम।
तासु पास तजि आइये कौन काम इत स्याम॥ ३७५॥

---

[३६७] बरत—घटत (लीथो)। परत—करत (वही)।
दीपक—दीपति (वही)।

[३६८] आन—जान (सभा)।

[३७३] प्यौ—यों (सभा +)। लेखि—पेखि (सर०)।

[३७५] लग्यो—लगें (काशि०)। जिय०—लगी जीह (सभा)।

मध्यम मान, यथा

सुनि अघाइ बतलाइ उत सुधासने तिय - बैन ।
हठि कत लाल बोलाइअत मोहि अरोचक ऐन ।। ३७६ ।।

लघु मान, यथा

अहो रसीले लाल तुम सकल गुनन की खानि ।
सुन्यो हुत्यौं सखियान पै सो देख्यौं अखियानि ।। ३७७ ।।

अथ मान-प्रवर्जन-उपाय (सवैया)

साम बुझाइबो दान है दीबो औ भेद जू बात बनै अपनावै ।
पाय परै नति भै डरुपैबो उपेक्षा जु औरियै रीति जनावै ।
ताहि प्रसंगबिध्वंस कहैं जहँ छाड़ि प्रसंग सुकाज बनावै ।
मानप्रबर्जन की यौं उपाइ करै बहु रीति सु 'दास' गनावै ।। ३७८ ।।

सामोपाय, यथा

उनको बहुरत प्रान है तुम्हैं न तनकौ ज्यान ।
नेकु निहारौ कान्ह पै सुधाभरी अँखियान ।। ३७९ ।।

दानोपाय, यथा (सवैया)

भाँवरी दै गयो रावरी पौरि मैं भावतो भोर तें केतिक दाँव री ।
दाँवरी पै न मिटै उर की बिनु तेरे मिले करै कोटि उपाव री ।
पाँवरी पैन्हि लै प्यारी जराइ की ओढ़ि लै चाँचरि चारु असावरी ।
साँवरी सूरति ही मैं बसाव री बावरी बीतत बादि बिभावरी ।।३८०।।

---

[३७६] कत—कै (लीथो) । बोलाइअत—बोलाइए (सर०) । ऐन—नैन (वही) ।

[३७८] साम०—स्याम समुझाइबो (लीथो) । नति०—न तिन्हैं (सर० +) । डरु०—डरपाइ (सर०) । औरियै—चातुरी (सर०, सभा) ।

[३७९] तनकौ०—तन की आन (लीथो) ।

[३८०] पौरि—पैँड (सर०) । उर-जिय (सर०, सभा) । करै—किये (सर०) । चाँचरि—चादरि (सर०, सभा, लीथो) ।

(दोहा)

अहे चाह सौं पहिरिकै हरिकर-गुंथित फूल।
सब सोभा सुख लूटि लै दै सौतिन कौं सूल ॥ ३८१ ॥

भेदोपाय

तेरे मानु किये हियैं लगी हितुन कैं लाइ।
हरि सौं हँसि हाँती करै तौ हीती ह्वै जाइ ॥ ३८२ ॥
कहा भयो बिहर्यो कहूँ लालन तजि तूँ बाल।
चहती पाइ उपाइ कै सौति सज्यो निज माल ॥ ३८३ ॥

प्रणति, यथा

अहे कहै चाहति कहा कियो इतैइ तमाम।
जगभूषन सिरभूषनहि पगभूषन करि बाम ॥ ३८४ ॥

भयोपाय, यथा

प्रफुलित निरखि पलासबन परिहरि मानिनि मान।
तेरे हेत मनोज खलु लियो धनंजय-बान ॥ ३८५ ॥

उत्प्रेक्षा, यथा

ज्यौं राखै जिय मान त्यौं अब राखौ पिय मान।
जानि परै जिहि मानिनी दोहुन को परिमान ॥ ३८६ ॥
डसे रावरी बेनिहीँ परे अधसँसे स्याम।
तिन्हैँ ज्याइबो रावरे अधरन ही को काम ॥ ३८७ ॥

प्रसंगविध्वंस

दिन परिहै चिनगी चुनैं बिरह-बिकलता जोर।
पाइ पियूष मयूखपी पी भरि निसा चकोर ॥ ३८८ ॥

इति मान

---

[३८१] 'सर०' और 'सभा' में नहीं है।
[३८२] हीती–होती (लीथो); हाती (सर०, सभा)।
[३८३] चहती०–चहति उपाइ (लीथो); चाहति पाइ (सर०)।
[३८४] इतैइ–इतोइ (सर०)।
[३८५] निरखि–देखि (सभा)। खलु–खल (लीथो, सभा)।
[३८८] चुनैं–चुगैं (सर०)। पी पी–ई पी (लीथो); कर पी (सर०)।

अथ पूर्वानुराग-लक्षण

लगनि लगै सु हाँ लखैँ उत्कंठा अधिकाइ।
पूर्बराग अनुरागियन होत हियैँ दुख आइ ॥ ३८९ ॥

श्रुतानुराग

लगी जासु नामै सुनत अँसुवा-भरि अँखियानि।
कहि गहिली क्यौँ तुअ कहैँ ताहि मिलाऊँ आनि ॥ ३९० ॥

दृष्टानुराग

जेहि जेहि मगु बिच पगु धर्‍यो मोहन मूरति स्याम।
मोहि करत मोहित महा जोहतहीँ वह ठाम ॥ ३९१ ॥
परस परसपर चहत है रहै चितै हित-बाढ़ि।
रटनि अटपटी अटनि पर अटनि दुहुन की गाढ़ि ॥ ३९२ ॥

इति पूर्वानुराग

अथ प्रवास-लक्षण

सो प्रबास द्वै देस मैँ जहँ प्यारी अरु पीउ।
सिगरी उद्दीपन-बिषै देखि उठै दहि जीउ ॥ ३९३ ॥

यथा (कवित्त)

पावस-प्रबेस पिय प्यारो परदेस यो
अँदेस करि भाँकै चढ़ि महल दरी दरी।
बकन की पाँति इंदुबधुन की काँति
भाँति भाँति लखि सादर बिसूरति घरी घरी।
पवन की भूकैँ सुनि कोकिल की कूकैँ सुनि
उठै हिय हूकैँ लगै काँपन डरी डरी।

---

[३८९] अनुरागि०—अनुरागधन (लीथो); अनुराग मह (सर०)।
[३९०] तुअ—तू (लीथो)। मिलाऊँ—मिलावै (सर०)।
[३९१] धर्‍यो—धरै (लीथो); पर्‍यो (काशि०)।
[३९२] रहै-दहत (काशि०)। रटनि—हठनि (सभा)।
[३९३] दहि—इहि (सर०)।
[३९४] यो—छायो (लीथो)।

परी अलबेली हिये खरी तलबेली तकै
हरी हरी बेली बकै ब्याकुल हरी हरी ॥ ३६४ ॥

(दोहा)

खरी धारजुत बाढ़ि अरु पान्यो-घाट निहारि।
नहि आवति जमुना वही बही समर-तरवारि ॥ ३६५ ॥
अरी घुमरि घहरात घन चपला चमक न जान।
काम कुपित कामिनिन्ह पर धरत सान किरवान ॥ ३६६ ॥

अथ दश-दशा-कथन (कबित्त)

अभिलाषा मिलिबे की चाह गुनबर्नन सराह
स्मृति ध्यान चिंता मिलन-बिचारु है।
कछू न साहाइ उदबेग ब्याधि ताप
कृसता प्रलाप बकिबो सहित दुखभारु है।
बावरी लौं रोइ हँसे गाएँ उनमाद भूलँ
खानपान जड़ता दसा नव प्रकारु है।
पूरबानुरागहू मैं प्रगट प्रबासहू मैं
मरन समेत दस करत सुमारु है ॥ ३६७ ॥

अभिलाष दशा, यथा (दोहा)

दृगनि लख्यो श्रवननि सुन्यो ये तलफैं तौ न्याइ।
हिय तिय बिन लखेंहों सुनें मिलिबे कौं अकुलाइ ॥ ३६८ ॥

(कबित्त)

लीन्हो सुख मानि सुषमा निरखि लोचननि
नील जलजात नयो जा तन यौं हारि गो।
वाही जी लगाइ कर लीन्हो जी लगाइ कर
मति मोहनी सी मोहनी सी उर डारि गो।

---

[३६५] पान्यो–पानिय (लीथो)। आवति–अघाति (सभा)।
समर–समन (काशि०, सभा, लीथो)।
[३६६] चमक–खमक (सर०)।
[३६८] बिन०–बिना लखे (काशि० +)।
[३६९] यों–सों (काशि०)। वाही–ओही (लीथो)। मति–मानि

लावै पलकौ न पलकौ न बिसरै री
बिसवासी वा समै तेँ बास मैं बिष बगारि गो।
मानि आनि मेरी आनि मेरे ढिग वाकौं तूँ न
काहूँ बरजो री बरजोरी मोहि मारि गो॥ ३६६॥

गुण-वर्णन (दोहा)

भरत नेह रूखे हिये हरत बिरह को हार।
बरत नयन सीरे करत बर तरुनी के बार॥ ४००॥

(कवित्त)

दधि के समुद्र न्हायो पायो न सफाई तायो
आँच अति रुद्रजू के सेषर - कृसान की।
सुधाधर भयो सुधा-अधरन हेत
द्विजराज भो अकस द्विजराजी की प्रभान की।
घटि घटि पूरि पूरि फिरत दिगंत अजौं
उपमान बिन भयो खान अपमान की।
'दास' कलानिधि कला कैयो कै दखायो पै न
पायो नेक छबि राधे बदन-बिधान की॥ ४०१॥

स्मृति-भाव (दोहा)

ध्याइ ल्याइ हिय रावरी मूरति मदन मुरारि।
दृगनि मूँदि प्रमुदित रहति पुलकि पसीजति नारि॥ ४०२॥
चित चोखी चितवनि बसी चखनि अनोखी काँति।
बसी करन बतिया जु है बसीकरन की भाँति॥ ४०३॥

चिंता दशा

दुख सहनो दिन रैन को और उपाइ न जाइ।
इक दिन अलि बृजराज कौं मिलिये लाज बिहाइ॥ ४०४॥

(काशि०) पलकौ—बलकौ (वही)। मेरे—मेरी (काशि०, सभा)। काहूँ—कहूँ (सभा)।
[४००] सीरे०—सीकरत है (लीथो)।
[४०१] पायो—पाई (लीथो)।
[४०२] ध्याइ—ध्यान (सभा)।
[४०३] बसी—बनी (सर०)।
[४०२ से ४०४ तक] काशि० में नहीं हैं।

उद्वेग दशा

पलिका तेँ पगु भुव धरै भुव तेँ पलिका माहिँ।
तुम बिनु नेकु न कल परै कलप रैन दिन जाहिँ ॥ ४०५ ॥
इत नेकौ न सिराति यह इतने जतन करेँहुँ।
उत पल भरत न धीर वै उतपत्र-सेज-परेँहुँ ॥ ४०६ ॥

व्याधि दशा

सौधरंध्र मग ह्वै लख्यो हरितन-जोति रसाल।
भई छाम परिमान तेँ तेहि छबि मेँ परि बाल ॥ ४०७ ॥

(कबित्त)

जा दिन तेँ तजी तुम ता दिन तेँ प्यारी पै
कलाद कैसो पेसो लियो अधम अनंगु है।
रावरे को प्रेम खरो हेम निखरो है भ्रम
धवत उसासनि हरत बिनु ढंगु है।
कहा करौँ घनस्याम वाकी अति आँचन सौँ
औरहू को भाग्यो खानपान रसरंगु है।
काठी कै मनोरथ बिरह हिय भाठी कियो
पट कियो लपट अँगारो कियो अंगु है ॥ ४०८ ॥

प्रलाप, यथा (दोहा)

चातिक मोही सौँ कहा पी पी कहत पुकारि।
मेरी सुधि दै वाहि जिहि डारी मोहि बिसारि ॥ ४०९ ॥
किये काम-कमनैत दृढ़ रहत निसानो मोहि।
अहे निसा तौहूँ नहीं निसा निसासिनि तोहि ॥ ४१० ॥

---

[४०५] काशि० मेँ द्वितीय दल केवल + मेँ योँ है—
भई बिकल मनभावती परै न कल मन माँहि।
[४०६] परेँहुँ—करेँहुँ (लीथो)।
[४०७] लख्यो—कढ्यो (सर०) परिमान—प्रमान (लीथो)।
[४०८] कलाद—कसाई (लीथो)।
[४०९] मोहि—निपट (सर०)।
[४१०] हूँ—है (काशि०)। निसासिनि—निसादिन (लीथो)।

तनु तनु करे करेज कौं अतनु कसाई ल्याइ।
छनदा छन छन दाहती लोनो नेह लगाइ ॥ ४११ ॥
बिसवासी बेदन समुझि तजि परपीड़न साज।
कहा करत मधु-मास-रुचि जग कहाइ द्विजराज ॥ ४१२ ॥

उन्माद दशा

कुचनि सेवती संभु सुनि कामद समुझि अधीर।
दृग-अरघानि घरी घरी रहति चढ़ावति नीर ॥ ४१३ ॥
बोल कोकिलनि को सुनै यकटक चितवत चंद।
श्रीफल लै उर मैं धरै तुम बिन करुनाकंद ॥ ४१४ ॥

जड़ता दशा

रही डोलिबे बोलिबे खानपान की चाल।
मूरति भई पखान को वह अबला अब लाल ॥ ४१५ ॥

इति दश दशा

अथ करुणा-बिरह-लक्षण

मरन बिरह है मुख्य पै करुन करुन इहि भाइ।
मरिबो इच्छति ग्लानि सौं होत निरास बनाइ ॥ ४१६ ॥

(सवैया)

यह आगम जानती आगमनै जु न तो पहँ जाइगो संग दियो।
ता हौं काहे कौं नाहक नैननि नीदि कै तोही कौं सौंपती प्रानपियो।
कहि ए रे कसूर कहा तूँ कियो कुलिसौं कठिनाई मैं जीति लियो।
धृग तो कहँ हा मनमोहन के बिहरे बिहराइ गयो न हियो ॥४१७॥

---

[४११] दाहती०—दहति है (लीथो)।
[४१२] बिसवासी—बिसवासिनि (सभा)। रुचि—सुचि (वही)।
[४१३] अरघानि—अध्वारि (सर०)।
[४१४] धरै—धरत (लीथो)। करुना०—करुन बिरह (सर०)।
[४१७] पहँ—यह (लीथो)। तोही—तोहूँ (वही)। मैं—को (वही)। तो०—तोकों हहा (वही)। बिहरे०—बिछुरे बिरहागि दहो (वही)।

(दोहा)

वह कबहुँक यह सहत है सदा घाइ घनघोर।
हीरा कहौ कठोर कै हीरा कहौ कठोर ॥ ४१८ ॥

इति बियोग-शृंगाररस समाप्त

अथ मिश्रित शृंगार

संजोग ही बियोग कै बियोग ही संजोग।
करि मिश्रित सृंगार कौं बरनत है सब लोग ॥ ४१९ ॥

संयोग में वियोग, यथा

सौतुख सपने देखि सुनि प्रिय बिछुरन की बात।
सुख ही मैं दुख को उदय दंपतिहूँ ह्वै जात ॥ ४२० ॥

यथा

कहा लेत ज्यो चलन की चरचा मिथ्या चालि।
ऐसी हाँसी सौं भली फाँसीयै बनमालि ॥ ४२१ ॥
क्यौं सहिहै सौतुख-बिरह सपन-बिरह के तेजु।
गई न तिय-हिय-धकधकी भई थकथकी सेजु ॥ ४२२ ॥

वियोग में संयोग

पत्री सगुन सँदेस लखि पिय-बस्तुनि कौं पाइ।
अनुरागिनी बियोग मैं हर्षोदय ह्वै जाइ ॥ ४२३ ॥

---

[४१८] कबहुँक०-कबहूँ कै यह सहत सदा (सभा)। काशि० में यह रूप है—

(÷) यह कठोर जगमद्धि + कै हीरा कहों कठोर
बिहरानो नेको नहीं बिहरे नंदकिसोर +

[४१९] कै-है (लीथो)। सब-कबि (काशि०)।
[४२०] ह्वै-ह्यो (काशि०)।
[४२२] के-को (लीथो)। न तिय-तिया (सभा)।
[४२३] अनु०-अनुरागीन (सर०)। हर्षो०-हर्षहृदय (वही)

यथा (सवैया)

पायो कछू सहिदानी सँदेस तैँ आइ कि प्यारो मिल्यो सपने मैँ।
कै री तुँ ग्वालि गुनौती बड़ी सगुनौती बड़ी कछु पायो गने मैँ।
कालि तौ ऊभि उसास भरै औ परेहूँ जरै घनसार घने मैँ।
आजु लसी हुलसी सब अंगनि फैली फिरै सु कहा इतने मैँ ॥४२४॥

इति मिश्रित शृंगार समाप्त

अथ शृंगार-नियम-कथन (दोहा)

यौँ सब भेद सिंगार के बरने मति-अनुसार।
कछू नेम ताके कहौँ सुनिये सहित-बिचार ॥ ४२५ ॥

(सोरठा)

सात बरिस कन्यत्व, पुनि छ सात दस दस बरिष।
गौरी बाला सत्व, तरुनी प्रौढ़ा जानिये ॥ ४२६ ॥
नवलबधू मुग्धाहि मे ँ नवजोबन अग्यात।
ग्यातजोबना नव मदन नवढ़ा डर लज्यात ॥ ४२७ ॥
लखि अभिलाष दसा कहै लालसमती कबीस।
चुंबनादि तँ घिन करै बाल बिरक्त बतीस ॥ ४२८ ॥
भाव और हेला तपन तीनि कहत कबि-ईस।
जोबन मैँ नारीन के अलंकार हैँ बीस ॥ ४२९ ॥
चारि उदारिज आदि दै सोभादिक त्रय जानि।
ये दस दस पुनि हाव हैँ बिलासादि उर आनि ॥ ४३० ॥
बचे जे वै नव हाव ते इनहाँ दस तँ हेरि।
जुदे लगत से जानिकै लक्षन बरन्यो फेरि ॥ ४३१ ॥

---

[४२४] सगुनौती०—कछु पायो किधौँ सगुनौती (लीथो) । जरै—मरै (वही) । सु-तूँ (सभा); तौ (सर०) ।
[४२५] यौँ—ये (सर०) । ताके—ताते (सर०, सभा, लीथो) ।
[४२६] जानिये—देखि कहि (काशि०, सभा) ।
[४२८] घिन—छिन (सर०) ।
[४२९] तपन—कहत (सर०) ।
[४३०] बिलासादि—बीसादी (सर०) ।
[४३१] जुदे—जुरे (सभा) ।

पिय लखि सात्विक भाव जो होत लगत अनुभाव।
भरत-ग्रंथ-मत देखि तेहि भाव कहत कबिराव॥ ४३२॥
हाव कहावत भावई जिनमैँ अंग-सिंगार।
भावै पुनि हेला कहूँ होत निपट बिस्तार॥ ४३३॥
तपनहि मैँ गनि लेत हूँ सकल बिरह की रीति।
उदाहरन मैँ भिन्न करि बरनि जनायो नीति॥ ४३४॥
भाव हाव बिन नेम ही होत नाइकनि माहि।
बहुधा प्रौढ़ा परकिया तिनमैँ जानी जाहि॥ ४३५॥
है ही होने ह्वै गए तीन्यौ बिरह प्रमानि।
एकै करि दस कौं गनै अष्ट नाइका जानि॥ ४३६॥
कामवती अनुरागिनी प्रौढ़ा भेद बिचारि।
स्वाधीनापतिकाहु मैँ गर्बितानि निरधारि॥ ४३७॥
होत भेद धीरादि के खंडिताहु मैँ आइ।
ज्येष्ठ कनिष्ठा मैँ त्रिबिधि मानभेद मैँ पाइ॥ ४३८॥
करै चलन-चरचा चलै पहुँचे लौं पिय-पास।
बोलि पठाए सखि सुने अभिसारिकै प्रकास॥ ४३९॥
देवतिया दिब्या कही नरतिय कही अदिब्य।
अमरनारि भुव अवतरी सो कहि दिब्यादिब्य॥ ४४०॥
गुप्त बिदग्धा लक्षिता मुदिता तिय को भाइ।
किये बनै सुकियाहु मैं त्रपा हास्यरस पाइ॥ ४४१॥
त्यौंही परकीयाहु मैँ है मुग्धादिक कर्म।
जैसैँ अस्त्र काऊ गहै क्षत्रिजाति को धर्म॥ ४४२॥

---

[४३२] मत–महँ (लीथो)।
[४३४] रीति–प्रीति (सभा +)। नीति–रीति (सभा)।
[४३५] बिन०–बिनही नियम (काशि०, सभा)।
[४३७] गर्बितानि–गर्बितादि (सर०, सभा +)।
[४३८] धीरादि–धीरानि (सभा ÷)।
[४३९] पठाए–पठावै (लीथो)।
[४४१] त्रपा–मैत्र (सर०)।
[४४२] सभा में नहीं है। काऊ०–गहै सबै (सर०)।

मानवती अनुरागिनी प्रोषितपतिका नारि।
क्रम तैं इन्हैं बियोग के आलंबन निरधारि ॥ ४४३ ॥
दुखद रूप हैं बिरह मैं सब उद्दीपन-गोत।
समय समय निजु पाइकै अनुभावौ सब होत ॥ ४४४ ॥
आलिंगन चुंबन परस मरदन नखरद-दानु।
इत्यादिक संभोग के उद्दीपन जिय जानु ॥ ४४५ ॥
जानौ नाम बियोग को बिप्रलंभ सृंगार।
सुरत-समय संयोग मैं सो संभोग बिचार ॥ ४४६ ॥

इति श्रृंगाररस-वंश

अथ श्रृंगाररस-कथन जन्य-जनक करिकै पूर्ण रस को स्वरूप

कह्यो बंस सृंगार को फिरि सिँगाररस आनि।
नवरस की गिनती भरौं लक्षन-लक्ष्य बखानि ॥ ४४७ ॥
जहँ बिभाव अनुभाव थिर चर भावन को ज्ञान।
एक ठौरहीं पाइये सो रसरूप प्रमान ॥ ४४८ ॥
उपजावै सृंगाररस निजु आलंबन दोउ।
जन्य-जनक तासौं कहै उदाहरन सुनि सोउ ॥ ४४९ ॥

नायिकाजन्य श्रृंगाररस, यथा (सवैया)

मिस सोइबो लाल को मानि सही हरैहीं उठी मौन महा धरिकै।
पटु टारि लजीली निहारि रहो मुख की रुचि कौं रुचि कौं करिकै।
पुलकावलि पेखि कपोलनि मैं सु खिसाइ लजाइ मुरी अरिकै।
लखि प्यारे बिनोद सौं गोद गह्यो उमह्यो सुख मोद हिये भरिकै ॥४५०॥

नायकजन्य श्रृंगाररस (दोहा)

ललकि गहति लखि लाल कौं लली कंचुकी-बंद।
मिसहीं मिस उठि उठि हसति अलीं चलीं सानंद ॥ ४५१ ॥

---

[४४६] मैं०—सो संभोगादि (लीथो)।
[४४८] हीं—की (लीथो)।
[४५०] मौन—बैन (लीथो)। मुख०—मुख की सुखमा (वही)। सुख—रस (वही); मुद (सर०, सभा)। हिये—हियो (काशि०)।

हास्यरस-लक्षण

ब्यंगि बचन भ्रम आदि दै बहु बिभाव है जासु।
ख्याल स्वाँग अनुभव तरक हँसिबो थाई हासु ॥ ४५२ ॥
अनुभव इन सब रसनि को सात्विक भावै मित्त।
होइ जु वैही भाँति पुनि सोऊ समझौ चित्त ॥ ४५३ ॥

यथा

गौरी-अंबर-छोर अरु हरगर बिषधर पूँछि।
गँठिजोरा कौं तिय गहै तजै हँसै कहि छूँछि ॥ ४५४ ॥

(कबित्त)

सुनियत उत गहि भसम के भाजनहि
चंद-सीकरन कहि फेरि देती दार है।
तरुनि तहाँ की ताहि लेती हैं बेसाहि चाहि
बिकच करत अंग लै लै कर छार है।
बिसन हमारो तौ गयो है हरि-संग हरि
जिन बिनु लागत सिंगार ज्यौं अँगार है।
ऊधोजू सिधारौ मारवार कौं अबार होति
उहाँ राखवारन को बड़ो रोजगार है ॥ ४५५ ॥

करुणरस-लक्षण (दोहा)

हित-दुख बिपति बिभाव तें करुना बरनै लोक।
भूमि-लिखन बिलपन स्वसन अनुभव थाई सोक ॥ ४५६ ॥
सजल नयन बिलखित बदन पुनि पुनि कहत कृपाल।
जीवत उठि न अराति-दल सोवत लछिमन लाल ॥ ४५७ ॥

---

[४५४] छोर०–औह छो नरगर (सर०)। तजै०–हँसै कहै छुठि (सर०, सभा)।

[४५५] सुनियत०–एकै सुनियत उत गहि भस्म-भाजनहि (काशि +)। सी–सो (वही +)। दार–द्वार (सभा)। जिन–जाहि (सर०)।

[४५६] बिलपन–बिलखन (काशि०)।

[४५७] पुनि०–फिरि फिरि (सभा)।

मलिन बसन बिलपन स्वसन सिय भुव लिखत निहारि ।
सोचन सोचत पवनसुत लोचन मोचत बारि ॥ ४५८ ॥

वीररस-लक्षण

जानौ बीर बिभाव ये सत्य दया रन दानु ।
अनुभव टेक 'रु सूरता उत्सह थाई जानु ॥ ४५९ ॥
बरने चारि बिभाव ते चारयौ नायक बीर ।
उदाहरन सबके सुनौ भिन्न भिन्न करि धीर ॥ ४६० ॥

सत्यवीर

तजि सुत बित घर घरनि लै सत्यसुधा सुखकंद ।
छाइ त्रिजग जसचंद्रिका चंद जितो हरिचंद ॥ ४६१ ॥

दयावीर

दीनबंधु करुनायतन देखि बिभीषन-भेस ।
पुलकित तनु गदगद बचनु कह्यो आउ लंकेस ॥ ४६२ ॥

रणवीर

ब्रीड़ित मेरे बान है बानर-बृंद निहारि ।
सनमुख ह्वै संग्राम करि मोसों खरो खरारि ॥ ४६३ ॥

दानवीर

सब जगु द्वै ही पगु कियो तनु तीजो करि क्षिप्र ।
यो अधार आधेय जगु अधिक जानि लै बिप्र ॥ ४६४ ॥

अद्भुतरस-लक्षण

नई बात को पाइबो अति बिभाव छबि चित्र ।
अद्भुत अनुभव थाकिबो बिस्मय थाई मित्र ॥ ४६५ ॥

---

[४६०] ते–के (लीथो) ।
[४६१] सुख–बिष (लीथो) ।
[४६२] बचनु–गिरा (लीथो) ।
[४६५] थाकिबो–थाकियो (लीथो) ।

(कबित्त)

दरबर दासनि को दोष दुख दूरि करै
भाल पर रेखा बाल दोषाकर रेखिये।
चाहै न बिभूति पै बिभूति सरबंग पर
बाह बिन गंग-परबाह सिर पेखिये।
सदासिव नाम भेष असिव रहत सदा
कर धरे सूल सूल हरत बिसेषिये।
माँगत है भीख औ कहावै भीख-प्रभु हम
धरैं याकी आसा याकों आसा धरे देखिये ॥४६६॥

(दोहा)

ठाढ़े ही ह्वै पगु कियो सकल भुवन जिन हाल।
नंद-अजिर सु न हद लहत जानुपानि की चाल ॥ ४६७ ॥

रौद्ररस-लक्षण

असहन बैर बिभाव जहँ थाई कोप-समुद्र।
अरुन बरन अधरन दरन अनुभव यौं रस रुद्र ॥ ४६८ ॥

यथा (सवैया)

जुध्ध बिरुध्धित उध्धत क्रुध्धित बीर बली दसकंधर धावै।
कज्जल भूधर से तनु जज्जल बोलत राम कहाँ करि दावै।
बीसहु हथ्थ अतथ्थहि लुक्कित कीसहि मुक्कित सैलु जु आवै।
निम्भझल कज्जलसंजुत मिड्डिकै भालुक पिड्डिकै भूमि गिरावै ॥४६९॥

---

[४६६] दरबर–हरबर (लीथो); दरब्रदर (सभा)। को०–को दुख दूरि करै बरै (वही)। बाह०–बाहन बृषभ गंग सिर पर (लीथो)। याकी–याको (वही); वाको (सर०, सभा) धरे–धर (काशि० +)।

[४६७] जिन–जे (लीथो)।

[४६९] दावै–ढावै (लीथो); धावै (सर०)। हथ्थ०–हत्थ अतत्थहि सुक्कत सैल जु आवै (काशि० ÷); हत्थ समथ्थ अकत्थहि पथ्थलो सुक्कल सैल जु आवै (काशि० +) निम्झ्झल–सिम्झ्झल (लीथो); निर्झर (सर०, सभा)। कज्जल–के जल (काशि०)। भालुक–बालुक (काशि०, सभा)।

बीभत्सरस-लक्षण (दोहा)

थाई घिनै बिभाव जहँ घिनमै बस्तु अस्वच्छ ।
बिरचि नींदि मुख मूँदिबो अनभुव रस बीभच्छ ॥ ४७० ॥

यथा (कबित्त)

कंस की गोबरहारी जातिपाँतिहू सों न्यारी
मलिन महा री अब कछू न कह्यो परै ।
चाड़ के समैहूँ चाहियत एक गाड़ बिना
कूबर की आड़ कैसे राँड़ सों रह्यो परै ।
टेढ़ी सब अंग औ निपट बिन ढंग दई
कैसें धौं गोपालजू सों गोद मैं गह्यो परै ।
जाकी छिन सुधि कीन्हे महा घिन आवै ताके
संग सुख ऊधौ उनही सों पै सह्यो परै ॥ ४७१ ॥

भयानकरस-लक्षण (दोहा)

बात बिभाव भयावनी भै है थाई भाव ।
सुखि जैबो अनुभाव तें सु रस भयानक ठाव ॥ ४७२ ॥

यथा

भूमि तमकि अंगद हनें डरे निसाचर-बृंद ।
तन कंपित पीरे बदन भयो बोलिबो बंद ॥ ४७३ ॥

(कबित्त)

वह सकै हिरिकिनि यह तकै फिरिकिनि
दौरि दौरि खिरकिनि जाइकै घिरतु है ।
गयो अकुलाइ वाको सपने भुलाइ जीव
जहाँ जहाँ जाइ तहाँ जाइ अभिरतु है ।
खोयन खायन नाकै दायन घायन ताकै
पायन पायन पारावार लौं तिरतु है ।

---

[४७०] बिरचि–बिरच (सभा) ।
[४७१] मलिन०–अति मानहारी (सभा) ।
[४७२] जैबो–जैये (काशि०) ।
[४७४] तकै–सकै (सर०) । जाइ तहाँ–तहाँ तहाँ (सभा) ।

पारन बारन बचै झारन झारन नचै
डारन डारन लेत बारन फिरतु है ॥ ४७४ ॥

शांतरस-लक्षण (दोहा)

देवक्रिया सज्जन-मिलन तत्वज्ञान उपदेस।
तीर्थ बिभाव सुभक्ति सम थाई सांत सुदेस ॥ ४७५ ॥
क्षमा रूत्य बैराग्य थिति धर्मकथा मैं चाउ।
देवप्रनति अस्तुति बिनय गुनौ सांत-अनुभाव ॥ ४७६ ॥

यथा (कबित्त)

संपति-बिपति-पति भूपति भुवनपति
दिसिपति देसपतिहू को पति न्यारो है।
जाइबोऊ ज्याइबोऊ छार मैं मिलाइबोऊ
वाको अखत्यार और काहू को न चारो है।
यातैं 'दास' बंदनि की बंदगी बिफल जानि
सेवतो बहरहाल हरि-दरबारो है।
राखैगो बहाल तौ हैं बंदे हम वाके
औ बिहाल करि राखैगो तौ साहब हमारो है ॥४७७॥
चितु दै समुझि काहू दीबे है जवाब कौन
काज इत आयो कैं पठायो यहि ठौर है।
वाही की रजाइ रह्यो ल्याइबे बजाइ तोहि
मान्यो न सिखायो तूँ नसायो दुहूँ ओर है।
कैसे निबहैगो ओछे ईसनि पै सीस
नाइ एरे मन बावरे करत कैसी दौर है।
तेरो औ सबनि केरो जाके कर निरधार
ताके दरबार तौ सलाम हू को चोर है ॥४७८॥

---

[४७७] संपति०—संपतिपति बिपतिपति भुवनपति (सभा)।
जाइबोऊ०—ज्याइबो न ज्याइबो अरु (लीथो); । वाको—याको (सर०)।

[४७८] समुझि०—समुद्रि कहि (काशि०)। इत—हेत (वही) कैं—क्यों (सभा)। रह्यो—रही (सर०)।

(सवैया)

मीठी बसीठी लगी मन की गुर की सिख तौ बिष सी पहिचान्यो।
आपनी बूझि सँभारथो नहीँ तब 'दास' कहा अब जौ पछितान्यो।
मूरुख तूँ तरुनी-तन कौँ भवसागर की तरनी अनुमान्यो।
ऐसो डर्‌यो हरिनाम के पाठहि काठहि की हरि कौँ जिय जान्यो ॥४७६॥

(कबित्त)

गैयर चढ़ावौ तौ न गहिये गरूर नाँगे
पैरन चलावौ तौ न याको दुख भारी है।
माँगिकै खवावौ तौ मगन रहियत
मागननि दै खवावौ तौ दया की अधिकारी है।
जाहि तुम देत ताहि देत प्रभु आप रुचि
रावरे की रीझि-बूझि सबही सौँ न्यारी है।
यातैँ हम गरजी हैँ रावरी रजाइ ही के
मरजी तिहारी ही मैँ अरजी हमारी है ॥ ४८० ॥

इति नवरस विभाव-अनुभाव-स्थायीभावयुक्त समाप्त

अथ संचारीभाव-लक्षण (दोहा)

नौहूँ रसनि सभावहाँ बरने मति - अनुसार।
अब संचारी कहत हौँ जो सबमैँ संचार ॥ ४८१ ॥
सात्विकादि बहु होत हैँ इनहू मैँ अनुभाव।
अरु बिभाव कछु नेम नहिँ जहँ ज्यौँ ही बनि आव ॥ ४८२ ॥
बिना नियम सब रसनि मैँ उपजै थाई ठाउ।
चर बिभिचारी कहत हैँ अरु संचारी नाउ ॥ ४८३ ॥

---

[४७६] मीठी—नीको (लीथो)। जौ—ज्यौँ (वही)।
पाठहि—नामहि (काशी०)। कौँ—कै (काशि०, सर०, सभा)।

[४८०] मागननि०—माँगे बिनु (सभा); मागननि दैवावो (काशि०)।
दया०—न याको सुखकारी (वही)।

[४८१] हौँ—हौँ (सर०)।

[४८२] बहु—सब (सभा)।

संचारीभावन के नाम (छप्पय)

नींद ग्लानि श्रम धृत्ति मद कठोरता हर्ष कहि।
संका चिंता मोह सुमति आलस्य तर्क लहि।
अमरष दीनति सुमृति बिषाद इरषा चपलतनि।
उत्कंठा उन्माद अवहिथा अपसमार गनि।
पुनि गर्ब सु जड़ता उग्रता सुप्तावेग त्रपा बरनि।
स्यौं त्रास व्याधि निर्बेद मृतु तैंतीसो चर भाव गनि ॥४८४॥

लक्षण तैंतीसो संचारीभाव को (चौपाई)

निद्रा को अनुभव जमुहैबो। आलसादि तें नैन मिलैबो।
ग्लानि जानि जहँ बल न बसावै। दुरबलता असहन दुख ल्यावै ॥४८५॥
श्रम उत्पत्ति परिश्रम कीन्हे। थके पसीना प्रगटे चीन्हे।
धृति संतोष पाइ बिनु पाए। बिधि गति समुझि धीरजहि आए॥४८६॥
मद बातैं जहँ गरबै की सी। अति गति मति लखि परति छकी सी।
कठोरता हठ भाव बनिये। घाम सीत सूलादि न गनिये ॥४८७॥
हर्ष भाव पुलकादिक जानौ। परमानंद प्रसन्न बखानौ।
संका इष्टहानि-भय पाई। तेहि बिचार दिनरैन बिहाई ॥४८८॥
चिंता फिकिरि हिये महँ जानी। जहँ कछु सोच करत है प्रानी।
मोह चेत की हानि जु होई। भ्रम अनुभाव बिकलता जोई ॥४८९॥
मति है भाव सिखापन पाए। बिधि-गति समुझि धीरतहिँ आए।
आलस गर्ब परिश्रम ठावै। जागत जो घरीक तन छावै ॥४९०॥
तर्क सँदेह बिबिधि बिधि होई। गुननादिक सौं जानहु सोई।
अमरष दुख लागै मन माहीँ। निज अपमान भए बहुधाहीँ ॥४९१॥
दीनता सु जहँ मलिन सरीरै। होइ दुखमय बचन अधीरै।
सुमृति कहिय जासौं चित दीजै। सो रँग रूप देखि सुधि कीजै ॥४९२॥

---

[४८५] बल—बस (सर०)।
[४८८] बिहाई—गँवाई (सर०, लीथो)।
[४९०] धीरतहिँ—धीरजहि (काशि०, सर०, सभा)। आए—ल्याए (सर०, सभा)।
[४९१] होई—टोई (लीथो)। बहुधाहीँ—बहु याही (सर०)।
[४९२] जहँ—तहँ (लीथो)।

भाव बिषाद हानि जिहि ठौरै। चहिये और होइ कछु औरै।
इरषा पर-उदेस जिय आवै। सहि न जाइ गुन गर्ब परावै ॥४९३॥
चपलता जु आतुरता करई। इच्छा चरै न सिख चित धरई।
उत्कंठा रुचि हिय मैँ भारी। पैबे हेत बिषय जो प्यारी ॥४९४॥
उन्मादहि बौरैबो ल्यावै। बिनु बिचार आचारहिं ठावै।
अवहित्था आकृतिहि छिपैबो। औरै और-यहि भाँति लखैबो ॥४९५॥
अपसमार सो कबि उर धरई। मृगी रोग लौँ ब्याकुल करई।
गर्ब जानि कुल-गुन-धन-मद तेँ। अहंकार-अधिकारी हद तेँ ॥४९६॥
जड़ता जहँ अक्षम ह्वै जाई। कारज मैँ आवै जड़ताई।
उग्रता जु निरदयता ही मैँ। कहै प्रचारि क्रोध अति जी मैँ ॥४९७।
आवेगहि भ्रम होइ हिये मैँ। जानि अचानक कर्म किये मैँ।
सुप्त सुभाव निभर ह्वै सोवै। सपन अनेक भाँति जिय जोवै ॥४९८॥
त्रपा भाव लज्जा अधिकाई। सबही ठौर जानि लै भाई।
त्रास छोभ कछु देखि डरै जू। चौंकादिक अनुभाव धरै जू ॥४९९॥
ब्याधि ब्यथा कछु है मन माहीँ। बिक्रित तनु अनुभाव कहाहीँ।
निर्बेदहि बिराग मन भनिये। मरन भाव तैँतीसो गनिये ॥५००॥

उदाहरण सबके क्रम तेँ—निद्रा भाव, यथा (दोहा)

अलस गोइ श्रम खोइये नेक सोइयहि सैन।
लाल उनौंदे रैन के झँपि झँपि आवत नैन॥ ५०१ ॥

---

[४९३] चहिये—चाही (लीथो)। पर०—परज देखि (सर०)।

[४९४] चरै—बरै (लीथो); करै (सभा)। धरई—बरई (काशि०)। जो—जे (सर०)।

[४९५] औरै०—और औरिऔ (सर०)।

[४९६] अहंकार—मदहंकार (काशि०)। अधिकारी—ठकुराई (सर०, सभा)।

[४९७] कहै—करै (लीथो)।

[४९८] होइ—जाइ (सर०, सभा)। मैँ—जू (काशि०, सभा)। निभर—जो मर (सभा)। अनेक०—अनेगतादि (सर०)।

[५०१] आवत—आवै (सर०, सभा, लीथो)।

ग्लानि भाव (सवैया)

जानि तियानि को मोहन नीकैं नजीकैं ह्वै जाइ दुहूँ दृग जोयो ।
ठानि लै बैर अलीन सौं आपुहि भाँति भली कुलकानि लै खोयो ।
कैसी करौं केहि दोष धरौं अब कासौं लरौं हियरैं दुख भोयो ।
हौं तौ भट्ट हठि आपु ही आपु तैं आपने हाथनि सौं बिष बोयो ॥५०२॥

श्रम भाव, यथा (दोहा)

डगमगात डगमग परत चुवत पसीना-धार ।
केलि-भवन तैं भवन को पैंडो भयो अपार ॥ ५०३ ॥

धृति भाव (सवैया)

चाह्यो कछू सो कियो उन साहेब सो तौ सरीर के संग सन्यो है ।
फेरि सुधारयो चहै तब को बिगरयो सिगरयो यह मूढ़पन्यो है ।
'दासजू' साधुन जानि यहै सुख औ दुख दोऊ समान गन्यो है ।
काहे कौं सोचु करै बिन काज बनैगो सोई जो बनाव बन्यो है ॥५०४॥

मद भाव, यथा (दोहा)

डोलति मंद गयंद-गति अति गरबीली भाँति ।
करी रूपमद प्रेममद सोभामद सौं माँति ॥ ५०५ ॥

कठोरता भाव (कबित्त)

केकी-कूक-लूकनि समीर-तेज-तापनि कौं
घने घन-घायनि कौं राख्यो है निदरि हौं ।
बैठिकै हुतासन से फूलन के डासन मैं
बरत ही चंदन चढ़ायो धीर धरि हौं ।
साँझ ही तैं कीन्ह्यो है तूँ तहस नहस सो
मैं तेरियै बहस आइ बाहिर निसरिहौं ।

---

[५०२] आपु ही—आपु कौं (काशि०, सर०, सभा) । बिष—दुख (सर०, सभा) ।

[५०३] परत—धरत (सर०) । अपार—पहार (सर०, सभा) ।

[५०५] करी—रही (सर०) । सोभा—जोबन (सर०, सभा) ।

[५०६] लूकनि—कूकनि (सर०) । तूँ—है (लीथो) ।
किरननि—तीरननि (वही) ।

तीखे तीखे किरननि छेदि क्यौं न डारै तनु
एरे मंद चंद मैं न तेरे मारे मरिहौं ॥ ५०६ ॥

(दोहा)

चले जात इक संगहीं राधे नंदकिसोर।
सीतल सुमनमई भई आतप अवनि कठोर ॥ ५०७ ॥

हर्ष भाव (कबित्त)

स्याम तन सुंदर स्वरूप उपमा कौं केहूँ
लागत न नीलकंज नीरद तमाल हैं।
मोतीमाल बनमाल गुंजन को माल गरें
फूले फूले फूलनि के गजरा रसाल हैं।
माथे मोरपंखन के मंजुल मुकुट लखि
रीझि रीझि लोचननि लूट्यो सुखजाल हैं।
मुरली अधर धरें निकस्यो निकुंजनि तें
आजु हम नीके ह्वै निहारयो नंदलाल हैं ॥ ५०८ ॥

शंका भाव (सवैया)

आरतबंधु को बानो बृथा करिबे कौं उपाउ करैं बहुतेरो।
'दास' यही जिय जानिकै मोहि भरयो मनु मानि बिथानि घनेरो।
गेह कियो सब देहनि मैं हरिनाम को नेहु नराखत नेरो।
रावरेहू तें महाप्रभु लागत मोहि अभाग जोरावर मेरो ॥५०९॥

चिंता भाव

जौ दुख सौं प्रभु राजी रहै तौ सबै सुख सिद्धिनि सिंधु बहाऊँ।
प यह निंदा सुनौं निज श्रौन सौं कौन सौं कौन सौं मौन गहाऊँ।
मैं यह सोच बिसूरि बिसूरि करौं बिनती प्रभु साँझ पहाऊँ।
तीनिहूँ लोक के नाथ समथ्थ हौ मैं ही अकेलो अनाथ कहाऊँ ॥५१०॥

---

[५०८] केहूँ–कहूँ (काशि०); दास (सर०, सभा)। लखि–लहि (सर०, सभा)। ह्वै–कै (सर०)।

[५१०] सबै–चहौं (काशि०, सर०, सभा)। श्रौन०–श्रौनन सों (काशि० +); श्रवननि (सभा)। कौन सों०–कौन सों हौं कहि (सभा)।

(दोहा)

धनि तिनको जीवन अली जनम सफल करि लेखि।
जिनको जीवन जात बँधि बृजजीवन-मुख देखि ॥ ५११ ॥

मोह भाव

निरखो पीरो पट धरैँ कारो कान्ह अहीर।
वह कारो पीरो लखै तब तेँ ब्याकुल बीर ॥ ५१२ ॥

मति भाव, यथा (सोरठा)

वहै रूप संसार मैँ समभ्यो दूजो नबी।
करि दीन्हो करतार, चसमा चखनि हजार बी ॥ ५१३ ॥

आलस्य भाव (दोहा)

कुंभकरन को रन हुयो गह्यो अलसई आइ।
सिर चढ़ि श्रुति नासा हसत जु न रोक्यो हरिराइ॥ ५१४ ॥

तर्क भाव (कबित्त)

जौ पै तुम आदि ही के निठुर न होते हरि
मेरी बार एती निठुराई क्यौँ कै गहते।
तुम ऐसे साहब जौ दीन के दयाल होते
हम ऐसे दीन क्यौँ अधीन ह्वै ह्वै रहते।
जसिन की रीति है जु ओर लैँ निबाहैँ जसु
तुमकौँ क्यौँ न एती बात ओर लैँ निबहते।
करुनामै दयासिंधु दीनानाथ दीनबंधु
मेरी जान लोग- यह झूठे नाम कहते ॥ ५१५ ॥

(दोहा)

क्यौँ कहि जाइ कहाइये त्रिभुवनराइ कन्हाइ।
बंदनि बिपति सहाइ नहि बिनयहु लगत सहाइ ॥ ५१६ ॥

---

[५११] बृज०—मनमोहन-छबि (सर०, सभा)।
[५१२] नबी—नहीँ (काशि०, सर०, सभा)। बी—बिधि (सर०)।
[५१५] यह—सब (सर०, सभा)।
[५१६] ०राइ—०नाह (काशि० +); ०नाय (सर०)।
कन्हाइ—कहाइ (सर०)।

अमर्ष भाव (कबित्त)

भोरैं भोरैं नाम लै अजामिल से अधमनि
पायो मन भायो सुने सुमृति-कथानि मैं।
अनुदिन राम राम राम रटि लाए मोहि
दीनबंधु देखत हौ केती बिपदानि मैं।
सुखी करि दीने घने दीन दुखियान प्रभु
नजरि न कीने कहूँ काहू की क्रियानि मैं।
मेर्‌वै गुन ऐगुन बिचारि कत पारियत
कारी छींट बिमल बिपतिहारी बानि मैं ॥५१७॥

(दोहा)

ललित लाल बैंदा लसै बाल-भाल सुखदानि।
दरपन रबि-प्रतिबिंब लौं दहै सौति-अँखियानि ॥ ५१८ ॥

दीनता भाव (कबित्त)

नामा औ सुदामा गीध गनिका अजामिल सौं
कीन्ही करतूति सो बिदित राव-राने मैं।
मेरे ही अकेले गुन औगुन बिचारे बिना
बदलि न जैहै ह्वै बड़े अदलखाने मैं।
एती तकरार तुम्हैं ताही सौं जरूर प्रभु
राखै जो गरूर तुम्हहूँ सौं या जमाने मैं।
'दास' कौं तौ ज्यौं ज्यौं प्रभु पानिप चढ़ैहौ
त्यौं त्यौं पानिप चढ़ैहौ बेस रावरे के बाने मैं ॥ ५१९॥

(दोहा)

जोगु नहीं बकसीस के जौ गुनही गुनहीन।
तौ निज गुन ही बाँधिये दीनबंधु जन दीन ॥ ५२० ॥

---

[५१७] दीन-बिनु (लीथो)। मेर्‌वै०-मेरेई अकेलो (सर०)।

[५१८] बैंदा-बिंबा (काशि०)।

[५१९] प्रभु०-प्रभु पानिप बढ़ैहौ (काशि०, सभा)। चढ़ैहौ-बढ़ैहौ (सर०)। चढ़ैहौ-चढ़ैगो (काशि० ÷, सर०, सभा०, लीथो)।

[५२०] गुनही गुन-गुनगन ही (लीथो)।

स्मृति भाव (कवित्त)

मोर के मुकुट नीचे भौंर की सी भाँवरैं दै
छबि सौं छहरि छिनु ऊपर थिरतु है।
नासा सुकतुंड बर कुंडल मकर नैन
खंजन-किसोरन सौं खेलन भिरतु है।
उरझत बनमाल त्रिबली तरंगनि मैं
बूड़त तिरत पदकंजनि गिरतु है।
कीन्ह्यो बहुतेरो कहूँ फिरत न फेरो मन
मेरो मनमोहन के गोहन फिरतु है ॥ ५२१ ॥

विषाद भाव (दोहा)

करी चैत की चाँदनी खरी चेत की हानि।
भई सून संकेत की केतकीउ दुखदानि ॥ ५२२ ॥

ईर्षा भाव

कुमति कूबरी दूबरी दासी सौं करि भोग।
मधुप न्याय कीन्ही हमैं तुमसौं पठयो जोग ॥ ५२३ ॥

चपलता भाव (सवैया)

हेरि अटानि तैं बाहिर आनिकै लाज तजी कुलकानि बहायो।
कानन कान न दीन्हो सखी सिख कानन कानन लीन्ह्यो फिरायो।
जाहि बिलोकिबे कौं अकुलात ही सोऊ भटू भरि डीठि दिखायो।
तापर नेकु रहै नहि चैननि मोहि तौ नैननि नाच नचायो ॥५२४॥

उत्कंठा भाव (दोहा)

सोभा सोभासिंधु की द्वै दृग लखत बनै न।
अहह दई किन करि दई रोम रोम प्रति नैन ॥ ५२५ ॥

---

[५२४] तजि—तज्यौ (काशि०, सभा)। कानि—काज (काशि०)।
बहायो—गवायो (सर०)। दीन्हो०—आनन दीन्ह्यो (काशि०)।
दीठि—आँखि (सर०, सभा)।

उन्माद भाव

हिय की सब कहि देत है होत चेत की हानि ।
छकवति आसव-पान लौं कान्ह-तान बनितानि ॥ ५२६ ॥

अवहित्था भाव

जानि मान अनुमानिहै लाल लाल लखि नैन ।
तिय-सुबास-मुख स्वास भरि लगी बफारो दैन ॥ ५२७ ॥
गिरद महल के द्विज फिरत फिरि फिरि कहत पुकारि ।
कनक अटारी किन करी टाटी मेरी टारि ॥ ५२८ ॥

अपस्मार भाव

रस-बाहिर बंसी करी बारि बारिचर रंग ।
फरफराति भुव पर परी थरथराति सब अंग ॥ ५२९ ॥

गर्व भाव

देखि कूबरी दूबरी रीझे स्याम सुजान ।
कहौ कौन को भागु है मेरे भाग समान ॥ ५३० ॥

जड़ता भाव

बचन सुनत कत तकि रहे जकि से रहे बिसूरि ।
दूरि करौ पिय पग लगत लगी मुकुट मैं धूरि ॥ ५३१ ॥
इकटक हरि राधे लखै राधे हरि की ओर ।
दोऊ आनन-इंदु भे चाऱ्यौ नैन चकोर ॥ ५३२ ॥

उग्रता भाव

हेरि हेरि सब मारिहौं धरी परसधर टेक ।
छपहुँ न बँचिहै छोनि पर छोनिप-छौना एक ॥ ५३३ ॥

---

[५२७] मुख—सुख (लीथो) । भरि—धरि (वही) ।
[५२८] फिरत—फिरै (काशि०, सर०, सभा) । किन—कइ (सर०) ।
[५३१] पिय—तिय (सर०) ।
[५३२] भे—भै (सर०, सभा) ।

सुप्त भाव

जात जगाए हूँ न अलि आँगन आए भानु।
रसमोए सोए दोऊ प्रेमसमोए प्रानु ॥ ५३४ ॥
सपने मिलत गोपाल सौं ग्वालि परम सुख पाइ।
कंपनि बिहसनि भुज गहनि पुलकनि देति जनाइ ॥ ५३५ ॥

आवेग भाव

कियो अकरषन मंत्र सो बंसीधुनि बृजराज।
उठि उठि दौरीं बाल सब तजे लाज गृहकाज ॥ ५३६ ॥

त्रपा भाव

ज्यौं ज्यौं पिय एकटक लखत गुरजनहूँ न सकात।
त्यौं त्यौं तिय-लोचन बड़े गड़े लाज में जात ॥ ५३७ ॥

त्रास भाव

सनसनाति आवत चली बिषमय कारे अंग।
लहरैं देति कलिंदजा अली उरगिनी-रंग ॥ ५३८ ॥

व्याधि भाव

हाय कहा वै जानतीं पै न जानतीं पीर।
करी जात नहि औषधी करैं जातनहि बीर ॥ ५३९ ॥

निर्वेद भाव

प्रस्ताविक चेतावनी परमारथ बहु भेद।
सम संतोष बिचार को ज्ञान देत निर्बेद ॥ ५४० ॥

---

[५३४] जगाए—जगायो (लीथो) । आए—आयो (वही) ।
[५३५] सों—कों (सर०) ।
[५३८] बिषमय—बिष से (लीथो) ।
[५३९] करैं—धरी (लीथो) । बीर—धीर (वही) ।

प्रस्ताविक, यथा (सवैया)

केते न रक्त प्रसूननि पेखि फिरे खग आमिषभोगी भुलाने।
केते न 'दास' मधुव्रत आइ गए बिरसैनि रसै पहिचाने।
तूलभरे फल सेमर सेइकै कीर तूँ काहे कों होत अयाने।
आस लिये यहि रूखे पै ह्वै बहु भूखे निरास गए बिलखाने ॥ ५४१ ॥

चेतावनी, यथा

बात सह्यो औ निपात लह्यो परस्वारथ कारन बौरो कहायो।
झोरतहूँ झकझोरतहूँ गहि तोरतहूँ फल मीठो खवायो।
मंदनहूँ औ अमंदनहूँ कहँ आपनी छाँहँ सुबास बसायो।
क्यों न लहै महि मैं महिमा बहु साधु रसाल तुँ ही जग जायो ॥५४२॥
ल्यायो कछू फल मीठो बिचारिकै दूरि तें दौरे सबै ललचाने।
हाथ लै चाखिकै राखि दयो निसवादिल बोलि सबै अलगाने।
'दासजू' गाहक चीन्ह्यो न लीन्ह्यो तूँ नाहक दीन्ह्यो बगारि दुकानै।
रे जड़ जौहरी गाँव, गँवारे मैं कौन जवाहिर के गुन जानै ॥५४३॥
पेखन देखनहार सु साहब पेखनिया यह कालु महा है।
बानर लौं नर लोगनि को बहु नाच नचावत सोई सदा है।
ठौरहि ठौर सु लीन्हे मँगावत सोई करावत कोटि कला है।
लोभ की डोरि गरे बिच डारि कै डोलत डोरैं जहाँ जहँ चाहै ॥ ५४४ ॥

मरण भाव (दोहा)

बैन-बान कानन लगे कानन निबसे राम।
हा भू मैं, रा गगन, मै बैठि कही सुरधाम ॥ ५४५ ॥

इति संचारीभाव

---

[५४१] भरे०–भरयो सेंबलु (काशि०, सभा)। बहु–दुख (लीथो)। निरास०–फिरे कितने (वही)।

[५४२] औ–ज्यौं (लीथो) लह्यो–सह्यो (सर०)।

[५४३] के–को (काशि०, सर०, सभा)।

[५४५] हा०–हा भूमै कहि (काशि० +)। बैठि०–गयो सुनृप (काशि०); कह्यो म त्रिप (सभा); कह्यो म नृप (सर०)।

अथ रसभावनि के भेद जानिबे को दृष्टांतपूर्वक

(कवित्त)

जाए नृप मन के बयालिस बिचारि देखौ
थाई नव बिभिचारी तैंतिस बखानिये।
थाई बढ़ि निज रजधानी करि मानस मैं
रस कहवाए बिभिचारी संगी जानिये।
रजधानी आलंबन संपति उद्दीपता कौं
चीन्हिबे के लक्षन कौं अनुभाव मानिये।
कोऊ रचै भूषन सौं कोऊ बिन भूषनहि
कबिन कौं तिन को चितेरो पहिचानिये ॥ ५४६ ॥

अथ भावमिश्रित भेद (दोहा)

तिन रस भावन की सुनौ संधि उदै अरु साँति।
होति सबल प्रौढ़ोक्तिजुत बृत्ति सु बहुती भाँति ॥ ५४७ ॥

भावसंधि, यथा

तजि संसय कुलकानि की मन मोहन सौं बंधि।
ह्वैहै नृप दसरथ-दसा नेम-प्रेम की संधि ॥ ५४८ ॥
मोहन-बदन निहारि अरु बिमल बंस की गारि।
रही अहोनिसि प्रीति-डर संध्या ह्वै सुकुमारि ॥ ५४९ ॥
वह पर ऊपर तैं तकत नीच अर्‌यो यह नीच।
बिधि बचएँ बचिहै बिहँग ब्याध बाज के बीच ॥ ५५० ॥

भावोदय-भावशांति, यथा

प्रीतम-सँग प्रतिबिंब लखि दरपन-मंदिर माहिँ।
उदित होत मुद्रित भई इर्षा तिय-हियराहिँ ॥ ५५१ ॥

---

[५४६] जाए–जाइ (लीथो); जायो (सभा)। करि–कियो (सर०, सभा)। भूषन–भूषननि (सर०, सभा)। भूषनहि–भूषननि (वही)।
[५४७] संधि–भाव (सर०, सभा)। बृत्ति०–बृत्तिन सों बहु (लीथो)।
[५५०] अर्‌यो–बसै (लीथो)।

मिलन-चाह तिय-चित चढ़ी उठति घटा लखि भूरि।
भई तड़ित घनस्याममय गई मानमति दूरि॥ ५५२॥

भावशबल, यथा

पिय-आगम परदेस तेँ सौति-सदन मैँ जोइ।
हर्ष गर्ब अमरष अनख रस रिस गई समोइ॥ ५५३॥

आठौ सात्विक को शबल, यथा (सवैया)

आनन मैँ रँग आयो नवीन है भीजि रही है पसीननि सारी।
कंपित गात परैँ पग सूधे न सूधी न बात कढ़ै मुख प्यारी।
लाइ टकी क्योँ बिलोकि रही अँसुवानि रुके अखियाँ डभकारी।
रोम उठे प्रगटै कहे देत हैँ कुंजनि मैँ मिले कुंजबिहारी॥ ५५४॥

नायिका को शबल (कबित्त)

एकनि के जी की ब्यथा जानत न जीकी सखी
एकै दुख बूझे तेँ न बोलैँ लीन्हे लाज के।
एकै बिरहाकुल बिलाप करैँ एकै
बिलखित मगु आगेँ ठाढ़ी मिसु काहू काज के।
एकै कहैँ कीजिये पयान सुखदानि पीछैँ
भए बृजमंडल बसेरे दुखसाज के।
गोपिन को हरष-बिलास 'दास' कूबरी पै
उठि चल्यो आगैँ ही चलत बृजराज के॥ ५५५॥

अथ भाव की प्रौढ़ोक्ति, हर्ष भाव की प्रौढ़ोक्ति (दोहा)

सपनैँ पिय पाती मिली मुदित भई मन बाल।
आइ जगायो भावतो को बरनै सुख हाल॥ ५५६॥

---

[५५३] जोइ—जाइ (लीथो)। अनख०—गई इरखा सरस समाइ (लीथो)।
[५५४] सूधी०—सूधियै (लीथो)।
[५५५] एकै बिलखित०—एकै एकै बिलखित मगु ठाढ़ी (सर०, सभा)। को—पै (सर०)।
[५५६] भावतो—भावतेँ (काशि०, सर०)।

स्वकीया की प्रौढ़ोक्ति

निज पिय-चित्र बियोगहू लखति न यह उर आनि।
दूजे सौं मनु रमतु है होति पतिव्रत-हानि ॥ ५५७ ॥

अनुकूल नायक की प्रौढ़ोक्ति

तुँही मिली सपनैं दई जरौं दुखित जदुराय।
परम ताप सहि अप्सरा ज्यौं क्यौंहूँ छलि जाय ॥ ५५८ ॥

परकीया की प्रौढ़ोक्ति

इहि बन इहि दिन इनहि सँग लह्यो अमित सुखलाहु।
भए अरुचि सखि येउ सब भए इन्हैं सौं ब्याहु ॥ ५५९ ॥

अथ बृत्ति-कथन

बृत्ति कैसकी भारती सात्वतीहि उर आनि।
आरभटीजुत चारि बिधि रस को सबल बखानि ॥ ५६० ॥
सुभ भावनि जुत कैसकी करुना हास सिंगार।
बीर हास स्रृंगार मिलि सात्वतीहि निरधारि ॥ ५६१ ॥
भय बिभत्स अरु रुद्र तैं आरभटी उर आनि।
अद्भुत बीर सिंगारजुत सांत सात्वती जानि ॥ ५६२ ॥
सब बिभाव अनुभाव कौं बहिरभाव पहिचानि।
चर अरु थाई भाव को अंतरभाव बखानि ॥ ५६३ ॥
भाव भाव रस रस मिलै त्यौं त्यौं धरिये नाम।
बुधिबल जान्यो परत नहिं समुझैबे को काम ॥ ५६४ ॥
जिहि लक्षन कौं पाइये जहाँ कछू अधिकार।
वाही कौं वह कबित है बरनत बुद्धिउदार ॥ ५६५ ॥
रस सोभास्रित होत है जहाँ न रस की बात।
रसाभास तासौं कहैं जे हैं मति-अवदात ॥ ५६६ ॥

[५६०-६१] कैसिकी–कौसकी (सर्वत्र)। सात्वतीहि–सात्विकीहि (सर्वत्र)।
[५६२] बिभत्स०–बीभत्स 'रु (काशि०, सर०, सभा)।
[५६६] तासों–ताकों (सर०, सभा)।

भ्रम तैं उपजत भाव है सो है भावाभास।
पाँच भाँति रसदोष को लक्षन सुनौ प्रकास ॥ ५६७ ॥

(सोरठा)

होइ कपट की प्रीति अनुचित करिये पुष्ट जहँ।
पहिलो नीरस रीति दूजो पात्रादुष्ट है ॥ ५६८ ॥
सोग भोग मैं जोइ आन आन रुचि दुहुँन के।
प्रथम बिरस रस होइ दूजो दुस्संधान कहि ॥ ५६९ ॥

(दोहा)

जौ बिभत्स सृंगार मैं भै मैं बीर बखानि।
बर्नन करुना रुद्र मैं प्रत्यनीक रस जानि ॥ ५७० ॥
जहाँ न पूरन होत रस मिलत कछू संजोग।
थाई भावहि को तहाँ नाम धरत कबि लोग ॥ ५७१ ॥
प्रीति हँसी अरु सोक पुनि क्रोध उछाहहि जानु।
भय निंदा बिसमय भगति थाई भाव बखानि ॥ ५७२ ॥
कहूँ हासरस पाइकै दोषांकुस अनुमानि।
दौषौ गुन ह्वै जात है कहँ जानमनि जानि ॥ ५७३ ॥
तिय तिय बालक बालकहि बंधु बंधु सौं प्रीति।
पितु सुत प्रेमादिक सबै कहै प्रेमरस-रीति ॥ ५७४ ॥
थाई भाव दया जहाँ कहुँ कैसेहूँ होइ।
बात स्वल्प रस कहत हैं करुना रस तें जोइ ॥ ५७५ ॥
बिप्र-गुरू-स्वामी-भगति इत्यादिक जहँ होइ।
भक्तिभाव रस सांत तैं प्रगट जान सब कोइ ॥ ५७६ ॥
सबै प्रछन्न प्रकास है छिपे प्रगट तैं जानि।
भूत भबिष ब्रतमान पुनि सब भेदनि मैं मानि ॥ ५७७ ॥
सब सामान्य बिसेष है लक्षन सबै बिसेष।
होइ कछुक लक्षन लिये सो समान्य अवरेष ॥ ५७८ ॥

---

[५७०] जौ—जहँ (काशि०)। भै मैं—भजे ये (वही)।
[५७१] न पूरन—निरूपन (सभा)।
[५७८] सबै—सकल (सभा)।

जो रस उपजै आपु तैं ताकों कहत स्वनिष्ठ।
होत और तैं और पै ताहि कहत परनिष्ठ॥ ५७६ ॥
सबके कहत उदाहरन ग्रंथ बहुत बढ़ि जाइ।
तातैं संपूरन कियो बालगोपालहि ध्याइ॥ ५८० ॥

(सवैया)

कर कंजन कंचन की पहुँची मुकुतानि को मंजुल माल गरैं।
चहुँघाँ श्रुतिकुंडल घेरि रही घुघुरारी लटैं घनसोभ धरैं।
बतियाँ मृदु बोलनि बीच फबैं दँतियाँ दुति दामिनि की निदरैं।
मुनिबृंद-चकोर के चंद मनोहर नंद के गोद बिनोद करैं॥ ५८१ ॥
पद-पानिन कंचन चूरे जराइ जरे मनि-लालन सोभ धरैं।
चिकुरारी मनोहर पीत झँगा पहिरैं मनि-आँगन मैं बिहरैं।
यहि मूरति ध्यानन आनन कौं सुर-सिद्ध-समूहनि साध मरैं।
बड़भागिनि गोपि मयंकमुखी अपनी अपनी दिसि अंक भरैं॥ ५८२ ॥
नवनील सरोरुह अंगनि केसरि-रंग दुकूल-प्रभा सरसैं।
उर नाहर के नख संजुत चारु मयूरसिखानि के हार लसैं।
बिचरैं पद-पानिन अंगन मैं कुलकैं किलकैं हुलसैं बिहँसैं।
अधराधर-खोलनि तोतरि बोलनि 'दास' हिये दिनरैन बसैं॥ ५८३ ॥

(दोहा)

सत्रह सै इक्यानबे नभ सुदि छठि बुधवार।
अरवर देस प्रतापगढ़ भयो ग्रंथ-अवतार॥ ५८४ ॥
कुमति कुदूषन लाइहैं सुधर्‍यो बर्न बिगारि।
सुमति समुझि सुख पाइहैं बिगर्‍यो बर्न सुधारि॥ ५८५ ॥

---

[५७६] पै–मै (काशि०, सर०, सभा)।
[५८२] यहि–जहि (सर०, सभा)। आनन०–की सुर सिद्धि सिहात (वही)।

शृंगारनिर्णय

श्रृंगारनिर्णय

(सवैया)

मूस मृगेस बली बृष बाहन किंकर कीनो करोर तैंतीस कौं।
हाथन मैं फरसा करवाल त्रिसूल धरे खल खोइबे खीस कौं।
जक्तगुरू जग की जननी जगदीस भरे सुख देत असीस कौं।
'दास' प्रनाम करै कर जोरि गनाधिप कौं गिरिजा कौं गिरीस कौं॥१॥

(कवित्त)

मच्छ ह्वैकै बेद काढ़्यो कच्छ ह्वै रतन गाढ़्यो
कोल ह्वै कुगोल रद राख्यो सबिलास है।
बावन ह्वै इंद्रै ह्वै नृसिंह प्रहलादै राख्यो
कीनो ह्वै द्विजेस जाने छिति छत्र-नास है।
राम ह्वै दसास्यबंस कान्ह ह्वै सँघार्‌यो कंस
बौध ह्वैकै कीनो जिन स्रावक-प्रकास है।
कलकी ह्वै राखे रहैँ हिंदूपति पति देत
म्लेच्छ हति मोक्षगति 'दास' ताको दास है॥ २॥

(दोहा)

श्रीहिंदूपति-रीझि-हित समुझि ग्रंथ प्राचीन।
'दास' कियो सृंगार को निरनय सुनौ प्रबीन॥ ३॥
संबत बिक्रम भूप को अट्ठारह सै सात।
माधव सुदि तेरस गुरौ अरवर थल बिख्यात॥ ४॥
बंदौं सुकबिन के चरन अरु सुकबिन के ग्रंथ।
जातें कछु हौंहूँ लह्यो कबिताई को पंथ॥ ५॥

---

[१] खोइबे-खोइबो (सर०)।

[२] जाने-जाहि (सर०)। कलकी-कलंको (वही)। रहैँ-रहौ (वही)।

[३] हित-कोँ (सर०)।

[५] लह्यो-लहौ (सर०)।

जिहि कहियत सृंगाररस ताको जुगल बिभाव ।
आलंबन इक दूसरो उद्दीपन कबिराव ॥ ६ ॥
बरनत नायक-नायिका आलंबन के काज ।
उद्दीपन सखि दूतिका सुख-समयो सुखसाज ॥ ७ ॥

नायक-लक्षण

तरुन सुघर सुंदर सुचित नायक सुहृद बखानि ।
भेद एक साधारनै पति उपपति पुनि जानि ॥ ८ ॥

साधारण नायक, यथा (कबित्त)

मुख सुखकंद लखि लाजै 'दास' चंद-ओप
चोप सो चुभत नैन गोप-तनुजान के ।
तैसो सब सुरभित बसन हिये को माल
कानन के कुंडल बिजायठ भुजान के ।
नासा लखे सुकतुंड नाभी पै सुरस कुंड
रद है दुरद-सुंड देखत दु-जान के ।
नल को न लीजै नाम कामहू को कहा काम
आगैं सुखधाम स्यामसुंदर सुजान के ॥ ९ ॥

पति-लक्षण (दोहा)

निज ब्याही तिय को रसिक पति ताकौं पहिचानि ।
आसिक और तियान को उपपति ताकौं जानि ॥ १० ॥

पति, यथा (सवैया)

छोड़्यो सभा निसिबासर की मोजरे लगे पावन लोग प्रभातैं ।
हासबिलास तज्यो तिनसौं जिनसौं रह्यो है हँसि बोलि सदा तैं ।
'दास' भोराई-भरी है वहौ पै प्रयोग-प्रबीनी गनी गई यातैं ।
आई नई दुलही जब तैं तब तैं लई लाल नई नई बातैं ॥११॥

---

[८] सुचित-सुखी (सर०) ।
[९] सुरभित-सानन के (सर०) । सुरस-सरस (भार०) ।
दु-जान-भुजान (वही) ।
[११] जिन०-जिन्हहू सों रह्यौ (सर०) ।

उपपति, यथा

अलकावलि ब्याली बिसाली घिरै जहँ ज्वाल जवाहिर-जोति गहै।
चमकै बरुनी बरछी भ्रुव खंजर कैबर तीछ कटाछ महै।
बसि मैन महा ठग ठोढ़ी की गाड़ मैं हास के पास पसारे रहै।
मन मेरे कि 'दास' ढिठाई लखौ तहँ पैठि मिठाई लै आयो चहै ॥१२॥

नायकभेद (दोहा)

अनुकूलो दक्षिन सठो धृष्टिति चारौ चारि।
इक नारी सौं प्रेम जिहि सो अनुकूल बिचारि॥ १३ ॥

पति अनुकूल, यथा (सवैया)

संभु सो क्यों कहियै जिहि ब्याहो है पारबती औ सती तिय दोऊ।
राम-समान कह्यो चहै जीय पै माया की सीय लिये रहै सोऊ।
'दासजू' जौ यहि औसर होवतीं तेरोई नाह सराहतीं वोऊ।
नारि पतिव्रत हैं बहुतै पतिनीव्रत नायक और न कोऊ ॥१४॥

उपपति अनुकूल, यथा

तो बिन राग औ रंग बृथा तुव अंग अनंग की फौजन की सौं।
आनन आनँदखानि की सौं मुसुकानि सुधारस मौजन की सौं।
'दास' के प्रान की पाहरू तू यहि तेरे करेरे उरोजन की सौं।
तो बिन जीबो न जीबो प्रिया यहि तेरही नैन-सरोजन की सौं ॥१५॥

दक्षिण-लक्षण (दोहा)

बहु नारिन को रसिक पै सब सौं प्रीति समान।
बचन क्रिया मैं अति चतुर दक्षिन लक्षन जान॥ १६ ॥

---

[१२] ब्याली०–ब्याल बिसाल (भार०)। लै–लि (वही)।

[१३] चारौ०–चोराचार (भार०))।

[१४] होवतीं०–होते तौ तेतोई नाह सराहते (सर०)।

[१५] आनन०–मुसक्यान सुधारस मौजन की तुव आनन आनँद-खाननि की सौं (भार०)। प्रिया यहि०–प्रिया मुहिँ तेरई (वही)।

[१६] को–के (सर०)। सौं–पै (भार०)।

यथा (सवैया)

सीलभरी अँखियान समान चितै सबकी दुचिताई को घायक।
'दासजू' भूषन बास दिये सब ही के मनोरथ पूजिबे लायक।
एकहि भाँति सदा सब सौं रतिरंग अनंगकला सुखदायक।
मैं बलि द्वारिकानाथ की जो दस सोरह सै नवलान को नायक ॥१७॥

दक्षिण उपपति, यथा

आज बने तुलसीबन मैं रमि रास मनोहर नंदकिसोर।
चारिहूँ पास हैं गोपबधू भनि 'दास' हिये मैं हुलास न थोर।
कौल उरोजवतीन को आनन मोहन-नैन भ्रमै जिमि भौंर।
मोहन-आनन-चंद लखैं बनितान के लोचन चारु चकोर ॥ १८ ॥

वचनचतुर, यथा

भौन अँध्यारहूँ चाहि अँध्यारी चवेली के कुंज के पुंज बने हैं।
बोलत मोर करैं पिक सोर जहाँ तहँ गुंजत भौंर घने हैं।
'दास' रच्यो अपने ही बिलास कौं मैनजू हाथन सौं अपने हैं।
कूल कलिंदजा के सुखमूल लतान के बृंद बितान तने हैं ॥१९॥

क्रियाचतुर, यथा

जित न्हानथली निज राधे करी तित कान्ह कियो अपनो खरको।
जित पूजा करैं नित गौरि की वै तित जाइ ये ध्यान धरैं हर को।
इन भेदनि 'दासजू' जानै कछू ब्रज ऐसो बड़ो बुधि को बर को।
दधिबेचन जैबो जितै उनको यई गाहक हैं तित के कर को ॥२०॥

सठ-लक्षण (दोहा)

निज मुख चतुराई करै सठता ठहरै न्यान।
ब्यभिचारी कपटी महा नायक सठ पहचान ॥ २१ ॥

---

[१७] दिये—कियो (भार०)। दस—इन (वही)।
[१८] चारु—चाह (भार०)।
[१९] अँध्यार—अँधेरे (भार०)।
[२०] बड़ो—बसै (भार०)। कर—घर (वही)।
[२१] ठहरै०—बिरचै आह (भार०)।

शठ पति, यथा (सवैया)

वा दिन की करनी उनकी सब भाँतिन कै बृज मैं रही छाइकै।
'दासजू' कासोँ कहा कहिये रहिये नित लाजन सीस नवाइकै।
मेरे चलावतहीँ चरचा मुकरै सखि सौँ हैँ बड़ेन की खाइकै।
तूँ निज ओर सोँ नंदकिसोर सोँ क्योँहूँ कछू कहती समुझाइ कै॥२२॥

शठ उपपति, यथा

मिलिबे को करार करौ हम सोँ मिलि औरन सोँ नित आवत हौ।
इन बातन हाँहीँ गई करती तुम 'दासजू' धोखो न लावत हौ।
नटनागर हौ जू सही सबही अँगुरी के इसारे नचावत हौ।
पै दई हमहूँ बिधि थोरी घनी बुधि काहेँ को बातैँ बनावत हौ॥२३॥

धृष्ट-लक्षण (दोहा)

लाज 'रु गारी मार की छोड़ि दई सब त्रास।
देख्यो दोष न मानई नायक धृष्ट प्रकास॥ २४॥

पति धृष्ट, यथा (सवैया)

उपरैनी धरे सिर भावती की प्रतिरोम पसीनन ध्वै निकसे।
मुसुकात इतै पर 'दास' सबै गुरुलोगनि के ढिग ह्वै निकसे।
गुनहीन हरा उर मैँ उपट्यो तिहि बीच नखक्षत द्वै निकसे।
गृह आवत हैँ बृजराज अली तन लाज को लेस न छ्वै निकसे॥२५॥

उपपति धृष्ट, यथा

यह रीति न जानी हुती तब जानी जू आज लौँ प्रीति गई निबही।
नहि जायगी मोसोँ सही उत ही करौ जाइकै ऐसी ढिठाई सही।
पहिचान्यो भली बिधि 'दास' तुम्हैँ अबला-जन की अब लाज नही।
मनभाइ ही की न करी डर जू मनभाई की दौरिकै बाँह गही॥२६॥

इति नायक

---

[२२] क्योँहूँ—क्योँ न (भार०)।

[२४] लाज०—लाजन (सर०)। मार—मान (वही)।

[२५] ध्वै—ह्यै (सर०); योँ (भार०)। द्वै—छ्वै (वही)। छ्वै—ध्वै (वही)।

[२६] मनभाइ—मनभाव (भार०)। जू—जो (वही)।

अथ नायिका-लक्षण (दोहा)

पहिले आतमधर्म तेँ त्रिबिधि नायिका जानि ।
साधारन बनिता अपर सुकिया परकीयानि ॥ २७ ॥

साधारण नायिका-लक्षण

जामैँ स्वकिया परकिया रीति न जानी जाइ ।
सो साधारन नायिका बरनत सब कबिराइ ॥ २८ ॥
जुवा सुंदरी गुनभरी तीनि नायिका लेखि ।
सोभा कांति सुदीप्तिजुत नखसिख प्रभा बिसेखि ॥ २९ ॥

सोभा, यथा (कबित्त)

'दास' आसपास आली ढारती चवँर भावै
लोभी ह्वै भवँर अरबिंद से बदन मैँ ।
केती सहवासिनी सुआसिनी खवासिनी
हुकुम जो हैँ बैठी खड़ी आपने हदन मैँ ।
सची सुंदरी है रतिरंभा औ घृताची पै
न ऐसी रुचिराची कहूँ काहू के कदन मैँ ।
पूरे चित चाइनि गोबिंद-सुखदाइनि
श्रीराधा ठकुराइनि बिराजति सदन मैँ ॥ ३० ॥

कांति, यथा

पहिरत रावरे धरत यह लाल सारी
जोति जरतारीहूँ सोँ अधिक सोहाई है ।
नाकमोती निंदत पदुमराग-रंगनि कोँ
खुलित ललित मिलि अधर-ललाई है ।
औरै 'दास' भूषन सजत निज सोभाहित
भामिनी तूँ भूषननि सोभा सरसाई है ।
लागत बिमल गात रूपन के आभरन
आभा बढ़ि जात जातरूप सोँ सवाई है ॥ ३१ ॥

---

[३०] हुकुम–हू नैन (भार०) । खड़ी–बड़ी (वही) । पूरे–पूरी (वही) ।

[३१] आभा०–आभा मिटि जात (सर०); बढ़ि जात रूप (भार०) ।

दीप्ति-वर्णन

आरसी को आँगन सुहायो छबि छायो
नहरनि मैं भरायो जल उज्जल सुमन-माल।
चाँदनी बिचित्र लखि चाँदनी बिछौना पर
दूरि कै चँदोवन कौं बिलसै अकेली बाल।
'दास' आसपास बहु भाँतिन बिराजैं धरे
पन्ना पोखराज मोती मानिक पदिक लाल।
चंद-प्रतिबिंब तैं न न्यारो होत मुख औ
न तारे-प्रतिबिंबनि तैं न्यारो होत नगजाल॥ ३२॥

पग-वर्णन

पाँखुरी पदुम कैसी आँगुरी ललित तैसी
किरनैं पदुमराग-निंदक नखन मैं।
तरवा मनोहर सु एड़ी मृदु कौहर सी
सौहर ललाई की न ह्वैहै लालगन मैं।
अनत तैं आकरषि अनत बरषि देत
भानु कैसो भाव देख्यो तेरे चरनन मैं।
आकरषि लीन्ह्यो है सोहाग सब सौतिन को
दीन्ह्यो है बरषि अनुराग पिय-मन मैं॥ ३३॥

जानु-वर्णन

करभ बतावै तो करभ ही की सोभा हित
गजसुंड गावै तो गजन की बड़ाई कौं।
एरी प्रानप्यारी तेरी जानु कै सुजान बिधि
ओप दीन्हो आपनी तमाम सुघराई कौं।

---

[३२] ०नि तैं ते–तेन (भार०)। नग–नख (वही)।
[३३] सु–सी (भार०)। ह्वै–लै (वही)। अनत–अतन (वही)।
आकरषि–आँक रखि (वही)।
[३४] तो–ते (सर०, भार०)। तो–ते (सर०)। तेरी–तेरे (भार०)।

'दास' कहै रंभा सुरनायक-सदनवारी
नेकहूँ न तुली एको अंग की निकाई कौं।
रंभा बाग कौने की जौ वाके ढिग सोने की ह्वै
सीस भरि आवै तौ न पावै समताई कौं॥ ३४॥

नितंब-वर्णन

तो तन मनोज ही की फौज है सरोजमुखी
हाइभाइ साइकै रहे हैं सरसाइकै।
तापर सलोने तेरे बस हैं गोबिंद प्यारे-
मैनहू के बस भए तेरे ढिग जाइकै।
तिनहू गोबिंद लै सुदरसनचक्र एकै
कीन्हो बस भुवन चतुर्दस बनाइकै।
काहे न जगत जीतिबे कौं मन राखै
मैन-दुर्लभ-दरस है नितंब-चक्र पाइकै॥ ३५॥

कटि-वर्णन

सिंहिनी औ भृंगिनी की ता ढिग जिकिर कहा
बारहू मुरारहू तें खीनी चित धरि तूँ।
दूरि ही तें नैसुक नजरि-भार पावतहीं
लचकि लचकि जात जी मैं ज्ञान करि तूँ।
तेरो परिमान परमान के प्रमान है
पै 'दास' कहै गरुआई आपनी सँभरि तूँ।
तूँ तौ मनु है रे वह निपट ही तनु है रे
लंक पर दौरत कलंक सौं तौ डरि तूँ॥ ३६॥

उदर-वर्णन

कैसी करी ए ती ए ती अद्भुत निकाई भरी
छामोदरी पातरी उदर तेरो पान सो।

---

[३५] प्यारे—प्यारो (भार०)। भए—भयो (वही)। मैन—मन (वही)।
[३६] भृंगिनी—मृगिनी (भार०)। रे लंक—री लंक (सर०)।

सकल सुदेस अंग बिहरि थकित ह्वैकै
कीबे को मिलान मेरे मन के मकान सो।
उरज-सुमेरु आगे त्रिबली बिमल सीढ़ी
सोभासर नाभि सुभ तीरथ समान सो।
हारन की भाँति आवा-गौन की बँधी है पाँति
मुकुत सुमनबृंद करत नहान सो॥ ३७॥

रोमावली-वर्णन (सवैया)

बैठी मलीन अली अवली कि सरोज-कलीन सौं ह्वै बिफली है।
संभु-गली बिछुरी ही चली किधौं नागलली अनुराग-रली है।
तेरी अली यह रोमावली कि सिंगारलता फल-बेल-फली है।
नाभिथली तें जुरे फल लैं कि भली, रसराज-नली उछली है॥३८॥

कुच-वर्णन

गाढ़े गड़्यो मन मेरो निहारिकै कामिनि तेरे दोऊ कुच गाढ़े।
'दास' मनोज मनो जग जीतिकै खास खजाने के कुंभ द्वै काढ़े।
चक्रवती द्वै एकत्र भए मनो जोम के तोम दुहूँ उर बाढ़े।
गुच्छ के गुंमज के गिरि के गिरिराज के गर्ब गिरावत ठाढ़े॥३९॥

भुज-वर्णन

भाई सुहाई खराद-चढ़ाई सी भावती तेरी भुजा छबिजाल है।
सोभा सरोवरी तूँ है सही तहँ 'दास' कहै ये सकंज मृनाल है।
कंचन की लतिका तूँ बनी दुहुँधा ये बिचित्र सपल्लव डाल है।
अंग मैं तेरे अनंग बसै ठग ताहि के पास की फाँसी बिसाल है॥४०॥

---

[३७] करी०—करिये अति अदभुत (भार०)। भाँति—भीति (सर०)' नहान—जहान (भार०)।

[३८] गली—जगी (भार०)। बेल—बेलि (वही, लीथो)।

[३९] एकत्र०—एकत्रित मानो म जोम के जोम दुई (भार०)।

[४०] भाई—खूब (भार०)। सरोवरी—सरोवर (वही)। दुहुँधा०—दुहुँ छाये (वही)।

कर-वर्णन

पत्र महारुन एक मिलाइ कलाइ-छिमी तरुनी रँग दीने ।
पाँखुरी पंच की कंज की भानु मैँ बान मनोज के श्रोनित-भीने ।
पंच दसानि को दीपक सो कर कामिनि को लखि 'दास' प्रबीने ।
लाल की बँदुली लालरी की लरियाँ जुत आइ निछावरि कीने ।।४१।।

पीठ-वर्णन

मंगलमूरति कंचनपत्र कै मैनरच्यो मन आवत नीठि है ।
काटि किधौँ कदलीदल-गोफ कौँ दीन्हो जमाइ निहारि अगीठि है ।
'दास' प्रदीप-सिखा उलटी कै पतंग भई अवलोकति दीठि है ।
कंध तैँ चाकरी पातरी लंक लौँ सोभित कैधौँ सलोनी की पीठि है ।।४२।।

कंठ-वर्णन

कंबु कपोतन की सरि भाषत 'दास' तिन्हैँ यह रीति न पाई ।
या उपमा कौँ यही है यही है यही है बिरंचि त्रिरेख खचाई ।
कंचन-पंचलरा गजमोतीहरा मनिलाल की माल सोहाई ।
कै तिय तेरे गरे मैँ परी तिहुँ लोक की आइकै सुंदरताई ।।४३।।

ठोढ़ी-वर्णन

छाक्यो महा मकरंद मलिंद खरयो किधौँ मंजुल कंज-किनारे ।
चंद मैँ राहु को दंत लग्यो कै गिरी मसि भाग सोहाग-लिखारे ।
'दास' रसीली की ठोढ़ी छबीली की लीली के बिंदु पै जाइये वारे ।
मित्त की डीठि गड़ी किधौँ चित्त को चोर गिन्यो छबिताल-गड़ारे ।।४४।।

---

[४१] मिलाइ०—मिलाय गुलाब कली तरुनी (भार०)। पंच की—पंच को (सर०)।

[४२] अगीठि—अपीठि (भार०)। भई—मई (वही)। लौँ—सो (वही, लीथो)।

[४३] आइ—आनि (भार०, लीथो)।

[४४] कंज—मंजु (सर०)।

अधर-वर्णन (कवित्त)

एरी पिकबैनी 'दास' पटतर हेरै जब
जब इन तेरे अधरन मधुरारे को।
दाख दुरि जाइ मिसिरीयौ मुरि जाइ कंद
कैसे कुरि जाइ सुधा सटक्यो सवारे को।
ललित ललाई के समान अनुमानै रंग
बिंबाफल बंधुजीव बिद्रुम बिचारे को।
तातें इन नामनि को पहिलोई बर्न कहैं
मुख मूँदि मूँदि जात बरननवारे को ॥ ४५ ॥

दशन-वर्णन

बिधु सों निकासि नीकी बिधि सों तरासि कला
सै करि सवारयो बिधि बत्तिस बनाइ है।
हास ही मैं 'दास' उजराई को प्रकास होत
अधर ललाई धरे रहत सुभाइ है।
हीरा की हिरानी उड़गन की उड़ानी
अरु मुकुतनहूँ की छबि दीनी मुकताइ है।
प्यारी तेरे दंतन अनारीदाना कहि कहि
दाना ह्वैकै कबि क्यों अनारी कहवाइहै ॥ ४६ ॥

हास-वर्णन

'दास' मुखचंद्र की सी चंद्रिका बिमल चारु
चंद्रमा की चंद्रिका लगत जामैं मैली सी।
बानी को कपूरधूरि ओढ़नी सी फहराति
बात-बस आवति कपूर-धूरि फैली सी।

---

[४५] इन०—तेरे सुंदर अधर (भार०)। बर्न०—बरन कहत (सर०)।

[४६] बत्तिस—बत्तसो (भार०)। सुभाइ—सुभाय (वही); सवाइ (लीथो)। अनारीदाना—अनारदाने (भार०)।

बिज्जु सो चमकि महताब सी दमकि उठै
उमगति हिय के हरष की उजेली सी ।
हाँसी हेमबरनी की फाँसी सी लगति ही मैं
साँवरे दृगनि आगे फूलत चमेली सी ॥ ४७ ॥

वाणी-वर्णन (सवैया)

देव-मुनीन को चित-रमावन पावन देवधुनी-जल जानो ।
'दास' सुने जिहिँ ऊख मयूख पियूष की भूख भगी पहिचानो ।
कोकिल को किल कीर कपोतन की कल बोल की खंडनी मानो ।
बाल प्रबीनी की बानी को बानक बानी दियो तजि बीन को बानो ॥४८॥

कपोल-वर्णन (कवित्त)

जहाँ यह स्यामता को अंक है मयंक मैं
तहाँई स्वच्छ छबिहि सु छानि बिधि लीन्हो है ।
तामैं मुखजोग सबिसेष बिलगाइ
अवसेष सौं सुबेष सुरबंग रचि दीन्हो है ।
आनन की चारुता मैं चारु हू ते चारु चुनि
ऊपर ही राख्यो बिधि चातुरी सो चीन्हो है ।
तासौं यह अमल अमोल सुभ डोल गोल
लोलनैनी कोमल कपोल तेरो कीन्हो है ॥ ४९ ॥

श्रवण-वर्णन (सवैया)

'दास' मनोहर आनन-बाल को दीपति जाकी दिपै सब दीपै ।
श्रौन सोहाए बिराजि रहे मुकताहल-संजुत ताहि समीपै ।
सारी महीन सौं लीन बिलोकि बिचारत हैँ कबि के अवनीपै ।
सोदर जानि ससीहि मिली सुत संग लिये मनो सिंधु मैं सीपै ॥५०॥

नासिका-वर्णन (कवित्त)

चारु मुखचंद कौं चढ़ायो बिधि किंसुक कै
सुक नयो बिंबाफल-लालच-उमंग है ।

---

[४७] मुल—महा (सर०) । साँवरे—रावरे (वही) ।
[४८] कोकिल—कोकिला (सर०) । बोल०—बोलनि (भार०) ।
[४९] सुबेष—बिसेख (भार०) ।

नेह-उपजावन अतूल तिलफूल कैधौं
पानिप-सरोवरी की उरमी उतंग है।
'दास' मनमथ-साहि कंचन-सुराही मुख
बंसजुत पालकी कि पाल सुभ रंग है।
एक ही मैं तीन्यौ पुर ईस को है अंस
कैधौं नाक नवला की सुरधाम सुर-संग है ॥ ५१ ॥

नैन-वर्णन (सवैया)

कंज सकोचि गड़े रहैं कीच मैं मीनन बोरि दियो दह-नीरनि।
'दास' कहै मृगहूँ कौं उदास कै बास दियो है अरन्य गँभीरनि।
आपुस मैं उपमा उपमेय ह्वै नैन ये निंदत हैं कबि धीरनि।
खंजनहूँ को उड़ाइ दियो हलके करि दीने अनंग के तीरनि ॥५२॥

भृकुटी-वर्णन

भावती-भौंहँ के भेदनि 'दास' भले यह भारती मोसौं गई कहि।
कीन्हो चह्यो निकलंक मयंक जबै करतार बिचार हिये गहि।
मेटत मेटत ह्वै धनुषाकृति मेचकताई की रेख गई रहि।
फेरि न मेटि सक्यो सबिता कर राखि लियो अति ही फबिता लहि ॥५३॥

भ्रूभाव-चितवनि-वर्णन (कवित्त)

पै बिन पनिच बिन कर की कसीस बिन
चलत इसारे यह जिनको प्रमान है।
आँखिन अड़त आइ उर मैं गड़त धाइ
परत न देखे पीर करत अमान है।
बंक अवलोकनि को बान औरई बिधान
कज्जलकलित जामैं जहर समान है।
तातैं बरबस बेधै मेरे चित्त चंचल कौं
भामिनी ये भौं हैं कैसी कहर-कमान है ॥ ५४ ॥

---

[५१] बंस–बास (भार०)।
[५२] उड़ाइ०–उए यो हलुको करि दीन्हो (सर०)।
[५४] पै–जै (भार०)।

भाल-बर्णन (सवैया)

बैठक है मन-भूप को न्यारो कि प्यारो अखारो मनोज बली को।
सोभन की रँगभूमि सुभाव बनाव बन्यो कि सोहागथली को।
'दास' बिसेषक जंत्र को पत्र कि जातेँ भयो बस भाइ हली को।
भाग लसै हिमभानु को चारु लिलारु किधौँ बृषभानलली को ॥५५॥

मुखमंडल-बर्णन (कबित्त)

आवै जित पानिप-समूह सरसात नित
मानै जलजात सु तौ न्याय ही कुमति होइ।
'दास' जादरप को दरप कंदरप को है
दरपन सम ठानै कैसे बात सति होइ।
और अबलानन मैँ राधिका को आनन
बरोबरी को बल कहै कबि कूर अति होइ।
पैये निसिबासर कलंकित न अंक ताहि
बरनै मयंक कबिताई की अपति होइ ॥ ५६ ॥

माँग-बरणन (सवैया)

चीकनी चारु सनेहसनी चिलकै दुति मेचकताई अपार सोँ।
जीति लियो मखतूल के तार तमी-तम सार दुरेफकुमार सोँ।
पाटी दुहूँ बिच माँग की लाली बिराजि रही योँ प्रभा-बिसतार सोँ।
मानो सिंगार की पाटी मनोभव सीँचत है अनुराग की धार सोँ ॥५७॥

केश-बर्णन (कबित्त)

घनस्याम मनभाए मोर के पखा सोहाए
रस बरसाए घन-सोभा उमहत हैँ।
मन उरझाए मखतूल-तार जानियत
मोह उपजाए अहिछौने से कहत हैँ।
'दास' यातेँ केस के सरिस हैँ मलिंदबृंद
मुख-अरबिंद पर मंडई रहत हैँ।
याही याही बिधि उपमान ये भए हैँ जब
और कहाँ स्यामता है समता लहत हैँ ॥ ५८ ॥

---

[५५] बिसेषक०—बिसेख कै तंत्रिका यंत्र की (भार०)।
[५७] सार–तार (भार०, लीथो)। [५८] मंडई–परेई (भार०)।

वेणी-वर्णन

वह मोक्षदेनी पातखिन कौं खिनक बीच
साधु-मन बाँधै यह कौन धौं बड़ाई है ।
मरे मरे लोगनि अमर करै वह यह
जीवत सुमार करै गुन की कसाई है ।
सिर तें चरन लौं मैं नीके कै निहारयो 'दास'
बेनी कैसी धारा यामैं एक ना लखाई है ।
बिष की रुँवारी भयकारी कारी साँपिन सी
दरी पिकबैनी यह बेनी क्यों कहाई है ॥ ५९ ॥

सर्वांग-वर्णन

अलक पै अलिबृंद भाल पै अरधचंद
भ्रू पै धनु नैननि पै वारौं कंजदल मैं ।
नासा कीर मुकुर कपोल बिंब अधरनि
दारयो वारयो दसननि ठोढ़ी अंबफल मैं ।
कंबु कंठ भुजनि मृनाल 'दास' कुच कोक
त्रिबली तरंग वारौं भौंर नाभिथल मैं ।
अचल नितंबनि पै जंघनि कदलिखंभ
बाल-पगतल वारौं लाल मखमल मैं ॥ ६० ॥

संपूर्ण-मूर्ति-वर्णन (सवैया)

'दास' लला नवला छबि देखिकै मो मति है उपमान-तलासी ।
चंपकमाल सी हेमलता सी कि होइ जवाहिर की लवला सी ।
दीपसिखा सी मसालप्रभा सी कहौं चपला सी कि चंदकला सी ।
जोति सों चित्र की पूतरी काढ़ी कि ठाढ़ो मनोजहि की अबला सी ॥६१॥

इति साधारण नायिका

अथ स्वकीया-लक्षण (दोहा)

कुलजाता कुलभामिनी सुकिया-लक्षन चारु ।
पतिब्रता उदारिजो माधुर्जालंकारु ॥ ६२ ॥

---

[५९] सुमार—को मार (भार०) । कैसी—कै त्रि (वही) ।

श्री-भामिनि के भौन जो भोगभामिनी और ।
तिनहूँ कौं सुकियान मैं गनैं सुकबि-सिरमौर ॥ ६३ ॥

पतिव्रता, यथा (सवैया)

पान औ खान तैं पी को सुखी लखै आपु तबै कछु पीवति खाति है ।
'दासजू' केलि-थलीहि मैं ढीठो बिलोकति बोलति औ मुसकाति है ।
सूने न खोलति बेनी सुनैनी ब्रती ह्वै बितावति बासर-राति है ।
आलियौ जानै न ये बतियाँ यौं तिया पियप्रेम निबाहति जाति है ॥६४॥

औदार्य, यथा

हेम को कंकन हीरा को हार छोड़ावती दै दै सोहाग-असीसनि ।
'दास' लला की निछावरि बोलि जु माँगै सु पाइ रहै बिसबीसनि ।
द्वार मैं प्रीतम जौ लौं रहै सनमानत देसनि के अवनीसनि ।
भीतरि ऐबो सुनाइ जनी तब लौं लहि जाति घनी बकसीसनि ॥६५॥

माधुर्य, यथा

प्रीतम-प्रीतिमई उनमानै परोसिनि जानै सु नीतिहि सौं ठई ।
लाजसनी है बड़ीनि भनी बर नारिन मैं, सिरताज गनी गई ।
राधिका को बृज की जुवती कहैं याहि सोहाग-समूह दई दई ।
सौति हलाहल-सौति कहैं औ सखी कहैं सुंदरि सील-सुधामई ॥६६॥

ज्येष्ठा-कनिष्ठा-भेद (दोहा)

इक अनुकूलहि दक्ष सठ धृष्ट तिय नियम बाम ।
प्यारी जेष्ठा, प्यार बिन कहै कनिष्ठा नाम ॥ ६७ ॥

साधारण ज्येष्ठा, यथा (सवैया)

प्रफुलित निर्मल दीपतिवंत तूँ आनन द्यौसनिस्यौ इक टेक ।
प्रभा रद होत है सारद कंज कहा कहिये तहँ 'दास' बिबेक ।
चितै तिय तो कुच-कुंभ के बीच नखक्षत चंदकला सुभ एक ।
भए हत सौतिन के मुख सारदी रैन के पूरन चद अनेक ॥६८॥

---

[६३] सुकियान–सुकियाहु (वही, सर०) ।
[६७] तिय०–तिआनि अँग (भार०) । नाम–बाम (वही) ।
[६८] दास–हाँस (लीथो) ।

दक्षिण की ज्येष्ठा-कनिष्ठा (सवैया)

'दास' पिछानि कै दूजी न कोइ भले सँग सौति के सोई है प्यारी।
देखि करोट सु एँचि अनोट जगाइ लै ओट गए गिरिधारी।
पूरन काम कै त्यौं ही तहाँई सोवाइ कियो फिरि कौतुक भारी।
बोलि सु बोल उठाई दुहूँ मन रंजिकै गंजिफा-खेल बगारी ॥६९॥

शठ नायक की ज्येष्ठा (कबित्त)

हौं हूँ हुती संग संग अंग अंग रंग रंग
भूषन बसन आज गोपिन सँवारी री।
महलसराय मैं निहारत सबन तन
ऊपर अटारी गए लाल गिरधारी री।
'दास' तिहि औसर पठाइकै सहेली कौं
अकेलियै बुलाइ बृषभान की कुमारी री।
लाल-मन बूड़िबे कौं देवसरि-सोती भई
सौतिन चुनौटी भई वाकी सेत सारी री ॥ ७० ॥

शठ की कनिष्ठा (सवैया)

नैनन कौं तरसैये कहाँ लौं कहा लौं हियो बिरहागि मैं तैये।
एक घरी न कहूँ कल पैये कहाँ लगि प्रानन कौं कलपैये।
आवै यहै अब 'दास' बिचार सखी चलि सौतिहु के गृह जैये।
मान घटे तें कहा घटिहै जु पै प्रानपियारे कौं देखन पैये ॥७१॥

धृष्ट की ज्येष्ठा, यथा

छोड़ि सबै अभिलाष भरोसो वै कैसो करैं किन साँझ सबेरे।
पाइ सोहागिनि को तनु छाड़िकै भूलिकै और के आइहै नेरे।
दीने दई के लहै सुख-जोगन 'दास' प्रयोग किये बहुतेरे।
कोटि करै नहिं पाइबे कौं अब तौ सखि लाल गरे परयो मेरे ॥७२॥

---

[६९] कोइ–कोप (भार०)। अनोट–अतोट (वही)। सोवाइ–सो आय (वही, लीथो)।

[७२] किन–हिन (सर०)। और०–मेरे सु (भार०)।

धृष्ट की कनिष्ठा, यथा

ऊधोजू मानैं तिहारी कही हम सीखैं सोई जोई स्याम सिखावैं।
जातें उन्हैं सुधि जोग की आई दया कै वहै हमहूँ को पढ़ावैं।
कूबरी काँख जो दाबे फिरैं हमहूँ तिनकी समता कहूँ पावैं।
पाठ करैं सब जोग ही को जु पै काठहू की कुबरी कहूँ पावैं ॥७३॥

ऊढ़ा-अनूढ़ा-लक्षण (दोहा)

ऊढ़ अनूढ़ा नारि द्वै ऊढ़ा ब्याही जानि।
बिन ब्याह ही सुधर्मरत ताहि अनूढ़ा मानि ॥ ७४ ॥

अनूढ़ा, यथा (सवैया)

श्रीनिमि के कुल दासिहू की न निमेष कुपंथनि ह्वै समुहाती।
तापर मो मन तौ ये सुभाव बिचारि यहै निहचै ठहराती।
'दासजू' भावी स्वयंबर मेरे की बीसबिसै इनके रँग राती।
नातरु साँवरी मूरति राम की मो अँखियान मैं क्यौं गड़ि जाती ॥७५॥

इति स्वकीया

अथ परकीया (दोहा)

दुरे दुरे परपुरुष तैं प्रेम करै परकीय।
प्रगलभता पुनि धीरता भूषन द्वै रमनीय ॥ ७६ ॥

यथा (सवैया)

आलिन आगे न बात कढ़ै न बढ़ै उठि ओठनि तैं मुसुकानि है।
रोष सुभाय कटाक्ष के छोरन पाय को आहट जात न जानि है।
'दास' न कोऊ कहूँ कबहूँ कहै कान्ह तैं यातैं कछू पहिचानि है।
देखि परै दुनियाई मैं दूजी न तो सी तिया चतुराई की खानि है ॥७७॥

प्रगल्भता-लक्षण (दोहा)

निधरक-प्रेम प्रगलभता जौं लौं जानि न जाइ।
जानि गए धीरत्व है बोलै लाज बिहाइ ॥ ७८ ॥

---

[७३] पढ़ावै-पठावैं (सर०, भार०)। [७४] बिन०-बिना ब्याह सो (भार०)। [७५] मन०-मति मेरो (भार०)। [७७] छोरन-छायन (भार०); छोर सो (लीथो)। कहूँ-कहै (सर०)।

यथा (सवैया)

लखि पौर मैं 'दासजू' प्यारो खरो तिय रोम-पसीननि च्वै चलती।
मिस कै गृहलोगन सों सुवरी सु घरीहि घरी ढिग ह्वै चलती।
जग-नैन बचाइ मिलाइकै नैननि नेह के बोजन ब्वै चलती।
अपनी तनुछाँह सों तुंगतनी तनु छैल छबीले सों छ्वै चलती॥७६॥

धीरत्व, यथा

वा अधरा अनुरागी हिये पिय-पागी वहै मुसक्यानि सुचाली।
नैननि सूझि परै वहै सूरति बैननि बूझि परै वहै आली।
लोग कलंक लगाइहिंगी त्यों लुगाई कियो करैं कोटि कुचाली।
बादि बिथा सखि कोऽब सहै री गहै न भुजा भरि क्यों बनमाली॥८०॥

ऊढ़ा-अनूढ़ा-लक्षण (दोहा)

होति अनूढ़ा परकिया बिन ब्याहे परलीन।
प्रेम अनत ब्याही अनत ऊढ़ा तरुनि प्रबीन॥ ८१॥

अनूढ़ा, यथा (सवैया)

जानति हौं बिधि मीच लिखी हरि वाकी तिहारे बिछोह के बानन।
जौ मिलि देहु दिलासो मिलाप को तौ कछु वाके परै कल प्रानन।
'दासजू' जाही घरी तैं सुनी निज ब्याह-उछाह की चाह कौं कानन।
वाही घरी तैं न धीरो रहै मन पीरो ह्वै आयो पियारी को आनन॥८२॥

ऊढ़ा, यथा (सवैया)

इहि आननचंद-मयूखन सों अँखियान की भूख बुझैबो करौ।
तन स्याम-सरोरुह-दाम सदा सुखदानि भुजानि भरैबो करौ।
डर सास न 'दास' जेठानिन को किन गाँव चवाइ चवैबो करौ।
मनमोहन जौ तुम एक घरी इन भाँतिन सों मिलि जैबो करौ॥८३॥

---

[७६] सों छ्वै—को छ्वै (भार०)।
[८०] पिय—जिय (भार०)। लगाइहिंगी०—लगावत लाख (वही)। बादि०—क्यौं अपबाद बृथा ही (वही)।
[८२] धीरो०—धीर धर्‌यो परै (भार०); धीर धरे रहै (लीथो)।
[८३] दाम—दास (भार०; लीथो)। सास०—दास न सास (भार०)। चवाइ०—चवाव चलैबो (वही)।

उद्बुद्धा-लक्षण (दोहा)

उद्बुद्धा उद्बोधिता द्वै परकिया बिसेखि।
निज रीझै सुपुरुष निरखि उद्बुद्धा सो लेखि॥ ८४॥
अनूढ़ानि को चित्त जो निबसै निह्चल प्रीति।
तौ सुकियन की गति लहै सकुंतला की रीति॥ ८५॥

भेद

प्रथम होइ अनुरागिनी प्रेम-असक्ता फेरि।
उद्बुद्धा तेहि कहत पुनि परम प्रेमरस घेरि॥ ८६॥

अनुरागिनी, यथा (सवैया)

पाइ परौं जगरानी भवानी तिहारी सुन्यौं महिमा बहुतेरी।
कीजै प्रसाद परै जिहि कैसेहूँ नंदकुमार तें भाँवरी मेरी।
है यह 'दास' बड़ो अभिलाष पुरै न सकौ तौ करौ इकबेरी।
चेरी करौ मोहि नंदकुमार की चेरी नहीं करौ चेरी की चेरी॥८७॥

धीरत्व, यथा

होइ उज्यारो गँवारो न होइ उज्यारो लखौ तुम ताहि निहारो।
दीने हैं नैन तिहारे से मेरेहू कीजै कहा करता सों न चारो।
आइ कही तुम कान मैं बात न कौनहू काम को कान्हर कारो।
मोहि तौ वा मुख देखे बिना रबिहू को प्रकास लगै अँधियारो॥८८॥

प्रेमाशक्ता, यथा

'दासजू' लोचन पोच हमारे न सोच-सकोच-बिधानन चाहैं।
कूर कहै कुलटा कहै कोऊ न केहूँ कहूँ कुलसानन चाहैं।

---

[८६] कहत०—कहत हैं (भार०); करत पुनि (सर०)।
[८७] सुन्यौं—सुनी (भार०)। सकौ०—सकौं तो कहौं (वही)। मोहि०—तो करो न करो मुहि नंदकुमार कि चेरी की चेरी (वही)।
[८८] उज्यारो लखौ—जु प्यारो लगै (भार०)। दीन्हे०—दीने न (वही)।

तातेँ सनेह मैँ बूड़ि रही इतने ही मैँ जानैँ जो जानन चाहैँ।
आनन दै कहैँ छोड़ गोपाल को आनन चाहिबो आन न चाहैँ ॥८९॥

उद्‌बुद्धा, यथा (कवित्त)

मेरी तू बड़ारिनि बड़ीयै हितकारिनि हाँ
कैसे कहौँ मेरे कहे मोहन पै जावै तू।
नैन की लगनि दिन-रैन की दगनि यह
प्रेम की पगनि परि पगनि सुनावै तू।
यहऊ ढिठाई जौ कहौँ कि मोहि लै चलु कि
कान्ह ही कौँ 'दास' मेरे भौन लगि ल्यावै तू।
जथोचित देखि रितु देखि इत देखि चित
देहि तित आली जित मेरो हित पावै तू ॥ ९० ॥

उद्‌बोधिता-लक्षण, (दोहा)

जा छबि पगि नायक कोऊ लावै दूतीघात।
उद्‌बोधिता सो परकिया असाध्यादि बिख्यात ॥ ९१ ॥

भेद

प्रथम असाध्या सी रहै दुखसाध्या पुनि सोइ।
साध्य भए पर आप ही उद्‌बोधिता सु होइ ॥ ९२ ॥

असाध्या अनूढ़ा, यथा (कवित्त)

भौन तेँ कढ़त भामी भौंडी भौंडी बानैँ कहै
लौंडी कै कनौड़ी छोड़ै घोढ़ी ही के जात लौँ।
चौकी बँधी भीतर लोगाइन की जाम जाम
बाहिर अथाइ न उठति अधरात लौँ।

---

[८९] कुल०–कुलसेनानि (सर०)। जानैँ–जानौ (भार०)।
छोड़–आड़ (वही)।

[९०] दगनि–दहनि (सर०, लीथो)। परि०–चित लगनि (भार०, लीथो)। कि-री (भार०); की (लीथो)। रितु–चित (भार०, लीथो)।

[९१] पगि–लखि (भार०); पर (लीथो)। असाध्यादि०–यह असाध्य कहि जात (भार०); आसाध्यै कहि जात (लीथो)।

[९२] सोइ–होइ (भार०, लीथो)।

'दास' घरबसी घैरुहारिनि के डरु हियो
　　चलदल-पात लौं है तोसों बतलात लौं।
मिलन-उपाइन को ढूढ़िबो कहा है आली
　　हौं तो तजि दीनो हरि-दरसन-घात लौं॥ ९३॥

असाध्या ऊढ़ा, यथा

देवर की त्रासनि कलेवर कँपत है, न
　　सासु-उसुआसनि उसास लै सकति हौं।
बाहिर के घर के परोस-नरनारिन के
　　नैनन मैं काँटे सी सदा ही असकति हौं।
'दास' नाहिं जानौं हौं बिगार्‍यौं कहा सब ही को
　　याही पीर बीर पेट पेट ही पकति हौं।
मोहि मनमोहन मिलाप-मत देती तुम
　　मैं सो उहि ओर अवलोकति जकति हौं॥ ९४॥

दुःखसाध्या-लक्षण (दोहा)

साध्य करै पिय दूतिका बिबिध भाँति समुझाइ।
दुखसाध्या ताकों कहैं परकीयन मैं पाइ॥ ९५॥

यथा (कवित्त)

भूख-प्यास भागी बिदा माँगी लोकत्रास
　　मुख तेरी जक लागी अंग सीरक छुए जरै।
'दास' जिहि लागि कोऊ एतो तलफत वा
　　कसाइन सों कैसे दई धीरज धर्‍यो परै।
जीतौ जौ चहै अजू तौ रीतौ घरो लै चलु
　　नहीं तौ सही तो सिर अजस वै परे मरै।
तूँ तौ घरबसी घर आई घरो भरि हरि
　　घाट ही मैं तेरे नैन-घायन घरी भरै॥ ९६॥

---

[९३] कै—है (भार०)। घर—घैरु (भार० लीथो)। घैरु०—घैरुहाइन को (वही)।
[९४] उसुआसनि—उर आसिनि (भार०); डरै आसिन (लीथो)। असकति—कसकति (भार०, लीथो)। बिगार्‍यौं—बिगारो (वही)। पेट०—नित पेट पकरति (भार०)। सो०—तो वह (वही)।
[९६] अजू०—तौ बेग (भार०)। परे—षरै (सर०)।

अब तौ बिहारी के वे बानक गए री
तेरी तनदुति केसरि कौं नैन कसमीर भो ।
श्रौन तुव बानी-स्वातिबुंदनि को चातिक भो
स्वासनि को भरिबो द्रुपदजा को चीर भो ।
हिय को हरष मरु-धरनि को नीर भो री
जियरो मदन-तीरगन को तुनीर भो ।
एरी बेगि करिकै मिलाप थिर थाप
नत आप अब चाहत अतन को सरीर भो ॥ ९७ ॥

उद्बोधिता साध्या (सवैया)

नायक हौ सब लायक हौ जु करौ सो सबै तुमकौं पचि जाहीँ ।
'दास' हमैं तौ उसास लिये उपहास करैं सब या बृज माहीँ ।
आइ परैगी कहूँ तें कोऊ तिय गैल मैं छैल गहौ जनि बाहीँ ।
द्वै हो दिना की तिहारी है चाह गई करि जाहु निबाहौगे नाहीँ ॥९८॥

परकीया-भेद-लच्छण (दोहा)

परकीया के भेद पुनि चारि बिचारे जाहिँ ।
होत बिदग्धा लक्षिता मुदिता अनुसयनाहिँ ॥ ९९ ॥

विदग्धा-लच्छण (दोहा)

द्विबिध बिदग्धा कहत हैँ कीन्हो कबिन बिबेक ।
बचनबिदग्धा एक है क्रियाबिदग्धा एक ॥ १०० ॥

वचनविदग्धा, यथा (सवैया)

नीर के कारन आई अकेलियै भीर परे सँग कौन कौं लीजै ।
ह्याँऊ न कोऊ नयो दिवसोऊ अकेले उठाए घरो पट भीजै ।
'दास' इतै लरुआन कौं ल्याइ भलो जल छाँह को प्याइजै पीजै ।
एतो निहोरो हमारो हरी घट ऊपर नेकु घरो धरि दीजै ॥१०१॥

---

[९८] निबाहौगे–निबाहिहौ (भार०) ।

[१०१] नयो–गयो (भार०) । लरुआन–गउआन (वही) । घरो–घटो (सर०; लीथो) ।

क्रियाविदग्धा, यथा

कसिबे मिस नीबिन के छिन तौ अँगअंगनि 'दास' देखाइ रही।
अपने ही भुजान उरोजन कौं गहि जानु सौं जानु मिलाइ रही।
ललचौंहैं हँसौंहैं लजौंहैं चितै हित सौं चित चाइ बढ़ाइ रही।
कनखा करिकै पग सौं परिकै पुनि सूने निकेत मैं जाइ रही ॥१०२॥

गुप्ता-लक्षण (दोहा)

जब पिय प्रेम छपावती करि बिदग्धता बाम।
भूत भविष ब्रतमान सो गुप्ता ताको नाम ॥ १०३ ॥

भूतगुप्ता, यथा (सवैया)

पठावत धेनु-दुहावन मोहिं न जाहुँ तौ देवि करौ तुम तेहु।
छुटाइ गयो बछरा यह बैरी मरू करि हौं गहि ल्याई हौं गेहु।
गई थकि दौरत दौरत 'दास' खरोट लगे भई बिह्वल देहु।
चुरी गई चूरि भरी भई धूरि परो टुटि मुक्तहरो यह लेहु ॥१०४॥

भविष्यगुप्ता

दै हौं सकौं सिर तो कहे भाभी पै ऊख को खेत न देखन जैहौं।
जैहौं तो जीव डरावन देखिहौं बीचहि खेत के जाइ छपैहौं।
पैहौं छरोर जो पातन को फटिहैं पट क्यौंहूँ तो हौं न डरैहौं।
रैहौं न मौन जो गेह के रोष करैंगे तो दोष मैं तेराई दैहौं ॥१०५॥

वर्तमानगुप्ता

अब ही की है बात हौं न्हात हुती अचकाँ गहिरे पग जाइ भयो।
गहि ग्राह अथाह कौं लै ही चल्यो मनमोहन दूरिहि तें चितयो।
द्रुत दौरिकै पौरिकै 'दास' बरोरिकै छोरिकै मोहिं बचाइ लयो।
इन्हैं भेटती भेटिहौं तोहि अली भयो आज तौ मो अवतार नयो ॥१०६॥

---

[१०३] पिय०—तिय सुरति छपावही (भार०)।

[१०४] छुटाइ—छुड़ाय (भार०)। खरोट—बरोट (वही)। गई—भई (वही)। टुटि—डुरि (वही)।

[१०६] जाइ—जात (भार०)। गहि—मोहि (वही)।

लक्षिता-लक्षण (दोहा)

लक्षिता सु जाको सुरत-हेत प्रगट ह्वै जात ।
सखी व्यंगि बोलै कहै निज धीरज धरि बात ॥ १०७ ॥

सुरत-लक्षिता, यथा (सवैया)

सावक बेनी-भुअंगिनि के कुच के चहुँ पासन ह्वै खुलि नाचे ।
ओठ पके कुँदुरू सुक नाक पै काहे न देखिये चोट सों बाँचे ।
आज अली मुकुराभ-कपोलनि कैसो भयो मुरचो जिहि माचे ।
दै यह चंद उरोजनि 'दासजू' कौने किये ससिसेखर साँचे ॥१०८॥

हेतु-लक्षण, यथा

नैन नचौंहैं हसौंहैं कपोल अनंद सों अंग न अंग अमात है ।
'दासजू' स्वेदनि सोभ जगी परै प्रेमपगी सी ठगी थहरात है ।
मोहि भुलावै अटारी चढ़ी कहि कारी घटा बकपाँति साहात है ।
कारी घटा बकपाँति लखैं यहि भाँति भए कहि कौन के गात है ॥१०९॥

धीरत्व, यथा

सब सूझै जौं तोहि तौ बूझै कहा बिन काजहि पीछे रही परि है ।
जिहि काम कौं कैबर कारी लगै सो दुचारी कौं 'दासजू' क्यों डरिहै ।
हरि बेनी गुही हरि एड़ी छुही नख दंत को दाग दियो हरि है ।
कहती किन जाइ जहाँ कहिबे काऊ कोह कै मेरो कहा करिहै ॥११०॥

मुदिता-लक्षण (दोहा)

वहै बात बनि आवई जा चित चाहत होइ ।
तातैं आनंदित महा मुदिता कहिये सोइ ॥ १११ ॥

यथा (सवैया)

भोर ही आनि जनी सौं निहोरिकै राधे कह्यो मोहि माधो मिलावै ।
ता हित-कारने भौन गई वह आप कछू करिबे कौं उपावै ।
'दास' तहीं चलि माधो गए दुख राधेबियोग को वाहि सुनावै ।
पाइकै सूनो निलै मिलैं दूनो बढ़्यो सुख दूनो दुहूँ उर आवै ॥११२॥

---

[१०८] यह-नख (लीथो)। [१०९] जगी-लगी (सर०)। परै-दुरै (भार०)। थहरात-ठहरात (वही)। लखैं-सखी (वही)। को-के (सर०)। [११२] हित०-हितकाइ के (लीथो)। वह-बहु (भार०)। आवै-लावैं (वही)।

अनुशयना-लक्षण (दोहा)

केलिस्थानबिनासिता भावस्थान-अभाव ।
अरु संकेत-निप्राप्यता अनुसयना त्रै भाव ॥ ११३ ॥

केलिस्थानविनाशिता, यथा (सवैया)

'दासजू' वाकी तौ द्वार की सूनी कुटी जरै यातें करै दुख थोरै ।
भारी दुखारी अटारी चढ़ी यहै रोवै हनै छतिया सिर फोरै ।
हाइ भरै ररै लोगनि देखि अरे निरदै कोऊ पानी लै दौरै ।
आगि लगी लखि मालिनि के लगी आगि है ग्वालिनि के उर औरै ॥ ११४ ॥

भावस्थान-अभाव, यथा

आज लौं तौ उत दूसरे प्रानी के नाते हुतो वह बावरो बौनो ।
आवति जाति अबार सबार बिहार समै न हुतो डरु कौनो ।
'दास' बनैगी 'ब क्यों पिय-भेंट सहेट के जोग न दूसरो भौनो ।
बैठी बिचारै यौं बाल मनैमन बालम को सुनि आवन गौनो ॥ ११५ ॥

संकेतनिःप्राप्यता, यथा

समीप निकुंज मैं कुंजबिहारी गए लखि साँझ पगे रसरंग ।
इतै बहु द्यौस मैं आइकै धाइ नवेली कौं बैठी लगाइ उछंग ।
उड़ीं तहँ 'दास' बसी चिरियाँ उड़ि गो तिय को चित वाही के संग ।
बिछोह तें बुंद गिरे अँसुवा के सु वाके गने गए प्रेम-उमंग ॥ ११६ ॥

विभेद-लक्षण (दोहा)

मुदिता अनुसयनाहु मैं बिदग्धाहु मिलि जाइ ।
सबल भाव एहि भाँति बहु बरनत हैं कबिराइ ॥ ११७ ॥

मुदिता-विदग्धा, यथा (सवैया)

आवती सोमवती सब संग ही गंगनहान कियो चहती हैं ।
गेह को भार जसोमति-बार कौं आज ही सौंपि दियो चहती हैं ।

---

[११३] भाव—नाव (भार०) ।

[११४] करै—परै (लीथो) । ररै—कहै (भार०) । उर—सिर (सर०, लीथो) ।

[११५] दूसरे०—दूसरो प्रानी कोऊ ना (भार०) । बनैगी०—बनै अब (वही) । बालम—बालभ (सर०); बावन (भार०) ।

[११८] सोमवती—सोभवती (सर०) । खाए—स्वाय (भार०) ।

मोहिँ अकेली इहाँ तजि 'दासजू' जीवन-लाहु लियो चहती हैँ।
आली कहा कहौँ या घर की सिगरी मोहिं खाए जियो चहती हैँ ॥११८॥

अनुशयना-विदग्धा, यथा

चारि चुरैल बसैँ इहि भौन कियो तिन चेरो सु चौधरी दानी।
केते विदेसी बसाइ बसाइ तिनै सनमानत हैँ छलध्यानी।
'दास' दयाल जौ होतौ कोऊ तौ भगावती याहि सिखाइ सयानी।
हाइ फँस्यो केहि हेत कहाँ तेँ धौँ आइ बस्यो यह बावरो बानी ॥११९॥

दूजी अनुशयना-विदग्धा, यथा (कवित्त)

न्यारे के सदन तेँ उड़ाई गुड़ी प्रानप्यारे
संज्ञा जानि प्यारी मन उठी अकुलाइकै।
पावति न घात जात देख्यो सुखच्यौँत वीतो
रीतो कियो घरो तब नीर ढरकाइकै।
घर की रिसानी कहा कीनी तूँ अयानी तब
तासौँ कै सयानी या कहत अनखाइकै।
काहे कौँ कुबातनि सुनावति है मेरी बीर
ढरि गो तौ हौँ ही भरि ल्यावति हौँ जाइकै ॥ १२० ॥

इति परकीया

अथ मुग्धादि-भेद (दोहा)

त्रिविधि जु बरनी नायिका तेऊ त्रिविधि बिसेखि।
मुग्धा मध्या कहत पुनि प्रौढ़ा ग्रंथनि देखि ॥ १२१ ॥
जोबन के आगमन तेँ पूरनता लौँ मित्त।
पंच भेद ह्वै जात हैँ त्रै मुग्धादिक चित्त ॥ १२२ ॥

मुग्धादि-लक्षण

सैसव-जोबन-संधि जिहि सो मुग्धा अवदात।
बिन जाने अज्ञात है जाने जानौ ज्ञात ॥ १२३ ॥

साधारण मुग्धा, यथा (सवैया)

बालकता मैँ जुवा झलकी दुल ओझल ज्यौँ जुगुनू के उजेरे।
लंक लचौँ हैँ नितंब उँचौँ हैँ नचौँ हैँ से लोचन 'दास' निवेरे।

[१२२] आगमन—अग्यात (लीथो)।
[१२४] ओझल—बोझल (भार०)।

जानिबे जोग सुजानन के उर जात थली उरजातनि घेरे ।
स्यामता बीच दै अंग के रंग अनंग सुढार प्रकार सौं फेरे ॥१२४॥

स्वकीया मुग्धा, यथा (कबित्त)

घटती इकंक होन लागी लंक-बासर की
केस-तम-बंस को मनोरथ फलीन भो ।
बढ़ि चले कानन तकत नैन-खंजन औ
बैठि रहिबे कौं मनु सैसव अलीन भो ।
साँझ तरुनापन बिकास निरखत 'दास'
आनँद लला के नैन कैरव-कलीन भो ।
दुलही-बदनइंदु उलहो अनूप दुति सौति-
मुख-अरबिंद अति ही मलीन भो ॥ १२५ ॥

परकीया मुग्धा, यथा (सवैया)

उकसौं हैं भए उर मध्य छोटौं हैं सो चंचलता अँखियान लगी ।
अँखिया बढ़ि कान लगी अरु कानन कान्ह-कहानी सोहान लगी ।
बिन काजहु काजहु 'दास' लखौ जसुदा-गृह आवन जान लगी ।
ललिताहु सौं नेक बतान लगी रसबात सुने सकुचान लगी ॥ १२६ ॥

अज्ञातयौवना साधारण, यथा

मोहिं सोच निजोदर-रेख लखें उर मैं व्रनबेष सो होन चहै ।
गति भारी भई बिधि कीबी कहा कसि बाँधतहूँ कटि-नीबी ढहै ।
कहा भौंहनि भाव दिखावै भटू कहिबे कछू होइ सो खोलि कहै ।
पट मेरो चलै बिचलै तौ अलो तूँ कहा रद आँगुरी दाबि कहै ॥१२७॥

अज्ञातयौवना स्वकीया

सखि तैंहूँ हुती निसि देखत ही जिन पै वै भई हौं निछावरियाँ ।
जिन्ह पानि गह्यो हुतो मेरो तबै सब गाइ उठीं बृजडावरियाँ ।
अँसुवा भरि आवत मेरे अजौं सुमिरे उनकी पग-पाँवरियाँ ।
कहि को हैं हमारे वे कौन लगैं जिनके सँग खेली हौं भाँवरियाँ ॥१२८॥

---

[१२५] तम–नम (भार०); सम (सर०) । तकत–लौं नीके (भार०) । मनु–जनु (वही) । बैठि०–उठि रहे जोबन सैसवन (लीथो) । तरुनापन–तरुनायन (सर०, लीथो) । लला०–ललकि (लीथो) । [१२६] छोटौहैं – छुटौं हैं (लीथो) । सो–सी (भार०, लीथो) । लखौ–लखी (सर०) । [१२७] रद–पद (लीथो) । [१२८] वै–यों (लीथो) । जिन्ह–तिन (भार०, लीथो) । डावरियाँ–गाँवरियाँ (भार०) । हैं–वै (लीथो) ।

परकीया अज्ञातयौवना

हार गई तहँ मेह मिल्यो हरि कामरी ओढ़े हुत्यो उत बैसो।
आतुर आइकै अंग छपाइ बचाइकै मोहिँ गयो जस लै सो।
'दास' न ऐसो लख्यो कबहूँ मैं अचंभो भयो वहि औसर जैसो।
स्वेद बढ्यो त्यौं लग्यो तन काँपन रोम उठ्यो यह कारन कैसो ॥ १२९ ॥

ज्ञातयौवना, यथा

आनन मैं मुसुकानि सुहावनि बंकुरता अँखियान छई है।
बैन खुले मुकुले उरजात जकी बिथकी गति ठौन ठई है।
'दास' प्रभा उछलै सब अंग सुरंग सुबासता फैलि गई है।
चंदमुखी तन पाइ नवीनो भई तरुनाई अनंदमई है ॥ १३० ॥

ज्ञातयौवना स्वकीया

'दास' बड़े कुल की बतिया बतिया परबीननि सों जिय ज्वैहै।
बाहिर ह्वैहै न जाहिर औरं अमाहिर लोग की छाँह न छ्वैहै।
खेलन दै भरि साध सखी पुनि खेलिबे जोग यई दिन द्वै है।
फेरि तौ बालपनो अपनो री हमैं लपनो सपनो सम ह्वैहै ॥ १३१ ॥

ज्ञातयौवना परकीया (कवित्त)

मंद मंद गौने सो गयंदगति खोने लगी
बोने लगी बिष सो अलक अहिछौने सी।
लंक नवला की कुच-भारनि दुनौने लगी
होने लगी तन की चटक चारु सोने सी।
तिरछे चितौने सो बिनोदनि बितौने लगी
लगी मृदु बातनि सुधारस निचोने सी।
मौने मौने सुंदर सलोने पद 'दास' लोने
मुख की बनक ह्वै लगन लगी टोने सी ॥ १३२ ॥

---

[१२९] हार–द्वार (भार०) । बचाइ–कै चाइ (लीथो) । बढ्यो०–बढ़े तें (सर०, लीथो) । काँपन–कंपन (भार०, लीथो) ।

[१३०] खुले–खिले (भार०) । ठौन०–खैनि खई (सर०) ।

[१३१] परबीननि०–परबीनी सो जीवन (भार०) । अमाहिर–अनाहिर (भार०, लीथो) । द्वै–है (सर०) लपनो–लखनो (भार०) ।

[१३२] बनक–चटक (भार०) ।

मध्या-लक्षण (दोहा)

नवजोवन - पूरनवती लाज मनोज समान ।
तासों मध्या नायिका बरनत सुकबि सुजान ।। १३३ ।।

साधारण मध्या, यथा (सवैया)

ह्वै कुचभारनि मंदगती करै माते गयंदन को मद भूरो ।
आनन-ओप अनूप लखैं मिटि जात मयंक-गुमान समूरो ।
'दास' भरी नख तैं सिख लाज पै काम को साज बिलोकिये पूरो ।
काम को रंग मनो रँगि अंग दई दयो लाज को रोगन रूरो ।। १३४ ।।

स्वकीया-मध्या

नाह के नेह रँगे दुलही-दृग नैहर-गेह सकोचनि साने ।
'दासजू' भीतर ही रहैं लाल तऊ लखिबे को रहैं ललचाने ।
प्यो-मुख सामुहैं राखिबे कौं सखियाँ अँखियान को ब्यौंत बिताने ।
चंद निहारि नहीं बिकसैं अरबिंद हैं ये यह बात न जाने ।। १३५ ।।

परकीया-मध्या (कबित्त)

पीन भए उरज निपट कटि छीन भई
लीन ह्वै सिगार सब सीख्यो सखियान मैं ।
'दास' तनदीपति प्रदीप के उजास कीन्हे
बैरिन की नजरि प्रकास पखियान मैं ।
काम के कलोलन की चरचा सुनत फिरै
चंद्रावलि ललिता कौं लीन्हे काखयान मैं ।
एक बृजराज को बदन द्विजराज
देखिबे की इन लाज लाजभरी अँखियान मैं ।। १३६ ।।

प्रौढ़ा-लक्षण (दोहा)

जोबन-प्रभा प्रबीनता प्रेम सँपूरन होइ ।
तासों प्रौढ़ा नायिका कहैं सुमति क ोइ ।। १३७ ।।

---

[१३४] ह्वै–है (भार०) ।
[१३५] रँगे–रगी (भार०) । तऊ–तेऊ (सर०) । प्यो–यो (लीथो) ।
अरबिंद०–अरबिंदन को कछु बात न माने (भार०) ।
[१३६] सीख्यो–सीखी (भार०, लीथो) । के–की (वही) ।
[१३७] 'भार०' में नहीं है ।

प्रौढ़ा साधारण, यथा

सारी जरकसवारी घाँघरो घनेरो बेस
छहरैं छबीले केसछोर लौं छवान के।
पृथुल नितंब लंक नाम अवलंब लौट
गँडुरी पै कुच द्वै कलस कल सान के।
'दास' सुखकंद चंदबदनी कमलनैनी
गति पै गयंद होनवारे कुरवान के।
पी की प्रेममूरति सु रति कीसी सूरति
सुबास हास पूरति अबास बनितान के ॥ १३८ ॥

प्रौढ़ा स्वकीया, यथा (सवैया)

केसरिया निज सारी रँगै लखि केसरि-खौरि गोपाल के गातनि।
'दास' चितै चित कुंजबिहारी बिछावति सेज नए तरु-पातनि।
आवत जानिकै आपने भौन मिलै पहिलै लै बिरी अवदातनि।
बीतै बिचारतै भावती कौं दिन भावते की मनभावती बातनि ॥१३९॥

प्रौढ़ा परकीया, यथा

झूलनि लागी लता मृदु भाइनि फूलनि लागी गुलाबकली अब।
'दास' सुबास-झकोरनि झोरत भौंर की बाइ बजाइ चली अब।
जागिकै लोग बिलोकिहैं टोकिहैं रोकिहैं राह सद्वार गली अब।
ऐसे मैं सूने सखी के निलै चलि सोवै सभागन बाग भली अब ॥ १४० ॥

मुग्धादि के संयोग (दोहा)

अब कहियत तिन तियन के रति-संजोग-प्रकार।
होत चेषटा बचन तें प्रगट जु भाव अपार ॥ १४१ ॥
मुग्धा तिय संजोग मैं कही नवोढ़ा जाहिं।
अबिस्रब्ध बिस्रब्ध द्वै जे न पतिहि पतियाहिं ॥ १४२ ॥

---

[१३८] छहरैं०-छहरै छबीली (भार०) । सुख-मुख (सर०) ।
पै-ये (भार०) । पूरति-पूरनि (वही) ।
[१३९] बिचारौ-बिचारत (सर०) । भावते-भावती (भार०) ।
[१४०] बजाइ-बहाइ (भार०) । सोवै-सोवो (वही, लीथो) ।

अविश्रब्ध नवोढ़ा (कवित्त)

सोवति अकेली है नवेली केलिमंदिर
जगाइ कै सहेली रसफैली लखै टरिकै।
'दास' त्यौं ही आइ हरि लीन्ही अंक भरि
न सँभारि सकी जागी जऊ सुंदरि भभरिकै।
मचलि मचलि चल बिचल सिँगारन कै
कसमसै एबी एबी नाहीं नाहीँ करिकै।
तकै तन झारै झझकारै करै छूटिबे कौं
उर थरहरै जिमि एनी जाल परिकै ॥ १४३ ॥

विश्रब्ध नवोढ़ा

केलि पहिलीयै दुखतूल दूजी सुखमूल
ऐसी सुनि आलिन सौं आई मतिढंग मैँ।
बसन लपेटि तन गाढ़ी कै तनीनि तनि
सोन-चिरिया सी बनि सोई पियसंग मैँ।
तापर पकरि नीबी जंघन जकरि बड़े
ढाढ़सनि करि 'दास' आवति उछंग मैँ।
छ्वै छ्वै अधरामृत निहाल होत लाल
अबै आनँद बिसाल पाइबे है रतिरंग मैँ ॥ १४४ ॥

पुनः, यथा (सवैया)

हौँ तौ कह्यो कछु बातैँ करैँगे प्रबीन बड़े बलदेव के भैया।
ये गुन जानती तौ यहि सेजहि भूलि न सोवती बीर दाहैया।
'दास' इतैँ पर फेरि बोलावत यौँ अब आवति मेरी बलैया।
आऊँ तातौ जौ कहौ करि सौँहैँ कि आज करैँगे न काल्हि की नैया ॥ १४५

मुग्धा को सुरत

काम कहै करि केलि ढिठाई सौँ लाज कहै यह क्यौँहूँ न होनो।
लाज की ओर तेँ लोचन एँचत काम की ओर तेँ प्रेम सलोनो।

---

[१४३] जगाइ–जताइ (सर०); मे॑ जाइ (लीथो)। एबी०–एजी एजी (भार०)। झ रै०–मोरै झकझोरै करै छूटिबे की डरै (लीथो)।

[१४५] आऊँ०–आवती हौँ (भार०)।

'दास' बस्यो मन बाम के काम पै लाज तज्यो निज धाम न कोनो।
त्यौं मन काम कस्यो करै प्यारी पै लाज औ काम लस्यो करैं दोनो ॥१४६॥

झाँझरियाँ झनकैंगी खरी खनकैंगी चुरी तनकौ तन तोरे।
'दासजू' जागतौं पास अलीगन हास करैंगी सबै उठि भोरे।
सौं हैं तिहारी हौं भागि न जाउँगी आई हौं लाल तिहारेई धोरे।
केलि कौं रैनि परी है घरीक गई करि जाहु दई के निहोरे ॥१४७॥

प्रौढ़ा-सुरत, यथा

'दासजू' रास कै ग्वालि गईं सब राधिका सोइ रही रँगभू मैं।
गाढ़े उरोजनि दै उर बीच सुजान कौं ऐंचि भुजान दुहू मैं।
भोर भए पिय सैन को सोनो न गेह को गौनो सकै करि दू मैं।
भीर बड़ीयै परै जिमि सोनो बनै न भँजावत राखत सूमैं ॥१४८॥

पुनः

दीपकजोति मलीनी भई मनिभूषन-जोति की आतुरिया है।
'दास' न कोल-कली बिकसी निजु मेरी गई मिलि आँगुरिया है।
सीरी लगै मुकतावलि तेऊ कपूर की धूरिन सौं पुरिया है।
पौढ़े रहौ पट ओढ़े इती निसि बोलै नहीं चिरिया चुरिया है ॥१४९॥

इति बहिःक्रम-भेद।

अथ अवस्था-भेद (दोहा)

हेत सँजोग बियोग की अष्ट नायिका लेखि।
तिनके भेद अनेक मैं कछु कछु कहौं बिसेखि ॥ १५० ॥

संयोग शृंगार की नायिका-भेद

तिय संजोग सिंगार की कारन तीन्यौ जानि।
स्वाधीनापतिका अपर बासकसज्जा मानि ॥ १५१ ॥
अभिसारिका अनेक पुनि बरनत हैं कबिराव।
स्वकिया परकीयानि मिलि होत अनेकनि भाव ॥ १५२ ॥

---

[१४६] धाम—धर्म (भार०, लीथो)। प्यौं०—यों गृह (भार०); मो मन (लीथो)। [१४८] भए—भयो (भार०, लीथो)। [१४९] इती—अबै (लीथो)। [१५१] स्वाधीना०—स्वाधिनपतिका अपर है (भार०); स्वाधीनहु पतिका अपर (लीथो)।

स्वाधीनपतिका लक्षण (दोहा)

स्वाधीनापतिका वहै जाके बस है पीउ ।
होइ गर्विता रूप गुन प्रेम गर्व लहि जीउ ॥ १५३ ॥

स्वकीया स्वाधीनपतिका (सवैया)

माँग सँवारत काँगहि लै कचभार भिँगावत अंगसमेत हौ ।
रोम उठावत कुंकुम-लेप कै 'दास' मिलाए मनौ लिये रेत हौ ।
बीरी खवावत अंजन देत बनावत आड़ कँपौ बिन हेत हौ ।
या सुघराई-भरोसे क्यों दौरिकै छोरि सखीन को कारज लेत हौ ॥१५४॥

परकीया स्वाधीनपतिका (कवित्त)

कैधौं मैं निहारे पिछवारे की गली मैं अली
झाँकिकै झरोखे नित करत सलामैं हैं ।
कैधौं भेख भिक्षुक की ड्योढ़ी बीच आइ आइ
सबद सुनायो दुपहर जज्वला मैं हैं ।
'दास' भनि कैधौं भीतरीहूँ ह्वै निरास गए
पहिरि सुनारिनि के बसन ललामैं हैं ।
हाइ हौं गँवारिनि न घात मिलिबे की लहौं
मेरे हित कान्ह केती करत कलामैं हैं ॥१५५॥

रूपगर्विता, यथा (सवैया)

चंद सो आनन मेरो बिचारौ तौ चंद ही देखि सिरावौ हियौ जू ।
बिंब सो जौ अधरान बखानौ तौ बिंब ही को रस पीयौ जियौ जू ।
श्रीफल ही क्यों न अंक भरौ जौ पै श्रीफल मेरे उरोज कियौ जू ।
दीपति मेरी दिये सी है 'दास' तौ जाती हौं बैठि निहारौ दियौ जू ॥१५६॥

---

[१५३] स्वाधीना०-स्वाधिनपतिका है (भार०) ।
[१५४] लेप-लेय (भार०) । कारज-काजर (वही) ।
[१५५] झरोखे०-झरोखनि तइ (सर०) । ड्योढ़ी०-घोटी बीच आप आय (भार०) ।
[१५६] जाता-जाऊँ (भार०) ।

प्रेमगर्विता

न्हान-समै जब मेरो लखै तब साज लै बैठत आनि अगाऊँ ।
नायक हौ जू न रावरे लायक यों कहि हौं कितनो समुझाऊँ ।
'दास' कहा कहौं पै निज हाथ ही देत न हौंहूँ सँवारन पाऊँ ।
मोहिं तौ साध महा उर मैं जौ महाउर नाइन तोसों दिवाऊँ ॥ १५७ ॥

गुणगर्विता (कवित्त)

औरनि अनैसो लगै हौं तौ ऐसी चाहती जौ
बालम के मो सी तिय ब्याहि कोऊ आवती ।
क्योंहूँ कछू कारज उठाइ लेती मेरो घरी
पहर कौं अली तौ हौं ठाली होन पावती ।
'दास' मनभावन के मन के रिझावन कौं
चारु चारु चित्रित कै चित्रैं दरसावती ।
प्रेमरस-धुनि को कबित्त करि ल्यावती कै
बीनै लै बजावती कै गीतै कछू गावती ॥ १५८ ॥

वासकसज्जा-लक्षण (दोहा)

आवंती जहँ कंत की निज गृह जानै दार ।
वासकसज्जा तिहि कहैं साजै सेज सिंगार ॥ १५९ ॥

स्वकीया वासकसज्जा, यथा (कवित्त)

जानि जानि आवै प्यारो प्रीतम बिहारभूमि
मानि मानि मंगलसिंगारन सिंगारती ।
'दास' दृग-कंजन बँदनवार तानि तानि
छानि छानि फूले फूले सेजहिं सँवारती ।

---

[१५७] पै—वै (सर०) ।
[१५८] ठाली—खाली (भार०) ।
[१५९] कहैं—कहत (भार०) ।
[१६०] फूले०—फले फले सेजहि (सर०) । पोयूषनि—पीउ बनि (भार०) ।

ध्यान ही मैँ आनि आनि पी कौं गहि पानि पानि
ऐँचि पट तानि तानि मैनमद झारती।
प्रेमगुन गानि गानि पीयूषनि सानि सानि
बानि बानि खानि खानि बैननि बिचारती ॥ १६० ॥

परकीया वासकसज्जा (सवैया)

भावतो आवतो जानि नवेली चवेली के कुंज जौ बैठति जाइकै।
'दास' प्रसूननि सोनजुही करै कंचन सी तनजोति मिलाइकै।
चौँकि मनोरथ ही हँसि लेन चलै पग लाल प्रभा महि छाइकै।
बीर करै करबीर झरै निखिलै हरषै छबि आपनी पाइकै ॥ १६१ ॥

आगतपतिका वासकसज्जा (दोहा)

पियआगम परदेस तैं आगतपतिका भाउ।
है बासकसज्जाहि मैँ वहै बढ़ै चित चाउ ॥ १६२ ॥

यथा (सवैया)

भावतो आवत ही सुनिकै उड़ि ऐसी गई हद छामता जो गुनी।
कंचुकिहूँ मैँ नहीं मढ़ती बढ़ती कुच की अब तौ भई दोगुनी।
'दास' भई चिकुरारिन मैँ चटकीलता चामर चारु तैं चौगुनी।
नौगुनी नीरज तैं मृदुता सुषमा मुख मैँ ससि तैं भई सौगुनी ॥ १६३ ॥

अभिसारिका-लक्षण (दोहा)

मिलनसाज सब करि मिलै अभिसारिका सुभाय।
पियहिँ बोलावै आपु कै आपुहि पिय पै जाय ॥ १६४ ॥

स्वकीया अभिसारिका (कबित्त)

रीझि - रगमगे दृग मेरे या सिँगार पर
ललित लिलार पर चारु चिकुरारी पर।
अमल कपोल पर काल-बदन पर
तरल तरयौनन की रुचिर रवारी पर।

---

[१६१] निखिलै—नि बलै (भार०)।
[१६५] रगमगे—जगमगे (भार०)।

'दास' पगपग दूनो देहदुति दगदग
जगजग ह्वै रही कपूरधूरि-सारी पर।
जैसी छबि मेरे चित चढ़ि आई प्यारी आज
तैसियै तूँ चढ़ि आई बनिकै अटारी पर ॥ १६५ ॥

परकीया अभिसारिका (सवैया)

धौल अटा लखि नौल क्षपेस दियो छिटकाइ छटा छबिजालहि।
तापर पूरो सुगंध अतूल को दै गई मालिनि फूल के मालहि।
छोड़ि दियो गृहलोगनि भौन दई दियो 'दास' महासुख-कालहि।
आली दरीची की नीची उदीची की बीची निभीची ह्वै ल्याउ री लालहि ॥
[१६६ ॥

शुक्लाभिसारिका (कवित्त)

सिखनख फूलन के भूषन बिभूषित कै
बाँधि लीन्ही बलया बिगत कीन्ही बजनी।
तापर सँवार्‍यो सेत अंबर को डंबर
सिधारी स्याम-संनिधि निहारी काहू न जनी।
छीर के तरंग की प्रभा कौं गहि लीन्ही तिय
कीन्ही छीरसिंधु छिति कातिक की रजनी।
आननप्रभा तें तनछाँहहूँ छपाए जाति
भौंरन की भीर संग लाए जाति सजनी ॥ १६७ ॥

कृष्णाभिसारिका, यथा

जलधर ढारैं जलधारन की अधिकारी
निपट अँध्यारी भारी भादव की जामिनी।
तामैं स्याम बसन बिभूषन पहिरि स्यामा
स्याम पै सिधारी मत्त-मत्त-गजगामिनी।

---

[१६६] धौल०—लच्छन धौल (भार०)। नौल०—नौल दियो (वही); नौल बधू सु (लीथो)। के—की (भार०)। गृह—मोहि (वही)।
[१६७] काहू—कहूँ (भार०, लीथो)।
[१६८] भारी—भरी (लीथो)। मत्त०—प्यारी मत्तगज (भार०); मत्त मातंग (सर०)। कैहूँ—क्योँ हूँ (वही)। सब—लोग (वही)।

'दास' पौन लागे उपरैनी उड़ि उड़ि जाति
तापर न केहूँ भाँति जानी जाति भामिनी ।
चारु चटकीली छबि चमकि चमकि उठै
सब कहँ दमकि दमकि उठै दामिनी ॥ १६८ ॥

इति संयोग

अथ बिरह-हेतु-लच्छण (दोहा)

बिरह-हेत उत्कंठिता बहुरि खंडिता मानि ।
कहि कलहंतरितानि पुनि गनौ बिप्रलब्धानि ॥ १६६ ॥
पाँचौ प्रोषितभर्तृका सुनौ सकल कबिराइ ।
तिनके लच्छन लच्छ अब आछे कहौं बनाइ ॥ १७० ॥

उत्कंठिता-लच्छण

प्रेमभरी उत्कंठिता जो है प्रीतम-पंथ ।
बेर लगै त्यौं त्यौं बढ़ैं मनसूबन के ग्रंथ ॥ १७१ ॥

यथा (सवैया)

जौ कहौ काहू के रूप सौं रीझै तौ और को रूप-रिझावनवारी ?
जौ कहौ काहू के प्रेम पगे हैं तौ और को प्रेम-पगावनवारी ?
'दासजू' दूसरो बात न और इती बड़ी बेर-बितावनवारी ।
जानति हौं गई भूलि गोपालै गली इहि ओर की आवनवारी ॥१७२॥

पुनः

तनको तिन के खरके खरको तिनके तन को ठहरैबो करै ।
लखि बोलत मोर तमाल के डोलत चाय सौं चौंकि चितैबो करै ।
यह जानती प्रीतम आवहिंगे अधरात लौं ज्यौं नित ऐबो करै ।
अँखियान कौं 'दास' कहा करिये बिन कारन ही अकुलैबो करै ॥१७३॥

---

[१६६] गनौ—गने (भार०) ।
[१७२] को—के (सर०) ।
[१७३] करिये—कहिये (भार०, लीथो) ।

पुनः

आज अबार बड़ी करी बालम जौ अबकै सखि भेटन पैहौं।
कै मनकाम सपूरन तूरन तौ यह बात प्रमान करैहौं।
आतुर ऐबो करौ जू न तौ मग जोहत होती दुखी बहुतै हौं।
आपनी ठौर सहेट बदौ तहँ हौं ही भले नित भेट कै ऐहौं ॥१७४॥

खंडिता-लक्षण (दोहा)

प्रीतम रैनि बिहाइ कहुँ जापै आवै प्रात।
सु है खंडिता मान मैं कहै करै कछु बात ॥ १७५ ॥

यथा (कवित्त)

लोचन सुरंग भाल जावक को रंग मन
सुषमा उमंग अरुनोदै अवदात की।
भावती को अंगराग लाग्यो है सभाग-तन
छबि सी छिपन लागी महातम-गात की।
'दास' बिधुरेख सो नखच्छत सुवेष ओठ
अंजन की रेख अलिनी सी कंजपात की।
प्यारे मोहि दीन्हो आनि दरस प्रभात, प्रभा
तन मैं सु लै दरस पीछे कै प्रभात की ॥ १७६ ॥

धीरा, यथा

अंजन अधर भ्रुव चंदन सु बँदी बाहु
सुषमा सिंगार हास करुना अकस की।
नख है न अंगराग कुंकुम न लाग्यो तन
रौद्र बीर भयवारी झलक रहस की।
पलन की पीक पर-बसन हरा अलीक
'दास' छबि घिन अदभुत संत जस की।
पहिले भुलानी अब जानी मैं रसिकराय
रावरे के अंगनि निसानी नवरस की ॥ १७७ ॥

---

[१७६] सु लै०-लै दरस के पीछे के (लीथो)।
[१७७] जस-रस (सर०)।

अधीरा, यथा

ज्वाल उपजावन अज्वाल दरसावन
सुभाल यह पावक न जावक दिढ़ाए हौ ।
देखि नखसिख उठी बिष की लहरि महा
कहा जो अधर-बीच अंजन सो लाए हौ ।
'दास' नहि पीकलीक ब्यालिनी बिसाली ठीक
उर मैं नखच्छत न खंजर छपाए हौ ।
मेरे मारिबे कौं वा बिसासिनि पठाई हरि
छल की बनाई लिये केतनी उपाए हौ ॥ १७८ ॥

धीराधीरा, यथा (सवैया)

भाल को जावक ओठ को अंजन पोछिकै होते गलीपथगामी ।
ठोढ़ी की गाड़ नखच्छत मूँदौ न 'दासजू' होतौ यौं बेसुधिकामी ।
कंस कुठाकुर नंद अहीर परोसिनि देत डरै बदनामी ।
यातैं कछू डर लागै न तौ हमैं रावरेही सुख सौं सुख स्वामी ॥१७९॥

प्रौढ़ा-धीरादि-भेद-लक्षण (दोहा)

तिय जु प्रौढ़ अति प्रेममय सो न सकै कहि बात ।
ता रिस ताकी क्रियन तैं जानैं मति अवदात ॥ १८० ॥

यथा (सवैया)

होरी की रैनि बिहाइ कहूँ उठि भोरहीँ भावते आवत जोयो ।
नेकु न बाल जनाई भई जऊ कोप को बीज गयो हिय बोयो ।
'दासजू' दैदै गुलाल की मारनि अंकुरिबो उहि बीज को खोयो ।
भावते भाल को जावक ओठ को अंजन ही को नखच्छत गोयो ॥१८१॥

तिलक

प्रौढ़ा धीरादि के तीन्यौ भेद याही मैं हैं ।

मानिनी-लक्षण (दोहा)

पिय-पराध लखि मान कौं किये मानिनी बाम ।
लघु मध्यम गुरु मान को उदै होत जा काम ॥ १८२ ॥

---

[१७९] सुख०–सो सुखै सुख (लीथो) । [१८०] जु०–प्रौढ़ा (लीथो) । मति–मर्ज (सर०) । [१८२] बाम–नाम (भार०) ।

लघुमान-उदय, यथा (सवैया)

है यह तौ घर आपनोई उत तौ करि आवौ मिलाप की घातैँ।
यौँ दुचिताई मैँ प्रेम सनै न बनैगी कछू रसरीति सुहातैँ।
'दास' ही मोहिँ लगी अब लौँ अब लौटि गई सु हौँ जानती जातैँ।
नाह कहीँ की कहाँ अँखियानहीँ नाहक हौँ हमसौँ करौ बातैँ॥ १८३ ॥

मध्यम मान, यथा

तब और की ओर निहारिबे कौँ जु करौ निति मेरी दोहाइयै जू।
सु लख्यो हम आपने नैनन सौँ कहा कीबे करौ चतुराइयै जू।
बतलात हौ लाल जितै तित ही अब जाइ सुखै बतलाइयै जू।
इत जोरी जोरावरी सौँ न जुरै न जरे पर लोन लगाइयै जू॥ १८४ ॥

गुरु मान, यथा

लाल ये लोचन काहेँ प्रिया है दियो ह्वै है मोहन रंग मजीठी।
मोतैँ उठी है जो बैठे अरीन की सीठी क्योँ बोलौ मिलाइ ल्यौ मीठी।
चूक कहौ किमि चूकत सो जिन्हैँ लागी रहै उपदेस-बसीठी।
झूठी सबै तुम साँचे लला यह झूठी तिहारहू पाग की चीठी॥ १८५ ॥

इति खंडिता

अथ कलहांतरिता (दोहा)

कलहंतरिता मान कै चूक मानि पछिताइ।
सहज मनावन की जतन मानसाँति ह्वै जाइ॥ १८६ ॥

---

[१८३] सनै–सुने (सर०); पगे (लीथो)। कछू-वै छै (सर०)।
[१८४] निहारिबे०–निहारिकै जू (लीथो)। जु०–करो नित्तहि (भार०, लीथो)। कीबे–कीबो (भार०)। जोरी–नेह (लीथो)।
[१८५] मोतेँ–मोतौ (सर०)। है–हौ (वही)। मिलाइ०–मिठाइ लौँ (भार०)। सो–हो (वही); से (सर०)। तिहारहू–तुमारहु (भार०)।

यथा (सवैया)

जीवौं तौ देखतैं पाइ परौं अब सौतिहूँ के महलै किन होई।
आज तैं मान को नाउँ न लेउँ करौं टहलै सहलै अति जोई।
'दासजू' दै न सकी बिषु दै सिख मान को बैरिनि प्रान लियोई।
एरी सखी कहूँ क्योंहूँ लखो पिय सौं कार मान जियै तिय कोई ॥१८७॥

लघुमान-शांति

जानिकै वापै निहारत मेरे गई फिरि बाँकी कमान सी भौंहैं।
'दासजू' डारि गरे भुज बाल के लाल करी चतुराई अगौंहैं।
प्रानप्रिया लखि तौ वा गवांरि के सामुहैं ब्योम उड़े खग कौंहैं।
बोली हँसौंहैं जु दीजिये जान किये रहिये मुख मो मुख सौंहैं ॥१८८॥

मध्यममान-शांति

बातैं करी उनसौं घरी चारि लौं सो निज नैननि देखत ही हौं।
कीजै कहा जो बनावरी बाँधिकै 'दास' कियो गुरु लोगन की सौं।
बैठौ जू बैठौ न सोच करौ हिय मेरे तौ रोष की जात भई दौं।
जान्यो मैं मान छोड़ाइबे की तुमैं आवती लाल बड़ीयै बड़ी गौं ॥१८९॥

गुरुमान-शांति

जान्यो मैं या तिल तेल नहीं पहिले जब भामिनी भौंह चढ़ाई।
कान्हजू आज करामति कीन्ही कहाँ लौं सराहौं महा सुघराई।
'दास' बसौ सदा गोपन मैं यह अद्भुत बैदई कौने सिखाई।
पाइ लिलार लगाइ लला तिय-नैनन की लियो ऐंचि ललाई ॥१९०॥

साधारण मान-शांत

आज तें नेह को नातो गयो तुम नेम गहौ हौंहूँ नेम गहौंगी।
'दासजू' भूलि न चाहिये मोहि तुम्हैं अब क्योंहूँ न हौंहूँ चहौंगी।
वा दिन मेरे प्रजंक पै सोए हौ हौं वह दाव लहौं पै लहौंगी।
मानौ भलो कि बुरो मनमोहन सैन तिहारी मैं सोइ रहौंगी ॥१९१॥

---

[१८९] देखत ही०—देखति हौहै (सर०)। बनावरी—बावरी (वही)। सौं—सौहै (वही)। दौं—दौहै (वही)। गौं—गौहै (वही)।
[१९०] या—वा (भार०)।
[१९१] मेरे—मेरी (सर०)। सैन—सेज (भार०)।

विप्रलब्धा-लक्षण (दोहा)

मिलन आस दै पति छली औरहि रत ह्वै जाइ।
बिप्रलब्ध सो दुख्खिता-परसंभोग सुभाइ ॥ १६२ ॥

यथा (कबित्त)

जानिकै सहेट गई कुंजन मिलन तुम्हैँ
जान्यो न सहेट के बदैया बृजराज से।
सूनो लखि सदन सिँगार ज्यौँ अँगार भए
सुख देनवारे भए दुखद समाज से।
'दास' सुखकंद मंद सीतल पवन भए
तन तेँ जु लाव-उपजावन-इलाज से।
बाल के बिलापन बियोग-तन-तापन सोँ
लाज भई मुकुत मुकुत भए लाज से ॥१६३॥

अन्यसंभोगदुःखिता, यथा (सवैया)

ढीली परोसिनि बेनी निहारिकै जानि गई यह नायक गूँदी।
औरै बिचार बढ़ो बहुऱ्यो लखि आपनी भाँति की नीबी की फूँदी।
दासपनो अपनो पहिचानत जानी सबै जु हुती कछु मूँदी।
ऊभि उसासनहीँ तरुनी-बरुनीन मैँ छाइ रही जलबूँदी ॥१६४॥

पुनः

केलि के भौन मैँ सोवत रौन बिलोकि जगाइबे कोँ भुज काढ़ी।
सैन मैँ पेखि चूरीन को चूरन तूरन तेह गई गहि गाढ़ी।
'दास' महाउर-छाप निहारि महा उर ताप मनोज की बाढ़ी।
रोषभरी अँखियानि सोँ घूरति मूरति ऐसी बिसूरति ठाढ़ी ॥१६५॥

पुनः (कबित्त)

ल्याई बाटिका ही सोँ सिँगारहार जानति हौँ
कंटन को लाग्यो है उरोजन मैँ घाव री।

---

[१६३] जु लाव–सु ज्वाल (भार०)।
[१६४] पनो–बनो (सर०)। उसास०–उसास गही (भार०)।
१६५] को–के (भार०)। अँखियानि०-अँखिया नित (वही)।

दौरि दौरि टहल कै कहल ह्वै बादिहीं
बिगार्‌यो उर-चंदन दृगंजन-बनाव री।
मेरो कहा दोष 'दास' बातें जौन बूझि लीनी
अपनी ही सूझि भरि आई बृज भाँवरी।
पीतपटवारे कों बोलावन पठाई मैं तूँ
पीत पट काहे कों रँगाइ ल्याई बावरी ॥१९६॥

प्रोषितभर्तृका-लक्षण (दोहा)

कहिये प्रोषितभर्तृका पति परदेसी जानि।
चलत रहत आवत मिलत चारि भेद उनमानि ॥ १९७ ॥
प्रथम प्रवत्स्यत्प्रेयसी प्रोषितपतिका फेरि।
आगच्छतपतिका बहुरि आगतपतिका हेरि ॥ १९८ ॥

प्रवत्स्यत्प्रेयसी (सवैया)

बात चली यह है जब तें तब तें चले काम के तीर हजारन।
भूख औ प्यास चली मन तें अँसुआ चले नैनन तें सजि धारन।
'दास' चलीं कर तें बलया रसना चली लंक तें लागी अबार न।
प्रान के नाथ चले अनतै तन तें नहि प्रान चले किहि कारन ॥१९९॥

प्रोषितपतिका

साँझ के ऐबे की औधि दै आए बितावन चाहत याहू बिहानहि।
कान्हजू कैसे दया के निधान हौ जानौ न काहू के प्रेम-प्रमानहि।
'दास' बड़ोई बिछोह कै मानती जात समीप के घाट नहानहि।
कोस कै बीच कियो तुम डेरो तौ को सकै राखि पियारी के प्रानहि ॥२००॥

---

[१९६] कहल—महल (भार०)। भरि०—तू तौ भरि आई भावरी (वही)। तूँ—तो (वही)

[१९९] यह—वह (भार०)। धारन—वारन (वही)। लंक०—कंत के (सर०)। लागी—लाग्यो (भार०)।

[२००] कै—के (सर०, भार०)।

आगच्छतपतिका

बाम दई कियो बाम भुजा अँखिया फरके को प्रमान टरो सो।
झूठे सँदेसिया औ सगुनौती-कहैयन को पर्‍यो एक परोसो।
'दासजू' प्रीतम की पतिया पतियात जो है पतियाइ मरो सो।
भागभरो सोइ छोड़ि दियो हम का गहिये अब काग-भरोसो ॥२०१॥

आगतपतिका

देखि परै सब गात कटीले न ऐसे मैं ऐसी प्रिया सकै कोइ कै।
आदर-हेत उठै प्रति रोम है 'दास' यौं दीनदयालता जोइकै।
कंत बिदेसी मिले सुख चाहिये प्रानप्रिया तूँ मिलै किमि रोइकै।
जीवननाथ-सरूप लख्यो यह मैँ मलिनी निज आँखिन धोइकै ॥२०२॥

उत्तमादि-भेद (दोहा)

जितनी तिय बरनी ति सब तीन तीनि बिधि जानि।
तिन्हैँ उत्तमा मध्यमा अधमा नाम बखानि ॥ २०३ ॥
उत्तम मानबिहीन है, लघु मध्यम मधि मान।
बिन पराधहूँ करति है अधम नारि गुरु मान ॥ २०४ ॥

उत्तमा, यथा (सवैया)

बावरी भागनि तेँ पति पाइये जो मति मोहै अनेक तिया की।
भोर की आवनि कुंज बिहारी की मेरी तौ 'दासजू' ज्यारी जिया की।
आजु तेँ मो सिख लै तूँ अली दै गली तजि सीखनि छीछी छिया की।
प्रानपियारे तेँ मान करैँ ते कसाइनि कूर कठोर हिया की ॥२०५॥

मध्यमा, यथा

सारी निसा कठिनाई धरे रहै पाहन सो मन जात बिचारो।
'दासजू' देखतै धाम गोपाल को पाला सो होत घरी घुरि न्यारो।

---

[२०१] झूठे—झूठो (भार०)।
[२०२] यह०—पै हमै (भार०)।
[२०३] तीनि०—तीनि भाँति की (भार०)।
[२०४] हूँ—हीं (भार०)।
[२०५] पाइये—पाए (सर०); आवत (भार०)। ते-तो (वही)।

तेह की बातैं कहौ तुम एती पै मो मन होत न नेक पत्यारो ।
पूस को भान हवाई कृसान सो मूढ़ को ज्ञान सो मान तिहारो ॥२०६॥

अधमा, यथा (कबित्त)

माधो अपराधो तिल आधो ना बिचारो सुद्ध
साध ही तें राधे हठ-आराधन ठानती ।
'दास' यौं अलीकै बैन ठीकै करि मानौ ज्ञान
ह्वैहै दुख जी के यह नीके हम जानती ।
वाकी सिख पाई वहै ध्यान धन ठहराई
और की सिखाई कछू कानन न आनती ।
मान करि मानिनी मनाए मानै बावरी न
कोऊ गुरु मानै सतगुरु मान मानती २०७॥

इति आलंबन-विभाव

अथ उद्दीपन-विभाव—सखी-वर्णन (दोहा)

तिय पिय की हितकारिनी सखी कहँ कबिराव ।
उत्तम मध्यम अधम त्रय प्रगट दूतिका-भाव ॥ २०८ ॥

साधारण सखी, यथा (कबित्त)

छबिन्ह बरनि जिन सुरति बढ़ाई नई
लगनि उपाई घात घातनि मिलाई है ।
मान मैं मनायो पीर-बिरह बुझायो
परदेस मैं बसोठी करि चीठी पहुँचाई है ।

---

[२०६] घाम–धाम (भार०) । घुरि–धुरि (वही) । तेह–नेह (वही) ।
कहौ–कही (वही) । नेक०–नेकहू न्यारो (वही) । भान०–
भानहू वाइ (वही) । को०–अज्ञान (वही)

[२०७] अलीकै–अली के (भार०) ।

[२०८] मध्यम०–अरु मध्यम अधम प्रगट (भार०) ।

[२०९] छबिन्ह–छबि ना (भार०) । उपाई–उपाय (वही) । परदेस–
पद देस (वही) । प्रीतिनि–प्रीति न (वही) । रीतिनि–
रीति न (वही) ।

'दासजू' सँजोग मैँ सुबैननि सुनाइ मैन-
प्रीतिनि बढ़ाइ रसरीतिनि बढ़ाई है।
चंद्रावलि राधाजू की ललिता गोपालजू की
सखियाँ सुहाई कैधौँ भाग की भलाई है ॥२०९॥

नायक-हित सखी

तेरी खीझिबे की रुख रीझि मनमोहन की
याते वहै साज सजि सजि नित आवते।
आपु ही तेँ कुंकुम की छाप नखछत गात
अंजन अधर भाल जावक लगावते।
ज्यौँ ज्यौँ तूँ अयानी अनखानी दरसावै
त्यौँ त्यौँ स्याम कृत आपने लहे को सुख पावते।
तिनहीँ खिसावै 'दास' जौ तूँ यौँ सुनावै
तुम यौँ ही मनभावते हमारे मन भावते ॥२१०॥

नायिका-हित सखी

केसरि के केसर को उर मैँ नखच्छत कै
कर लै कपोलनि मैँ पीक लपटाई है।
हारावली तोरि छोरि कचनि बिथोरि खोरि
मोहूँ गनि भोरि इत भोर उठि आई है।
पी के बिन प्रेम कोऊ 'दास' इहि नेम
परपंच करि पंच मैँ साहागिनि कहाई है।
हाँती करि हाँ ती मोहि ऐसी ना साहाती
भेष कंत है तकत यह कैसी चतुराई है ।।२११॥

उत्तमा दूती, यथा (सवैया)

मोहि सौँ आजु भई सिगरी बिगरी सब आजु सँवार करौंगी।
बीर की सौँ बलबीर बलाइ ल्यौँ आज सुखी इकबार करौंगी।
'दास' निसा लौँ निसा करिये दिन बूड़त ब्यौंत हजार करौंगी।
आजु बिहारी तिहारी पियारी तिहारे मैँ हीय को हार करौंगी ॥२१२।

---

[२११] केसर–केसुर (सर०)। गनि–गति (भार०)। भोर–भोरे (वही)। पी के–पी को (वही)।

[२१२] आजु–भूज (भार०)। बूड़त–बूड़ते (वही)।

मध्यम दूती, यथा (कवित्त)

प्यारी कोमलांगी औ कुमुदबंधुबदनी
सुगंधन की खानि कौं क्यों सकत सताइहौं।
बेनी लखि मोर दौरै मुख कौं चकोर 'दास'
स्वासनि कौं भौंरे किन किन कौं बराइहौं।
वह तौ तिहारे हेत अबहीं पधारै पै धौं
तुमहीं बिचारौ कैसे धीरज धराइहौं।
ह्वै है कामपाल की बरसगाँठि वाही मिस
अब मैं गोपाल की सौं पालकी मैं ल्याइहौं ॥२१३॥

अधम दूती, यथा (सवैया)

किल कंचन सी वह अंग कहाँ कहँ रंग कदंबिनि के तुम कारो।
कहँ सेज-कली बिकली वह होइ कहाँ तुम सोइ रहौ गहि डारो।
नित 'दासजू' ल्याव ही ल्याव कहौ कछु आपनो वाको न भेद बिचारो।
वह कौल सौं कौंरी किसोरी कहौ औ कहाँ गिरधारन पानि तिहारो ॥२१४॥

सखीकर्म-लक्षण (दोहा)

मंडन संदरसन हँसी संघट्टन सुभ धर्म।
मानप्रबर्जन पत्रिकादान सखिन के कर्म ॥ २१५ ॥
उपालंभ सिक्षा स्तुती बिनय जदक्षा उक्ति।
बिरहनिवेदन जुत सुकबि बरनत हैं बहु जुक्ति ॥ २१६ ॥
इन बातनि पिय तिय करै जहाँ सुऔसर पाइ।
वहै स्वयंदूतत्व है सो हौं कहौं बनाइ ॥ २१७ ॥

मंडन, यथा (सवैया)

प्रीतम-पाग सँवारी सखी सुघराई जनायो प्रिया अपनी है।
प्यारी कपोल के चित्र बनावत प्यारे बिचित्रता चारु सनी है।

---

[२१३] कौं भौंर–तें भौंर (सर०)।
[२१४] कदंबिनि–कदंबन (भार०)। सेज०–कंजकली बिकसी (वही)।
जू–हा (वही)। सौं०–सी गोरी (वही)। कहौ–कहाँ (वही)।
[२१५] मंडन०–मेंडन से (सर०)।

'दास' दुहूँ को दुहूँ कोँ सराहिबो देखि लह्यो सुख लूटि घनी है।
वै कहँ भावतो कैसो बनो वै कहँ मनभावती कैसी बनी है।।२१८।।

संदर्शन, यथा

आहट पाइ गोपाल को बाल सनेह के गाँसनि सोँ गँसि जाती।
दौरि दरीची के सामुहेँ ह्वै दृग जोरि सो भौंहन मैँ हँसि जाती।
प्यारे के तारे कसौटिन मैँ अपनी छबि कंचन सी कसि जाती।
'दास' न जानत कोऊ कहूँ तन मैँ मन मैँ छबि मैँ बसि जाती।।२१९।।

पुनः

काहे को 'दास' महेस-महेस्वरी-पूजन-काज प्रसूननि तूरति।
काहे को प्रात नहाननि कै बहु दाननि दै व्रत संजम पूरति।
देखि री देखि अँगोटिकै नैननि कोटि मनोज मनोहर मूरति।
येई हैँ लाल गोपाल अली जिहि लागि रहै दिनरैन बिसूरति।।२२०।।

परिहास

मोहन आपनो राधिका को बिपरीति को चित्र बिचित्र बनाइकै।
डीठि बचाइ सलोनी की आरसी मैँ चपकाइ गयो बहराइकै।
घूमि घरीक मैँ आइ कह्यो कहा बैठी कपोलन चंदन लाइकै।
दर्पन त्योँ तिय चाह्यो तहीँ सिर नाइ रही मुसकाइ लजाइकै।।२२१।।

संघट्टन, यथा

लेहु जू ल्याई सु गेह तिहारे परे जिहि नेह सँदेह खरे मैँ।
भेटौ भुजा भरि मेटौ ब्यथा निसि मेटौ जु तौ सब साध भरे मैँ।
संभु ज्योँ आध ही अंग लगावौ बसावौ कि श्रीपति ज्योँ हियरे मैँ।
'दास' भरी रसकेलि सकेलियै आनँदबेलि सी मेलि गरे मैँ।।२२२।।

आपने आपने गेह के द्वार तेँ देखादेखी कै रहैँ हिलि दोऊ।
त्योँ ही अँध्यारी कियो झपि मेघनि मैन के बान गए खिलि दोऊ।
'दास' चितै चहुघाँ चित चाय सोँ औसर पाइ चले पिलि दोऊ।
प्रेम उमंडि रहे रसमंडित अंतर की मड़ई मिलि दोऊ।। २२३ ।।

---

[२१८] सराहिबो—पँवारिबो (भार०)।

[२१९] भार० में तीसरा चरण चौथा है।

[२२१] चंदन—बंदन (सर०)।

मानप्रवर्जन, यथा (कवित्त)

पंकज-चरन की सौं जानु सुबरन की सौं लंक
तनु की सौं जाकी अलख महति है।
त्रिबली-तरंग कुच-संभु जुग संग की सौं
हारावलि गंग की सौं जो उत बहति है।
श्रुति साजधारी वा बदन द्विजराज की सौं
एरी प्रानप्यारी कोप कापै तूँ गहति है।
साँची हौं कहति तुव बेनी सौं कमलनैनी
तेरी सुधिसुधा मोहिं ज्यावति रहति है ॥२२४॥

पत्रिकादान, यथा (सवैया)

कैसो री कागद ल्याई ? नई पतिया है दई वृषभानकुमारी।
भीगी सु क्यौं ? अँसुआन के धार जरी कहि कैसे ? उसासनि जारा।
आखर 'दास' दखाई न देत ? अचेत हुती बहुतै गिरिधारी।
एती तौ जीय मैं ज्यारी रही जब छाती धरे रही पाती तिहारी ॥२२५॥

उपालभ, यथा (कबित्त)

मुख द्विजराज मखतूल अधिकारी अलकनि
को है तासौं बिना काज दुख लहिये।
नैन श्रुतिसेवी सर ह्वै कै उर लागत है
नाक मुकुतन संगी ताके दाह दहिये।
'दास' मनभावती न भावती चलन तेरी
अधर अमी के अवलोके मोहि रहिये।
ह्वैकै संभुरूपी द्वै उरज ये कठोर ये
कठोरताई एती करैं कासौं जाइ कहिये ॥२२६॥

शिक्षा, यथा (सवैया)

वाही घरी तैं न ज्ञान रहै न रहै सखियान की सीख सिखाई।
'दास' न लाज को साज रहै न रहै सजनी गृहकाज की घाई।

---

[२२४] साज—सनु (भार०)।
[२२५] ज्यारी—ज्वाल (भार०)। धरे रही—धरे रहै (वही)।
[२२६] सेवी—सेवे (सर०)। संगी—संग (भार०)।

ह्याँ दिखसाध निवारे रहौ तबहीँ लौं भटू सब भाँति भलाई ।
देखत कान्है न चेत रहै री न चित्त रहै न रहै चतुराई ॥२२७॥

स्तुति, यथा (कवित्त)

राधे तो बदन सम होतो हिमकर तौ
अमर प्रतिमासनि बिगारते क्योँ रहते ?
क्योँहूँ कर-पद-सरि पावते जौ इंदीबर
सर मैँ गड़े तौ दिन टारते क्योँ रहते ?
'दास' दुति दाँतन की देत्यो दई दारिमै
तौ पचि पचि उदर बिदारते क्योँ रहते ?
एरी तेरे कुच सरि होत करिकुंभ तौ
वै उन पर लै लै छार डारते क्योँ रहते ? ॥२२८॥

विनय, यथा (सवैया)

जात भए गृहलोग कहूँ न परोसिहू को कछु आहट पैये ।
दीनदयाल दया करिकै बहु द्यौसनि को तनताप बुझैये ।
'दास' ये चाँदनी चाँदनी चौसर औसर बीते न औसर पैये ।
गोहन छाड़ि कछू मिस कै मनमोहन आज इहाँ रहि जैये ॥२२९॥

यदुक्त

सुनि चंदमुखी रहि रैनि लख्यो मैँ अनंद-समूह सन्यो सपनो ।
दृगमीचनि खेलत तो सँग 'दास' दयो बिधि फेरि सु बालपनो ।
लगी ढूढ़न चंपलता लतिका चलि ता छन मोहिँ बन्यो छपनो ।
जनु पावै नहाँ ते छिपाइ रही तूँ ओढ़ाइकै अंचल ही अपनो ॥२३०॥

(कवित्त)

गति नरनारिन की पंछी देहधारिन की
तृन के अहारिन की एकै बार बंधई ।
दीनी बिकलाई सुधि बुधि बिसराई
ऐसी निर्दई कसाई तोसोँ करि न सकै दई ।

---

[२२७] दिख–सिख (भार०, लीथो) । तब–जब (लीथो) ।
[२२९] परोसि–परोस (भार०) । चाँदनी–चंदन (वही) । पैये–वैये (सर०) ।
[२३०] चंपलता०–चापलता ललिता (सर०) । ते०–तेहि पाइ (वही) ।

विधि के सँवारे कान्ह कारे औ कपटवारे
'दासजू' न इनकी अनीति आज की नई ।
सुर की प्रकासिनि अधर-सेजबासिनि सु-
बंस की ह्वै बंसी तू कुपंथिनि कहा भई ।।२३१।।

विरहनिवेदन, यथा (सवैया)

'दासजू' आलस लालसा त्रास उसास न पास तजै दिन रातै ।
चिंता कठोरता दीनता मोह उनीदता संग कियो करै बातै ।
आधि उपाधि असाधिता व्याधि न राधिकै कैसहू ह्वै सकै हातै ।
तेरे मिलाप बिना बृजनाथ इन्हैं अपनाए रहै तिय नातै ।।२३२।।

उद्दीपन विभाव, यथा (कवित्त)

बाग के बगर अनुरागरली देखति ही
सुषमा सलोनी सुमनावलि अछेह की ।
द्वार लगि जाती फेरि ईठि ठहराती बोलै
औरनि रिसाती माती आसव अदेह की ।
'दास' अब नीके ऊभि भरति उसाँसु री
सुबाँसुरी की धुनि प्रति पाँसुरी मैं बेह की ।
गँसी गाँसी नेह की बिसार्नी झर मेह की
रही न सुधि तेह की न देह की न गेह की ।।२३३।।

अनुभाव-लक्षण (दोहा)

सु अनुभाव जिहि पाइये मन को प्रेम-प्रभाव ।
याही मैं बरनै सुकबि आठौ सात्विक भाव ।। २३४ ।।

यथा (सवैया)

जी बँधिही बँधि जात है ज्यों ज्यों सुनीबी-तनीन को बाँधति छोरति ।
'दास' कटीले ह्वै गात कँपै बिहँसौहीं हँसौहीं लसै दृग लोरति ।
भौंह मरोरति नाक सकोरति चीर निचोरति औ चित चोरति ।
प्यारो गुलाब के नीर मैं बोर्यो प्रिया पलटे रसभीर मैं बोरति ।।२३५।।

---

[२३१] प्रकासिनि–प्रभासिनि (लीथो) ।
[२३२] आलस–आसस (सर०) । उनींदता–उदीनता (भार०) ।
[२३२] मे–मै (सर०) ।
[२३५] लोरति–लौ रति (भार०) । पलटे–लपटे (भार०, लीथो) ।

सात्त्विक भाव (दोहा)

स्तंभ स्वेद रोमांच स्वरभंग कंप वैबर्न ।
अश्रु प्रलै ये सात्वकी भाव के उदाहर्न ॥ २३६ ॥

यथा (कवित्त)

कहि कहि प्यारी अबै चढ़ती अटारिन पै
काहि अवलोक्यो यह कैसो भयो ढंग है ?
औरै ओर तकति चकति उचकति 'दास'
खरी सखि पास पै न जानै कोऊ संग है ।
थकि रही दीठि पग परत धरनि नीठि
रोमनि उमग भो बदलि गयो रंग है ।
नैन छलकौंहैं वर वैन वलकौंहैं औ
कपोल फलकौंहैं भलकौंहैं भए अंग हैं ॥२३७॥

व्यभिचारी-भेद

निरवेद ग्लानि संका असूया औ मद श्रम
आलस दीनता चिंता मोह स्मृति धृति जानि ।
व्रीड़ा चपलता हर्ष आवेग जड़ता बिषाद
उतकंठा निद्रा गर्ब अपसमार मानि ।
स्वपन बिबोध अमरष अवहित्था गनि
उग्रता औ मति व्याधि उन्माद मरन आनि ।
त्रास औ बितर्क व्यभिचारी भाव तैंतिस
ये सिगरे रसनि के सहायक से पहिचानि ॥२३८॥

यथा

सुमिरि सकुचि न थिराति संकि त्रसति
तरति उग्र बानि सगिलानि हरषाति है ।
उनीदति अलसाति सोवत सधीर चौंकि
चाहि चित अमित सगर्ब इरखाति है ।

---

[२३७] चकति–तकति (लीथो) । परत–धरत (वही) ।
[२३८] इरखाति–अनखाति (भार०) ।

'दास' पिय-नेह छिन छिन भाव बदलति
स्यामा सबिराग दीन मति कै मखाति है ।
जलपति जकाति कहरत कठिनाति माति
मोहति मरति बिललाति बिलखाति है ॥२३९॥

स्थायीभाव-लक्षण (दोहा)

स्थायीभाव सिंगार को प्रीति कहावै मित्त ।
तिहि बिन होत न एकऊ रसस्रृंगार-कबित्त ॥ २४० ॥
थाईभाव बिभाव अनुभाव सँचारीभाव ।
पैये एक कवित्त मैं सो पूरन रसराव ॥ २४१ ॥

यथा (कबित्त)

आज चंद्रभागा चंपलतिका बिसाखा को
पठाई हरि बाग तेँ कलामैँ करि कोटि कोटि ।
साँझ समैं बीथिन मैँ ठानी दृगमीचनी भोराई
तिन राधे कौँ जुगुति कै निखोटि खोटि ।
ललिता के लोचन मिचाइ चंद्रभागा सौँ
दुरायबे कौँ ल्याईँ वै तहाँईँ 'दास' पोटि पोटि ।
जानि जानि धरी तिय बानी लरबरी सब
आली तिहि घरी हँसि हँसि परीँ लोटि लोटि ॥१४२॥

श्रृंगार-हेतु-लक्षण (दोहा)

कहत सँजोग बियोग द्वै हेत सिँगारहि लोग ।
संगम सुखद सँजोग है बिछुरे दुखद बियोग ॥ २४३ ॥

संयोग श्रृंगार, यथा (कबित्त)

जानु जानु बाहु बाहु मुख मुख भाल
भाल सामुहैँ भिरत भट मानो थरु थरु है ।

२४०] मित्त–चित्त (सर०) ।
[२४२] लरबरी–रसभरी (भार०) ।

गाढ़े ठाढ़े उरज ढलैत नख-घाइ लेत
ढाहै ढिग करन-सँजोगी बीर बरु है।
टूटै नग छूटै बान सिंजित बिरद बोलै
मर्मरन मारू बाजै बाजत प्रबरु है।
राधे हरि क्रीड़त अनेकनि समरकला मानौ
मँडी सोभा औ सिंगार सौं समरु है ॥२४४॥

सुरतांत, यथा (कबित्त)

उठी परजंक तें मयंकबदनी कौं लखि
अंक भरिबे कौं फेरि लाल मन ललकैं।
'दास' अँगिराति जमुहाति तकि झुकि
जाति दीने पट अंतर अनंत ओप झलकैं।
तैसैं अंग अंगन खुले हैं स्वेदजलकन
खुली अलकन खरी खुली छबि छलकैं।
अधखुली आँगी हद अधखुली नखरेख
अधखुली हाँसी तैसी अधखुली पलकैं ॥२४५॥

हाव-भेद (दोहा)

अलंकार बनितान के पाइ सँजोग सिंगार।
होत हाव दस भाँति के ताको सुनौ प्रकार ॥ २४६ ॥
लीला ललित बिलास किलकिंचित बिहित बिछित्त।
मोट्टाइत कुट्टमिति बिब्बोक बिभ्रमौ मित्त ॥ २४७ ॥

लीलाहाव-लच्छण

स्वाँग केलि को करत हैं जहाँ हास्य रसभाव।
दंपति सुख-क्रीड़ा निरखि कहिये लीला हाव ॥ २४८ ॥

---

[२४४] ठाढ़े--गाढ़े (लीथो)। मर्म०--मसर न (भार०)। मँडी--मढ़ी (वही)।

[२४५] झुकि--मुकि (सर०)। अनंत--अतन (भार०)। ओप--बोय (सर०)।

[२४६] के पाइ--को पाइ (सर०)। को--के (वही)।

[२४७] बिभ्रमौ--बिमोहित (भार०)।

यथा (कवित्त)

चाँदनी मैँ चैत की सकल बृजवारी बारी
'दास' मिलि रासरस खेलन भुलानी है ।
राधे मोरमुकुट लकुट बनमाल धरि
हरि ह्वै करत तहाँ अकह कहानी है ।
त्यौँ ही तियरूप हरि आइ ताहि धाइ
धरि कहिकै रिसौँहैँ चलौ बोल्यो नँदरानी है ।
सिगरी भगानी पहिचानी प्यारी मुसकानी
छूटि गो सकुच सुख लूटि सरसानी है ॥२४९॥

केलिहाव (सवैया)

नाते की गारी सिखाइ कै सारी को पींजरो लै पिय के कर दीने ।
मैना पढ़ौ सुनतै उहि 'दासजू' बार हजार वहै रट लीने ।
बूझति आली हँसौँहैँ कहा कहैँ होत खिसौँहैँ लला रसभीने ।
आपु अनंदभरी हँसिबो करै चंचल चारु दृगंचल कीने ॥२५०॥

ललितहाव-लक्षण (दोहा)

ललित हाव बरन्यो निरखि तिय को सहज सिंगारु ।
अभरन पट सुकुमारता गति सुगंधता चारु ॥ २५१ ॥

यथा (कवित्त)

पंकज से पायन मैँ गूजरी जरायन की
घाँघरे को घेर दीठि घेरि घेरि रखियाँ ।
'दास' मनमोहनी मनिन के बनाय
बनि कंठमाल कंचुकी हवेलहार पखियाँ ।

---

[२४९] तिय०-हरिआइ तहँ धाइ धीर कहि कहि करिकै (लीथो) । ताहि-तहिँ (भार०) ।

[२५२] पायन-पावन (भार०) । जरायन-जराउन (वही) । को घेर-के घेर (सर०) । बनाय-बनाव बने (भार०) ; बनाय बने (लीथो) । फैलावत०-फैलत तरंग (लीथो) । चाल-चली (वही) ।

अंगन को जोतिजाल फैलावत रंग लाल
आवत मतंगचाल लीने संग सखियाँ।
भागभरी भामिनी सोहागभरी सारी सुही
माँगभरी मोती अनुरागभरी अँखियाँ ॥२५२॥

सुकुमारता, यथा (सवैया)

घाँवरो भीन सौं सारी महीन सौं पीन नितंबनि भार उठ्यो खचि।
'दास' सुबास सिँगार सिगारति बोझनि ऊपर बोझ उठै मचि।
स्वेद चलै मुखचंदनि च्वै डग द्वैक धरे महि फूलनि सौं सचि।
जात है पंकजवारि बयारि सौं वा सुकुमारि की लंक लला लचि ॥२५३॥

विलासहाव-लक्षण (दोहा)

बोलनि हँसनि बिलोकिबो औरं भृकुटि को भाव।
क्यौंहूँ चकित सुभाव जहँ सो बिलास है हाव ॥ २५४ ॥

यथा (कवित्त)

आदरस आगैँ धरि आँगन मैँ बैठी बाल
इंदु से बदन को बनाव दरसति है।
भौँहनि मरोरि मोरि अधर सकोरि नाक
अलक सुधारति कपोल परसति है।
सखी ब्यंग्य बोलि को उटावति बिहँसि
कंज चोलीतर सुषमा अमोली सरसति है।
खुलित पयोधर प्रकास बस 'दास'
नंद नंदजू के नैननि अनंद बरसति है ॥२५५॥

किलकिंचित हाव (दोहा)

हरष बिषाद श्रमादि जो हिये होत बहु भाव।
भाव सबल सिंगार को सो किलकिंचित हाव ॥ २५६ ॥

---

[२५४] और०-औ भृकुटी (लीथो)।
[२५५] बस०-खास बस (लीथो)।

यथा (कबित्त)

कान्हर कटाक्षन की जाइ झरि लाई
बाल बैठी ही जहाँई वृषभान महरानी है।
'दास' दृगसाधन की पूतरी लौं आरि
दृग-पूतरी घुमरि वाही ओर ठहरानी है।
केती अनाकानी कै जँभानी अँगिरानी पै
न अंतर की पीर बहराए बहरानी है।
थकी थहरानी छबि छकी छहरानी
धकधकी धहरानी जिमि लकी लहरानी है ॥२५७॥

चकित हाव, यथा (सवैया)

आज को कौतुक देखिबे कौं हौं कहा कहिये सजनी तू कितै रही।
कैसी महाछबि छाइ अनेक छबीली छकाइ हितै अहितै रही।
ओट तें चोट बिरी की करी पिय बार सुधारत बैठी जितै रही।
चंचल चारु दृगंचल कै तब चंदमुखी चहुँ ओर चितै रही ॥२५८॥

बिहृतहाव-लक्षण (दोहा)

हिलि मिलि सकै न लाज बस जियै भरी अभिलाष।
ललचावै मन दै मनहिं बिहित हाव क्यौं दाख ॥ २५९ ॥

यथा (कबित्त)

प्यारो केलिमंदिर तें करत इसारो उत
जाइबे कौं प्यारी हू के मन अभिलाख्यो है।
'दास' गुरुजन पास बासर प्रकास तें न
धीरज न जात केहूँ लाज-डर नाख्यो है।

---

[२५७] कान्हर–कहर (सर०)। आरि–वारि (लीथो)। घुमरि–सँभरि (वही)। बहराए–वह रूप (भार०)।

[२५८] कितै–कहा (लीथो, भार०)। छाइ–छाये (भार०)। बिरी०–बिरी करी पीय के बार (लीथो, भार०)।

[२६०] प्यारो–खरे (सर०); प्यारे (भार०)। इसारो–इसारे (भार०) केहूँ–क्यों हूँ (वही)।

नैन ललचौंहैं पै न केहूँ निरखत बनै
ओठ फरकौंहैं पै न जात कछु भाख्यो है।
काजन के व्याज वाही देहरी के सामुहें ह्वै
सामुहें के भौन आवागौन करि राख्यो है ॥२६०॥

बिच्छित्तिहाव-लच्छन (दोहा)

बिन भूषन कै थोरही भूषन छबि सरसाइ।
कहत हाव बिच्छित्ति हैं जे प्रबीन कबिराइ ॥ २६१ ॥

यथा (कवित्त)

काहे कौं कपोलनि कलित कै देखावती है
मकलिका पत्रन की अमल हथौटि है।
आभरन जाल सब अंगन सँवारिकै
अनंग की अनी सी कत राखति अगौटि है।
'दास' भनि काहे कौं अन्यास दरसावती
भयावनी भुअंगिनि सी बेनी-लौटि लौटि है।
हम ऐसे आसिक अनेकन के मारिबे कौं
कौलनैनी केवल कटाच्छ तेरी कोटि है ॥२६२॥

पुनः

फेरि फेरि हेरि हेरि करि करि अभिलाष
लाख लाख उपमा बिचारत है कहने।
बिधिहूँ मनावै जौ घनेरे दृग पावै तौ
चहत याही संतत निहारतहीं रहने।
निमिष निमिष 'दास' रीझत निहाल होत
लूटे लेत मानो लाख कोटिन के लहने।
एरी बाल तेरे भाल-चंदन के लेप आगे
लोपि जात और के हजारन के गहने ॥२६३॥

---

[२६१] बिन—बन (भार०)। थोरही—थोहरी (वही)। जे—जो (वही)।

[२६२] कलित—कलिन (भार०)। मकलिका—कलिका सु (वही)।

[२६३] बिधिहूँ—बिधिहि (लीथो, भार०)। जौ—तौ (सर०)। तौ—जौ (वही०)।

मोट्टाइतहाव-लक्षण (दोहा)

अनचाही बाहिर प्रगट मन मिलाप की घात ।
मोट्टाइत तासों कहैं प्रेम उदीपति बात ॥ २६४ ॥

यथा (सवैया)

पिय प्रातक्रिया करै आँगन मैं तिय बैठी सु जेठिन के थल मैं ।
सुख के सुधि तें उमहैं अँसुवा बहरावै जँभाइन के छल मैं ।
न अघानी जऊ सिगरी निसि 'दासजू' कामकलानि कियो कलमैं ।
अँखियाँ झखियाँ ललकैं फिरि बूड़िबे कौं हरि की छबि के जल मैं ॥२६५॥

पुनः

मोहि न देखौ अकेलियै 'दासजू' घाटहू बाटहू लोग भरै सो ।
बोलि उठैगी बरैतें लै नाउ तौ लागिहै आपनी दाउ अनैसो ।
कान्ह कुबानि सँभारे रहौ निज वैसी न हौं तुम चाहत जैसो ।
ऐबो इतै करौं लेन दही कौं चलैबो कहाँ को कहाँ कर कैसो ॥२६६॥

कुट्टमितहाव-लक्षण (दोहा)

केलि-कलह कौं कहत हैं हाव कुट्टमित मित्त ।
कछु दुख लै सुख सौं सन्यो जहँ नायक को चित्त ॥ २६७ ॥

यथा (सवैया)

रूखी ह्वै जैबो पियूष बगारिबो बंक बिलोकिबो आदरिबो है ।
सौंहैं दिबाइबो गारी सुनाइबो प्रेम-प्रसंसनि उच्चरिबो है ।
लातनि मारिबो झारिबो बाँह निसंक ह्वै अंकन को भरिबो है ।
'दास' नवेली को केलि-समै मैं नहीं नहीं कीबो हहाँ करिबो है ॥२६८॥

बिब्बोकहाव-लक्षण (दोहा)

जहँ प्रीतम को करत है कपट अनादर बाल ।
कछु इरिषा कछु मद लिये सो बिब्बोक रसाल ॥ २६९ ॥

---

[२६५] बूड़िबे–बूड़ने (भार०) ।

[२६६] मोहि न०–॥ मोहि न ॥ [शीर्षक ?] देखो अकेलियै 'दासजू' घाट वह बाट मै लोग लोगाई भरै सो (सर०) । उठैगी०–उठौ नीखरै ते (भार०) न हौं–नहीं (वही) ।

[२६६] सो–है (सर०) ।

यथा (सवैया)

मान मैं बैठी सखीन के संमत बूझिबे कौं पिय-प्रेम प्रभाइनि ।
'दास' दसा सुनि द्वार तैं प्रीतम आतुर आयो भर्यो दुचिताइनि ।
बूझि रह्यो पै न हेत लह्यो कहूँ अंत हहा कै गह्यो तिय-पाइनि ।
आली लखै बिन कौड़ी को कौतुक ठोढ़ी गहे बिहँसै ठकुराइनि ॥२७०॥

पुनः

देखती हौ इहि ढीठे अहीर कौं कैसे धौं भीतरी आवन पायो ।
'दास' अधीन ह्वै कीनो सलाम न दूरि तैं दीन ह्वै हेत जनायो ।
बैठि गो मेरे प्रजंक ही ऊपर जानै को याको कहाँ मन भायो ।
गाइन की चरवाही बिहाइकै बेपरवाही जनावन आयो ॥२७१॥

विभ्रमहाव-लक्षण (दोहा)

कहियत विभ्रम हाव जहँ भूलि काज ह्वै जाइ ।
कौतूहल विक्षेप बिधि याही मैं ठहराइ ॥ २७२ ॥

यथा (कवित्त)

उलटीयै सारी कि किनारीवारी पहिचानौ
यहि के प्रकास या जुन्हाई-बिमलाई मैं ।
'दास' उलटीयै बेंदी उलटीयै आँगी
उलटोई अतरौटा पहिरे हौ उतलाई मैं ।
भेद न बिचार्यो गुंजमालै औ गुलीकमालै
नीली एकपटी अरु मीली एकलाई मैं ।
लली किहि गली कित जाती हौ निडर चली
कसे कटि कंकन औ किंकिनि कलाई मैं ॥२७३॥

---

[२७०] मैं–कै (भार०) । हहा–कहा (लीथो, भार०) ।
[२७१] जनावन–जनावत (वही) ।
[२७२] याही–वाही (लीथो) ।
[२७३] औ०–अंगुली (लीथो) । किहि–कित (लीथो, भार०) ।

कौतूहल हाव, यथा (सवैया)

जास सु कौतुक सोध लै सोध पै धाइ चढ़ी बृषभानकिसोरी।
'दास' न दूरि तें डीठि थिरै सु दरी दरी झाँकति, ही फिरै दौरी।
लोग लग्यो इहि कौतुक कौतुक कौतुकवारे को जात ही भोरी।
चंद-उदौत इतौत चितौत चकी सबकी चख-चारु-चकोरी ॥२७४॥

विक्षेप हाव, यथा

आज तौ राधे जकी सी थकी सी तकै चहुँ ओर बिहाइ निमेषै।
अंगनि तोरै खरो अँगिराइ जँभाइ झुकै पै न नींद बिसेषै।
केती भरै, बिन काज की भाँवरी, बावरी सो कहिये इहि लेखै।
'दास' कोऊ कहै कैसी दसा है तो सूखी सुनावती साँवरो देखै ॥२७५॥

मुग्धहाव-लक्षण (दोहा)

जानि-बूझिकै बौरई जहाँ धरति है बाम।
मुग्ध हाव तासों कहैं बिभ्रम ही को धाम ॥ २७६ ॥

यथा (सवैया)

लाहु कहा खए बेंदी दिये औ कहा है तरौना के बाँह गड़ाए।
कंकन पीठि हिये ससि-रेख की बात बनै बलि मोहिं बताए।
'दास' कहा गुन ओंठ मैं अंजन भाल मैं जावक-लीक लगाए।
कान्ह सुभाव ही पूछति हौं मैं कहा फल नैननि पान खवाए ॥२७७॥

हेलाहाव-लक्षण (दोहा)

हावन मैं जहँ होत है निपटै प्रेम-प्रकास।
तासों हेला कहत हैं सकल सुकबिजन 'दास' ॥ २७८ ॥
एक हाव मैं मिलत जहँ हाव अनेकनि फेरि।
समुझि लेहिंगे सुमति यह लीला हावै हेरि ॥ २७९॥

---

[२७४] जास०–न सासु (सर०, लीथो)। चकी–सखी (भार०); चखी (लीथो)।

[२७५] जकी०– जू कैसी (लीथो, भार०)। इहि–बिन (लीथो)।

[२७६] को–के (भार०)

[२७७] खए–कहौ (भार०)। बाँह–बेह (लीथो, भार०)। ससि–नख (लीथो)।

[२७९] फेरि–केरि (सर०)।

यथा (कबित्त)

पी को पहिराव प्यारी पहिरे सुभाव पिय-
भाव ह्वै गई है सुधि आपनी न आवती ।
'दास' हरि आइ त्यौं ही सामुहैं निहारैं खरे
रीति मनभावती की देखि मन भावती ।
आपनोइ आलै मुकुर लै उनमानि कै
गापालै आपनीयै प्रतिबिंब ठहरावती ।
ल्याउ ल्याउ ज्याउ ज्याउ रूपरस प्याउ प्याउ
राधे राधे कान्ह ही लौं ललितै सुनावती ॥२८०॥

इति संयोग शृंगार

अथ वियोग शृंगार (दोहा)

बिन मिलाप संताप अति सो बियोग स्रृंगार ।
तपन हाव हू तेहि कहैं पंडित बुद्धिउदार ॥ २८१ ॥
ताके चारि बिभाव हैं इक पूरबानुराग ।
बिरह कहत मानहिं लहत पुनि प्रबास बड़भाग ॥ २८२ ॥
अनुरागी बिरही बहुरि मानी प्रोषित मानि ।
चहूँ बियोग बिथानि तैं चारो नायक जानि ॥ २८३ ॥

पूर्वानुराग

सो पूरबानुराग जहँ बढ़ै मिले बिन प्रीति ।
आलंबन ताको गनै सज्जन दरसन-रीति ॥ २८४ ॥
दृष्टि श्रुतौ द्वै भाँति के दरसन जानौ मित्र ।
दृष्टि दरस परतछ सपन छाया माया चित्र ॥ २८५ ॥

---

[२८०] रीति—राति (लीथो, भार०) । लै०—हेरै उनमानि गोपालै (सर०) ।

[२८१] तपन—तवन (भार०) ।

[२८२] लहत—मिलत (लीथो, भार०) ।

[२८३] बिथानि—बिथा चितैं (सर०) ।

[२८४] मिले—मिलहि (सर०) ।

[२८५] परतछ०—परतच्छ ही छाया (लीथो) ।

प्रत्यक्षदर्शन, यथा (कवित्त)

आली दौरि सरस दरस लेहि लैरी
इंदु-बदनी अटा मैँ नंदनंद भूमिथल मैँ।
देखा-देखी होतहीँ सकुच छूटी दुहुँन की
दोऊ दुहूँ हाथनि बिकाने एक पल मैँ।
दुहूँ हिय 'दास' खरी अरी मैनसर-गाँसी
परी द्रिढ़ प्रेमफाँसी दुहुँन के गल मैँ।
राधे-नैन पैरत गोबिंद-तन-पानिप मैँ
पैरत गोबिंद-नैन राधे-रूप-जल मैँ ॥२८६॥

स्वप्नदर्शन, यथा (सवैया)

मोहन आयो इहाँ सपने मुसुकात औ खात बिनोद सोँ बीरो।
बैठी हुती परजंक मैँ हौँहूँ उठी मिलिबे कहँ कै मन धीरो।
ऐसे मैँ 'दास' बिसासिनि दासी जगायो डोलाइ कवार-जँजीरो।
झूठो भयो मिलिबो बृजनाथ को एरी गयो गिरि हाथ को हीरो ॥२८७॥

छायादर्शन, यथा

आज सबारहीँ नंदकुमार हुते उत न्हात कलिंदजा माँही।
ऊपर आइ तूँ झाँकि उतै कछु जाइ परी जल मैँ परछाँही।
तातैँ ह्वै मोहित श्रीमनमोहन 'दास' दसा बरनी मोहिँ पाँही।
जानति हौँ बिन तोहि मिले बृजजीवन को अब जीवन नाँही ॥२८८॥

मायादर्शन, यथा

कालि जु तेरी अटा की दरी मैँ खरी हुती एक प्रदीप-सिखा री।
मैँ कह्यो मोहन राधे वहै हरि हेरि रहे पगि प्रेमनि भारी।
तातैँ तौ 'दासजू' बारहीँ बार सराहत तोहिँ निसा गई सारी।
या छबि चाहि कहा धौँ करैँगे महासुख-पुंजनि कुंजबिहारी ॥२८९॥

---

[२८६] सरस—दरस (भार०)।
[२८८] झाँकि—ठाढ़ी (भार०); राखि (लीथो)।

चित्रदर्शन, यथा

कौनि सी औनि को है अवतंस कियौ केहि वंस कृतारथ काको।
नाम छ्वै पावन जन्म भए किन पाँतिन के अधरा अधरा को।
'दास' दै बेगि बताइ अली अब मो तन प्रान-निदान है वाको।
सोहै कहा वह रूप उजागर मोहै हियो यह कागर जाको ॥२९०॥

श्रुतिदर्शन (दोहा)

गुनन सुने पत्री मिले जब तब सुमिरन ध्यान।
दृष्टिदरस बिन होत है श्रुतिदरसन यौं जान ॥ २९१ ॥

यथा (कबित्त)

जब जब रावरो बखान करै कोऊ
तब तब छबि-ध्यान कै लखोई उनमानते।
जानै पतिया न पतियान की प्रबीनताई
बीन-सुर लीन ह्वै सुरनि उर आनते।
चंद अरबिंदनि मलिंदनि सों 'दास' मुख
नैन कच कांति से सुने ही नेह ठानते।
तन मन प्राननि बसीयै सी रहति हौ
कहति हौ कि कान्ह मोहिं कैसे पहिचानते ॥२९२॥

विरह-लक्षण (दोहा)

मिलन होत कबहुँक छिनक बिछुरन होत सदाहि।
तिहि अंतर के दुखन कौं बिरह गुनौ मन माहि ॥ २९३ ॥

यथा (कबित्त)

जब तैं मिलाप करि केलि के कलाप करि
आनँद-अलाप करि आए रसलीन जू।
तब तैं तौ दूनो तन होत छिन छिन छीन
पूनो की कला ज्यौं दिन दिन होति दीन जू।

---

[२९०] छ्वै–ह्वै (भार०)। मो तन–मौनन (वही)। वह–वइ (वही)।
[२९२] रहति०–रहति तुम कहति हौ कान्ह (सर०)।
[२९३] कबहुँक–कबहूँ (लीथो, भार०)।

'दासजू' सतावन अतनु अति लाग्यो अब
ब्यावन-जतन बाकी तुमही अधीन जू।
ऐसोई जौ हिरदै के निरदै निनारे हौ तौ
काहे कौं सिधारे उत प्यारे परबीन जू ॥२६४॥

मानवियोग-लक्षण (दोहा)

जहँ इरषा अपराध तैं पिय तिय ठानै मान ।
बढ़ै बियोग दसा दुरुह मानबिरह सो जान ॥ २६५ ॥

यथा (कबित्त)

नींद भूख प्यास उन्हैं ब्यापत न तापसी लौं
ताप सी चढ़त तन चंदन लगाए तैं ।
अति ही अचेत होत चैतहू की चाँदनी मैं
चंद्रक खवाए तैं गुलाब-जल न्हाए तैं ।
'दास' भो जगतप्रान प्रान को बधिक औ
कृसान तैं अधिक भए सुमन बिछाए तैं ।
नेह के लगाए उन एते कछु पाए तेरो
पाइबो न जान्यो अब भौंहनि चढ़ाए तैं ॥२६६॥

प्रवासवियोग (दोहा)

पिय बिदेस प्यारी सदन दुस्सह दुक्ख प्रबास ।
पत्री संदेसनि सखी दुहुँ दिसि करै प्रकास ॥ २६७ ॥

प्रोषित नायक, यथा (कबित्त)

चंद चढ़ि देखै चारु आनन प्रबीन गति
लीन होत माते गजराजनि कौं ठिलि ठिलि ।

---

[२६४] केलि०—केलिन (भार०) । हिरदै०—हिरदै को निरदै बिनारो (वही) ।

[२६५] जहँ०—इरषा दया प्रभाव (लीथो) । दसा०—दसहूँ दसह (भार०); दसहु दिसह (लीथो) ।

[२६६] चंद्रक०—चंद्रकन खाए (भार०) । उन०—उन तो तैं (वही) ।

[२६७] दुस्सह०—दुसह दुक्ख परबास (सर०) ।

बारिधर-धारनि तेँ बारनि पै ह्वै रहै
पयोधरनि छ्वै रहै पहारनि कोँ पिलि पिलि ।
दई निरदई 'दास' दीनो है बिदेस तऊ
करौँ न अँदेस तुव ध्यान ही सोँ हिलि हिलि ।
एक दुख तेरे हौँ दुखारी नत प्रानप्यारी
मेरो मन तोसोँ नित आवत है मिलि मिलि ॥२९८॥

पुनः

लहलह लता डहडह तरु-डारेँ गहगह
भयो गगन कै आयो कौन बरिहै ।
चहचह चिरीधुनि कहकह केकिन की
घहघह घनसोर सुनतै अखरिहै ।
'दास' पहपह ही पवन डोलि महमह
रहरह यहई सुनावत दवरि है ।
सहसह समर की बहबह बोजु भई
तहँ तहँ तिय प्रान लीबे की खबरि है ॥२९९॥

दशा-भेद (दोहा)

दरसन सकल प्रकार पुनि इनै तिहुँन मैँ मानि ।
चहूँ भेद मैँ 'दास' पुनि दसौ दसा पहिचानि ॥ ३०० ॥
लालस चिंता गुनकथन स्मृति उद्वेग प्रलाप ।
उन्मादहि ब्याधिहि गनौ जड़ता मरन सँताप ॥ ३०१ ॥

लालसा दशा

नैन बैन मन मिलि रह्यो चाह्यो मिलन सरीर ।
कथन-प्रेम लालस दसा उर अभिलाष गभीर ॥ ३०२ ॥

२९८] देखै–देखौँ (लीथो भार०) । न अँदेस–ना अँदेसो (भार०) । तेरे०–तेरो है (वही) ।

[२९९] लता०–डहडह तरु डारि गहगह भयौ है गगनु कैसो आयो (लीथो) । गगन०–गजन कै आयो (भार०) । पहपह–यहयह (वही) । रह०–हहर (लीथो) ।

[३०१] लालस–लालच (सर०) ।

[३०२] रह्यो–रहे (भार०) । अभिलाष–भ्रमि लाष (सर०) ।

यथा (सवैया)

बारहौ मास निरास रहै ज्यौं चहै वहै चातिक स्वाति के बुंदहि ।
'दास' ज्यौं कंज के भानु को काम बिचारै न घाम के तेज के तुंदहि ।
ज्यौं जल ही मैं जियैं झषियाँ लखियाँ जउ संगिन के दुखदुंदहि ।
त्यौं तरसाइ मरैं सखियाँ अँखियाँ चहैं मोहनलाल मुकुंदहि ॥३०३॥

चिंतादशा-लक्षण (दोहा)

मनसूबनि तें मिलन को जहँ संकल्प बिकल्प ।
ताहि कहैं चिंता दसा जिनकी बुद्धि न अल्प ॥ ३०४ ॥

यथा (सवैया)

ए बिधि जौ बिरहागि के बान सौं मारत हौ तौ इहै बर माँगौं ।
जौ पसु होउँ तऊ मरि कैसहूँ पावँरी ह्वै हरि के पग लागौं ।
'दास' पखेरुन मैं करौ मोर जु नंदकिसोर-प्रभा अनुरागौं ।
भूषन कीजिये तौ बनमालहि जातें गोपालहि के हिय लागौं ॥३०५॥

(कवित्त)

काहू कौं न देती इन बातन को अंत लै
इकंत कंत मानिकै अनंत सुख ठानती ।
ज्यौं को त्यौं बनाइ फेरि हेरि इत उत
हियराहि मैं दुराइ गृहकाजनि बितानती ।
'दासजू' सकल भाँति होती सुचिताई फेरि
ऐसी दुचिताई मन भूलिहूँ न आनती ।
चित्र के अनूप बृजभूप के सरूप कौं
जौ क्योंहूँ आपरूप बृजभूप करि मानती ॥३०६॥

---

[३०३] तुदहि–तुंगहि (भार०)। लखियाँ०–लखि आजउ संगति के दुख बूंदहि (वही); लखि आजउ संगनि के दुखदुंदहि (लीथो)।

[३०४] न अल्प–अनल्प (भार०)।

[३०५] बर–भर (भार०)।

विकल्पचिंता, यथा (सवैया)

कोठनि कोठनि वीच फिर्‌यो वह भेष बनाइ भुलावनवारो।
ऊपरी बात सुनाइकै आपनी लै गयो भीतरी भेद हमारो।
'दास' लियो मन ओटि अगोटि उपाइ मनोज महीप जुझारो।
टूटै न क्यों सखी लाज-गढ़ी पहिले ही गयो सुधि लै हरि कारो ॥३०७॥

गुणकथन (दोहा)

'दास' दसा गुनकथन मैं सुमिरि सुमिरि तिय पीय।
अँग अंगनि बरनै सहित रसरंगनि रमनीय ॥ ३०८ ॥

यथा (सवैया)

चंद सी आनन की चटकीलता कुंदन सी तन की छबि न्यारी।
मंजु मनोहर बार की बानक जागे कि वै अँखियाँ रतनारी।
होत बिदा गहि कंठ लगावत बाहु बिसाल प्रभा अधिकारी।
वे सुधि श्रीमनमोहन की मन आनत ही करैं बेसुधि भारी ॥३०९॥

स्मृति दशा (दोहा)

जहँ इकाग्रचित करि धरै मनभावन को ध्यान।
सुमृति दसा तेहि कहत हैं लखि लखि बुद्धिनिधान ॥ ३१० ॥

यथ ा(सवैया)

स्याम सुभाय मैं नेहनिकाय मैं आपहू ह्वै गए राधिका जैसी।
राधे करै अवराधे जु माधौमै प्रेमप्रतीति भई तन तैसी।
ध्यान ही ध्यान तें ऐसो भयो अब कोऊ कुतर्क करै यह कैसी।
जानत हौं इन्हैं 'दास' मिल्यो कहूँ मंत्र महा परपिंड-प्रवैसी ॥३११॥

---

[३०७] काहू–काहे (लीथो)। मन–है मै (लीथो)। ओटि–यँ ौटि (भार०); पोटि (सर०)। जुझारो–जु मारो (वही)। टूटै–छूटै (वही); फूटै (लीथो)।

[३०९] लगावत–लगावहु (लीथो); लगावन (भार०)।

[३११] राधे०–राधो करै अब राधो (सर०)।

पुनः

राधिका आधिक नैननि मूँदि हिये ही हिये हरि की छबि हेरति।
मोरपखा मुरली बनमाल पितंबर पावँरी मैं मनु फेरति।
गाइ चराइ हिये ही हिये लखि साँझ समै घरघाइ कोँ घेरति।
'दास' दसा निज भूले प्रकास हरे ही हरे ही हिया हियो टेरति ॥३१२॥

उद्वेग दशा (दोहा)

जहाँ दुखदरूपी लगै सुखद जु बस्तु अनेग।
रहिबो कहुँ न सोहात सो दुसह दसा उद्वेग ॥ ३१३ ॥

यथा (कबित्त)

एरी बिन प्रीतम प्रकृति मेरी औरै भई
तातेँ अनुमानौँ अब जीवन अलप है।
काल की कुमारी सी सहेली हितकारी लगै
ग.त रसवारी मानो गारी की जलप है।
बिष से बसन लागैँ आगि से असन जारैँ
जोन्ह को जसन कला मानहु कलप है।
दसौ दिसि दावा सी पजावा सी पवरि भई
आवा सी अजिर-औनि तावा सी तलप है ॥३१४॥

पुनः (सवैया)

याहि खराद्यो खराद चढ़ाइ बिरंचि बिचारि कछू मलिनाई।
चूर वहै बगरयो चहुँ ओर तरैयन की जु लसै छबि छाई।
'दास' न ये जुगुनू मग फैले वहै रज सी इतहूँ भरि आई।
चोखन है कियो घाम अनोखो ससी न अली यह है सबिताई ॥३१५॥

---

[३१२] चराइ–बजाइ (भार०); बराइ (लीथो)। घरघाइ०–घर घाइनि (लीथो)। हियो०–हरी हरी (वही)।

[३१३] दुखद–दुःख (लीथो, भार०)।

[३१४] अनुमानौँ–अनुमान्यौ (लीथो)। लागैँ–जारैँ (भार०)। जारैँ–लागैँ (वही)। कला–काल (वही)।

[३१५] वहै रज०–के चूर इहै है (लीथो)। भरि–झरि (सर०)। चोखन०–किये घाम अनोखो ससी न अली जनु जानि परै (लीथो)।

प्रलाप दशा (दोहा)

सखिजन सो कै जड़नि सो तन मन भर्‍यो सँताप ।
मोह बैन बकिबो करै ताकौं कहत प्रलाप ॥ ३१६ ॥

यथा (सवैया)

तिहारे बियोग तेँ द्योस बिभावरी बावरी सी भई डावरी डोलै ।
रसाल के बौरनि भौंरनि बूझती 'दास' कहाँ तज्यो नागर नौलै ।
खरी खरी द्वार हरी हरी डार चितै बररातो बरी बरी हौलै ।
अरी अरी बीर न री न री धीर मरी मरी पीर घरी घरी बोलै ॥३१७॥

पुनः

चंदन पंक लगाइकै अंग जगावति आगि सखी बरजोरै ।
तापर 'दास' सुबासन डारिकै देति है बारि बयारि झकोरै ।
पापी पपीहा न जीहा थकै तुव पी पी पुकार करै उठि भोरै ।
देत कहा है दहे पर दाहु गई करि जाहु दई के निहोरै ॥३१८॥

पुनः

जाति मैँ होति सुजाति कुजातिन काननि फोरि करौ अधसाँसी ।
केवल कान्ह की आस जियौँ जग 'दास' करौ किन कोटिन हाँसी ।
नारि कुलीन कुलीननि लै रमै मैँ उनमैँ चहौँ एक न आँसी ।
गोकुलनाथ के हाथ बिकानी हौँ सो कुलहीन तौ हौँ कुलनासी ॥३१९॥

उन्माद दशा (दोहा)

सो उन्माद दसा दुसह धरै बौरई साज ।
रोइ रोज बिनवत उठै करै मोहमै काज ॥ ३२० ॥

यथा (सवैया)

क्योँ चलि फेरि बचावौ न क्योँहूँ कहा बलि बैठे बिचारौ बिचारनि ।
धीर न कोऊ धरै बलबीर चढ़्यो ब्रजनीर पहार पगारनि ।

---

[३१६] जड़नि–डटनि (सर०) ।
[३१७] तेँ–से (भार०) । मरी०–भरी भरी (वही) ।
[३१८] करै–कहै (सर०) । कहा०–कहे हा (भार०) ।
[३१९] सुजाति०–सुजानि कुजाननि (लीथो) । लै–सै (भार०) ।
सो–वे (वही) ।

'दासजू' राख्यो बड़े बरषा जिहि छाँह मैं गोकुल गाइ गुआरनि।
छैलजू सैल सों बूड्यो चहै अब भावती की अँसुआन की धारनि ॥३२१॥

पुनः (कबित्त)

तो विन बिहारी मैं निहारी गति औरई मैं
बौरई के बृंदनि समेटत फिरत है।
दाड़िम के फूलन मैं 'दास' दारयौ दानो भरि
चूमि मधु रसनि लपेटत फिरत है।
खंजनि चकोरनि परेवा पिक मोरनि
मराल सुक भौंरनि समेटत फिरत है।
कासमीर हारनि कौं सोनजुही भारनि कौं
चंपक की डारनि कौं भेटत फिरत है ॥३२२॥

व्याधिदशा (दोहा)

ताप दुबरई स्वास अति व्याधि दसा मैं लेखि।
आहि आहि बकिबो करै त्राहि त्राहि सब देखि ॥ ३२३ ॥

यथा (कबित्त)

एरे निरदई दई दरस तौ दे रे वह
ऐसी भई तेरे या बिरह-ज्वाल जागिकै।
'दास' आस-पास पुर नगर के बासी उत
माह हू को जानति निदाहै रह्यो लागिकै।
लै लै सीरे जतन भिगाए तन ईठि कोऊ
नीठि ढिग जावै तऊ आवै फिरि भागिकै।
दीसी मैं गुलाब-जल सीसी मैं मगहि सूखै
सीसीयौ पघिलि परै अंचल सौं दागिकै ॥३२४॥

क्षमता, यथा (सवैया)

कोऊ कहै करहाट के तंत मैं कोऊ परागन मैं उनमानी।
ढूँढहु री मकरंद के बुंद मैं 'दास' कहै जलजा - गुन ज्ञानी।

---

[३२१] की–के (भार०)। की–के (वही)।
[३२२] बृंदनि–बुंदनि (सर०)। समेटत–अमेटत (भार०)। दानो–दोनों (लीथो, भार०)।
[३२५] करहाट०–करहाटक (भार०)। रमा–रमी (वही)।

छामता पाइ रमा ह्वै गई परजंक कहा करै राधिका रानी।
कौल मैँ 'दास' निवास किये है तलास कियेहूँ न पावत प्रानी ॥३२५॥

जड़ता दशा (दोहा)

जड़ता मैँ सब आचरन भूलि जात अनयास।
तिमि निद्रा बोलनि हँसनि भूख प्यास रसत्रास ॥ ३२६ ॥

यथा (सवैया)

बात कहै न सुनै कछु काहू सोँ वा छिन तेँ भई वैसियै सूरति।
साठौ घरी परजंक परी सु निमेष भरी अँखियानि सोँ घूरति।
भूख न प्यास न काहू की त्रास न पास अतीन सोँ 'दास' कछू रति।
कौने मुहूरत सोने कही तुम कौने की है यह सोने की मूरति ॥३२७॥

मरण दशा (दोहा)

मरन दसा सब भाँति सोँ ह्वै निरास मरि जाइ।
जीवनमृत कै बरनिये तहँ रसभंग बराइ ॥ ३२८ ॥

यथा (सवैया)

नारी न हाथ रही उहि नारी के मारनी मोहि मनोज महा की।
जीवन-ढंग कहा तेँ रह्यो परजंक मैँ अंग रही मिलि जाकी।
बात को बोलिबो गात को डोलिबो हेरै को 'दास' उसासउ थाकी।
सीरी ह्वै आई तताई सिधाई कहो मरिबे मैँ कहा रह्यो बाकी ॥३२९॥

इति श्रीभिखारी दासकायस्थकृतः श्रृंगारनिर्णयः समाप्तः।

---

[३२६] तिमि—तम (भार०)।
[३२७] छिन—दिन (लीथो, भार०)। निमेष—निभेष (सर०)।
सोने कही—लोने कही (भार०)।
[३२८] मृत—मत (सर०)।
[३२९] अंग—आधे (भार०)। सीरी—भोरी (लीथो)।

छंदार्णव

छंदार्णव

१

(त्रिभंगी)
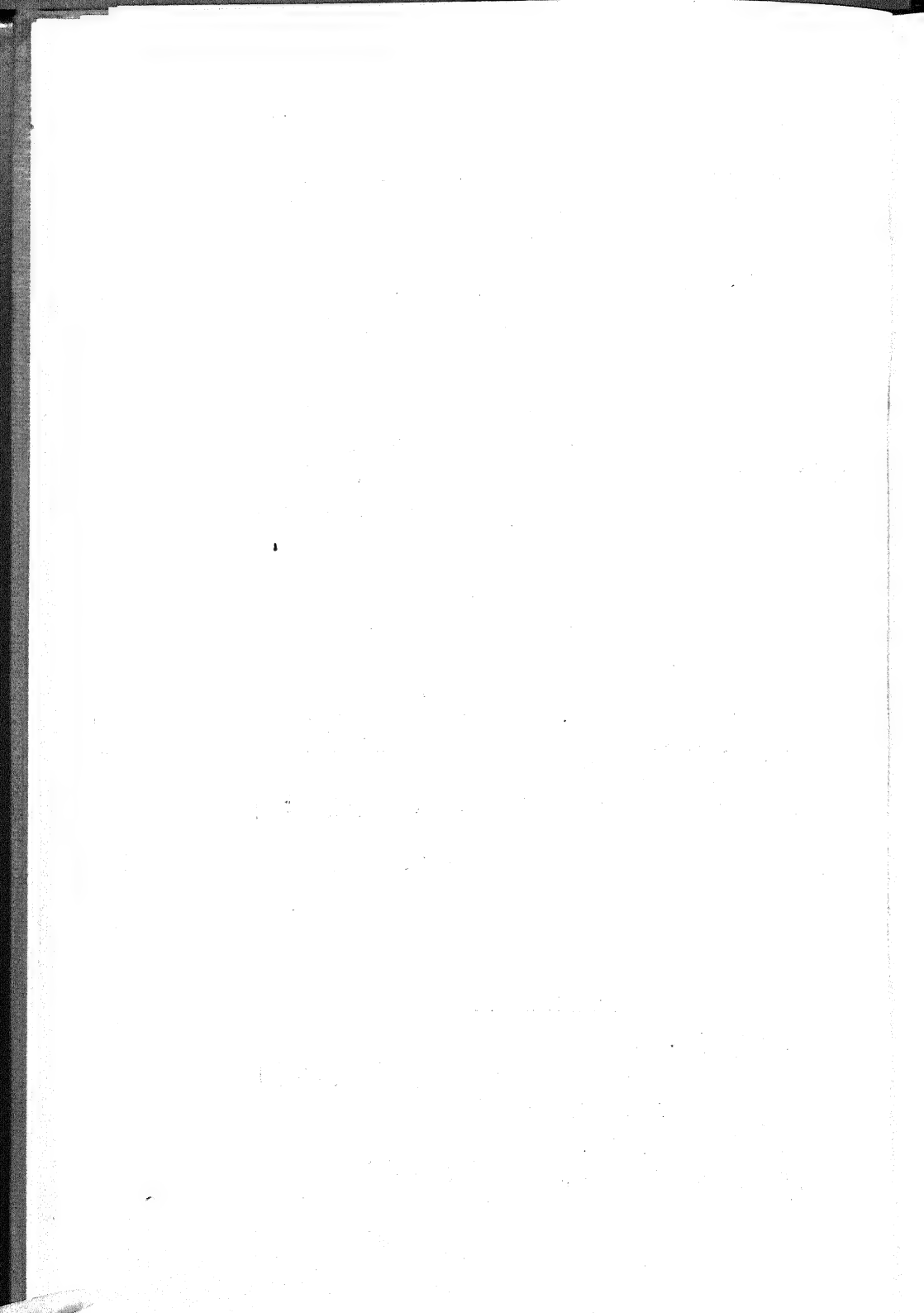
करि-बदन-बिमंडित ओज-अखंडित पूरन पंडित ज्ञानपरं।
गिरि-नंदिनि-नंदन असुर-निकंदन सुर-उर-चंदन कीर्तिकरं।
भूषनमृगलक्षन बीर-बिचक्षन जन-प्रन-रक्षन पासधरं।
जय जय गन-नायक खल-गन-घायक 'दास'-सहायक बिघनहरं ॥१॥

(दंडक)

एक रद है न सुभ्र साखा बढ़ि आई
लंबोदर मैं बिबेकतरु जो है सुभ्र बेस को।
सुंडादंड कै तव हथ्यारु है उदंड यह
राखत न लेस अघ बिघन असेष को।
मद कहौ भूलि न झरत सुधासार यह
ध्यानही तैं ही को दृढ़ हरन कलेस को।
'दास' गृह-बिजन बिचारो तिहूँ तापनि को
दूरि को करनवारो करन गनेस को ॥२॥

(छप्पय)

श्रीबिनतासुत देखि परम पटुता जिन्ह कीन्हेउ।
छंदभेद प्रस्तार बरनि बातनि मन लीन्हेउ।
नष्टोदिष्टनि आदि रीति बहु बिधि जिन भाख्यो।
जैबो चलत जनाइ प्रथम बाचापन राख्यो।
जो छंद भुजंगप्रयात कहि जात भयो जहँ थल अभय।
तिहि पिंगल नागनरेस की सदा जयति जय जयति जय ॥३॥

---

[२] तैं ही—तेहि (नवल २, वेंक०)। को करन—करन को (नवल०, वेंक०)।

(दोहा)

जिन प्रगट्यो जग मैँ बिबिध छंदनाम अभिराम।
ताहि बिष्नुरथ कौँ करौँ बिबि कर जोरि प्रनाम ॥४॥

(कबित्त)

अभिलाषा करी सदा ऐसनि का होय बित्थ
सब ठौर दिन सब याही सेवा चरचानि।
लोभालई नीचे ज्ञान हलाहल ही को अंसु
अंत है क्रिया पाताल निंदा रस ही को खानि।
सेनापति देवीकर सोभागन ती को भूप
पन्ना मोती हीरा हेम सौदा हास ही को जानि।
हीअ पर देव पर बदे जस रटै नाउँ खगासन
नगधर सीतानाथ कौलपानि ॥५॥

(दोहा)

या कबित्त अंतरबरन, लै तुकंत द्वै छंडि ।
'दास' नाम कुल ग्राम कहि, रामभगतिरस मंडि ॥६॥
प्राकृत भाषा संसकृत, लखि बहु छंदोग्रंथ ।
'दास' कियो छंदारनव, भाषा रचि सुभ पंथ ॥७॥

(विजया)

'दास' गुरू लघु णो ढ ड ठै ट गनाख्यनि भेदनि उच्चरि जानै।
जानै गनागन को फल मत्त बरन्न पथारनि कौँ करि जानै।
नष्ट उदिष्ट 'रु मेरु पताक बिमर्कटि सूचिन कौँ भरि जानै।
बृत्ति औ जाति समुक्तक दंडक छंदमहोदधि सो तरि जानै ॥८॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मंगलाचरणवर्णनं

नाम प्रथमस्तरंगः ॥१॥

---

[६] राम-नाम (नवल०, वेंक०)।

[८] णो०-णो भनि संख्य बिधाननि (सर०); णो ढ ड ठ ट्ट गनाष्यनि (लीथो); णोढ़ ढढ ढग नाष्यनि (नवल १); णो ढ़ ढढ़ ढग नाष्यनि (नवल २, वेंक०)।

२

अथ गुरु-लघु-विचार (दंडक)

आ ई ऊ ए आदि स्वर बरन मिलेहूँ एहूँ
बिंदुजुक्त औ सँजुक्त पर गुरु बंक खाँचि।
अ इ उ क कि कु ऐसे लघु सुधे बिधि कीन्हो
कहति अक्षरनि जो रसना द्रुतहि नाँचि।
र ह ल यो संजुक्त परहु बरनन्ह पर्‍यो
कालिह ज्यों तौ लहु लहै गुरु कों गुरुवै बाँचि।
एकमत्त लहु भनि गुरु कों दुमत्त गनि
याही में उदाहरन हेरि लै हृदय जाँचि ॥१॥

प्राकृते, यथा

अरे रे बाहहि कान्ह नाव (छोटि) डगमग कुगति न देहि।
तैं इथ नै संतारि दै जो चाहहि सो लेहि ॥२॥

(दोहा)

कहुँ कहुँ सुकवि तुकंत मैं, लघु कों गुरु गनि लेत।
गुरुहू कों लघु गनत हैं, समुझत सुमति सचेत ॥३॥

लघु को गुरु, यथा संस्कृते (श्लोक)

अद्यापि नोज्झति हरः किल कालकूटं
कूर्मो बिभर्त्ति धरणीं खलु पृष्ठकेन।
अम्भोनिधिर्वहति दुःसहवाडवाग्नि-
मंगीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति ॥४॥

तिलक—छंद बसंततिलकु है याके तुकंत में गुरु चाहिये लघु है सो गुरु गनिबी।

---

[१] आ०—ई ऊ आ ए (सर०), ई ऊ आ ये (लीथो, नवल०, वेंक०)। द्रुतहि—दुतहि (लीथो, नवल १); बुतहि (नवल २, वेंक०)। परहु०—बरनन्ह परन मानि नित्यै गुरु लघु लघु गुरु कों (लीथो, नवल०, वेंक०)। हृदय—हृदय में (नवल २, वेंक०)।

[४] लघु को गुरु—गुरु को लघु (लीथो, नवल० वेंक०)। तुकंत—तुक (वही)। है सो—है (वही)। गनिबी—गनिबो (वही)।

गुरु को लघु, यथा देव को (कवित्त)

पीछे पंखा चौंरवारी ज्यौं की त्यौं सुगंधवारी
ठाढ़ी बाएँ धाएँ घने फूलनि के हार गहैं।
दाहिने अतर और अँमर तमोर लीन्हे
सामुहे लपेटे लाज भोजन के थार गहैं।
नित के नियम हितू हित के बिसारे 'देव'
चित के बिसारे बिसराए सब बार गहैं।
संपा घन बीच ऐसी चंपा बन बीच फूली
डारि सी कुँवरि कुँभिलाति फूली डार गहैं ॥ ५ ॥

तिलक—छंद रूपघनाक्षरी है, याके तुकंत में गुरु है सो लघु चाहिये लघु ही गनिबी।

लघुनाम (दोहा)

संख मेरु काहल कुसुभ, करतल दंड असेषु।
सब्दगंध बर सर परस, नाम ल लहु को रेखु ॥ ६ ॥

गुरुनाम

किंकिनि नूपुर हार फनि, कनक चौंर ताटंक।
केईरो कुंडल बलय, गो मानस गुरु बंक ॥ ७ ॥

द्विकलनाम

णगन दुकल द्वै भेद सौं, प्रथम नाम गुरु जानि।
निज प्रिय सुप्रिय परमप्रिय, पिय बिय लघुहि बखानि ॥ ८ ॥

---

[५] गुरु को लघु–लघु को गुरु (लीथो, नवल०, वेंक०)। बार–बारि (वही)। गुरु है०–लघु चाहिए गुरु है सो लघु ही गनिबो (वही)।

[६] कुसुभ–कुसुम (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[७] केईरो–कोऊरो (नवल०, वेंक०)।

[८] णगन–नगन (सर०, लीथो, नवल १, वेंक०)। द्वै–है (लीथो, नवल०, वेंक०)। सौं–सो (लीथो, नवल०, वेंक०)। सुप्रिय–सप्रिय (लीथो०, नवल १, वेंक०)। पिय–प्रिय (सर०)।

आदिलघु त्रिकलनाम ।ऽ

तोमर तुंमर पत्त सर, धुज चिरु चिह्न चिराल ।
पवन बलय पट आदि लघु, त्रिकल नूत की माल ॥ ९ ॥

आदिगुरु त्रिकलनाम ऽ।

तूर समुद निर्बान कर, तालो सुरपति नंद ।
नाम आदिगुरु त्रिकल को, पटह ताल अरु चंद ॥१०॥

[त्रिलघु] त्रिकलनाम ।।।

नारी रसकुल भामिनी, तंडव भास प्रमान ।
नाम त्रिलघु को जानि पुनि, त्रिकलहि ढगन बखान ॥११॥

द्विगुरु [चौकल] नाम ऽऽ

सुमति रसिक रसनाग्र पुनि, कहि मनहरन समान ।
कुंतीपुत्तो सुरबलय, कर्न दोइ गुरु जान ॥१२॥

अंतगुरु चौकलनाम ।।ऽ

कमल रतन कर बाहु भुज, भुजअभरन अभिराम ।
गजअभरन प्रहरन असनि, चकल अंतगुरु नाम ॥१३॥

[मध्यगुरु चौकलनाम] ।ऽ।

भूपति गजपति अस्वपति नायक पौन मुरारि ।
चक्रवती सु पयोधरो, मध्यगुरू कल चारि ॥१४॥

[आदिगुरु चौकलनाम] ऽ।

गंड दहन बलभद्रपद, नूपुर जंघा पाइ ।
तात पितामह आदिगुरु, चौकल नाम सुभाइ ॥१५॥

[सर्वलघु चौकलनाम] ।।।।

बिप्र पंचसर परमपद, सिखर चारि लघु जाति ।
डगन चकल कहि चौकलहि, गजरथ तुरग पदाति ॥१६॥

---

[९] तुंमर–तुंबर (सर०) । धुज–धुन (नवल०, वेंक०) । बलय–बलट (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

[१०] अरु–अत (नवल०, वेंक०) ।

[१२] सुमति–सुनति (नवल०, वेंक०) । पुत्तो–पूतो (लीथो, नवल०); पूता (वेंक०) ।

[१३] कमल०–कमलातन (लीथो०, नवल०, वेंक०) ।

पंचकलनाम ।ऽऽ

सुरनरिंद उडुपति अहित, दंती दंत तलंप ।
मेघ गगन गज आदिलघु, पंचकलहि कहि झंप ॥१७॥

ऽ।ऽ

पक्षि बिडाल मृगेंद्र अहि, अमृत जोध लक लक्ष ।
बीन गरुड़ कहि मध्यलघु, पंचकलहि परतक्ष ॥१८॥

पंचकल के क्रम तेँ नाम

इंद्रासन बीरो धनुक, हीरो सेखर फूल ।
अहि पाइक गनि क्रमहिँ तेँ, नाम पंचकल तूल ॥१९॥
ठगन पकल पँचकलहि कहि, टगन षटकलहि लेखि ।
ताहि छकल के क्रमहिँ तेँ, भेद तेरहो देखि ॥२०॥

षट्कल के नाम प्रतिभेद क्रम तेँ

हर ससि सूरज सक्र अरु, सेषो अहि कमलाषि ।
ब्रह्म किंकिनी बधु ध्रुव, धर्म सालिचर भाषि ॥२१॥

अथ वर्णगण

म न य भ गन सुभ चारि हैँ, र स ज त अगनौ चारि ।
मनुजकबित के प्रथम तुक, कीजै इन्हैँ बिचारि ॥२२॥
म तिगुरु न तिलघु भादि गुरु, यादिलघू सुभ दानि ।
महि अहि ससि जल क्रमहिँ तेँ, इष्टदेवता जानि ॥२३॥
ज गुरुमध्य रो मध्यलघु, स गुरु अंत त लअंत ।
इते असुभ गन रवि अग्गिनि, पवन ख देव कहंत ॥२४॥

द्विगणविचार

म न हित य भ जन ज तहि उद, र स रिपु उर अवरेखि ।
कबित आदि कुगनहि परेँ, दुगन बिचारहि देखि ॥२५॥

---

[१९] धनुक-धनुष (नवल २, वेंक०) ।
[२२] अगनौ-अगुनो (लीथो०, नवल०, वेंक०) ।
[२५] दुगन-द्विगुण (नवल २, वेंक०), दुगुन (लीथो, नवल १)

जन हित अति नीके त कछु, रिपु उदास मिलि मंद।
रिपु उदास ही जौ परैं, तौ सब भाँति कुबंद ॥२६॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे गुरुलघुगणागणवर्णनं

नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

३

अथ मात्राप्रस्तार-वर्णन

सप्तकलप्रस्तार (सवैया)

द्वै द्वै कलानि को बंक बनै पहिले उबरे लघु आदि करो जू।
भेद बढ़ैबे को सीस के आदि गुरू के तरे लघु एक धरो जू।
और जथा प्रति पंक्ति खचै बचैं पीछे गुरू लघु लेखि भरो जू।
याही बिधान तें सर्ब लघू लगि पूरन मत्तप्रथार थरो जू ॥१॥

प्राकृते, यथा

पढमं गुरू हेट्ठट्ठाणे लहुआ परिट्ठवेहु।
अप्प बुद्धि ये सरिसा (सरिसा)पंती उघरिया गुरू लहू देहु ॥२॥

(दोहा)

भयो जानि प्रस्तार को, क्रम तें दीजै अंक।
संख्या नष्ट उदिष्ट की, कीजै उतर निसंक ॥३॥
इतने कल के भेद हैं, कितनो पूँछै कोइ।
पूर्बजुगल सरि अंक दै, जानै संख्या होइ ॥४॥

---

[२६] कुबंद–कुबंत (सर०)।

[१] बंक–बंध (नवल०, वेंक)। पंक्ति०–देखि लिखो (सर०)।

[२] पढमं–पटम (लीथो, नवल०, वेंक०)। ठवेहु–ठवहु (सर०)।

[३] तें–सों (लीथो, नवल०, वेंक०)। उतर–उदर (नवल २, वेंक०)।

पूर्वयुगल अंक (दंडक)

जै कल को भेद कोऊ पूँछै तेती कला कीजै
ताके पर अंक दीजै क्रमहीँ तैँ एक दोइ ।
एक दोइ जोरि तीनि लिखि लीजै तीजे पर
तीनि दोइ जोरि आगे पाँच लिखि जिय जोइ ।
'दास' पाँच पीछे तीनि जोरि आगे आठ लिखि
याही बिधि लिखे जैये कहाँ लौँ बतावै कोइ ।
जितनी कला के पर जेतो अंक परै यह
जानि लीजै तेते पर प्रस्तार को अंत होइ ॥५॥

सप्तकलरूपे, यथा

१ २ ३ ५ ८ १३ २१
| | | | | | |

अथ नष्टलक्षणं (दोहा)

इते अंक पर होत है, भेद कहौ किहि रूप ।
उतर हेत यहि प्रस्न के, नष्ट रच्यो अहिभूप ॥६॥

मात्रानष्ट की अनुक्रमणी (दंडक)

जै कल मैँ भेद पूँछै ततनीयै कला कीजै
तापै लिखि पूरबजुगल अंक लीजिये ।
पूछ्यो अंक अंत मैँ घटाइ बाकी हाथ राखि
तामैँ लिखे अंकनि घटैबे रस भीजिये ।
जौन यामैँ घटै करौ ताके तर आगिली
कला लै गुरु 'दास' बचैँ योँ ही फेरि कीजिये ।

---

[५] पाँच–खैँचि (नवल०, वेंक०); षाँच (लीथो); खाँच (नवल १)। दास–दस (नवल २, वेंक ०)।

[७] पूँछै–पूछयौ (सर०); पूँछे (नवल २, वेंक०)। रीते०–रीत्यौ परेँ बीत्यौ (सर०)। ताके०–ताकी क्रिया दसयो पूँछ्यौ है सो (सर०)। मेँ–से (नवल २, वेंक०)। घटतो–घटे तौ (लीथो, नवल०, वेंक०)। सब–रस (नवल०, वेंक०)। रह्यो–रहे (सर०)।

रीते पर्‍यो बीते नष्टकर्म बाकी लघु ही है

पूछ्यो जिन तिनकोँ देखाइ रूप दीजिये ।।७।।

अस्य तिलकं—काहूँ पूँछ्यो सप्तकल मेँ दसयोँ रूप कैसो, ताके प्रस्न को अंक दस सो इक्कीस मेँ घट्यो, बाकी रहे इग्यारह, तामेँ तेरह नहीँ घटतो, आठ घट्यो, सो तेरह की तर की कला लैकै गुरु भयो, बाकी रहे तीनि, तामेँ तीनिहीँ घट्यो, सो पाँच के तर की कला को लैकै गुरु भयो और सब दुहूँ वोर लघु ही रह्यो । (।।ऽऽ।)

अथ मात्राउदिष्टलच्छणं (कुंडलिया)

।ऽऽऽ	१
ऽ।ऽऽ	२
।।।ऽऽ	३
ऽऽ।ऽ	४
।।ऽ।ऽ	५
।ऽ।।ऽ	६
ऽ।।।ऽ	७
।।।।।ऽ	८
ऽऽऽ।	९
।।ऽऽ।	१०
।ऽ।ऽ।	११
ऽ।।ऽ।	१२
।।।।ऽ।	१३
।ऽऽ।।	१४
ऽ।ऽ।।	१५
।।।ऽ।।	१६
ऽऽ।।।	१७
।।ऽ।।।	१८
।ऽ।।।।	१९
ऽ।।।।।	२०
।।।।।।।	२१

कहिये केते अंक पर 'दास' रूप यहि साज ।
करि उदिष्ट ताको उतर देन कह्यो अहिराज ।
देन कह्यो अहिराज पूर्वजुअलंक कलनि पर ।
लघु के सीसहि सीस गुरू के ऊपरहूँ तर ।
पुनि गुर सिर को अंक जोरिकै ठीकहि गहिये ।
अंत अंक सु घटाइ बचै बाकी सो कहिये ।।८।।

१ २ ३ ८ २१
। । ऽ ऽ ।
५ १३

अस्य तिलकं—सप्त कल मेँ यह रूप लिखि पूँछ्यो जो कौन सो है । ताके पर अंक दियो है गुरु के सिर तीनि औ आठ पर्‍यो सो इग्यारह इकईस मेँ घट्यो, बाकी दसयोँ भेद है ।

मात्रामेरुलच्छणं (दोहा)

किते एक गुरुजुक्त हैँ, किते हैँ ति गुरुजुक्त ।
ताको उत्तर मेरु करि, देहु अहीपति उक्त ।।९।।

---

[८] कौन–कैसरो (सर०) ।

अनुक्रमणी (चौपाई)

द्वै कोठा दोहरो लिखि लीजै । तातर दोहरो तीन ठवीजै ।
तातर दोहरो चारि बनायो । औ जित चाहो तितो बढ़ायो ॥१०॥
कोठनि आदि बिषम जो पैये । एकै एक आँक लिखि जैये ।
सम कोठनि की आदि जो परो । द्वै ति चारि यहि क्रम तैँ भरो ॥११॥
पंति अंत इक इक लिखि आवो । तब रीतन भरिबो चित लावो ।
सिर-अंके तसु सिर पर अंके । जोरि भरहु क्रम तैँ निरसंके ॥१२॥

षष्ठमात्रामेरु

२	१	१	२		
३	२	१	३		
४	१	३	१	५	
५	३	४	१	८	
६	१	६	५	१	१३
७	४	१०	६	१	२१

पहिलो कोठ दुकल की जानै । दुतिय त्रिकल की बात बखानै ।
यहि बिधि करै भेद सब जाहिर । चहहु ता जाहु अंक दै बाहिर ॥१३॥
छठए चारि कोष्ठ जो परै । सप्त कलहि उलटैँ उद्धरै ।
सब लहु एक एक गुरु छ है । दस दुग चारि त्रि गुरुजुत रहै ॥१४॥
सब लहु अंत अंक अहि उक्त । चलि गति बाम कहो गुरुजुक्त ।
इहि बिधि करो जिते को चहो । सकल जोरि संख्याहू गहो ॥१५॥

पताकालक्षणं (दोहा)

कह्यो जिते गुरजुक्त तुम, ते हैँ किहि किहि ठौर ।
उतर हेत इहि प्रस्न के, रचो पताका डौर ॥१६॥

पताका की अनुक्रमणी (चौपाई)

जै कल की पताक जिय लायो । खंडमेरु ताको अलगायो ।
ताही संख्या कोठा करिये । नाम पताका पाँती खरिये ॥१७॥

---

[११] तैँ—तेहि (सर०) ।
[१६] रचो—रचे (नवल २, वेंक) ।
[१७] लायो—ल्यावो (सर०) । अलगायो—अलगावो (वही) ।

(अरिल्ल)

पुरुबजुअल सरि अंक भिन्न लिखि देखिये।
अंत अंक इक अंत कोठ तेहि रेखिये।
तामहि क्रम तैं इक इक अंक घटाइये।
वा ढिग अध तैं दुतिय पंक्ति लिखि जाइये ॥१८॥
तृतीय पंक्ति मैं द्वै द्वै जोरि कमी करो।
चौथि पंक्ति मैं तीनि तीनि चित मे धरो।
इन भाँतिन प्रति पंक्ति एक बढ़ि अंक जू।
घटै पताका रूप लिखो निरसंक जू ॥१९॥

(दोहा)

गनना होइ नहीं न क्रम, आयो अंक न आउ।
करि पताक प्रस्तार मे, सब गुरुजुक्त देखाउ ॥२०॥

४	१०		६		१
०	१	३	८	२१	०
	२	५	१३	१	
	४	६	१६	२	
	९	७	१८	३	
		१०	१९	५	
		११	२०	८	
		१२		१३	
		१४		२१	
		१५			
		१७			

।।।ऽऽ ३
।।ऽ।ऽ ५
।ऽ।।ऽ ६
ऽ।।।ऽ ७
।।ऽऽ। १०
।ऽ।ऽ। ११
ऽ।।ऽ। १२
।ऽऽ।। १४
ऽ।ऽ।। १५
ऽऽ।।। १७

द्वै कि तीनि गुरुजुतनि जो, लिखो चहो इक ठौर।
सिखि पताक प्रस्तार बिधि, जानो औरौ और ॥२१॥

(कुंडलिया)

सब लघु सब गुरु लिखि ठयो प्रथम भेद इहि भाँति।
पहिले गुरुतर लघु करहि पुनि करि सरिसै पाँति।
पुनि करि सरिसै पाँति उलटि लघु तर गुरु लिखिकै।
तजि आयो गुरु आदि 'दास' इहि रीतिहि सिखिकै।

[१८] पंक्ति-प्रति (लीथो, नवल०, वेंक०)।

इक इक गुरु इहि भाँति आदि दिसि ल्यावहि तब लहु ।
जब लगि सब गुरु आदि परै आगे करि सब लहु ॥२२॥

अस्य तिलकं—सत कल में द्वै गुरुजुक्त को प्रस्तार जाकी संख्या पताका के दस कोठे में है ।

(दोहा)

पताकाहि कौं देखिकै, यामें दीजै अंक ।
उद्दिष्टो प्रस्तार में कीजै सही निसंक ॥२३॥

इति प्रस्तार

अथ मर्कटीलक्षणं (गीतिका)

छह पंक्ति कोठनि खैंचिकै प्रतिपंक्ति सिर चितु दीजिये ।
तहँ बृत्तिभेद 'रु मात्रबर्न लहू गुरू लिखि लीजिये ।
तिन आदि कोठनि एक एकनि ठानि गुरु ढिग सून है ।
पुनि बृत्ति कोठ दुआदि गनती भरिय घटिय न ऊन है ॥२४॥
लखि भेद पंक्ति बिचारि भरिये पुरुबजुअलै अंक ही ।
करि बृत्ति भेदहि गुनन पुरवहु मात्रपंक्ति निसंक ही ।
लघु पंक्ति एक जु अंक सो गुरुपंक्ति में लिखि लेहु जू ।
तेहि मात्रपंक्ति घटाइ बाकी बरन में धरि देहु जू ॥२५॥
सोइ बर्न पंक्तिहु में घटै लघुपंक्ति में लिखि आनिये ।
तेहि आनिकै गुरुपंक्ति में घटना वहै फिरि ठानिये ।
प्रस्तार प्रति जो भेदमात्रा लहू गुरु की ठीक है ।
तेहि बृत्ति कोठनि संग मर्कटजाल कहत अलोक है ॥२६॥

बृत्ति	१	२	३	४	५	६
भेद	१	२	३	५	८	१३
मात्रा	१	४	९	२०	४०	७८
वर्ण	१	३	७	१५	३०	५८
लघु	१	२	५	१०	२०	३८
गुरु	०	१	२	५	१०	२०

[२२] ठयो—ठवै (सर०) । करहि—लिखहि (वही) ।

[२४] छह—यह (नवल०, वेंक०) सिर—को (वही) । लहू—सो लघु (वही) । भरिय—भरी (वही) ।

मर्कटीजाल (दोहा)

किते भेद लघु अंत हैं, किते भेद गुरु अंत।
इहि पूँछें प्रस्तार में, सूची बरनैं संत ॥२७॥
जिते अंक पर अंत है, ता पाछे लघु अंत।
ता पाछे को अंत लहि, गुरु अंतहि कहि तंत ॥२८॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मात्राप्रस्तारे नष्टोद्दिष्टमेरुमर्कटीपताकासूचीवर्णनं नाम तृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

४

(दोहा)

जितने मात्राभेद में, प्रस्तारहि परकार।
तितनो बर्नहु में कियो, अहिनायक बिस्तार ॥ १ ॥

अथ वर्णप्रस्तार की अनुक्रमणी (विजया)

आदि को भेद सबै गुरु कै पुनि भेद बढ़ैबे की रीति रचै।
आदि गुरू के तरे लिखिकै लघु आगे जथाप्रतिपंक्ति खचै।

---

[२७] जाल—जान (वेंक०); ज्ञान (नवल० २)।
[२८] पाछे—पछिले (सर०)।
[१] प्रस्तारहि०—प्रस्तारादि प्रकार (सर०)। तितनो०—तितनहु बरनहु (वही)।

पाछे॑ गुरुहि सो पूरन बर्न कै सर्ब लहू लगि यों॑ ही मचै।
ऐसे॑ पथारु कै दोइ सों॑ दूनाई दूनो कै बर्न की संख्या सचै ॥ २ ॥

ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	ऽ	ऽ	३
।	।	ऽ	ऽ	ऽ	४
ऽ	ऽ	।	ऽ	ऽ	५
।	ऽ	।	ऽ	ऽ	६
ऽ	।	।	ऽ	ऽ	७
।	।	।	ऽ	ऽ	८
ऽ	ऽ	ऽ	।	ऽ	९
।	ऽ	ऽ	।	ऽ	१०
ऽ	।	ऽ	।	ऽ	११
।	।	ऽ	।	ऽ	१२
ऽ	ऽ	।	।	ऽ	१३
।	ऽ	।	।	ऽ	१४
ऽ	।	।	।	ऽ	१५
।	।	।	।	ऽ	१६
ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	।	१७
।	ऽ	ऽ	ऽ	।	१८
ऽ	।	ऽ	ऽ	।	१९
।	।	ऽ	ऽ	।	२०
ऽ	ऽ	।	ऽ	।	२१
।	ऽ	।	ऽ	।	२२
ऽ	।	।	ऽ	।	२३
।	।	।	ऽ	।	१४
ऽ	ऽ	ऽ	।	।	२५
।	ऽ	ऽ	।	।	२६
ऽ	।	ऽ	।	।	२७
।	।	ऽ	।	।	२८
ऽ	ऽ	।	।	।	२९
ऽ	।	।	।	।	३०
ऽ	।	।	।	।	३१
।	।	।	।	।	३२

अथ वर्णसंख्या, यथा

२ ४ ८ १६ ३२
ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ
इति पंचवर्णसंख्या

अथ नष्टलक्षणं (दोहा)

पूँछे अंकहि अर्ध करि, सम आएँ लघु जानि।
बिषमे इक दै अर्ध करि, गुरु लिखि पूरन ठानि ॥ ३ ॥

तिलक—पंद्रहो भेद पूँछ्यो सो पंद्रह आधो नहीं॑ है सकतो, एक मिलाइ सोरह को आधो कियो, एक गुरु लिख्यो, बाकी रहे आठ, ताको आधो चारि पूरे पर्‍यो, लघु लिख्यो, [बाकी रहे चारि, ताको आधो चारि पूरे पर्‍यो, लघु लिख्यो, बाकी रहे दोइ] दोइ को आधो एक, पूरे पर्‍यो, लघु लिख्यो, एक में॑ एक मिलाइ आधो कियो गुरु लिख्यो सब मिलाइ ऽ।।।ऽ ॥ ३ अ ॥

अथ वर्णउद्दिष्टलक्षणं (दोहा)

लिखि पूँछे पर एक तेँ, दून दून लिखि लेहि।
लघु सिर अंकनि जोरिकै, एक मिलै कहि देहि ॥ ४ ॥

१ २ ४ ८ १६
ऽ । । । ऽ

[३ अ] एक में॑०-एक मिलाइ (नवल० २)।
[४] तेँ-वे (नवल०, वेंक०)।

अथ वर्णमेरुलक्षणं—(कुंडलिया)

सर पर कोठो दोइ तल, तीनि तासु तल चारि।
अक्षर मेरु बढ़ाइ यों, जत प्रस्तार निहारि।
जत प्रस्तार निहारि पाँति की आदिहु अंतहु।
एक एक लिखि जाहु कह्यो पन्नग भगवंतहु।
गनि दैहै गुरुजुक्त सकल जिय करहु न खरको।
सूने कोठनि भरहु जोरि द्वै द्वै सिर पर को॥ ५॥

अथ वर्णपताकालक्षणं—(दोहा)

कोष्ठ पताका को करहि, खंडमेरु की साखि।
ताके सिर घर एक तें, दूनो दूनो राखि॥ ६॥

१	१	१					
१	२	१	२				
१	३	३	१	३			
१	४	६	४	१	४		
१	५	१०	१०	५	१	५	
१	६	१५	२०	१५	६	१	६

(दंडक)

दूनो अंक राखि खरी पाँतिन लिखन लागे,
एक द्वै लै तीनि तीनि द्वै लै पाँच रेखिये।
याही क्रम उपजित अंकनि सों आगे आगे,
जोरि जोरि खरी पाँति लिखन बिसेषिये।
एक पाँति भरि दूजी पाँति वहै रीति करि,
आयो अंक छोंडि ताके आगे ढूँढि लेखिये।
क्रम टूटे एकै भलो चलतहीं आगे चलो
'दास' ऐसे बरनपताका पूरो पेखिये॥ ७॥

---

[६] घर—धर (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[७] उपजित—उपजति (नवल० २)। लिखन—लिखित (वही); लिखिन (वेंक०)। आगे०—आगे ढूँढि (नवल० २, वेंक०)। पूरो—पूरे (वही)।

(दोहा)

बरनमत्त को एक ही, है पताकप्रस्तार ।
वाही रूपनि पर धरो, याको अंक उदार ॥ ८ ॥

पंचवर्णपताका

१	५	१०	१०	५	१
१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१=	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

पंचबर्न मैँ
द्वैगुरुजुक्त को
प्रस्तार ।
। । । ऽ ऽ ८
। । ऽ । ऽ १२
। ऽ । । ऽ १४
ऽ । । । ऽ १५
। । ऽ ऽ । २०
। ऽ । ऽ । २२
ऽ । । ऽ । २३
। ऽ ऽ । । २६
ऽ । ऽ । । २७
ऽ ऽ । । । २९

अथ वर्णमर्कटीलक्षणं-(दंडक)

षटपाँति लिखि पहलीयै गनतीयै भरो,
दूजी पाँति द्वै तैँ दूनो दूनो अंक थरि देहु ।

वृत्ति	१	२	३	४	५	६	७
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२=
मात्रा	३	१२	३६	६६	२४०	५१६	१३४४
वर्ण	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८६६
लघु	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४=
गुरु	१	४	१२	३२	८	१९२	४४८

दुहुन सौँ गुनि गुनि चौथी पाँति भरि ताको,
आधो आधो पँची छठी पाँतिन मैँ भरि देहु ।

---

[८] पंचबर्न—पंचकल (लीथो, नवल०, वैंक०) ।

चौथी पँची पाँतिन के अंकन कौं जोरि जोरि,
तीजी पाँति रीती है पूरन वहै करि देहु।
बृत्ति भेद मात्र बर्न लघु गुरु पूँछै 'दास'
ताके आगे बरनमरकटीयै धरि देहु ॥ ९ ॥

(दोहा)

जिते भेद पर अंत है, ता आधो गुरु अंत।
तितनोई लघु अंत है, अक्षरसूची संत ॥१०॥
नष्ट उदिष्ट पताक है, मत्ताहू की भाँति।
समुझि लीजिये सुमति सजि, अक्षरसंख्या पाँति ॥११॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे नष्टोद्दिष्टमेरुमर्कटीपताका-
सूचीवर्णनं नाम चतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

५

(दोहा)

चारि चरन चहुँ के बरन, मत्त होहिँ यक रूप।
बृत्ति छंद तेहि लगि रच्यो, प्रस्तारनि अहिभूप ॥ १ ॥
जदपि बर्नप्रस्तार मैं, सकल बृत्ति को बोध।
तदपि मत्तप्रस्तारहू, सकल मिलै अबिरोध ॥ २ ॥

(छप्पय)

मत्त छंद की रीति 'दास' बहु भाँति प्रकासै।
आदि अंत कल दुकल बढ़े दूजो नहिँ भासै।
चारयौ तुक सम कलनि परहि यह नेम निबाहिय।
कहुँ गुरु थल है लघू दियहु नहिँ भ्रमगति चाहिय।
बिन गने होत पूरन कला, जति गति कबिबानीहि बस।
यह जानि नागनायक कह्यो, जिह्वा जानै छंदरस ॥३॥

---

[९] थरि–धरि (नवल० २, वेंक०)। मैं–को (वही)। है–होय (वही)। मात्र–मत्त (सर०); मात्रा (नवल० २, वेंक०)।
[१०] है–यो (सर०)।
[३] बढ़े०–बढै हुँ कहुँ दुतिय न (सर०)।

(दोहा)

दुकल तिकल चौकल पकल, छकल निरखि प्रस्तार।
क्रम तें बरनत 'दास' तहँ, बृत्तिछंदबिस्तार ॥ ४ ॥
मत्तछंद मैँ बृत्तिहू, दरसावत इहि हेत।
बहु छंदन की गति मिले, एक सुकबि गनि लेत ॥ ५ ॥
नेम गह्यो यह 'दास' करि हरि हर गुरुहि प्रनाम।
उदाहरन के अंत मैँ, परै छंद को नाम ॥ ६ ॥
द्वै कल के द्वै भेद मैँ, जानो *श्री* *मधु* छंद।
मही *सार* अरु *कमल* ये, तीनि त्रिकल के बंद ॥ ७ ॥

१—श्री छंद ऽ

जै। है। *श्री*। की ॥ ८ ॥

२—मधु छंद ॥

तिय। जिय। बधु। *मधु* ॥ ९ ॥

१—मही छंद ।ऽ

रमा। समा। नही। *मही* ॥ १० ॥

२—सार छंद ऽ।

ऐनि। नैनि। चारु। *सारु* ॥ ११ ॥

३—कमल छंद ।।।

चरन। बरन। अमल। *कमल* ॥ १२ ॥

अथ चारि मात्रा के छंद—(दोहा)

चारिमत्त-प्रस्तार मैँ, पाँच बृत्ति निरधारि।
कामा *रमनि* *नरिंद* अरु *मंदर* *हरिहि* बिचारि ॥ १३ ॥

१—कामा छंद ऽऽ

रामै। नामै। यामै। *कामै* ॥ १४ ॥

२—रमणी छंद ।।ऽ

घरनी। बरनी। रमनी। *रमनी* ॥ १५ ॥

३—नरिंद छंद ।ऽ।

सँभारु । सवारु । परिंद । *नरिंद* ॥ १६ ॥

४—मंदर छंद ऽ।।

ध्यावत । ल्यावत । चंदर । *मंदर* ॥ १७ ॥

५—हरि छंद ।।।।

जग महि । सुख नहि । भ्रम तजि । *हरि* भजि ॥ १८ ॥

पंचमात्राप्रस्तार के छंद–(सोरठा)

पंचमत्तप्रस्तार, आठभेदजुत हरि *प्रिया* ।
तरनिजा रु *पंचार बीर बुद्धि निसि यमक ससि* ॥ १९ ॥

१—शशि छंद ।ऽऽ

मही मैँ । सही मैँ । जसी से । *ससी* से ॥ २० ॥

२—प्रिया छंद ऽ।ऽ

है खरो । पत्थरो । तोहि या । री *प्रिया* ॥ २१ ॥

३—तरणिजा छंद ।।।ऽ

उर धरो । पुरुष सो । बरनिजा । *तरनिजा* ॥ २२ ॥

४—पंचाल छंद ऽऽ।

नच्चंत । गावंत । दै ताल । *पंचाल* ॥ २३ ॥

५—वीर छंद ।।ऽ।

हरु पीर । अरु भीर । बरु धीर । रघु*बीर* ॥ २४ ॥

६—बुद्धि छंद ।ऽ।।

भ्रमै तजि । हरै भजि । करै सुद्धि । धरै *बुद्धि* ॥ २५ ॥

७—निशि छंद ऽ।।।

सुक्ख लहि । दुक्ख दहि । भानि रिसि । याहि *निसि* ॥ २६ ॥

---

[२१] खरो–खरी (नवल० २, वेंक०) । पत्थरो–पत्थरी (वही) ।
[२२] बरनि–बरन (सर०, लीथो) ।
[२३] नच्चंत–नाचत (नवल० २, लीथो) । गावंत–गावत (वही) ।

८—यमक छंद ।।।।।

श्रुति कहहि । हरि जनहि । छुवत नहि । *जमक* वहि ॥ २७ ॥

छ मात्रा के छंद–(दोहा)

ताली रमा नगंनिका जानि *कला करता* हि ।
मुद्रा धारी वाक्य अरु *कृष्न नायको* चाहि ॥ २८ ॥
हर अरु *बिष्नु मदन गनो* अधिको होत न मित्त ।
षटकल तेरह भेद के प्रगट तेरहो वृत्त ॥ २९ ॥

१—ताली छंद ऽऽऽ

नच्चै है । संभू पै । बेताली । दै *ताली* ॥ ३० ॥

२—रामा छंद ।।ऽऽ

जग माहीं । सुख नाहीं । तजि कामै । भजि *रामै* ॥ ३१ ॥

३—नगंनिका छंद ।ऽ।ऽ

प्रसिद्ध हौं । अर्धंनिका । न गिद्ध हो । *नगंनिका* ॥ ३२ ॥

४—कला छंद ऽ।।ऽ

धीर गहो । आजु लहो । नंदलला । काम*कला* ॥ ३३ ॥

५—कर्ता छंद ।।।।ऽ

महि धरता । जग भरता । दुखहरता । सुख*करता* ॥ ३४ ॥

६—मुद्रा छंद ।ऽऽ।

भजै राम । सरै काम । न छापाहि । न *मुद्रा*हि ॥ ३५ ॥

७—धारी छंद ऽ।ऽ।

दानवारि । चित्त धारि । पाप भारि । कोस *धारि* ॥ ३६ ॥

---

[२८] वाक्य–वाकि (सर०) ।
[२९] हर०–भेदरु (सर०) ।
[३०] नच्चै–नाचै (नवल० २, वेंक०) ।
[३२] गिद्ध–सिद्ध (नवल २, वेंक०) ।
[३६] पाप०–पापकारि (सर०) । कोस०–कोँ सँघारि (वही) ।

८—वाक्य छंद ।।।ऽ।

जगतनाथ । गहत हाथ । सरन ताकि । कहत *वाकि* ॥ ३७ ॥

९—कृष्ण छंद ऽऽ।।

छाड़ै हठ । एरे सठ । तृष्नै तजि । कृष्नै भजि ॥ ३८ ॥

१०—नायक छंद ।।ऽ।।

सुखकारन । दुखटारन । सब लायक । रघु*नायक* ॥ ३९ ॥

११—हर छंद ।।ऽ।।।

जगज्जननि । दुखी जननि । कृपा करहि । बिथा *हर*हि ॥ ४० ॥

१२—विष्णु छंद ऽ।।।।

'दास' जगत । झूठ लगत । याहि तजहि । *बिष्नु* भजहि ॥४१॥

१३—मदनक छंद ।।।।।।

तरुनिचरन । अरुनबरन । हृदयहरन । *मदनक*रन ॥ ४२ ॥

सात मात्राप्रस्तार के छंद–(दोहा)

सात मत्तप्रस्तारको, *सुभगति* जानो छंद ।
बृत्ति एकीस प्रकार है, चारि भाँति गति बंद ॥ ४३ ॥

शुभगति छंद

कृपासिंधो । दीनबंधो । सर्ब सुरपति । देहि *सुभगति* ॥ ४४ ॥

पुनः

प्रभाबिसाल । लालगुपाल । जसुमतिनंद । आनँदकंद ॥ ४५ ॥

पुनः

खलै घायक । सर्बलायक । कंसमारन । जनउधारन ॥ ४६ ॥

पुनः

दुख कौं हरो । सुख बिस्तरो । बाधाकदन । करुनासदन ॥ ४७ ॥

आठ मात्रा के छंद–(दोहा)

आठ मत्तप्रस्तार के, *तिर्नादिक* उनमानि ।
सहित *हंस मधुभार* गति, चौंतिस बृत्ति बखानि ॥ ४८ ॥

---

[३७] ताकि–वाक्य (नवल० २); ताक्य (वेंक०) ।

लच्छण प्रतिदल

कर्नो कर्नो। *तिनों* बर्नो॥ भागनु कर्ना। *हंस* बरन्ना॥
न य हि प्रसंसा। कहि *चौबंसा*॥ द्विजबर भासन। कहत *सबासन*॥
नगन नगवती। कहिय *मधुमती*॥ ४९॥

१—तिर्ना छंद SSSS

धर्मज्ञाता। निर्भैदाता। तृष्ना हिंनो। जीवै *तिनो*॥ ५०॥

२—हंस छंद S||SS

पोखर दोऊ। दीह कितोऊ। जान न केहूँ। *हंस* लटेहूँ॥५१॥

३—चौबंसा छंद ||||SS

उपजेउ पुत्ता। सुलगन जुत्ता। जगअवतंसा। चरचउ *बंसा*॥५२॥

४—सबासन छंद ||||S||

सुनहु बलाहक। हुजियत नाहक।
बरषि हुतासन। अपजस *वासन*॥५३॥

५—मधुमती छंद ||||||S

तप निकसत हो। धरि कब सिर हो।
विमल बनलती। सुरभि *मधुमती*॥५४॥

लच्छण–(दोहा)

बिप्र जगन *करहंत* है, वाही गति *मधुभार*।
छबि त्रिपंच जति जानिये, आठ मत्तप्रस्तार॥५५॥

६—करहंत छंद ||||S|

जसुमति किसोर। ससि जिमि चकोर।
मम मुख लखंत। यकटक *रहंत*॥५६॥

७—मधुभार छंद

दक्षिनसमीर। अतिकुस सरीर।
हुअ मंद भाइ। *मधुभार* पाइ॥ ५७॥

८—छबि छंद

मिलिहि किमि भोर। तकत ससि वोर।
थकित सो बिसेषि। बदन*छबि* देखि॥ ५८॥

अथ नौ मात्रा के छंद–(दोहा)

नौ मत्ता की अमित गति, पचपनबृत्ति बिचारि।
कर्न यगन *हारी* गनो, तस *बसुमती* निहारि ॥ ५९ ॥

१—हारी छंद SS।SS

तो मानु भारी। ठाने पियारी।
सौतै सुखारी। होती *महा री* ॥ ६० ॥

२—वसुमती छंद SS।।।S

सो सुभ्र ससि सो। जो दान असि सो।
साजै जसुमती। सारी *बसुमती* ॥ ६१ ॥

अथ दस मात्रा के छंद–(दोहा)

दस मत्ता के छंद मैं, बृत्ति नवासी होइ।
संमोहादिक गतिन सँग, बरनत हैँ सब कोइ ॥ ६२ ॥

(सोरठा)

संमोहा गुरु पाँच, कहि *कुमारललिता* ज स ग।
त यगन *मध्या* बाँच, *तुंगा* दुज सँग भा स गहु ॥ ६३ ॥

१—संमोहा छंद SSSSS

ह्वै चाहौ संता। जौ मेरे कंता।
तौ भंजो कोहा। लोभा *संमोहा* ॥ ६४ ॥

२—कुमारललिता छंद ।।S।।।SS

जु राधहि मिलावै। वहै मोहि जियावै।
कहत भरि उसासो। *कुमारललिता* सो ॥ ६५ ॥

३—मध्या छंद SS।।SS

तौलौँ विधि जामै। लज्या अरु कामै।
बाँटो यह सोई। *मध्या* कुच दोई ॥ ६६ ॥

---

[६४] ह्वै–ह्यौ (लीथो, नवल० २, वेंक०)। मेरे-मेरो (वही)।
[६५] कहत–कहै (नवल० २)।

४—तुंग छंद ऽ।।।।ऽऽ

अंबर छबि छाजै। मुक्तअवलि राजै।
मेरुसिखर नीके। *तुंग* उरज ती के॥ ६७॥

५—तुंगा छंद ।।।।।।ऽऽ

तुअ मुख ससि ऐसो। निरखत जेहि सेसो।
छकि रहु ह्वै गुंगा। सुनहि उरज *तुंगा*॥ ६८॥

(दोहा)

द्विजबर ज ग *कमल* हि रचो, द्वै द्विज गो *कमला* हि।
त्यौं *रतिपद* सँग नात है, *दीप* कला तेँ चाहि॥ ६९॥

६—कमल, यथा ।।।।।ऽ।ऽ

पिय चख चकोर है। तिय नयन भोर है।
बिधुबदन बाल को। *कमल*मुख लाल को॥ ७०॥

७—कमला छंद ।।।।।।।।ऽ

कब अँखियन लखिहौं। अरु भुज भरि रखिहौं।
ससिधर बिमल कला। हृदय कमल *कमला*॥ ७१॥

८—रतिपद, यथा ।।।।।।।।ऽ

जुवति वह मरति तौ। उर तेँ यह टरति जौ।
हरनि हिय दरद की। सु*रति* पदपदुम की॥ ७२॥

९—दीप छंद

जय जयति जगबंद। मुनिकौमुदीचंद।
त्रैलोक्य-अवनीप। दसरत्थकुल*दीप*॥ ७३॥

ग्यारह कला के छंद—(दोहा)

ग्यारह कल मैँ एक सै चौवालिस गनि बृत्त।
तहँ *अहीर लीला* अपर *हंसमाल* गनि मित्त॥ ७४॥

---

[६८] ह्वै-होइ (सर०)।
[७२] मरति-बरति (नवल० २, वेंक०)।

(सोरठा)

जाँत *अहीर* कहंत, राँत प्रगटि *लीला* भनो।
स ग यो ग्यारह मंत, छंद *हंसमाला* गनो ॥ ७५ ॥

१—अहीर छंद

कौतुक सुनहु न बीर। न्हान धसी तिय नीर।
चीर धर्‌यौ लखि तीर। लै भजि गयो *अहीर* ॥ ७६ ॥

२—लीला छंद

धन्य जसोदा कही। नंद बड़े भाग ही।
ईस्वर ह्वै जा घरैं। अद्भुत *लीला* करैं ॥ ७७ ॥

३—हंसमाला छंद ॥ऽऽ।ऽऽ

इहि आरन्य माहीं। सर मानुष्य नाहीं।
बिकसे कंज आला। कुररै *हंसमाला* ॥ ७८ ॥

बारह मात्रा के छंद–(दोहा)

बारह मत्ता छंद गति, बरन्यो अमित फनीस।
होत किये प्रस्तार है, बृत्ति दु सै तैंतीस ॥ ७६ ॥

लक्षण प्रतिदल

तीन्यो कर्ना *सेषा*। मो सो गो *मदलेखा*।
चित्रपदा भ भ कर्नो। न न महि *जुक्ता* बर्नो ॥ ८० ॥
रो न सोहि *हरमुख* ज्यौं। *अमृतगति* द्विज भ स त्यौं।
न य सहि *सारंगिय* हो। दस लहु गुरु *दमनक* हो ॥ ८१ ॥

१—शेष छंद ऽऽऽऽऽऽ

ताकौं जी मैं ध्याऊँ। ताही को हौं गाऊँ।
पीरो जाको केसा। कंठे जाके *सेषा* ॥ ८२ ॥

---

[८०] प्रतिदल–प्रतिपद (सर०)।
[८२] जाको–जाके (लीथो, नवल० २, वेंक०)।

२—मदलेखा छंद SSSIISS

मिथ्याबादन कोहा। निर्लज्या अरु मोहा।
जेतो ऐगुन देखो। तेतो मैं *मद लेखो* ॥ ८३ ॥

३—चित्रपदा छंद SIISIISS

राम कह्यो जिन धोखे। स्वर्ग लह्यो तिन चोखे।
भक्तन कौन बिचारो। *चित्र पदारथ* चारो ॥ ८४ ॥

४—युक्ता छंद IIIIIISSS

दृग जुग मन को मोहै। तिन सँग पुतरी सोहै।
लखि यह उपमा उक्ता। कमल *भ्रमरसंजुक्ता* ॥ ८५ ॥

५—हरमुख छंद SISIIIIIS

धन्य जन्म निज कहती। प्रान वारतहि रहती।
देखि ग्वारि लहि सुख कौं। मैनगर्बहर *मुख* कौं ॥ ८६ ॥

६—अमृतगति छंद IIIISIIIIS

फिरि फिरि लावति छतिया। लखत रहै दिन रतिया।
तुम जु लिखी उहि पतिया। *अमृतगती* मृदु बतिया ॥ ८७ ॥

७—सारंगिय छंद IIIISSIIS

धनि धनि ताही तिय कौं। बस करती जो पिय कौं।
सुरनि रमावै हिय कौं। कर गहि *सारंगिय* कौं ॥ ८८ ॥

८—दमनक छंद

बिषधर धर परम प्रिया। जगतजननि सदय हिया।
जय जय जनदरदहरी। प्रबल दनुज*दमनक*री ॥ ८९ ॥

(दोहा)

गो स भ गो *नरक्रीड़* है, *बिंब* न सो यो पूर।
स ज जी *तोमर* जानियो, त्यौं तमो लहै *सूर* ॥ ९० ॥

---

[८३] जिन–निज (लीथो, नवल० २, वेंक०)।
[८५] उक्ता–जुक्ता (लीथो०, नवल०, वेंक०)।

६—मानवक्रीड़ा, यथा ऽ।।ऽऽ।।ऽ

धन्य जसोदाहि कही। नंद बड़ो भाग सही।
ईस्वर ह्वै जाहि घरै। *मानव* को क्रीड़ करै॥ ६१॥

१०—बिंब छंद ।।।।।ऽ।ऽऽ

अमियमय आस्य तेरो। हरत वह चेतु मेरो।
मनहि यह क्यौं न मोहै। अधर तुअ *बिंब* सोहै॥ ६२॥

११—तोमर छंद ।।ऽ।ऽ।।ऽ।

असतीन को सिख मानि। तिय क्यौं तजै कुलकानि।
दुज जामिनी अपवाद। कहुँ छोड़*तो मर*जाद॥ ६३॥

१२—सूर छंद ऽऽ।ऽऽऽ।

बाँधै न बालानैन। श्री पाइ जे मो हैं न।
रागी नहीं हैं मूर। ते तौ बड़े हैं *सूर*॥ ६४॥

(दोहा)

लीला रबि कल जाँतजुत, स ज करनो *दिगईस*।
तरलनयन रबि लघु कला, प्रस्तार्‍यो फनिईस॥ ६५॥

१३—लीला छंद

अवधपुरी भाग भारु। दसरथगृह छबिअगारु।
राजत जहँ बिस्वरूप। *लीला*तनु धरि अनूप॥ ६६॥

१४—दिगीश छंद ।।ऽ।ऽ।ऽऽ

बर मैं गोपाल मागौं। पदपद्म प्रेम पागौं।
हर ध्याइ जो अनंदै। *दिगईस* जाहि बंदै॥ ६७॥

१५—तरलनयन छंद ।।।।।।।।।।।।

कमलबदनि कनकबरनि। दुरदगमनि हृदयहरनि।
बड़हि सुकृति मधुरबयनि। मिलति तरुनि *तरलनयनि*॥६८॥

---

[६१] बड़ो—बड़े (सर०)।
[६४] ते—से (सर०)।
[६६] बिस्व०—वेस्वरूप (नवल० २, वेंक०)।

तेरह कल के छंद–(दोहा)

नराचिकादिक तेरहै कल की गति गनि लेहु ।
बृत्ति बूझिकै तीनिसै सतहत्तरि कहि देहु ॥ ६८ ॥
कर्ना जोर *नराचिका*, जो जो यगन *महर्ष* ।
रगन रगन अरु नंद तें है *लछिमी* उत्कर्ष ॥ ६६ ॥

१—नराचिका छंद SS|S|S|S

भौं हैं करी कमान हैं । नैना प्रचंड बान हैं ।
रेखा सिरे जो तैं दई । *नराचिका* यहौ भई ॥ १०० ॥

२—महर्ष छंद |S||S||SS

तमोर गुनीजत भाई । जवाहिर की गति पाई ।
जितो परभूमिहि जाई । तितोइ *महर्ष* बिकाई ॥ १०१ ॥

३—लक्ष्मी छंद S|SS|SS|

बेद पावै न जा अंत । जाहि ध्यावैं सबै संत ।
ध्याइबो जक्त जा तंत । पाहि सो *लक्ष्मीकंत* ॥ १०२ ॥

चौदह मात्रा के छंद–(दोहा)

चौदह मत्ता छंदगति, *सिष्यादिक* अवरेखि ।
भेद छ सै दस होत हैं, प्रस्तारो करि देखि ॥ १०३ ॥

लक्षण प्रतिपद

सातौ गो *सिष्या* कीजै । बिय दुज मगन *सुबृती* है ।
पाइत्ता मो भहि सगनो । है *मनिबंधो* भौ म स को ॥ १०४ ॥
तीनि भगनग *सारवती* । *सुमुखि* दुजो भभ *हारवती* ।
न र ज गे *मनोरमा* कही । दुज स ज ग *समुद्रिका* वही ॥ १०५ ॥

१—शिष्या छंद SSSSSSS

मोचौ बाँधी जाके ही । नाहीं बाच्यो ताको जी ।
एरे भाई मेटै को । लिख्या *सिख्या* मध्ये जो ॥ १०६ ॥

---

[६६] जो०–जो गो यगन (लीथो); जो गो यमन (नवल० २, वेंक०)।
[१०१] जत–जन (सर०) ।
[१०६] मध्ये–वंध्ये (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

२—सुवृत्ती छंद ||||||||SSS

असित कुटिल अलकै तेरी। उचित हरतु मति है मेरी।
यह कत सुमुखि हनै जी कौं। बरजहि उरज *सुवृत्ती* कौं॥ १०७॥

३—पाइत्ता छंद SSSS||||S

नैना लागे बिधुबदनी। वैरी जुरे प्रबल अनी।
माँगो पासो अरिय अड़े। *पाइत्ता* है करम बड़े॥ १०८॥

४—मणिबंध छंद S||SSS||S

आपुहि राख्यो जौ न चहै। कर्म लिख्यो तौ पाइ रहै।
कर्महि लागै हाथ साऊ। जो *मनि बाँध्यो* गाँठि कोऊ॥ १०९॥

५—सारवती छंद S||S||S||S

आवति बाल सिंगारवती। पीन - पयोधर - भारवती।
कुंजर - मोतिय - हारवती। पुंजप्रभा दधि*सारवती*॥ ११०॥

६—सुमुखी छंद ||||S||S||S

यह न घटा चहुँ ओर बनी। दह दिसि दौरति राहु अनी।
तजि यहि औसर रूख रुखी। चलि हरि पै रजनी *सुमुखी*॥ १११॥

७—मनोरमा छंद |||S|S|S|S

जबहि बाल पालकी चढ़ी। तबहि अद्भुतै प्रभा बढ़ी।
लखिय 'दास' पूरनोपमा। कमल मैं बसी *मनो रमा*॥ ११२॥

८—समुद्रिका छंद ||||||S|S|S

हरि मनु हरि गो कह्यो यही। नहि नहि नहि जू नही नही।
सुनि सुनि बतियाँ मनो पिका। लखि लखि अँगुरी *समुद्रिका*॥११३॥

---

[१०७] मति०—है मति मेरी (सर्वत्र)।

[१०९] आपुहि०—आपुउ नाख्यौ कोउ (सर०)।

[१११] राहु—हार (लीथो, नवल० २, वेंक०)। रूख०—रूप सखी (नवल० २, वेंक०)।

[११२] लखिय—लखी (लीथो, नवल० २, वेंक०)।

[११३] यही—जही (सर०)।

लच्छण—(दोहा)

चारि दसै कल *हाकली* लमलम *सुद्धग* तंत।
सगन धुजा द्वै *संजुता* दुगति *सुरूपी* मंत ॥ ११४ ॥

९—हाकलिका छंद

परतिय गुरतिय तूल गनै। परधन गरल समान भनै।
हिय नित रघुबर नाम ररै। तासु *कहा कलिकाल* करै ॥ ११५ ॥

१०—शुद्धगा छंद ।ऽऽऽ।ऽऽऽ

अरी कान्हा कहाँ जैहै। सु तेरो 'दास' ह्वै रैहै।
सितारा लै बजावै तूँ। केदारा *सुद्ध गावै* तूँ ॥ ११६ ॥

११—संयुता छंद ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

नहि लाल को मृदु हास है। मनमत्थ को यह पास है।
भ्रुव नैन संग न लेखिये। धनु तीर*संजुत* पेखिये ॥ ११७ ॥

१२—स्वरूपी छंद

श्रीमनमोहन की मूरति। है तुव स्नेह की सूरति।
मैं निज मन यह अनुरूपी। तू मोहन प्रेम *सुरूपी* ॥ ११८ ॥

पंद्रह मात्रा के छंद—(दोहा)

पंद्रह मत्ता छंद गति, आदि *चौपाई* जानि।
नौ सै सत्तासी कहत, बृत्तिभेद उनमानि ॥ ११९ ॥

लच्छण

पंद्रह कला गनौ चौपई। *हंसी* तिन्ना दुज धुज ठई।
तरहरि रगन उपरलो कला। सकल कहत अहिपति *उज्जला* ॥१२०॥

१—चौपई

तुत्र प्रसाद देख्यो भरि नैन। कही सुनी मनभावति बैन।
कब परिहै मोहनगल बाँह। *चौप* ईठि इतनी मन माँह ॥ १२१ ॥

---

[११४] धुजा–भुजा (नवल०, वेंक०)। दुगति-दुरबि (सर्वत्र)।
[११६] तेरो–तौ तो (सर०)। बजावै०–बजावै बू (नवल० २, वेंक०)।
[११९] चौपई–चौपही (सर०)।
[१२०] कला–कलैं (सर०)। तिन्ना–तिर्ना (वही)।
[१२१] चोप०–चौपइ ठई (नवल० २, वेंक०)।

२—हंसी छंद ऽऽऽऽ।।।।।ऽ

आई बक्षोपरि चिकनई। छूटै लागी तन लरिकई।
लागी हासी मन मृदु हरै। बाला *हंसी* गति पगु धरै॥ १२२॥

३—उज्जला छंद ।।।।।।।।।।ऽ।ऽ

धवल रजत परबत हो तबै। अरु पयनिधि कौं बरनै सबै।
तबहि बिमल द्युति ससि की कला। जब न हुतउ तुअ जस *उज्जला* १२३

लक्षण—(दोहा)

तीनि जगन यक है धुजा, *हरिनी* छंद सुभाउ।
तीनि रगन अहिपति कहे, *महालक्ष्मी* ठाउ॥ १२४॥

४—हरिणी छंद ।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ

बसै उर अंतर मैं नितहीं। मिलै कबहूँ भरि अंक नहीं।
लखो सब ठौर न बैन कहै। यहै *हरिनी* रसु रीति गहै॥ १२५॥

५—महालक्ष्मी छंद ऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽ

सास्त्रज्ञाता बड़ो सो भनो। बुद्धिवंतो बड़ो सो गनो।
सोइ सूरो सोइ संत है। जो *महालक्ष्मी*वंत है॥ १२६॥

सोरह मात्रा के छंद—(दोहा)

सोरह मत्ता छंद गति, रुप *चौपाई* लेखि।
पंद्रह सै सत्तानबे, जानो भेद बिसेखि॥ १२७॥

१—चौपाई छंद

तुअ प्रसाद देखो भरि नैनो। कही सुनी मनभावति बैनो।
कब परिहै मोहनगल बाँही। *चौपा* इठि इतनी मन माही॥ १२८॥

लक्षण

चार्‍यो कर्ना *बिद्युन्माला*। मो तो यो है *चंपकमाला*।
कर्ना स दु है *सुषमा* लसिता। तिन्ना ननगो *भ्रमरबिलसिता*॥ १२९॥

---

[१२३] द्युति—हा (लीथो, नवल० २, वेंक०)। हुतउ०—हुल्यो तो (वही)।
[१२६] भनो—गनो (सर०)। गनो—भनो (वही)।
[१२९] मो तो०—मोती पोहै (नवल० २, वेंक०)। है—दै (सर०)।

तिन्ना नोयो समुभिय *मत्ता*। *कुसुमबिचित्रा* नयनय जत्ता।
गोसभसोगो हरि *अनुकूले*। दुज भभ *तामरसो* गगतूले ॥१३०॥
निजभय *नयमालिनि* निजु मंडी। ननसस गहि जिय जानिय *चंडी*।
चक्र भ दुजदुज सगनहि थुलिका। ननगननग है *पहरनकलिका* ॥१३१॥
जलोद्धतगती जस जस पगनो। *मनिगुन* दुज पिय दुज पिय सगनो।
रोन भाग गहि *स्वागत* कौं छ्वै। *चंदवर्त्म* रन भास प्रगट ह्वै ॥१३२॥
निज जरि पावत *मालति* सदा। नभजरीहि पठवै *प्रियंबदा*।
रेनु रेल गहिहै *रथुद्धतो*। नभसयाहि *द्रुतपाउ* सुद्ध तो ॥१३३॥
पंकअवलि भनि जो जलही सुनि। षट दस लघुहि *अचलधृति* मन गुनि१३४

२—विद्युन्माला छंद SSSSSSSS

दूजे कोप्यो वासों भारी। नीरे नाहीं सृंगीधारी।
एरी क्यों जीवैगी बाला। चौहाँ नच्चै *विद्युन्माला* ॥ १३५ ॥

३—चंपकमाला छंद SSSSS||SS

देख्यो वाको आननचंदा। लूट्यो प्यारे आनँदकंदा।
आई जी की मोहनि बाला। कीजै ही की *चंपकमाला* ॥ १३६ ॥

४—सुषमा, यथा SS||SSS||S

होतो ससि सो मान्यो मन मैं। जान्यो हरिहै तापै छन मैं।
बीती सजनी बातैं सुख की। देखे *सुषमा* प्यारे मुख की ॥ १३७ ॥

५—भ्रमरविलसिता छंद SSSS|||||S

धीरे धीरे डगुमगु धरती। राती राती द्युति बिस्तरती।
आवै आवै त्रिय मृदुहसिता। आगे आगे *भ्रमरबिलसिता* ॥ १३८ ॥

६—मत्ता छंद SSSS||||SS

आयो आली बिषम बसंता। कैसे जीबी निअर न कंता।
फूले टेसू करि बन रत्ता। चौहाँ गूँजै मधुकर *मत्ता* ॥ १३९ ॥

---

[१३०] समुभिय—समुकिय (नवल० २, वेंक०)।
[१३१] ननस—नस्सा (लीथो, नवल० २, वेंक०)।
[१३२] रोन—ऐन (नवल० २, वेंक०)। चंदवर्त्म—चंद्रवत्स (लीथो, वेंक०)।
[१३९] जीबी—जीग्रै (सर०)।

७—कुसुमविचित्रा ।।।।ऽऽ।।।।ऽऽ

चलन कह्यो पै मोहि डर भारी । परम सुगंधा वह सुकुमारी ।
अलि तहँ ह्वै है अधिक बिहारी । *कुसुमविचित्रा* वह फुलवारी ।। १४०।।

८—अनुकूल छंद ऽ।।ऽऽ।।।।ऽऽ

गोपिहु ढूँढो व्रत कत दूजा । कूबर ही की करहु न पूजा ।
जोग सिखावै मधुकर भूलो । कूबर ही सौं हरि *अनुकूलो* ।। १४१ ।।

९—तामरस छंद ।।।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ

तुअ दृग सौं सजनी दृग तेरो । नहि सम ताहि लहै मनु मेरो ।
जलचर खंज पराजय साजै । सखि नव *तामरसो* लखि लाजै ।।१४२।।

१०—नवमालिनी छंद ।।।।ऽ।ऽ।।।ऽऽ

पहिरत पाइ जासु सितलाई । सखि तनु होत कंप अधिकाई ।
तिय पिय स्वाँग चीन्हि बहराई । यह *नवमालिनी* सुमनु ल्याई ।।१४३।।

११—चंडी यथा ।।।।।।।।ऽ।।ऽऽ

जय जगजननि हिमालयकन्या । जयति जयति जय त्रिभुवनधन्या ।
कलुष कुमति मद मत्सर खंडी । जयति जयति जनतारनि *चंडी* ।।१४४।।

१२—चक्र यथा ऽ।।।।।।।।।।।।ऽ

देव चतुरभुज चरनन्ह परिये । याहि बनक मम हिय थिति करिये ।
संख 'रु गद बिय करनि सभरिकै । *चक्र* कमल बिय कर बिच धरिकै १४५

१३—प्रहरणकलिका छंद ।।।।।।ऽ।।।।।।ऽ

दसरथसुत को सुमिरन करिये । बहु तप जप मैं भटकि न मरिये ।
बिरद बिदित है जिन चरनन को । *प्रहरनकलि* काटन दुखगन को।।१४६।।

१४—जलोद्धतगति ।ऽ।।।ऽ।ऽ।।।ऽ

घनो भगरु राक्षसै करतु है । न राम ढिग ते सही परतु है ।
अँगारगन वै ढरैं।तरनि तें । *जलोद्धतगती* उठै धरनि तें ।।१४७।।

---

[१४०] वह–यह (सर०) । वह–यह (वही) ।

[१४२] सजनी–जननी (लीथो, नवल० २, वेंक०) ।

[१४३] मालिनी०–मालिनि सुमनु ले आई (लीथो, नवल० २, वेंक०) ।

१५—मणिगुण ||||||||||||||ऽ

अभिनव जलधर सम तन लसितं । अरुन कमलदल नयन हुलसितं ।
जयति सरदससिसम बर बदनं । दिनमनिकुलदिन*मनि गुन*सदनं ॥१४८॥

१६—स्वागता ऽ|ऽ|||ऽ||ऽऽ

याहि भाँति तुमहूँ जु खिझावै । बाल बात तब क्यौं बनि आवै ।
नंदलाल मटक्यो कब ऐसे । *स्वाँग तासु* करती तुम जैसे ॥१४९॥

१७—चंद्रवर्त्म छंद ऽ|ऽ|||ऽ||||ऽ

ऊभि साँस लिय मैं दुख भरिकै । घेरि लीन्ह तहँ भौंरनि अरिकै ।
और ब्यौंत बलि होत न तबहीं । चंद्र *बर्त्म* बिच ऊगउ जबहीं ॥१५०॥

१८—मालती, यथा ||||ऽ||ऽ|ऽ|ऽ

सुमन लखैं लतिका अनंत मैं । सरघनि को सुख है बसंत मैं ।
मन महँ मोद न भौंर के रती । खिलति न जौ लगि *मालती* लती ॥१५१॥

१९—प्रियंवदा, यथा |||ऽ|||ऽ|ऽ|ऽ

नयन रेनु कन जाहि के परैं । मरत पीर नहि धीर सो धरैं ।
रहति मो दृगन मैं अरी सदा । तिय सरोजनयनी *प्रियंबदा* ॥ १५२ ॥

२०—रथोद्धता ऽ|ऽ|||ऽ|ऽ|ऽ

है प्रभुत्व जगमध्य जौ महा । भुक्तजुक्त सुख सात तौ कहा ।
राम पाइ मन नाहि सुद्ध तौ । तुच्छ जानि पुरुषा*रथुद्धतौ* ॥ १५३ ॥

२१—द्रुतपाद छंद |||ऽ||||ऽ|ऽऽ

जिन्हहि संग सिगरी निसि जागे । नयन रंग जनु जावक पागे ।
गहरु होत रिस तासु सँभारो । उतहि लाल *द्रुत पाउन* धारो ॥१५४॥

२२—पंकअवलि ऽ||||||ऽ||ऽ||

मोहन बिरह सतावत बालहि । बाइ बकत नहि जानति हालहि ।
बासर निसि असुआ बरषावति । *पंकअवलि* जहँई तहँ ठावति ॥१५५॥

२३—अचलधृति छंद ||||||||||||||||

कुलिस सरिस बर दसननि दरसित । परुष बचन मुख कढ़ति कहत हित ।
सब ताहि कहत मृदुलतन अनुचित । तिय तुअ जुगल *अचल धृत* उर नित
॥ १५६ ॥

पद्धरिय-लक्षण-(दोहा)

सोरह सोरह चहुँ चरन, जगन एक दै अंत।
छंद होत यौं *पद्धरिय*, कह्यो नाग भगवंत ॥ १५७ ॥

२४—पद्धरिय छंद, यथा

नभ रयनि सघन घन तम भय बिसाल। पद अटकत कंटक दर्भजाल।
मन सुमिरत भयभंजन गोपाल। *पद्धरिय* प्रेम मदमत्त बाल ॥ १५८ ॥

सत्रह मात्रा प्रस्तार के छंद-(दोहा)

सत्रह मत्ता छंद मैं, *धारी* त्रिजयो नीक।
बाला तिरग पचीससै, चौरासी दै ठीक ॥१५९॥

१—धारी, यथा ।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ

मयूरपखा सिर मैं थिरकाए। सुपीत पटा उर मैं उरमाए।
चलै मुखचंद बिलोकि कुमारी। गए तुलसीबन मैं गिरि*धारी* ॥१६०॥

२—बाला, यथा ऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

मोर के पक्ष को मुकट आला। कंठ मैं सोहती मुक्तमाला।
स्याम घनरूप तन दृग बिसाला। देखि री देखि गोपाल *बाला* ॥१६१॥

अठारह मात्रा के छंद-(दोहा)

प्रगट अठारह मत्त को, *रूपामाली* होइ।
बृत्ति सु इकतालीस सै, इक्यासी जिय जोइ ॥१६२॥
नौ गुरु *रूपामालिया*, अनियम *माली* बंस।
सुजस संग प्रति पाय मैं, छंद होत *कलहंस* ॥१६३॥

१—रूपामाली, यथा ऽऽऽऽऽऽऽऽऽ

नेहा की बेली बोयौं जी मैं। आछो थाल्हो कै राख्यो ही मैं।
उत्कंठा पानी दै पाली है। प्यारेजू को *रूपा माली* है ॥१६४॥

२—माली छंद

मुरली अधर मुकुट सिर दीन्हे है। कटि पट पीत लकुट कर लीन्हे है।
को जानै कब आयो सुनि आली। उर तैं कढ़त न केहूँ बन*माली* ॥१६५॥

---

[१६४] प्यारेजू—प्यारीजी (नवल०, वेंक०)।

३—कलहंस छंद ॥ऽ।ऽ।।।ऽ।।ऽऽ

मन बाम-सोभ-सरसी किन न्हैये। मुख नयन पानि पद पंकज ह्वै ये।
कलधौत-नूपुरन की छबि दीसी। *कल हंस*-चेटुअन की अवली सी॥१६६॥

उन्नीस मात्रा के छंद—(दोहा)

उत्तम उनइस मत्त मैं, *रतिलेखादि* बिचारि।
सतसठि सै पैंसठि कहत, बृत्तिभेद निरधारि॥१६७॥
सगन इग्यारह लघु करन, *रतिलेखा* तुक चाहि।
गनगनगन दै करन दै, जानि *इंदुबदनाहि* ॥१६८॥

१—रतिलेखा छंद ॥ऽ।।।।।।।।।।।ऽऽ

सब देव अरु मुनिन मन तुलनि तोल्यो।
तब 'दास' दृढ़ बचन यह प्रगट बोल्यो।
इक ओर महि सकल जप तप बिसेषो।
इक ओर सियपतिचरननि *रति लेखो* ॥१६९॥

२—इंदुवदना छंद ऽ।।ऽ।।।ऽ।।ऽऽ

दोषकर रंक सकलंक अति जोई। घाटि अरु बाढ़ि पुनि मास प्रति होई।
भाग अवलोकि इहि इंदु बिच आली। *इंदुबदना* कहत मोहि बनमाली १७०

बीस मात्रा के छंद—(दोहा)

होत *हंसगति* आदि दै, छंदनि मत्ता बीस।
दस हजार नौ सै उपर, गनो भेद छयालीस ॥१७१॥
बीसै कल बिन नियम हंसगति सोहै।
मोभासोमो *जलधरमाला* जोहै।
भोरन बिप्र साहि *गजबिलसित* तन है।
द्वै दीपहि *दीपकिय* कहत कबिजन है॥ १७२ ॥

---

[१६६] न्हैये—नैये (लीथो, नवल० २, वेंक०)।
[१६७] कहत—कह्यो (सर०)।
[१६८] रतिलेखा—रतिरेखा (नवल० २)।

१—हंसगति, यथा

जिन जंघन कर-रूप लियो बिन कारन। बारन काढ़े दंत फिरत दरबारन।
चरन भएहूँ अरुन बाज नहिं आयउ। तासु *हंस गति* सीखत किन बौरायउ
॥ १७३ ॥

२—गजविलसित, यथा ऽ।।ऽ।ऽ।।।।।।।।ऽ

नागरि कामदेव - नृप - कटक प्रबलु है।
भौंहँ कमान भाल बर तिलक सु सर है।
प्रेम सिपाह अस्त्र दृग चपल जु अति है।
तंबु नितंबु जानि *गज बिलसित* गति है॥ १७४॥

३—जलधरमाला छंद ऽऽऽऽ।।।।ऽऽऽऽ

चौहाँ नच्चै बिपुल कलापी ऐ री। पी-पी बोलै पपिहौ पापी बैरी।
कैसे राखै बिरहिनि बाला जी कौं। जारै कारी *जलधरमाला* ही कौं॥१७५॥

४—दीपकी, यथा

यौं होत है जाहिरे तो'हिये स्याम। ज्यौं स्वर्नसीसी भऱ्यो एनमद बाम।
तू स्याम-हिय-बीच यौं जाहिरे होति। ज्यौं नीलमनि मैं लसै *दीप* की जोति
॥ १७६ ॥

लक्षण

बिपिनतिलको ललन गौन रे रंगना।
सबन पिय तरहि गुरु प्रगट धवलहि गना।
छंद *निसिपाल* किय गौनगुन गौन रे।
चंद्र सब लघु बरन रुद्र गुरु जौन रे॥ १७७॥

५—विपिनतिलक ।।।।।ऽ।।।ऽ।ऽऽ।ऽ

भुवनपति रामप्रति कै सके जंग ना।
अरिन बनबास लिय संग लै अंगना।

---

[१७४] नितंबु–निजंबु (नवल० २, वेंक०)।

[१७६] लसै–बसै (सर०)।

[१७७] सबन–गवन (नवल०, वेंक०)। गौन–मौन (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[१७८] भुवन०–भुवनप्रति (लीथो, नवल०, वेंक०)।

जहँ सु तहँ 'दास' दमकै मनो दामिनी।
बिपिनतिलकै सकल वै भई भामिनी ॥ १७८ ॥

६—धवल, यथा ।।।।।।।।।।।।।।।।।।ऽ

सुरसरितजल अमल सुचित मुनिबरनि को।
गिरिस-अँग अहिप-अँग बसन बिधिघरनि को।
रजतगिरि तुहिनगिरि सरदससि नवल है।
सब उपर अधिक सियपतिसुजस *धवल* है ॥ १७९ ॥

७—निशिपाल, यथा ऽ।।।ऽ।।।ऽ।।।ऽ।ऽ

लाज कुलसाज गृहकाज बिसराइकै।
पा लगत लाल किहि जाल इत आइकै।
आसु चलि जाहु बलि पासु किन तासु के।
भाल हुअ लाल *निसि पा* लगत जासु के ॥ १८० ॥

८—चंद्र, यथा ।।।।।।।।।।ऽ।।।।।।।।

कमल पर कदलिजुग ताहि पर गिरिजुगल।
तिनहि पर बिनहि अवलंब सरबर सजल।
निरखि बिबि गिरि बहुरि कंबु भइ थकित मति।
उपर जगमगि रहउ चंद्र इक बिमल अति ॥१८१॥

इक्कीस मात्रा के छंद–(दोहा)

पवंगादि इकईस मैं, कीजै छंद-बिचार।
सत्रह सहस रु सात सै, इग्यारह प्रस्तार ॥१८२॥
चारि चकल इक पंचकल, जानि *पवंगम* बंस।
तीनि बेर पिय रग्गना, छंद होत *मनहंस* ॥१८३॥

---

[१७९] अहिप०—अहिअअंग (लीथो); अहिअंग (नवल०, वेंक०)। घरनि—धरनि (नवल०, वेंक०)। रजत—रगत (लीथो); संगत (नवल०; वेंक०)।

[१८०] जाहु—जाहि (लीथो, नवल०, वेंक०)। पासु—तासु (नवल० २, वेंक०)।

[१८१] ताहि—तिनहि (लीथो, नवल०, वेंक०)। सरबर—सरब (नवल०, वेंक०)। थकित—चकित (नवल०, वेंक०)।

[१८२] पवंगादि—यवंगादि (सर०)।

[१८३] रग्गना—रंगना (सर०); रागना (नवल०-२, वेंक०)।

१—पवंगम, यथा

एक कोउ मलयागिरि खोदि बहावतो।
तौ कत दक्षिनपौन तियानि सतावतो।
व्याकुल बिरहिनि बाल झखै भरि नैन कौं।
निंदति बारहि बार *पवंगम* सैन कौं॥१८४॥

२—मनहंस, यथा ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

खरजूथ मध्य तुरंग सोभ न पावई।
नहि स्यारमंडल सिंह द्यौस गवावई।
खलसंग त्यौं जिय संत के दुखदाउ है।
मन हंस के नहिँ काग-संगति चाउ है॥१८५॥

बाईस मात्रा के छंद (दोहा)

मालत्तीमालादि दै, छंद बाइसै मत्त।
भेद अठाइस सहस पर, छ सै सतावन तत्त॥१८६॥

लच्छण

सर्बे दीहा *मालतीमाला* साधा।
मो कर्नो ठै दुजबर प्रिय म *असंबाधा*।
दुजबर नंदनंद सज कर्न *बानिनी* ह्वै।
जानहु *बंसपत्र* भरनो भन लहु गुरु ह्वै॥१८७॥
समदबिलासिनी निज भजै न संखकर हो।
नल रन भाग सांतजुत जानहि *कोकिलको*।

---

[१८४] तियानि०—तिया निसि तावतो (नवल०, वेंक०)। झखै—कखै (नवल०, वेंक०)। निंदति—निंदहि (सर०)।

[१८५] खर—बर (सर०)। द्यौस०—द्वौ संग वावई (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[१८६] मत्त-मंत (सर०)। पर०—छह सै समत्तावन (सर०); पर सै सत्तावन (नवल०, वेंक०)।

[१८७] ठै—द्वै (लीथो, नवल०, वेंक०)। नंद०—नंदनदँन (वही)। सज—सर (वही); सच (सर०)। भन—भभ (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[१८८] नल—बल (सर०)।

मोतोयो सोगो करिकै *मायहि* पूरो।
वेई बर्नी नृत्यगती *मत्तमयूरो* ॥१८८॥

१—मालतीमाला, यथा SSSSSSSSSSSS

कित्ती तेरी भू मैँ है ज्यौँ कैलासा।
कैलासा मैँ जैसे संभू को बासा।
संभूजू मैँ गंगाजू की धारा सी।
गंगाजू मैँ *मालत्ती की माला* सी॥१८९॥

२—असंबाधा, यथा SSSSS|||||SSS

रात्यौ घोसो बाम जपत अति वै तोपै।
तूँ ताही को नाम कहति मति लै मोपै।
पापी पीड़ावंत जपत जन सू राधा।
जाके ध्याए होत अकलुष *असंबाधा* ॥१९०॥

३—बानिनी, यथा ||||S|S|||S|S|SS

ललित दुकान द्वार देखि सुभ को न आवै।
सुमुखि सुबोल भूलि नहिँ को बिकाइ जावै।
दिन दिन 'दास' होति अतिरूपखानिनी है।
करि बहु भाय सैँति मनु लेति *बानिनी* है॥१९१॥

४—वंशपत्र, यथा S||S|S|||S||||||S

घूँघुरवारि स्याम अलकैँ अतिछबि छलकैँ।
चारु मुखारबिंद लुबुध्यो कि भँवर ललकैँ।
सुभ्र बुलाक मुक्तद्युति कै छबि तिहुँ पुर की।
'दास' सु *बंसपत्र* यह कै सो नक्रिम सुर की॥ १९२॥

---

[१९०] जपत–(लीथो, नवल०, वेंक०)। सू–सुनु (वही)।

[१९१] नहिँ०–को नहिँ (लीथो, नवल०, वेंक०)। दास०–होति दास (वही)।

[१९२] सो०–सो नक्तम (लीथो, नवल०, वेंक०)।

५—समदविलासिनी, यथा ।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।।।ऽ

कुच खुलि जाति ऐंठि अँगिराति भीति धरिकै।
लखत गुपाललाल पटओट ओट करिकै।
परसत भूमि केस उर लाज लेस न कहूँ।
समदविलासिनी बसन तौ सँभार अजहूँ ॥ १६३ ॥

६—कोकिलक, यथा ।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।।ऽ।।ऽ

अधरपियूष पान तिय को न करै जब लौं।
मधुर सिंगारउक्ति कवि की न लगै तब लौं।
पियत न आम्रमौरमधु कौं जब लौं तिलको।
तब लगि सब्द होत मधुरो नहिँ *कोकिल को* ॥ १६४ ॥

७—माया, यथा ऽऽऽऽऽ।।ऽऽ।।ऽऽ

काहे कौं कीजै मन एती दुचिताई।
काहू सौं वाकी लिपि मेटी नहिँ जाई।
ताही कौं ध्यावै मन बाचा अरु काया।
सोई पालैगो जिन देही निर*माया* ॥ १६५ ॥

८—मत्तमयूर, यथा

देख्यो वाही अंगप्रभा कौं सुनि बाला।
जान्यो ह्वैहै आवति कारी घनमाला।
आयो चाहै आध घरी मैं बनमाली।
नच्चै कूकै *मत्तमयूरो* सुनि आली ॥ १६६ ॥

तेईस मात्रा के छंद–(दोहा)

हीरक *दृढ़पट* आदि दै, तेइस मत्त अनंत।
छयालिस सहस 'रु तीनि सै, अठसठि भेद कहंत ॥ १६७ ॥
न ल म ल भ भ कर्ना हृदै *दृढ़पट* आनहु चित्त।
तीनि टगन यक रगन दै, *हीरक* जानो मित्त ॥ १६८ ॥

---

[१६६] आयो–आवै (सर०)।

[१६८] नल०–रलतलाय कलकम ढढपट गुरुजन निच्च (लीथो, नवल०, वेंक०)।

१—दृढ़पट, यथा ।।।।SSS।S।।S।।SS

पहिरत जामा झीन के चहुँघा लगि झूम्यो।
बंदनि बाँधतहूँ दुहूँ हाथनि मैं घूम्यो।
डारि दयो री पेंच मैं मेरो मन आली।
*दृढ़ पटु*को कटि कसतहीं मोहन बनमाली ॥ १९९ ॥

२—हीरक छंद S।।।।S।।।।S।।।।S।S

जाहु न परदेस ललन लालच उर मंडिकै।
रत्ननि की खानि सुतिय मंदिर मैं छंडिकै।
बिद्रुम अरु लालनि सम ओठनि अवरेखिये।
हीरक अरु मोतिअ अस दंतनि लखि लेखिये ॥ २०० ॥

चौबीस मात्रा के छंद—(दोहा)

*लोला*दिक अहिपति कह्यो, छंदमत्त चौबीस।
'दास' पचहतरि सहस पर, जानौ बृत्ति पचीस ॥ २०१ ॥

लच्छण

पाँचो पाँचो गो द्विज बिच *बासंती* को ह्वै।
भास मतन ताटंकै देखो जात *चकित* ह्वै।
गो कर्नो पिय मो कर्नो द्वै लो दु ग *लोला*।
बिद्याधारी सब गुर अनियम ह्वैहै *रोला* ॥ २०२ ॥

१—वासंती छंद SSSSS।।।।SSSSS

देखे माते भौंर करत ये दोरादोरी।
आवैंगे गोपाल सदन कौं जोराजोरी।
बैरी बैठी सोच करति है जी मैं भूले।
लागे चैतौ मास बिमल *बासंती* फूले ॥ २०३ ॥

---

[१९९] के-को (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२००] अरु-औ (लीथो, नवल०, वेंक०)। अस-असम (लीथो, नवल०,); अरुन (वेंक०)।
[२०२] बिच-बिय (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२०३] लागे-लागो (नवल०, वेंक०)।

२—चकिता छंद ऽ।।।।ऽऽऽऽऽऽ।।।।ऽ

पीतबसन की काँखासोती मोहनि मन की।
सोहति सजनी त्यों पाटीरी खौरनि तन की।
तो तन कब के हेरैं आली नेसुक तकि तें।
निस्चल अँखिया सो हैं मानो खंजन *चकितें* ॥ २०४ ॥

३—लोला छंद ऽऽऽ।।ऽऽऽऽऽ।।ऽऽ

आएहूँ तरुनाई लीने हौ लरिकाई।
होती क्यों सखियाँ में आपै आप हँसाई।
लज्जा बैरिनि भानौ ठानौ मंजुल बोलैं।
प्यारे प्रीतमजू सों कीजै काम*कलोलैं* ॥ २०५ ॥

४—विद्याधारी छंद ऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ

बिद्या होती बैभौ मैं आनंदैकारी।
आपत्काले जीकी सिक्षा देनेवारी।
सुक्खे दुक्खे ही तें नाहीं होती न्यारी।
तातें हूजै मेरे भाई *बिद्याधारी* ॥ २०६ ॥

५—रोला

रबिछबि देखत घूघू घुसत जहाँ तहँ बागत।
कोकनि को ताही सों अधिक हियो अनुरागत।
त्यों कारे कान्हहि लखि मनु न तिहारो पागत।
हमकों तौ वाही तें जगत उज्यारो लागत ॥ २०७ ॥

पचीस मात्रा के छंद–(दोहा)

गगनांगादि पचीस कल, भेद होत हैं लाख।
इकइस सहस 'रु तीनिसै, तिरानबे पुनि भाख ॥ २०८ ॥
सौ कल चारि पचीस को, छंदजाति *गगनंग*।
पग पग पाँचै गुरु दिये, अतिसुभ कह्यो *भुजंग* ॥ २०९ ॥

---

[२०७] तें–सों (सर०)।
[२०९] पाँचै–पाँचो (लीथो, नवल०, वेंक०)।

गगनांगना छंद

निरखि सौतिजन हृदयनि रहै गरउ को ढंग ना।
पटतर हित सतकबि के मन को मिटै फलंगना।
बदन उघारि दुलहिया छनकु बैठि कढ़ि अंगना।
चंद पराजय साजहि लजित करहि *गगनंगना* ॥ २१० ॥

छब्बीस मात्रा के छंद-(दोहा)

छब्बिस कल मैं *चंचरी*, आदि लाख गनि लेहु।
सहस छानबे चारि सै, अट्ठारह कहि देहु ॥ २११ ॥
तीनि रग्गना पियहि दै, रांत *चंचरी* चारु।
सोरह दस जति अंत गुरु, नाम *बिष्नुपद* धारु ॥ २१२ ॥

१—चंचरी छंद ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

फागु फागुनमास बीतत धाम धामनि छंडिकै।
चैत मैं बन बाग बापिनि मैं रहै बपु मंडिकै।
फूल रंग सजै लता द्रुम भौंर बाद्य बजावहीं।
कीर कोकिल सारिका मिलि *चंचरी* कल गावहीं ॥ २१३ ॥

२—विष्णुपद छंद

कैसे कहौं सहससुरपति से सिगरे दृष्टि परै।
'दास' सेष सत सहसजोग कहबे को कहत डरै।
कह्यो लिख्यो चाहै अनदेखे तूँ निज ओर तकै।
हैहय सहस हजार *बिष्नुपद* महिमा लिखि न सकै ॥ २१४ ॥

सत्ताइस मात्रा के छंद-(दोहा)

हरिपद आदि सताइसै, जानौ छंद अनेक।
तीनि लाख सत्रह सहस, आठै सै दस एक ॥ २१५ ॥

---

[२१०] कढ़ि—करि (नवल० २, वेंक०)।
[२१२] तीनि०—रोसो जो जो मोरगन होत (सर०)।
[२१३] बापिनि—बारि न (सर०)। रहै—रही (वही)। बपु—छबि (वही)। मंडिकै—छंडिकै (वही)।
[२१४] हैहय—है यह (लीथो, नवल०, वेंक०)। हजार—रुजार (सर०)।
[२१५] जानौ—जानै (लीथो, नवल०, वेंक०)। एक—टेक (वही)।

हरिपद छंद

बिथा और उपचार और तूँ करै सु कौने ज्ञानु।
अजौँ न कछू नसान्यो मूरख कह्यो हमारो मानु।
पापबिबस गौतम की तिय ज्योँ मति ह्वै रही पषानु।
तासु भगति जौ 'दास' चहै तौ *हरिपद* उर मेँ आनु ॥ २१६ ॥

अट्ठाइस मात्रा के छंद-(दोहा)

अट्ठाइस मेँ *गीतिका*, आदिक कह्यो फनीस।
पाँच लाख चौदह सहस द्वै सै पर उनतीस ॥ २१७ ॥

लक्षण-(दोहा)

चारि सगन-धुज *गीतिका*, भरननजजय *नरिंद*।
अनियम बरन नरिंदगति *दोवै* कह्यो फनिंद ॥ २१८ ॥

१—गीतिका ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

इहि भाँति होहु न बावरी बलि चेत जी महँ ल्यावहू।
वृषभान को यह भौन है कह कान्ह कान्ह बतावहू।
मुसुकाति हौ किहि देखिकै कहि देखि गात गावावहू।
कर बीन लै अति लीन ह्वै यह *गीतिकाहि* सुनावहू ॥ २१९ ॥

२—नरिंद छंद ऽ।।ऽ।ऽ।।।।।।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ

सिंह बिलोकि लंक मृग दृग अरु चाल करी मदधारी।
जानहिँ आपु जाति निज मन महँ करैँ प्रीति अधिकारी।
कोल किरात भिल्ल छबि अद्भुत देखहिँ होहिँ सुखारी।
राम-बिरोध सुखहि बन बिचरहिँ सत्रु *नरिंदकुमारी* ॥ २२० ॥

३—दोवै छंद

तुम बिछुरत गोपिन के अँसुवन व्रज बहि चले पनारे।
कछु दिन गएँ पनारे तेँ वै उमड़ि चले ज्योँ नारे।

---

[२१६] और तूँ—अब तूँ (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[२२०] अरु—बरु (नवल० २, वेंक०)। आपु—आखु (लीथो)। बिचरहिँ—बिचरत (सर०)।

[२२१] अँसुवन—अँसुवा (लीथो, नवल०, वेंक०)। जाइ—जाउ (वही)।

वै नारे नदरूप भए अब कहौ जाइ कोइ जोवै।
सुनि यह बात अजोग जोग की ह्वैहै समुद नदी वै ॥ २२१ ॥

उंतीस मात्रा के छंद–(दोहा)

उनतिस मत्ता भेद में, *मरहट्टादिक* देखि।
आठ लाख बत्तिस सहस, चालिस भेद बिसेषि ॥ २२२ ॥

मरहट्टा छंद

सुनि मालवतिय-उरजन की नाईं निपटहि प्रगट न होइ।
अरु गुज्जरजुवतिपयोधर की बिधि निपट न राखहु गोइ।
करि प्रगट दुरे के बीच राखिये यौं अक्षर की चोज।
जेहि बिधि *मरहट्टबधू* राखति है बिच कंचुकी उरोज ॥ २२३ ॥

तीस मात्रा के छंद–(दोहा)

तीस मत्त में *सारँगी* चतुरपदो *चौबोल*।
तेरह लख छयालिस सहस दु सै ओन्हत्तरि डोल ॥ २२४ ॥
तिथि ग *सारँगी* चतुरपद दुकल सात चौमत्तु।
तीस मत्त *चौबोल* है, सोरह चौदह तत्तु ॥ २२५ ॥

१—सारंगी छंद

देखो रे देखो रे कान्हा देखीदेखा धायो जू।
कालिंदी मैं कूद्यो कालीनागै नाथ्यो ल्यायो जू।
नच्चैं बाला नच्चैं ग्वाला नच्चैं कान्हा के संगी।
बज्जै भेरी म्रीदंगी तंबूरा चंगी *सारंगी* ॥ २२६ ॥

२—चतुष्पद छंद

सँग रहे इंदु के सदा तरैया तिनके जिय अभिलाखै।
भुवजनित कीट बरषारितु को तिहि इंदुबधू सब भाखै।
यह जानि जगत में रूखरुखी है बासर सुमति बितावै।
अतिकूर ककाररूप बिनु चीन्हे परम चतुरपद पावै ॥ २२७ ॥

---

[२२३] मालव०–मालदुतिय (नवल०, वेंक०)।
[२२६] म्रीदंगी–रूदंगी (नवल०, वेंक०)।
[२२७] भुव०–भुवनजनित कटि (नवल०, वेंक०)। बितावै–बतावै (लीथो, नवल०, वेंक०)। पावै–गावै (नवल० २, वेंक०)।

३—चौबोल छंद

सुरपतिहित श्रीपति बामन ह्वै बलि भूपति सों छलहि चह्यो।
स्वामिकाजहित सुक्र दानहूँ रोक्यो बरु दृगहानि सह्यो।
सुमति होत उपकार लखहि तौ झूठो कहत न संक गहै।
परअपकार होत जानहि तौ कबहुँ न साँचौ *बोल* कहै॥ २२८॥

इकतीस मात्रा के छंद—(दोहा)

इकतिस मत्ता भेद मैं, छंद *सवैया* जोहि।
इकइस लख अठहत्तरै, सहस तीनि सै नो हि॥ २२९॥

यथा

अरब खरब तैं लाभ अधिक जहँ बिनु हर हासिल लाद पलान।
सेतिहि लय देवै आराजी औरहि दए न अपनो ज्यान।
ऐसो राम नाम को सौदा तोहि न भावत मूढ़ अयान।
निसिदिन जात मोहबस दौरत करत *सवैया* जनम सिरान॥ २३०॥

बत्तीस मात्रा के छंद—(दोहा)

रूपसवैया बत्तिसै, कला लाख पैंतीस।
चौबिस सहस 'रु पाँच सै, अठहत्तरि बिधि दीस॥ २३१॥

लच्छण प्रतितुक

आठो कर्ना पाए दीन्हे *ब्रह्मा* छंदै जानो धीरा।
सातो हारा सुप्रीमो पुनि सुप्रीमो गुर है *मंजीरा*।
करि हारा भोगहि कर्ना पीमहि मागो *संभू* को अंसी।
आठो गो नो ठानो दंडो गुरजुगसहित परम छबि *हंसी*॥ २३२॥
मत्ताक्रीड़ा चारो कर्ना यकल चतुर्दस गुरु तल धरिये।
सालूरक बिय गुरु छब्बिस लघु झलपर प्रगट बहुरि गुरु करिये।

---

[२२८] बरु—बहु (सर०)।

[२२९] इकइस०—एक लाख (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[२३०] बिनु—चिन (लीथो, नवल०, वेंक०)। आराजी—लाराजी (नवल०, वेंक०)।

[२३२] गो नो—मोनो (नवल०, वेंक०)।

[२३३] सालूरक—सालूरकर (नवल०, वेंक०)। भोतनु०—भोतनु नीतो

जानि ऋउंचौ गोलयगोलय दुज करि त्रिगुन सगुन झरपर त्यौँ।
भोतनुपीतो लगनि ललिय पै *तन्विय* की गति सकलक है यौँ ॥ २३३ ॥

१—ब्रह्मा छंद SSSSSSSSSSSSSSSS

तेरी ही कित्ती की गैबै मैँ बानी की बुध्यौ छीहै।
तेरी ही रोमाटोना मैँ ब्रह्मंडा कोटी कोटी है।
तूँ ही संसारै बिस्तारै तूँ ही पालै औ ज्यावै जू।
गोबिंदा तेरी इच्छा केतो संभू *ब्रह्मा* ठावै जू ॥ २३४ ॥

२—मंजीर छंद SSSSSSS॥SSS॥SSSS

मोह्यो री आली मेरो मन श्रीबृंदाबन सोभा देखैँ।
देखैँ रीझैगी तैँहू अति मैँ हौँ भावति रेखा रेखैँ।
ए री कान्हाजू के निर्तन कोऊ चित्त न राखै धीरा।
जोटीजोटाँ नच्चैँ ग्वालिनि बज्जै झालरि औ *मंजीरा* ॥ २३५ ॥

३—शंभू छंद ॥SSS॥SSS॥SSSSSSS

तिय अर्धंगा सिर मैँ गंगा गल भोगीराजा राजै जू।
निरखै संता निज नाचंता डमरू डौडौडौ बाजै जू।
सँग बेताली कर दै ताली सुखदानी बानी गावै जू।
धनि प्रानी ते जगु जानी जे नित ऐसो *संभू* ध्यावै जू ॥ २३६ ॥

४—हंसी छंद SSSSSSSS॥॥॥॥॥॥SS

जाको जी जासौँ पाग्यो सो सहजउ तदपि सुखद अति होई।
जो नाहीँ जी कौँ भावै सो अतिसुभ समुझि चहत किमि कोई।
कलबंकी कौँ कैसे भावै जदपि मुकुत अति जगतप्रसंसी।
संसारै नीको लागै पै अनकन कबहुँ चुगति नहिँ *हंसी* ॥ २३७ ॥

(वही)। ललिय०—लखियये (लीथो, नवल०, वेंक०) गति... कोटी है—'लीथो, नवल०, वेंक०' में नहीं है। ज्यावै जू—ज्यावै तू (नवल०, वेंक०)।

[२३४] ठावै—ठानै (नवल० २, वेंक०)।

[२३५] तैँ—तो (लीथो, नवल०, वेंक०)। के—को (नवल०, वेंक०)। निर्तन—नृत्तन (सर०)। ग्वालिनि—ग्वालरि (वही)।

[२३६] संता—सत्ता (नवल०, वेंक०)। नाचंता—नाचत्ता (वही)।

[२३७] संसारै—संसारौ (लीथो, नवल०, वेंक०)।

५—मत्ताक्रीड़ा छंद SSSSSSSSIIIIIIIIIIIIIIS

काहू कौं थोरो दोषी कै सहन कहत प्रभु परम बिपति कौं।
सो तौ जानै संसारै नारद सन भगत सहउ दुख अति कौं।
काहू काहू भूलें भूलें त्रिभुवनपति बकसत सुभगति कौं।
देखो हाथी *मत्ता क्रीड़ा* जल महँ करत तरेउ न भगति कौं॥ २३८॥

६—सालूर छंद SSIIIIIIIIIIIIIIIIIIIIIIIIIIS

सौदामिनि घन जिमि बिलसत हरि
पहिरि पियर पट सखि उहि रुख मैं।
देखत् कलुख भयेउ दिन उडुगन
हुतभुक परिय रुइय घन दुख मैं।
त्यौंही इहि रुख कुँवरि जमुनतट
निरखि निरखि बरषत सुख सुख मैं।
सालू रँग सँग लसति सुतन रुचि
छनरुचि सरि चमकति निसिमुख मैं॥ २३९॥

७—क्रौंच छंद SIISSSIISSIIIIIIIIIIIIIIS

सेरन कैसी पौरुष बातैं किमि करि कहहु डगर बिच बरनी।
क्यौं सुक सारी लौं पढ़ि जानै जतननि करि बक अरु बकघरनी।
ज्ञानिय बिद्या जातु जनाए नहिं जड़ कबहुँ बुधनि यह बरनी।
तूल *कउंचो* क्यौं करि हंसै गनि गनि धरत धरत पग धरनी॥ २४०॥

८—तन्वी छंद SIISSIIIIIISSIISIIIIIISS

देखि ससंकै अमल जगत मैं लोग बखानत सहित जुन्हाई।
आननसोभा तरुनि प्रगटिकै जीतन सेत बसन सजि आई।

---

[२३८] देखो—देखा (लीथो, नवल०, वेंक०)। तरेउ०—न रहउ (वही)।

[२३९] सालूर—सालू (लीथो, नवल०, वेंक०)। पहिरि—परिहरि (नवल०, वेंक०)। निरखि निरखि—निरखि (लीथो, नवल०, वेंक०)। निसि—तिसि (नवल०); तिमि (नवल० २, वेंक०)।

[२४०] सेरन कैसी—कैसो (सर०)। कहहु०—कह उडुगन (नवल० २, वेंक०)। अरु—औ (लीथो, नवल०, वेंक०)। बक—धक (नवल०, वेंक०)।

फूल सरन् सौं मुगधनि बस कै जाहिर भो जग मनमथ धन्वी।
जीतति ताको चितवनिसर सौं धीर प्रबीन बिकल करि *तन्वी* ॥ २४१ ॥

सुंदरी छंद–(दोहा)

ससग बिप्र दु ग सारवति छंद *सुंदरी* जान।
पद पद मत्ता बतीस गनि, चौबिस बर्न प्रमान ॥ २४२ ॥

सुंदरी, यथा ।।ऽ।।ऽऽ।।।।ऽऽऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ

कुच की बढ़ती यौं छिन छिन की मेरो मन देखत रीझिमयो।
दरकी अँगिया चारिक पहिरैं अरु चारिक को टुटि बंद गयो।
कटि जात परी है खिन खिन खीनी या बिधि जोबन जोर ठयो।
जबही तब नीबी कसतहि देखै *सुंदरि* को दिन द्वैक भयो ॥ २४३ ॥

(दोहा)

इमि द्वै तैं बत्तीस लगि, बृत्ति बानबे लाख।
सत्ताइस हज़ार पर, चौ सै बासठि भाखु ॥ २४४ ॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मात्राप्रस्तारके छंदोवर्णनं नाम पंचमस्तरंगः ॥ ५ ॥

६

मात्रामुक्तक छंद–(दोहा)

घटे-बढ़ैं कल-दुकलहूँ, वहै भेद अभिराम।
तेहि गनि मत्ता छंद के मुक्तक मैं गुनधाम ॥ १ ॥

---

[२४१] ससंकै–ससेकै (नवल०, वेंक०)। जगत–जच्च (लीथो, नवल०, वेंक०)। सहित०–सहि जुठहाई (लीथो, नवल०, वेंक०)। सौं–को (नवल २, वेंक०)। जीतति–जीतन (लीथो, नवल०, वेंक०)। बिकल–सकल (नवल० २); खकल (वेंक०)।

[१] भेद–नाम (सर०)।

चित्र तथा बनीनी छंद–(दोहा)

सोरह सत्रह कलनि को, *चित्र बनीनी* होइ।
चारि चौक मैँ तीसरो जगन कहै सब कोइ ॥ २ ॥

यथा SS||S|S|SS

लीन्ही जिन मोल भाय चोखैँ। दीन्ही तुमकौँ बिथा अजोखैँ।
कीजै अँखियान की कनीनी। ल्याई सुबिचित्र हौँ *बनीनी* ॥३॥
नँदलाल गनै न सीत औ घाम। सैवै तुव द्वार आठहू जाम।
झुकती तुम तासु लेतहीँ नाम। पबि चाहि कटोर तो हियो बाम ॥४॥

(दोहा)

सत्रह अट्ठारह कलनि, छंद *हीरकी* तंत।
नंद धुजनि बिरमत चलै, दुकल त्रिकलहू अंत ॥५॥

यथा S||SSS|SS|S

'दास' कहै बुद्धि थकै धीर की। देखि प्रभा अद्भुत पाटीर की।
बेसरि की केसरिया चीर की। बारनि की ढारनि की *हीर की* ॥६॥

पुनः

दंतन की चारु चमक देखि देखि। बिज्जुछटा मंद प्रभा लेखि लेखि।
मोहित ह्वै 'दास' घरी चारि चारि। को न चलै जीवन धन वारि वारि ७

(दोहा)

अट्ठारह वानइस सकल, छंद *भुजंगी* मानि।
नैनततग है *चंद्रिका*, वाकी गति पहिचानि ॥ ८ ॥

भुजंगी छंद |SS|SS|SS|S

लला लाड़िली की लखी पीठि मैँ। तहाँ स्याम बेनी परी दीठि मैँ।
मनो कांचनी केदलीपत्र है। *भुजंगी* परी सोवती तत्र है ॥ ९ ॥

चंद्रिका छंद ||||||SS|SS|S

कुरव कलरवौ हू करै बोलिकै। दुरदगति हरै मंद ही डोलिकै।
दसनदुति लजीली करै दामिनी। हसनि सन जिते *चंद्रिका* भामिनी ॥१०॥

---

[२] जगन–यगन (नवल०, वेंक०)।
[४] झुकती–फूकती (नवल० २, वेंक०)।

नांदीमुखी–(दोहा) ||||||SSSSSSSSS

पंच लहू पर मगन त्रय, *नांदीमुखी* बिचित्र।
गति लीन्ही नियमौ तजै, वहै नाम है मित्र ॥ ११ ॥

यथा

जनमे प्रभु लियो औध मैं लूटि माँची।
लूट्यो सब सबनि बस्तु एकौ न बाँची।
दुजनि किय बिदा बाकबादै सुखी कै।
नृपति जब उठे श्राद्ध *नांदीमुखी* कै ॥ १२ ॥

(दोहा)

वोनईस कै बीस कल, छंद होत *चितहंस*।
नंद करन द्वै अंत रो, कै है रत्न अवतंस ॥ १३ ॥

यथा

पद्म बैठक मुक्त भोजन छोड़िकै।
तू सहै दुख भूख को पनु वोड़िकै।
'दास' हास करै घने बकबंस रे।
तोहि ह्याँ बसुबास न उचित *हंस* रे ॥ १४ ॥

पुनः

भौंर नाभी बीच गोते खाइ खाइ। बूड़ि गो री चित्त मेरो हाइ हाइ।
चाहि गिरि गिरि गाहि तिरि तिरि फेरि फेरि। 'दास' मेरे नैन थाके हेरि हेरि ॥ १५ ॥

सुमेरु छंद–(दोहा)

कल वोनईसै बीस को, छंद *सुमेरु* निबेरि।
लहू मगन लहु मगन यो, कहूँ अंत लहु फेरि ॥ १६ ॥

---

[१२] औध–अवध (नवल०, वेंक०)। बाकबादै–वाकदत्वै (सर०)।
[१४] न उचित–उचित न (लीथो, नवल० वेंक०)।
[१६] मगन यो–भगन यो (नवल० २, वेंक०)। कहूँ०–लहू बलय लिखु फेरि (सर०)।

यथा

करै कीबो कुचर्चा लोगु आली। लुगाई का करैंगी कै कुचाली।
प्रभा जो कान्हजू कौं ऊतरी है। सु मेरे नैन दू की पूतरी है ॥१७॥

प्रिया छंद-(दोहा)

बाईसै तेईस कल, छंद *प्रिया* पहिचानि।
चलनि चारु संगीत की, बरनत हैं सुखदानि ॥१८॥

यथा

तो छूटत छूटी सिगरी सीतलई है।
यौं अंग सबै वा दिन तें आगि भई है।
राखे रहिहै 'दास' हमै दूरि हिया सौं।
यौं पंथी संदेसो कहिबी प्रान*प्रिया* सौं ॥१९॥

हरिप्रिया छंद-(दोहा)

बीस इकीसौ बाइसौ, कला *हरिप्रिया* छंद।
तीनि छकल पर देहु गुरु, नंद कि द्वै गुरु बंद ॥२०॥

यथा

हरति जु है दीनन को संकट बहुतै।
बिनवत तिहि चितवनि हित 'दास' दास है।
करनि हरनि पालनि तूँ देवि आपु ही।
संभुप्रिया ब्रह्मप्रिया *हरिप्रिया* तुँ ही ॥२१॥

पुनः

करति जु है दीननि के संकट को हीन।
बिनवत तिहिं 'दास' दास दीन।

---

[१७] कीबो-कोबो (लीथो, नवल०); कोवा (नवल २, वेंक०)।
का-क्या (लीथो, नवल० वेंक०) सु-सो (वही)।
[१९] पंथी-पथिक (सर०)।
[२०] द्वै-है (नवल०, वेंक०)।
[२१] बहुतै-बहुत है (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२२] बिनवत-बिन व्रत (लीथो, नवल०)।

करनि हरनि पालनि तूँ देवि सर्ब ठौर।
संभुप्रिया ब्रह्मप्रिया *हरिप्रिया* न और ॥२२॥

पुनः

हरति जु है दीननि को संकट बहुतेरो।
बिनवत तिहि चितवनि हित 'दास' दास तेरो।
करनि हरनि पालनि तूँ देवि आपु ही है।
संभुप्रिया ब्रह्मप्रिया *हरिप्रिया* तुँ ही है ॥२३॥

दिग्पाल छंद—(दोहा)

होत छंद *दिग्पाल* कल, बाईसो तेईस।
चौबीसौ पूरो भए, है दूनो *दिगईस* ॥२४॥

यथा

सो पायँ आजु डोलै मही सीत धूप मैं।
बिधि बुद्धि तुच्छ जाकी महिमा अनूप मैं।
हर जासु रूप राखै हिय बीच सर्बदा हि।
दिग्पाल भाल जाकी रज राजती सदा हि ॥२५॥

पुनः

सखि प्रान की सँघाती प्यारी नहीं लगै री।
सुखदानि बानि तेरो अति दूरि को भगै री।
अलि कान्ह प्रान मेरो निज साथ लै गयो है।
मन आपनो निमोही वह मोहिँ दै गयो है ॥२६॥

अविधा छंद

सगना रग्गना जगंतु लगै। रग्गन रगान लमकारो दै।
अविधा छंद पाय नाग कहंत। सोरहो सत्रहो अठारह संत ॥२७॥

---

[२४] भए—भयो (नवल०, वेंक०)।
[२५] हिय—हिये (लीथो, नवल०, वेंक०); हियो (नवल० २)।
[२६] अति०—सुनि दूरि के (सर०)।
[२७] रग्गन०—रग्गना रग्गनात को र दगै (लीथो, नवल०, वेंक०)।

यथा

कान्ह की त्यौर तेग चोखी है। रीति यामैं कहा अनोखी है।
पबि से मो हियँ जु लागि उठै। *अबिधा* ज्यौं बियोग-आगि उठै ॥२८॥

सायक छंद

सगनागो सगनागो सगना। रगनादीहुँ नहीँ दो सगना।
लहु आद्यंत परे सत्रह लेखि। नाम है *सायक* या छंदहि देखि ॥२९॥

यथा

अँखियाँ काजर की कोरनहीँ। भृकुटी औ तिरछी त्योरनहीँ।
'दास' ये प्राननि के घायक हैँ। बिसु हैँ खंजर हैँ *सायक* हैँ ॥३०॥

भूप छंद

सगनागो सगना। रग्गना आदि भना।
लहु औ अंत भलोइ। *भूप* सिव सूर कलोइ ॥३१॥

यथा

भावती जाति किते। नेकु तो ताकि इतै।
तेरो ई घायल हौँ। भू पर्यौ हायल हौँ ॥३२॥

मोहनी छंद

सगनागो सगनागो सगनागो सगना।
रग्गना आदि दियेहु न कछू दो सगना।
बाईसै तेईस कल अंत लहू चौबिस होइ।
मोहनी छंद कहैँ याहि सयाने सब कोइ ॥३३॥

ढूँढेहूँ है न तिती पंकज के कानन मैँ।
सुषमा 'दास' जिती मोहन के आनन मैँ।
न तिती जानि परै मन्मथ के बानन मैँ।
मोहनी रीति जिती है बँसुरी तानन मैँ ॥३४॥

---

[२८] ज्यौँ-क्यौँ (सर०)। सूर-सूत (वही)।

[३२] भू पर्यौ-भूप सो (नवल० २); पूप सो (लीथो, नवल० १, वेँक०)।

[३३] दो-दी (लीथो, नवल०, वेँक०)।

अथ गीताप्रकरण–(दोहा)

चौबिस कल गति चच्चरी, *रूपमाल* पहिचानि।
लघु दै आदि पचीस कल, *सुगीतिका* उर आनि।
द्वै द्वै आदि छबीस करि, *गीता* कहौं बिसेषि।
गुरु दै अंत सुगीति के, *सुभगीता* अवरेखि।
करि गीता गुरु अंत *हरिगीता* अट्ठाईस।
अंत लहू *अतिगीत* करि, सताइसौ उनतीस ॥३५॥

रूपमाल, यथा

जात है बन बादिहीं गल बाँधिकै बहु तंत्र।
धामहीं किन जपत कामद रामनाम सुमंत्र।
ज्ञान की करि गूदरी दृढ़ तत्त्व तिलक बनाउ।
'दास' परम अनूप सगुन सुरूप *माला* ठाउ ॥३६॥

सुगीतिका छंद

हजार कोटि जु होइ रसना एक एक मुखग्र।
इडा अरब्बिन जौ बसै रसनानि मंडि समग्र।
खरौ रहै ढिग 'दास' तनु धरि बेद परम पुनीत।
कहै कछु अहिराज तब ब्रजराज तुव जसु *गीत* ॥३७॥

गीता छंद

मन बावरे अजहूँ समुझि संसार भ्रम-दरियाउ।
इहि तरन कौं यह छोड़िकै कछु नाहिँ और उपाउ।
लै संग भक्ति मलाह करिया रूप सौं लव लाउ।
श्रीरामसीताचरित चरचा सुभ्र *गीता* नाउ ॥३८॥

शुभगीता छंद

बिलोकि दुलहिनि बेलि के तन फूलमाल बिराजई।
रसाल दूलह सीस सुंदर मौर की छबि छाजई।

---

[३६] ठाउ–गाउ (नवल० २, वेंक०)।
[३७] ढिग–दिग (नवल०, वेंक०)। बेद–देव (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[३८] तरन०–तरनिका (लीथो, नवल०, वेंक०)।

बसंत के गृह आजु ब्याह उछाह परम पुनीत है।
चकोर कोकिल कीरभामिनि गावती *सुभ गीत* है ॥३९॥

हरिगीत छंद

बनमध्य ज्यों लखि साजसंजुत ब्याध बासहि सज्जतो।
पसु पक्षि मृगया जोग निज निज जीव लै लै भज्जतो।
त्यों मोह मद पैसुन्य मत्सर भाजि जात सभीत है।
जब 'दास' के उर भक्तिसंजुत जोसतो *हरिगीत* है ॥४०॥

अतिगीता छंद

चैत चाँदनि मैं उतै मुरली बजाई नंदनंद।
तान सों बनितान कों गलितान किय बिधि बंद बंद।
ता समै बृषभानुनंदिनि ह्वाँ गई चलि फंद फंद।
मोहि मोहनऊ गिरे अवलोकिकै मुखचंद चंद ॥४१॥

शुद्धगा-लक्षण

यगन गुरू करि चौगुनो, छंद *सुद्धगा* होइ।
अंत घटै कल दुकलहू, वहै कहै सब कोइ ॥४२॥

यथा

झखै बैठी कहा बौरी अरी कान्हा कहाँ जैहै।
सु तौ याही घरी मैं देखि तेरे पास ही ऐहै।
सिखायो मानिकै मेरो सितारा लै बजावै तूँ।
सखी वा द्यौस की नाईं केदारा *सुद्ध गावै* तूँ ॥४३॥

लीलावती छंद

द्वै कल दै फिरि तीस कल, *लीलावती* अनेम।
दुगुन पद्धरिय के किये, जानो वहै सप्रेम ॥४४॥

यथा

पीतंबर मुकुट लकुट कुंडल बनमाल वैसोई दरसावै।
मुसुकानि बिलोकनि मटक-लटक बढ़ि मुकुर छाँह तें छबि पावै।

---

[४०] जोसतो—ज्योंसतो (लीथो, नवल०, वेंक०)। 'सर०' में चतुर्थ पंक्ति नहीं है।

[४१] सों०—सोवति (नवल०, वेंक०)।

[४५] लकुट कुंडल—लकुट (लीथो, नवल०, वेंक०)।

मो बिनय मानि चलि बृंदाबन बंसी बजाइ गोधन गावै।
तौ *लीलावती* स्याम मैं तो मैं नेकु न उर अंतर आवै ॥४५॥

पुनः

जेहि मिलति न तूँ तेहि रैन साँझही तेँ रट लावत तोहि तोहि।
अधरात उठत करि हाय हाय परजंक परत पुनि मोहि मोहि।
कब के ढिग ठाढ़े हहा खात यह खीन गात गति जोहि जोहि।
किय केवल तूँ यह लालहाल दिनरैनि बिसासिनि कोहि कोहि ॥४६॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मात्रामुक्तछंदोवर्णनं नाम षष्ठस्तरंगः ॥ ६ ॥

७

जातिछंद-वर्णन-(दोहा)

प्रस्तारनि की रीति सों, करि कछु भिन्न बिभाग।
जातिछंद बर्नन कियो, बहुबिधि पिंगल नाग ॥ १ ॥

दोहा-प्रकरण

तेरह ग्यारह तेरहै, ग्यारह *दोहा* चारु।
दोहा उलटे *सोरठा*, बिदित सकल संसारु ॥ २ ॥

(दोहा)

मन बालक समुझाइये, तुम्हहि बिनै रघुनाथ।
नतरु बेलाए कौन के, आवै चंदो हाथ ॥ ३ ॥

दोहा-दोष

प्रथम तीसरे चरन मैं, जगन जोहिये जासु।
सो दोहा *चंडालिनी* बोलै बिबिध बिनासु ॥ ४ ॥
बारह लघु बाईस लघु, बत्तिस लौं लघु मानि।
चारि बरन दोहा कही, बाकी लघु लौं जानि ॥ ५ ॥

---

[४६] खीन–खिन (लीथो, नवल०, वेंक०)। केवल–केत्र तूँल (सर०)।

सोरठा

सोवन दीजै धाइ, भीजै नेकु बिभावरी।
अबै गहो जनि पाइ, *सोर ठानि है मेखला* ॥ ६ ॥

दोही–दोहरा

दोहा के तेरहनि मैं, द्वै द्वै कला बढ़ाइ।
कीजै *दोही दोहरा*, एकै एक घटाइ ॥ ७ ॥

दोही

जनि बाँह गहो हौं जानती, लाल तिहारी रीति।
हौ निरमोही नित के करौ *दो ही* दिन की प्रीति ॥ ८ ॥

दोहरा

जातन कनक तर्‍यो ना, लगत चौहरो लाल।
मुकुतमाल हिय तहरो, *दोहरो* बेंदा भाल ॥ ९ ॥

उल्लाला

करि बिषमदलनि पंद्रह कला, सम पायनि तेरह रहै।
तुक राखि अठाइस कलनि पर, *उल्लाला* पिंगल कहै ॥१०॥

यथा

कहि काव्य कहा बिन रुचिर मति, मति सु कहा बिनहीं बिरति।
कह बिरतिउ *लाल* गोपाल के चरननि होइ जु प्रीति अति ॥११॥

चुरियाला

दोहा दल के अंत मैं और पंच कल बंद निहारिय।
नागराज पिंगल कहै *चुरियाला* सो छंद बिचारिय ॥१०॥

यथा

मैं पिय-मिलन अमिय गुनो बलि बिसु समुझि न तोहि निहोरति।
झटकि झटकि कर लाड़िली *चुरिया* लाखन की कत फोरति ॥१३॥

---

[७] एकै–एकौ (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[११] कह–यह (सर०)।

[१२] दल–तल (लीथो, नवल०, वेंक०)। निहारिय-निहारिये (वही)। बिचारिय–बिचारिये (वही)।

[१३] निहोरति–न हो रति (नवल०, वेंक०)।

ध्रुवा छंद

पहिलहि बारह कल करु बहुरेहुँ सत्त ।
इहि बिधि छंद *ध्रुवा* रचु उनइस मत्त ॥१४॥

यथा

ध्रुवहि छाँडि जो अध्रुव सेवन जाइ ।
अध्रुव तासु नसैहै ध्रुवहु नसाइ ॥१५॥

घत्ता छंद—(दोहा)

दस बसु तेरह अर्ध मैं, समुझिय *घत्ता* छंद ।
ग्यारह मुनि तेरह बिरति, जानौ *घत्तानंद* ॥१६॥

यथा

मोहनमुख आगे अति अनुरागे मैं जु रही ससिछबि निदरि ।
दुख देत सु आली बिनु बनमाली *घत्ता* लहि चूकत न अरि ॥१७॥
सखि सोवत मोहि जानि कछु रिस मानि आइ गयो गति चोर की ।
सोयो ढिगहि चुपाइ कहि नहि जाइ *घत्ता* नंदकिसोर की ॥१८॥

यथा

हरिपद दोवै चौबोला, द्वै ही द्वै तुक जानि ।
दोहा-प्रकरन-रीति मैं, लिख्यो 'दास' उनमानि ॥१९॥

चौपैया-प्रकरण—(दोहा)

चारि चरन मैं जति जमक, तुक बरननि करि नेम ।
जातिछंद बरन्यो अहिप, सोऊ सुनौ सप्रेम ॥२०॥

चौपैया-छंद

दस बसु बारह बिरति तैं, *चौपैया* पहिचानि ।
चारि चरन चौगुन किये, होत निपट सुखदानि ॥२१॥

---

[१९] चौबोला—चौबोलो (लीथो, नवल०, वेंक०) ।
[२०] सोऊ—सोइ (सर०) ।

चौपैया, यथा

तल बितल रसातल गगन भुवनतल सृष्टि जिती जग माहीं।
पुर राम सुथल मैं कानन जल मैं बाहि रहित कछु नाहीं।
पिय मिलहि न रामहिं तजि सिय बामहिं नहिं बचाउ कहुँ भागें।
सुरपतिसुत काँचो सब जग नाँचो बाँचो पैंआ लागें ॥२२॥

लक्षण प्रतितुक

दस बसु दस चारै बिरति बिचारै *पदमावति* तल गुरु दोई।
याही बिधि ठानौ *दुर्मिल* जानौ अंत सगन कर्नो होई।
दस बसु करि यौं ही चौदह त्यौं ही अंत सगन है *दंडकलो*।
दस बसु बसु संगी पुनि रसरंगी होत *त्रिभंगी* छंद भलो ॥२३॥

(दोहा)

आठ आठ चौकल परै, चारै रूप निसंक।
भूलहु जगन न दीजिये, होत छंद सकलंक ॥२४॥

पद्मावती

ब्यालिनि सी बेनी लखि छबिसेनी तजत न आसा मोरै जू।
ससि सो मुख सोभित लखि ह्वौ लोभित लावत टकी चकोरै जू।
निकसत मुख स्वासैं पाइ सुबासैं संग न छोड़त भौंरै जू।
बाहिर आवति जब *पद्मावति* तब भीर जुरति चहुँ ओरै जू ॥२५॥

दुर्मिल छंद

इक त्रियब्रतधारी परउपकारी नित गुरुआज्ञा-अनुसारी।
निरसंचय दाता सब रसज्ञाता सदा साधुसंगति प्यारी।
संगर मैं सूरो सब गुनपूरो सरल सुभाएँ सत्ति कहै।
निरदंभ भगति बर बिद्यनि आगर चौदह नर जग *दुर्मिल* है ॥२६॥

दंडकला छंद

फल फूलनि ल्यावै हरिहि सुनावै ए है लायक भोगनि की।
अरु सब गुन पूरी स्वादनि रूरी हरनि अनेकनि रोगनि की।

---

[२२] कछु–कहु (सर०, लीथो)। [२५] ह्वौ–ह्वै (सर०)।
[२६] नित–पित (नवल० २, वेंक०)। सुभाएँ–सुभावं (लीथो, नवल०, वेंक०)।

हँसि लेहि कृपानिधि लखि जोगी बिधि निंदहि अपने जोगनि की।
नभ तेँ सुर चाहैँ भागु सराहैँ फिरि फिरि दंडक लोगनि की।।२७।।

त्रिभंगी छंद

समुझिय जग जन मैँ को फल मन मैँ हरिसुमिरन मैँ दिन भरिये।
झिगरो बहुतेरो घेरु घनेरो मेरो तेरो परिहरिये।
मोहन बनवारी गिरिबरधारी कुंजबिहारी पगु परिये।
गोपिन को संगी प्रभु बहुरंगी लाल *त्रिभंगी* उर धरिये ॥२८॥

जलहरण छंद–(दोहा)

लघु करि दीन्हे बत्तिसौ, *जलहरना* पहिचानि।
तिरभंगी पर आठ पुनि, *मदनहरा* उर आनि ॥२९॥

यथा, जलहरण छंद

सुदि लयउ मिथुन रबि उमड़ि घुमड़ि
फबि गगन सघन घन झपकि झपकि।
करि चलति निकट तन छनरुचि छन
छन खग अब झर सम लपकि लपकि।
कछु कहि न सकति तिय बिरह
अनल हिय उठत खिनहिँ खिन तपकि तपकि।
अति सकुचित सखियन अध करि
अँखियन लगिय *जल हरन* टपकि टपकि ॥३०॥

मदनहरा छंद

सखि लखि जदुराई छबि अधिकाई भाग
भलाई जानि परै फल सुकृत फरै।
अति कांति सदन मुख होतहि सन्मुख
'दास' हिये सुख भूरि भरै दुख दूरि करै।
छबि मोरपखन की पीत बसन की चारु
भुजन की चित्त अरै सुधि बुधि बिसरै।
नव नील कलेवर सजल भुवनधर
बर इंदीबर छबि निंदरै मद *मदन हरै* ॥३१॥

---

[२८] गोपिन को–गोपिन के (सर०)।
[३०] अध–तर (सर०)।

लक्षण–(दोहा)

एकै तुक सोरह कलनि, *पायकुलक* गुरु अंत।
चहुँ तुक भागन जमक सो, *अलिला* छंद कहंत ॥ ३२ ॥

पायकुलक

दृग आगैं सोवतहु निहारौं। हिय तें क्यौं हरिरूप निकारौं।
हौं निज तन सभ रतन बिचारौं। केहि *उपाय* कुलकानि सँभारौं ॥३३॥

अलिला छंद

भ्रुव मटकावति नैन नचावति। सिंजित सिसिकिन सोर मचावति।
सुरत समै बहुरंग रचावति। *अलि लालन* हित मोद सचावति ॥३४॥

सिंहविलोकित छंद–(दोहा)

चारि सगन कै द्विज चरन, *सिंहबिलोकित* एहु।
चरन अंत अरु आदि के, मुक्तपदग्रस देहु ॥ ३५ ॥

यथा

मुनि-आश्रम-सोभ धरयो तिअहीं। अहि कच सँग बेसरि मोर जहीं।
जहिँ 'दास' अहितमति सकल कटी। कटि *सिंह बिलोकित* गति करटी ॥३६॥

लक्षण–(दोहा)

रोला मैं लघु रुद्र पर, *काव्य* कहावै छंद।
ता आगे उल्लाल दै, जानहु छप्पै बंद ॥ ३७ ॥

काव्य छंद

जनमु कहा बिन जुवति जुवति सु कहा बिन जोबन।
कह जोबन बिन धनहि कहा धन बिन अरोग तन।
तन सु कहा बिन गुनहि कहा गुन ज्ञानहीन छन।
ज्ञान कि बिद्याहीन कहा बिद्या सु *काव्य* बिन ॥ ३८ ॥

---

[३२] सो–सोइ (सर०)।

[३३] सोवतहु–सोवतहि (सर०)। सभ–सम (नवल २, वेंक०)।

[३६] जहिँ–जेहि (सर०); जहँ (लीथो, नवल०, वेंक०)। कटि–कर (वही)।

छप्पै छंद

भाल नैन मुख अधर चिबुक तिय तुव बिलोकि अति।
निर्मल चपल प्रसन्न रत्त सुभ बृत्त थकी मति।
उपमा कहँ ससि खंज कंज बिंबिय गुलाब बर।
खंड थान थित प्रात पक्व प्रफुलित सुसोभधर।
सारद किसोर सुभगंध मृदु नवल 'दास' आवत न चित।
जु कलंकरहित जुग सर लहित डारगहित षट्पद-सहित। ३९।

लक्षण

सिंहबिलोकन रीति दै, दोहा पर रोलाहि।
कुंडलिया उद्धत बरन त्रिजति *अमृतधुनि* चाहि॥ ४०॥

कुंडलिया

साँई सब संसार को संतत फिरत असंग।
काम जारि कीन्हो भसम मृगनैनी अरधंग।
मृगनैनी अरधंग 'दास' आसन मृगछाला।
सुनिये दीनदयाल गरे नरसिर की माला।
सुनिये दीनदयाल करौ अजगुत सब ठाईं।
करन गहे *कुंडलिय* बिदित भयहरन गोसाईं॥ ४१॥

अमृतध्वनि छंद

धुनि धुनि सिर खल त्रिय गिरहि सुनत राम धनु सब्द।
लग्गिय सर झरि गगन महि जथा भाद्रपद अब्द।
अब्द निनद करि क्रुद्ध कुटिल अरि जुभ्भिक्ष मरत लरि।
मुंड परत गिरि रुंड लरत फिरि खग्ग पकरि करि।
रिक्ष प्रबल भट उद्धत मर्कट मर्दत तिहि पुनि।
निर्तत सुर मुनि गित्त कहत जय कृत्ति *अमृतधुनि*॥ ४२॥

(दोहा)

पायाकुलक त्रिभंगियौ, होत मुक्तपदग्रस्त।
छंद कहत *हुल्लास* है, करि तुक आठ समस्त॥ ४३॥

---

[३९] बिंबिय०—बिंबिधनु लाब (सर०)।
[४२] गगन—सकल (सर०)। जुभ्भिक्ष—युक्ति (नवल २, वेंक०)। गित्त—मित्र (वही)।

हुलास छंद

कान्ह जनमदिन सुर नर फूले।
नभधर निसिबासर समतूले।
महि तें महरि अबीर उड़ावैं।
दिवि तें देवि सुमन बरसावैं।
सुमननि बरसावैं हरष बढ़ावैं तजि तजि आवैं जानन कौं।
सजि तिय नरभेषनि सहित अलेखनि करहिँ असेषनि गानन कौं।
तिनि लोगनि की गति दाननि की अति निरखि सचीपति भूलि रहै।
ब्रजसोभ प्रकासहि नंद बिलासहि 'दास' *हुलास*हि कौन कहै ॥४४॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मात्राजातिछंदोवर्णनं
नाम सप्तमस्तरंगः ॥ ७ ॥

८

(दोहा)

जाति छंद प्राकृतनि के, निपट अटपटे ढंग।
'दास' कहै *गाथा*दि दै, तिनकी भिन्न तरंग ॥ १ ॥
बिषमनि बारह कल समनि, पंद्रह ठारह बीस।
सम पद तीजो गन जगन, *गाथा* प्रकरन ईस ॥ २ ॥

लक्षण

सम पद *गाहू* पंद्रह पंद्रह अट्ठारह ठारह *उग्गाहा*।
अट्ठारह पंद्रह *गाहा* कहि पंद्रह अट्ठारह *बिग्गाहा*।
बीसै बीस *खंध* कल बीसै अट्ठारह सम पद *सिंघिनी*।
सबके रबि कल बिषम दलनि सम अट्ठारह बीसै *गाहिनी*॥३॥

गाहू छंद

सिव सुर मुनि चतुरानन, जाको लहै नाही थाहू।
पारवार कोउ जान न, हरिनामसमुद्र *अवगाहू* ॥ ४ ॥

उग्गाहा

सिव सुर मुनि चतुरानन, जाको कबहूँ नहीं लहै थाहा।
पारवार कोउ जान न, हरीनामै संमुद्र *अवगाहा* ॥ ५ ॥

गाहा बिग्गाहा अर्थ मैं जाति

बारह लहुआ *बिप्री*, बाईसा *छत्रिनी* गाहो।
बत्तीसा सो *बैसी*, बाकी लहु है *सुद्रिनी* बिगाहो ॥ ६ ॥

खंधा छंद—जगनफल

एक जगन *कुलवंती*, दोइ जगन्न *गिहिनी* सु है सुनि बंधो।
जगनबिहीना *रंडा बेस्या* गावौ बहु जगन्न को *खंधो* ॥ ७ ॥

गाहिनी तथा सिंहिनी

सुनि सुंदरि मृगनैनी, तूँ प्रभासमुद्र *अवगाहिनी* राजै।
हंसगमनि पिकबैनी, तो लंक बिलोकि *सिंहिनी* लाजै ॥ ८ ॥

उलटि पढ़े गाहिनी

चपला गाथा

चपला गाथा जानो, यह दोइ जगंनु है समै पाया।
पिंगल नाग बखानो, गुरु दोइ तुकंत मैं ठाया ॥ ९ ॥

(दोहा)

ताहि *जघनचपला* कहैं, दल दूसरे ज दोइ।
प्रथम दलहि मैं जगनु द्वै, *मुखचपला* है सोइ ॥ १० ॥

---

[४] लहै नाही–नाही लहै (सर०); लहै नही (लीथो, नवल १, वेंक०); लहै नहि (नवल २)।

[५] सुर०–मुनि सिव (लीथो); मुनि सुर (नवल०, वेंक०)। हरी०–हरिनामै समुद्र (सर०); हरिनाम समुद्र (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[७] बेस्या०–ब्यास्या गाहा (सर०)।

विपुला गाथा

प्रथम पाय कल तेरहै, सत्रहै मत्त हैं बिये नाथा।
तिसरे पय ग्यारहै, चौथे सोरह *विपुला गाथा* ॥ ११ ॥

रसिक छंद—(दोहा)

ग्यारह ग्यारह कलनि को, षटपद *रसिक* बखानि।
सब लघु पहिलो भेद है, गुर दै बहु विधि ठानि ॥ १२ ॥

यथा

हसत चखत दधि मुदित। झुकत भजत मुख रुदित।
त्रसित तियनि मिलि रहत। रिसजुत बिरतिहि गहत।
अगनित छबि मुखससि क। सिसु तव नवरस *रसिक* ॥ १३ ॥

खंजा छंद—(दोहा)

सात पंच लघु जगन गो, मत्ता यकतालीस।
यों ही करि दल दूसरो, *खंजा* रच्यो फनीस ॥ १४ ॥

यथा (||||||||||||||||||||||||||||||||||||||||||ऽ|ऽ)

सुमुखि तुअ नयन लखि दह गहेउ झखनि झखि
गरल मिसि भँवर निसि गिलत नितहि कंज है।
निमि तजउ सुरतियनि मृग फिरत बनहि बन
हुअ हरुअ मदन-सर थिर न रहत *खंज* है ॥ १५ ॥

लक्षण—(दोहा)

खंजा के दल अंत पर, द्वै गुरु दै सुखकंद
आग गाहा अर्ध करि, जानहि *माला* छंद ॥ १६ ॥

माला छंद

लगत निरखत ललित सकल तन श्रमकलित
व्रजअधिप-अँगवलित सुरतिसमय सोहती बाला।
मरकत-तरु जनु लवदी फलि कनकलता सुकुत*माला* ॥ १७ ॥

[६-११] सर० में नहीं है।
[१५] निमि०—निसि निमित्त ज्यौं (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१६] अंत—अर्ध (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१७] समय—सम (लीथो, नवल०, वेंक०)।

शिष्या छंद–(दोहा)

पहिले दल में चौबिसै, लहु पर जगनहि देहु।
पुनि बत्तिस पर जगनु दै, *सिष्या* गति सिखि लेहु ॥ १८ ॥

यथा

सुभरदनि बिधुबदनि गुनसदनि जगहदनि नहिँ ताहि सरिष्यु।
कुँअरि मम बिनय श्रवन सुनि समुझि पुनि मनहिँ गुनि न
प्रिय प्रति रिस कुमति *सिष्यु* ॥ १९ ॥

चूड़ामणि छंद–(दोहा)

दोहा गाहा कों करो, मुक्तपदग्रस बंद।
नागराज पिंगल कह्यो, सो *चूड़ामनि* छंद ॥ २० ॥

यथा

दिनहीं में दिनकर दिपै निसिहीं में ससिजोति।
जगदंबा-द्युति दिवस निसि जगमग जगमग होति।
जगमग जगमग होती होरी के ज्यों गरेरि चिनगारैं।
चक्रवर्ति *चूड़ामनि* जाके पग भूतल हजारैं ॥ २१ ॥

अथ रड्डा छंद

प्रथम तीय पंचम चरन, पहिले जानि अखेद।
दूजो चौथो फेरि गुनि, जानहि *रड्डा* भेद ॥ २२ ॥

यथा

तेरह ग्यारह *करभी* बरनि।
नंद भुवन हर ढरनि। *बानइस* रुद्र *मोहनी* अरनि।
चारुसेनि तिथि हरनि। तिथि रबि मत्ता *भद्रा* बरनि।
तिथि रबि तिथि हर तिथि पयनि, *राजसेनि* रड्डाहि।
तालंकिनि तिथि कल अधिक, दोहा सब तल चाहि ॥ २३ ॥

---

[१९] सभ–सम (नवल २, वेंक०)।
[२१] होरी०–होरी ज्यों गोरी (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२३] मोहनी–नोहनी (लीथो, नवल०, वेंक०)।

तालंकिनि रड्डा, यथा

बालापन बीत्यो बहु खेलनि।
जुवा गई तियकेलनि। रह्यो भूलि पुनि सुतबित रेलनि।
जिय गल डारि जेलनि। अजहुँ समुझि तजि मूरख पेलनि।
काल पहूँच्यो सीस पर नाहिन कोऊ अड्डु।
तजि सब माया मोह मद रामचरन भजु रड्ड॥ २४॥

(दोहा)

पाँच चरन रचना उपर, दीजै दोहा अंत।
सात भेद अहिपति कह्यो, नव पद रड्डा तंत॥ २५॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मात्राजातिछंदोवर्णनं नाम अष्टमस्तरंगः॥ ८॥

९

मात्रादंडकवर्णनं—(दोहा)

छब्बिस सों बढ़ि बर्न जो, दंडक बर्न बिसेषि।
बत्तिस तें बढ़ि मत्त जो, मत्तादंडक लेखि॥ १॥

झूलना छंद—(दोहा)

दस दस दस मुनि जति चरन, छंद *झूलना* तत्त।
दुकल सिरहु स्वै सैतिसो, वानतालीसौ मत्त॥ २॥

---

[२४] केलनि—हेलनि (सर०)। डारि०—डारी तेरे जेलनि (नवल०, वेंक०)।

[१] बढ़ि—चढ़ि (सर०)।

[२] दुकल०—दुकबलि रहु स्वौ (लीथो, नवल०, वेंक०)।

यथा

पानि पीवै नहीँ पान छीवै नहीँ बास अरु बसन राखै न नेरो।
प्रान के ऐन मैँ नैन मैँ बैन मैँ ह्वै रह्यो रूप गुन नाम तेरो।
बिरहबस ऐसे हो है वहौ कै मही राखिहै कै नहीँ प्रान मेरो।
तोहि तकि याहि संदेह के *झूलना* झूलतो चित्त गोपाल केरो ॥ ३ ॥

दीपमाला–(दोहा)

दीपक को चौगुन किये, *दीपमाल* सुखदानि।
चालिस कल सिर द्वै घटै, अंत बढ़े *बिजया* नि ॥ ४ ॥

दीपमाला, यथा

लहिकै कुहूजामिनी मत्तगजगामिनी चली बन मिलन कौँ नंदलालाहि।
कै सुघर मनमथ्थ रचि स्वर्न की बेलि लै चल्यो गहि सहित सिंगारथालाहि।
सँग सखी परबीन अति प्रेम सौँ लीन मनि आभरन जोतिछबि होति बालाहि।
कै 'दास' के ईस ढिग जाति लीन्हे चली भामिनी भाय सौँ *दीपमालाहि*॥५

बिजया

सितकमलबंस सी सीतकर-अंस सी
बिमल बिधिहंस सी हीरबरहार सी।
सत्य गुन सत्व सी संतरस तत्व
सी ज्ञान गौरत्व सी सिद्धि बिस्तार सी।
कुंद सी कास सी भारतीबास सी
सुरतरुनि-हास सी सुधारससार सी।
गंगजलधार सी रजत के तार सी
कीर्ति तव *बिजय* की संभु-आगार सी ॥ ६ ॥

---

[३] बास–बाम (लीथो, नवल,० वेंक०)। नैन मैँ–नैन नेह्वै (नवल २, वेंक०)। वहौ-वैही (नवल०, वेंक०)।

[५] लहि०–लहिकै कुह जामिनी (सर०); लहिकै कुहु जामिनी (नवल २, वेंक०)।

[६] सत्य–सत्त्र (लीथो)। सत्त्र–सत्य (सर०, लीथो, नवल०, वेंक०)। तत्व–बंस (लीथो, नवल०, वेंक०)। हास–हार (वही)। गंग०–किंचि रघुबीर की हरनि भयभीर की बिजैगिर ह्वै कढ़ी सरसरित धार सी (सर०)।

(दोहा)

तीनि तीनि बारह बिरति, दस जति दै तुक ठानि।
छंद छियालिस मत्त को, चंचरीक पहिचानि॥ ७॥

चंचरीक छंद

जाको नहिँ आदि अंत जननि जनक देव कंत
रूप रंग रेखरहित ब्यापक जग जोई।
मच्छ कच्छ कोल रूप बामन नरहरि अनूप
परसुराम राम कृष्न बुद्ध कलिक सोई।
मधुरिपु माधौ मुरारि करुनामय कैटभारि
रामादिक नाम जासु जाहिर बहुतेरो।
कोमल सुभ बास मंजु सुषमा सुखसील गंज
ताको पदकंज चित्तचंचरीक मेरो॥ ८॥

इति श्रीभिखारीदास कायस्थकृते छंदार्णवे मात्राछंदवृत्तिमुक्तकजाति-
दंडकवर्णनं नाम नवमस्तरंगः॥ ९॥

१०

वर्णवृत्ति में वर्णप्रस्तार-भेद [सवैया मात्रिक]

एक बर्न को *उक्ता* प्रकरन तासु भेद द्वै कीजै पाठ।
द्वै *अत्युक्ता* भेद चारि हैँ *मध्या* तीनि भेद हैँ आठ।
चारि *प्रतिष्ठा* सोरह बिधि पाँचै *सुप्रतिष्ठा* भेद बतीस।
षट *गायत्री* चौसठि सातै *उष्णिक* सौ पर अट्ठाईस॥ १॥
आठै बर्न *अनुष्टुप* द्वै सै छप्पन भेद कहत फनिराउ।
नौ अक्षर को *बृहती* प्रकरन भेद पाँच सौ बारह ठाउ।
दसै बर्न को *पंगति* प्रकरन भेद सहस ऊपर चौबीस।
ग्यारह को *त्रिष्टुप* प्रकरन गनि द्वै हजार अरु अठतालीस॥ २॥

बारह को *जगती* प्रकरन तेहि भेद हजार चारि छानबे।
तेरह अक्षर को *अतिजगती* इक्यासी सत पर बानबे।
चौदह को *सकरी* सोरहै सहस तीनि सै चौरासीय।
पंद्रह *अतिसकरी* सहस बत्तीस सात सै अठसठि कीय॥ ३॥
सोरह *अष्टि* सहस पै सठिसत पाँच छतीस अधिक लै धरी।
सत्रह को *अत्यष्टि* लाख पर यकतिस सहस बहत्तरि करी।
अट्ठारह *धृति* छब्बिस ऐतु इकीस सै उपर चव्वालीस।
बावन ऐतु बयालिस सै अट्ठासी बिधि *अतिधृति* उनईस॥ ४॥
बीस बरन को *कृति* प्रकरन है तासु भेद गनि ले दस लाखु।
अठतालीस सहस्र पाँच सै और छिहत्तरि ऊपर राखु।
यकइस बरन *प्रकृति* प्रकरन है बीस लाख पहिले सुनि मित्त।
सत्तानबे सहस्र एक सै बावन ऊपर दीजै चित्त॥ ५॥
छंद होइ बाईस बरन को *अतिकृति* प्रकरन जानि अखेद।
यकतालीस लाख चौरानबे सहस तीनि सै चारै भेद।
छंद कहावै *बिकृति* प्रकरन तेइस बर्न होहिं जेहि माह।
लाख तिरासी सहस अटासी छा सै आठ गनै अहिनाह॥ ६॥
संकृति नाम बरन चौबिस को तासु भेद हैं एक करोरि।
सतसठि लाख हजार सतहतरि दुइ सै ऊपर सोरह जोरि।
अतिकृति प्रकरन बरन पचीसै तीनि करोरि लाख पैंतीस।
चौवन सहस चारि सै बत्तिस भेद बिचारि कहत फनिईस॥ ७॥
उत्कृति होत बरन छब्बिस को भेद छ कोटि यकहतरि लक्ष।
आठ हजार आठ सै चौसठि क्रम तें दुगुन बढ़ै परितक्ष।
तेरह क्रोरि बयालिस लक्षो सत्रह सहस सात सै होइ।
छब्बिस अधिक जोरि सब भेदन ठीक दियो चाहै जो कोइ॥ ८॥

(दोहा)

सबके कहत उदाहरन, बाढ़ै ग्रंथ अपार।
कहूँ कहूँ तातें कहत, बरनछंद बिस्तार॥ ९॥

लक्षण—(दोहा)

एक गुरू *श्री* छंद है, *कामा* द्वै गुरु बंद।
ध्वजा एक *महि* नंद यक *सार* सु प्रिय *मधु* छंद॥१०॥

---

[१०] कामा–काभा (लीथो, नवल १)।

तीनि बरन प्रस्तार जो, म य र स त ज भ न पाठ।
आठौ गन तेँ 'दास' भनि, छंद होत हैँ आठ ॥११॥
ताली ससी प्रिया रमनि, अरु *पंचाल नरिंद।*
आठ सहित *मंदर कमल,* म य र स त ज भ न छंद ॥१२॥

चारि वर्ण के छंद—(सोरठा)

तिर्ना क्रीड़ा नंद, रामा धरा नगन्निका।
कला तरनिजा छंद, गनि *गोपाल मुद्राहि* पुनि ॥१३॥
धारी बीरो कृष्न, बुद्धी निसि हरि सोरहो।
भेद कहत कवि जिष्न, चारि बरन प्रस्तार के ॥१४॥

(दोहा)

मत्तपथारहु मैँ परैँ उदाहरन ये आइ।
तिर्ना क्रीड़ा नंद अरु, धरा गोपाल सवाइ ॥१५॥

तिर्ना छंद SSSS

धर्मज्ञाता। निर्भैदाता। तृष्नाहिन्नो। जीवै *तिन्नो* ॥१६॥

क्रीड़ा छंद ISSS

हमारी सो। हरै पीड़ा। कलिंदी जो। करै *क्रीड़ा* ॥१७॥

नंद छंद SISS

योँ न कीजै। जान दीजै। हौ कन्हाई। नंद आई ॥१८॥

धरा छंद SSIS

सो धन्य है। औ गन्य है। सीतावरै। जो ही धरै ॥१९॥

गोपाल छंद SSSI

ए जंजाल। मेटो हाल। ह्वै दायाल। श्री *गोपाल* ॥२०॥

(दोहा)

इक इक गन बाहुल्य तेँ, छंद होत बहु भाँति।
'दास' दिखावै भिन्न करि, तेहि तरंग की पाँति ॥ २१ ॥

---

[२०] 'लीथो, नवल०, वेंक' मेँ नहीँ है।

[२१] इक इक–इकइस (लीथो, नवल०, वेंक०)। करि–ते (सर०)।

लक्षण [चौपाई]

या र स त ज भगननि दूनो भरु । छहो छंद के नाम समुझि धरु ।
संखनारि *जोहा* *तिलका* करु । *मंथानो* *मालती* *दुमंदरु* ॥२२॥

शंखनारी छंद ।ऽऽ।ऽऽ

लखे सुभ्र ग्रीवा । महासोभसीवा । परेवा कहा री । कहा *संखनारी* ॥२३॥

जोहा छंद ऽ।ऽऽ।ऽ

रूप को गर्ब छ्वैं । भूलती खर्ब वै ।
सुक्ख तौ साथ मैं । लाल *जो हाथ* मैं ॥ २४ ॥

तिलका छंद ।।ऽ।।ऽ

अधिको मुख हो । किय क्यों ससि सो ।
सजिकै सखि यों । *तिल* *काजर* सों ॥ २५ ॥

मंथान छंद ऽऽ।ऽऽ।

गोबिंद को ध्यानु । सारंस तूँ जानु । बिद्यामही मानु । है ज्ञान-*मंथानु*॥२६॥

मालती छंद ।ऽ।।ऽ।

लखौ बलि बाल । महा छबिजाल । लसै उर लाल, सु*मालति* माल ॥२७॥

दुमंदर छंद ऽ।।ऽ।।

बाल-पयोधर । मो हिय सो हर । मानस-अंदर । मानु *दु मंदर* ॥ २८ ॥

लक्षण—(दोहा)

तीनि नंद ग *समानिका* *चामर* सात अनूप ।
पाँच नंद गो *सेनिका* धुज ल *सेनिका* रूप ॥ २९ ॥

समानिका छंद ऽ।ऽ।ऽ।ऽ

देवि द्वार जाहि तूँ । बोलि पाहि पाहि तूँ ।
राखिहै कृपानि कै । खास '*दास*' *मानिकै* ॥ ३० ॥

---

[२२] करु—करि (लीथो, नवल०, वेंक०) । दुमंदरु—दुमंदरि (लीथो, नवल १, वेंक०) ।

[२४] सुक्ख—सुख्य (नवल १, वेंक०); मुख्य (नवल २) । तौ—नौ (लीथो, नवल०, वेंक) । जो—जा (सर०) ।

[२७] 'सर०' में नहीं है ।

चामर छंद ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ

बाल के सुदेस केस कालिंदी-प्रभा दली।
पन्नगीकुमार की सवार की कहा चली।
या बिथा फिरै निकुंज कुंज पुंज भामरो।
कामधेनु पाय रो रहै अतेव *चामरो* ॥ ३१ ॥

रूपसेनिका छंद ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।

चली प्रसून लेन वृंदबाल। सुमंजु गीत गावती रसाल।
बिलोकिये प्रभा अनूप लाल। बनी सु *रूपसेनिका* बिसाल ॥ ३२ ॥

लक्षण-(दोहा)

चारि *मल्लिका चंचला* आठ *गंड* दस नंद।
प्रमानिका धुज चारि को आठ *नराच* सुछंद ॥ ३३ ॥

मल्लिका छंद

चित्त चोरि लेत पौन। मंद मंद ठानि गौन।
मोहनी बिचित्र पास। *मल्लिका* प्रसून बास ॥ ३४ ॥

चंचला छंद

स्याम स्याम मेघओघ ब्योम मैं अलील सैन।
ल्याइयो प्रसूनबान काल की अपार सैन।
होति आजु काल्हि मैं बियोगिनीन प्रानहानि।
चंचला नचै न मीचु नाचती चहूँ दिसानि ॥ ३५ ॥

गंड तथा वृत्त छंद

राम रोष जानि हार लाभ मानि संभु जो नचै उताल।
पाइकै मृदंग सोर आवई कुमार को मयूर हाल।
होइ तौ कुतूहलै बिलोकि सुंड कौं चलै डराइ ब्याल।
चौंकि चिघ्घरै गनेस गुंजि *गंड* तें उड़ै मिलिंदजाल ॥ ३६ ॥

---

[३१] अतेव-अतेय (नवल०, वेंक)।
[३२] सु रूप-मनोज (नवल २)।
[३३] गंड-गंद (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[३६] वृत्त-चित्र (लीथो, नवल०, वेंक०); त्रित्र (सर०)।

प्रमाणिका, यथा

न है समै घटान की। सलाह मान ठान की।
जताइ जाइ दामिनी। सुक्षिप्र *मानि कामिनी* ॥ ३७ ॥

नराच छंद

मृगाक्षि एक द्वार तें सुभाव हीँ चितै गई।
कह्यो न जाइ मो हियैं अघाइ घाइ कै गई।
पर्‌यो प्रतीति आजु मोहिं 'दास' बैन साँचु है।
खरो *नराच* तें तियाकटाक्ष को नराचु है॥ ३८ ॥

लक्षण [मुक्तादाम]

भुजंगप्रयात लछीधर नाम। स *तोटक सारँग मोतियदाम*।
स *मोदक* 'दास' छ भेद बिचारि। य रो स त जो भ न चौगुन धारि॥३९॥

भुजंगप्रयात ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

छुटे बार देखे हुटे मोर पाखैं। बिना डीठि की ह्वै गई बृंद-आखैं।
जिते सर्ब स्रिंगार बेनी-प्रभा सौं। *भुजंगो प्रयातो* त्रपा पाइ जासौं॥४०॥

लक्ष्मीधर, यथा ऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽ

संख चक्रो गदा पद्म जा हाथ मैं। पक्षिराजा चढ़्यो बैसनो साथ मैं।
'दास' सो देव ध्यावै सदा जीय मैं। जो रहै चारु *लक्ष्मी धरै* हीय मैं॥४१॥

तोटक छंद ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ

घरहाइनि घैर बगारन दे। हरिरूप-सुधा उर धारन दे।
तलफैं अँखिया निकि टारन दे। अब *तो टक* लाइ निहारन दे॥४२॥

सारंग छंद ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।

कीजै कुहू जानि क्यों रास को भंग। बेगै चलौ स्याम पै साजि या ढंग।
कस्तूरि ही लेप कै लेहि सर्बंग। प्यारी सजै आजु सारी *निसा रंग*॥४३॥

---

[४०] हुटे–धरे (लीथो, नवल०, वेंक०)। बृंद–सर्ब (सर०)। जिते–जित्यौ (वही)।

[४१] बैसनो–वैष्णवो (नवल २, वेंक०)।

[४२] घैर–गैर (नवल१, वेंक)।

[४३] या–यौ (सर०)। रास–शस (लीथो, नवल १); शशि (नवल २, वेंक०)।

मोतीदाम छंद ।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।

तमाल के ऊपर है बकपाँति । कि नीलसिला पर संत-जमाति ।
नछत्रनि अंक लिये घनस्याम । कि स्याम हिये पर *मोतियदाम* ॥४४॥

मोदक छंद ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।

नारि उरोजवतीनि कुँ रोजनि । कान्ह उचाट भरे जिउ रोजनि ।
लीबे है कूबरि को चरनोदक । कूबर जासु बसीकर *मोदक* ॥४५॥

लक्षण (दोहा)

अंत भुजंगप्रयात के लघु इक दीन्हे *कंद* ।
तीनि भगन द्वै गुरु दिये *बंधु* दोधको छंद ॥ ४६ ॥
मोदक सिर कै बंधु सिर द्वै लघु *तारक* बंद ।
पंच सगन *अमरावली* छ यगन *क्रीड़ा* छंद ॥ ४७ ॥
पंच भगन गुरु एक को छंद कहावै *नील* ।
तीनि सगन सिर करन दै है *मोटनक* सुसील ॥ ४८ ॥

कंद छंद ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।

चहूँ ओर फैलाइहै चंद्रिका चंद ।
खुलैगी सुगंधै फुलैगी लता-बृंद ।
जगत्प्रान त्यौं डोलिहैं मंद ही मंद ।
कबै चैतु ऐहै चिदानंद को *कंद* ॥ ४९ ॥

बंधु छंद ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ

आरत तेँ अति आरत है जू । आरतिवंत पुकारत है जू ।
'दास'हु को दुख दूरि बहायो । तौ प्रभु आरत*बंधु* कहायो ॥५०॥

तारक छंद ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ

परजंक मयंकमुखी चलि ऐहै । सबिलास बिलोकि हिये लगि जैहै ।
बिरहागि भरे हियरे सियरैहै । कर*तार* कबै वह बासर ऐहै ॥ ५१ ॥

---

[४५] भरे—भए (सर०) ।
[४८] गुरु०—सिर करन दै (सर०) ।
[४९] त्यौं—तौ (सर०) । चैतु—चेतु (नवल २, वेंक०) ।
[५१] भरे०—भरो हियरो (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

||ऽ||ऽ||ऽ||ऽ||

तजिकै दुखगंज हजारक जारक । कत सोवत भूमि भटारकटारक ।
भजि ले प्रहलाद-उबारक बारक । जग को निस्तारक तारकतारक ॥५२॥

भ्रमरावली छंद ||ऽ||ऽ||ऽ||ऽ||ऽ

बलि बीस बिसे उहि आजुहि ल्यावत हौं ।
तुम्हरे हिय की सब ताप बुझावत हौं ।
इन कीर चकोरनि दूरि करौ बन तें ।
भ्रमरावलि बेगि बिडारहु कुंजन तें ॥ ५३ ॥

क्रीड़ा छंद |ऽऽ|ऽऽ|ऽऽ|ऽऽ|ऽऽ|ऽऽ

दुहूँ ओर बैठी सभा सुभ्र सोहै सु मानो किनारा ।
रही दूरि लौं फैलि है चाँदनी चारु ज्यौं गंगधारा ।
सजे चूनरी नील नच्चंति चंद्राननी बारदारा ।
करै चंद्र *क्रीड़ा* मनो संग लै सर्बरी सर्ब तारा ॥ ५४ ॥

नील छंद ऽ||ऽ||ऽ||ऽ||ऽ||ऽ

मोहन-आनन की मुसुकानि अनूप सुधा ।
होत बिलोकि हजार मनोभव-रूप मुधा ।
पीत पटा पर 'दास' नछावरि बीजुछटा ।
नील कलेवर ऊपर कोटिक *नील* घटा ॥ ५५ ॥

मोटनक छंद ऽऽ||ऽ||ऽ||ऽ

मोहै मनु बेनु बजाइ अली । मूसै उर-अंतर भाँति भली ।
कीजै किन ब्यौत अगोटन को । है चोर यही मन-*मोटन* को ॥५६॥

(दोहा)

भुजँगप्रयातहि आदि दै, सब चौगुनो बनाउ ।
होत परम सुखदानि है, भाखो भोगीराउ ॥ ५७ ॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे गणबाहुल्यके छंदोवर्णनं
नाम दशमस्तरंगः ॥ १० ॥

---

[५३] बलि—चलि (नवल०, वेंक०) ।
[५५] पटा—परा (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

११

वर्णसवैया-प्रकरण (दोहा)

इकइस तें छब्बीस लगि, बरनसवैया साजु।
इक इक गन बाहुल्य करि, बरन्यो पन्नगराजु ॥ १ ॥

लक्षण [किरीट]

सात भ है *मदिरा* गुरु अंतहु दै लघु और *चकोर* कहौ गुनि।
ताहु गुरू करि *मत्तगयंद* लहू *मदिरा* सिर *मानिनि* ये सुनि।
आठ करौ य *भुजंग* र *लच्छिय* सो *दुमिला* तहि *आभर* है पुनि।
जाहि सु *मोतियदाम* बनावहु भागन आठ *किरीट* रचौ चुनि ॥ २ ॥

मदिरा छंद

दीन अधीन ह्वै पाँय परी हौं अरी उपकार को धावहि।
मेरी दसा लखि होहि प्रसन्न दया उर-अंतर ल्यावहि।
नैनन की हिय की बिरहागिनि एकहि बार बुझावहि।
श्रीमनमोहन-रूपसुधा *मदिरा* मद मोहिँ छकावहि ॥ ३ ॥

तूँ जुक्त पढ़े दूसरो मदिरा।

चकोर छंद

सोहत है तुलसीबन में रमि रास मनोहर नंदकिसोर।
चारिहूँ पास हैं गोपबधू भनि 'दास' हिये मैं हुलास न थोर।
कौल उरोजवतीन को आनन मोहननैन भ्रमै जिमि भौंर।
मोहन-आनन-चंद लखैं बनितान के लोचन चारु *चकोर* ॥ ४ ॥

---

[३] दसा–दया (लीथो, नवल०, वेंक०)। नैनन की–नैनन के (नवल२, वेंक०)।

[४] भनि–मनि (नवल०, वेंक०)। के–को (सर०)।

मत्तगयंद छंद

सुंदरि सुभ्र सुबेषि सुकेसि सुश्रोनि सुठौनि सुदंति सुसैनी।
तुंगतनी मृदुअंग कृसोदरि चंद्रमुखी मृगसावकनैनी।
सोन का बास 'रु 'दास' मिलै गुनगौरि प्रिया नवला सुखदैनी।
पीन नितंबवती करभोरुह *मत्तगयंद*गती पिकबैनी ॥ ५ ॥

मानिनी छंद

प्रफुल्लित 'दास' बसंत कि फौज सिलीमुख भीर देखावति है।
जमाति प्रभंजन की गहि पत्रनि मानबिभंजनि धावति है।
नए दल देखि हथ्यारन डारि भटै तियसंगति भावति है।
चढ़ाइ कै भौंह कमाननि *मानिनि* काहे तुँ बैर बढ़ावति है ॥ ६ ॥

भुजंग छंद [८ यगण]

तुम्हैं देखिबे की महाचाह बाढ़ी मिलापै बिचारै सराहै स्मरै जू।
रहै बैठि न्यारी घटा देखि कारी बिहारी बिहारी बिहारी ररै जू।
भई काल बौरी सि दौरी फिरै आजु बाढ़ी दसा ईस का धौं करै जू।
बिथा मैं गसी सी *भुजंगै* डसी सी छरी सी मरी सी घरी सी भरै जू ॥ ७ ॥

लक्षी छंद [८ रगण]

बादि ही आइकै बीर मो ऐन मैं बैन के घाव कीबो करै घावरी।
आपनो तत्तु हौं एक ही बा कह्यो कौन कीबो करै बात-फैलाव री।
'दास' हौं कान्ह-दासी बिना मोल की छाँडि दीन्ह्यो सबै बंस बंसावरी।
ज्ञानसिक्षानि तासों जु दी रक्षिये *लक्षिये* जाहि प्रत्यक्ष ही बावरी ॥ ८ ॥

---

[५] सोन–सोने (लीथो, नवल०, वेंक०)। गौरि–गौगि (सर०)। करभोरुह–करभोरुअ (वही)।

[६] तुँ–को (सर०)।

[७] स्मरै–ररै (सर०)। काल–काल्हि (वही)। बाढ़ी–औरो (सर०); बैठी (नवल०, वेंक०)। दसा–बिथा (सर०)। मरी–भरी (नवल० वेंक०)।

[८] घावरी–थावरी (नवल०, वेंक०)। आपनो–आपनी (लीथो, नवल०, वेंक०)।

दुमिला छंद [८ सगण]

सखि तोपहँ जाचन आई हौं मैं उपकार कै मोहि जिआवहि तूँ ।
ताहि तात कि सौं निज भ्रात कि सौं यह बात न काहू जनावहि तूँ ।
तुव चेरी हौं होउँगी 'दास' सदा ठकुराइनि मेरी कहावहि तूँ ।
करि फंद कछू मोहिं या रजनी सजनी ब्रजचंदु *मिला*वहि तूँ ॥ ९ ॥

आभार छंद [८ तगण]

ये गेह के लोग धौं कातिकी न्हान कौं ठानिहैं कालिह एकंक ही गौन ।
संबाद कै बादि ही बावरी होइ को आजु आली रहौ ठानेही मौन ।
हौं जानती हौं न धौं सीख कौने दई नंद को लाल गोपाल धौं कौन ।
आभार ह्यौ द्वार को ताहि कौं सौं पिकै मोहिं औ तोहिं ह्याँ राखते भौन १०

मुक्तहरा छंद [८ जगण]

पठावत धेनु दुहावन मोहि न जाउँ तो देवि करौ तुम तेहु ।
छुटाइ भज्यो बछरा यह बैरि मरू करि हौं गहि ल्याई हौं गेहु ।
गई थकि दौरत दौरत 'दास' खरोट लगैं भइ बिह्वल देहु ।
चुरी गइ चूरि भरी भइ धूरि परो टुटि *मुक्तहरा* यह लेहु ॥११॥

किरीट छंद [८ भगण]

पाँयनि पीरिय पाँवरिया कटि केसरिया दुपटा छबि छाजित ।
गुंज मिले गजमोतिय-हार मैं रात सितासित भाँति है भ्राजित ।
अंग अपार प्रभा अवलोकत होत हजार मनोभव लाजित ।
बाल जसोमति लाल यई जिनके सिर मोर*किरीट* बिराजित ॥१२॥

---

[१०] एकंक-एकक ही (लीथो, नवल १, वेंक०); एकेक (नवल २)। ठानेही—साधेही (सर०)। हौं न—नाहिँ (वही)। ह्यौ-ह्याँ (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[११] देवि—देखि (नवल २, वेंक०)। तेहु—टेहु (वही)। भज्यो—गयौ (सर०)।

[१२] रात—रीति (लीथो, नवल०, वेंक०)। भाँति-भ्राँति (सर०)। भ्राजित—भाजित (लीथो); भाजिन (नवल १)।

लक्षण (दोहा)

आठ सगन गुरु *माधवी*, सुप्रिय *मालती* चाहि।
सप्त ज यो *मंजरि* कहै, सप्त भरो *अलसाहि* ॥१३॥

माधवी, यथा [८ सगण, ऽ।ऽ]

बिन पंडित ग्रंथ-प्रकास नहीं बिन ग्रंथ न पावत पंडित भा है।
जग चंद बिना न बिराजति जामिनि जामिनिहू बिन चंद अभा है।
सुसभाहि के देखे तेँ साधुता होति औ साधुहि तेँ सुभ होति सभा है।
छबि पावत है मधु माधवि तेँ मधु कौँ अति *माधविहूँ* सौँ प्रभा है ॥१४॥

मालती, यथा [८ सगण, ॥]

महिमा गुनवंत की 'दास' बढ़ै
बकसै जब रीझिकै दान जवाहिर।
गुनवंतहु तेँ पुनि दानिहु को
जस फैलत जात दिगंत के बाहिर।
जिमि मालती सौँ अति नेह निबाहे तेँ
भौँर भयो रसिकाई मेँ जाहिर।
अरु भौँरहु को अति आदर कीन्हे
सुबास मेँ *मालतियौ* भइ माहिर ॥१५॥

मंजरी, यथा [८ ज, य]

बसंत से आज बने ब्रजराज सपल्लव लाल छरी बर हाथे।
सुकुंडल के मुकुता बिच हैँ मकरंद के बुंदनि की छबि नाथे।
मिलिंद बने कच घुघरवारे प्रसून घने पहुँचीन मेँ गाथे।
गरे जिमि किंसुक गुंज की माल रसाल की मंजुल *मंजरि* माथे ॥१६॥

---

[१३] सप्त–सत्य (लीथो, नवल०, वेंक०)। ज यो–न योँ (वही)।

[१४] पंडित भा–खंडित भा (वही)। सौँ–सु (सर०)।

[१५] मालती सौँ–मालती तेँ (सर०)। नेहनिबाहे–× (सर०)। तेँ–ने (वही)।

[१६] बने–बनो (सर०)। के०–कि बूँद न (नवल २, वेंक०)।

अरसात छंद [८ भ, र]

सात घरीहु नहीँ बिलगात लजात औ बात गुने मुसुकात हैँ।
तेरी सौँ खात हौँ लोचन रात ह्वै सारस-पातहू तेँ सरसात हैँ।
राधिका माधौ उठे परभात हैँ नैन अघात हैँ पेखि प्रभा तहँ।
लागि गरे अँगिरात जँभात भरे रस गात खरे *अरसात* हैँ ॥१७॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे सवैयाप्रकरणवर्णनं नाम
एकादशस्तरंगः ॥११॥

१२

संस्कृतयोग्य पद्यवर्णनं (दोहा)

कहौ संसकृतजोग्य लखि, पद्यरीति सुखकंद।
गन-लक्षन गन-नाम मैँ, छंद-लक्षनै छंद ॥ १ ॥

रुक्मवती छंद SISSSISSS

रग्गनो, कर्नो सगनो गो। जानिये, सो *रुक्मवती* हो।
पाय मैँ, नौ अक्षर सोहै। तीनि औ, छा मैँ जति जोहै॥ २ ॥

यथा

लक्ष्मी, का पै न रई है। राखतै, सो ज्ञात भई है।
सो रही, ना एक रती जू। लंक ही, जो *रुक्मवती* जू॥ ३ ॥

शालिनी छंद SSSSSISSISS

कर्नो कर्नो, रग्गनो रग्गनो गो। जानो याको, छंद है *सालिनी* हो।
पाये पाये, बर्न एकादसो है। चारै सातै, बीच बिश्राम सोहै ॥ ४ ॥

यथा

बाला बेनी, अद्भुतै ब्यालिनी है। माधौ नीके, गर्ब की घालिनी है।
पी के जी मैँ, प्रेम की पालिनी है। सौतैँ के ही, सर्बदा *सालिनी* है ॥५॥

वातोर्मी छंद SSSS||SS|SS

गो गो कर्नो सगनो, गो यगंनो । *बातोर्मी* है यहई, छंद बर्नो ।
सातैं चौथैं जति है, चारु जामैं । पाये बर्नो दस औ, एक तामैं ॥ ६ ॥

यथा

कैसे याको कहिये, नेकु नाहीं । नीबी बाँधी रहती, याहि माहीं ।
तातैं ऐसो बरनै, बुद्धि मेरी । *बातोर्मी* है सजनी, लंक तेरी ॥ ७ ॥

इंद्रवज्रा-उपेंद्रवज्रा छंद

तकार कर्नो सगनो यगंनो । है *इंद्रवज्रा* दस एक बंनो ।
उपेंद्रवज्रा जगनादि सोई । दुहूँ मिले पै *उपजाति* होई ॥ ८ ॥

इंद्रवज्रा, यथा SS|SS||S|SS

एरी बड़ो जो गिरि तैं कहायो । सो चित्त पी को इनसों गिरायो ।
सो है अयानो मृदु जो कहै री । है *इंद्रवज्रा* मुसुकानि तेरी ॥ ९ ॥

वार्त्तिक

उपेंद्रवज्रा आदि को लघु पढ़े होत है ॥ १० ॥
उपजाति कोई तुक आदि लघु पढ़ैं ॥ ११ ॥

उपस्थित छंद SS||S||S|SS

कर्नो सगनो पिय गो यगंनो । *सोपस्थित* है दस एक बंनो ।
जगंनु सगनो तकारु कर्नो । *पयस्थित* कहै मन ह्वै प्रसन्नो ॥ १२ ॥

यथा

प्यारे प्रति मान कहा करौं मैं । जो आपन आपनई न रोमैं ।
आली दृढ़ई बहुतै कियेहूँ । *कोपास्थिति* ही सु रहै न केहूँ ॥१३॥

पयस्थित छंद |S|||SSS|SS

दुखो 'रु सुख को है दानि सोई । वहै हरत है दूजो न कोई ।
न 'दास' जी मैं हूजै निरासी । जु पै *सुथित* है बैकुंठबासी ॥१४॥

---

[६] गो गो–गो गी (नवल०, वेंक०) । गो यगंनो–जगंनो (लीथो, नवल०, वेंक) ।

[१२] सोपस्थित–सोपस्थितो (सर्वत्र) ।

[१३] आपन–आपनो (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

सालो छंद ऽ।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

नंद कर्नो, नंद गो रागनो गो । नाम याको, छंद *सालो* कहो हो ।
चारि सातै, 'दास' बिश्राम ठानौ । अक्खरा ये, ग्यारह जोरि आनौ ॥१५॥

यथा

कान्ह की जौ, त्योर तीखी सहौगी । मोहि तोहीँ, धन्य आली कहौगी ।
सूर को सो, जोर जानै जिये मैँ । होइ जाके, सेल *साली* हिये मैँ ॥१६॥

सुंदरी छंद ।।।ऽ।।ऽ।।ऽ।ऽ

नगन भागनु भागनु रग्गना । चरन चारिहु *सुंदरि* सोभना ।
द्रुतबिलंबित याहि कोऊ कहै । बरन बारह 'दास' अचूक है ॥१७॥

यथा

अनमनी सजनी सब संग की । सुधि न तोहि रही कछु अंग की ।
दुचित मोहनलाल मुकुंद री । कुढँग मानहि भानहि *सुंदरी* ॥ १८ ॥

प्रमिताक्षरा छंद ।।ऽ।ऽ।।।ऽ।।ऽ

प्रिय नंद नंद सगनो सगनो । *प्रमिताक्षरा* हि पगनो पगनो ।
जति बीच बीच भनि ले भनि ले । दस दोइ बर्न गनि ले गनि ले १९

यथा

अँगिया सगाढ़ बलदे जिय की । अरु नील अंचलहु सोँ मढ़ि ली ।
तिन बीच ब्यक्त झलकैँ कुच योँ । कबितानिबद्ध *प्रमिताक्षर* ज्योँ ॥२०॥

वंशस्थबिल छंद ।ऽ।ऽऽ।।ऽ।ऽ।ऽ

जगंनु कर्नो सगनो लगो लगो । सुछंद *बंसस्थबिलो* पगो पगो ।
गो आदि को बर्न सु *इंद्रबंसु* है । मिलैँ दुधा पै *उपजाति* अंसु है ॥२१॥

यथा

सक्यो तपस्वी महि मैँ न होइ जू । न तौ हमारो थलु लेइ सोइ जू ।
नटीन *बंसस्थ बिलोकि* सोहनी । कृतेंद्रबंसोपरि बिस्वमोहनी ॥ २२ ॥

---

[१६] तोहीँ–त्यौँही (लीथो, नवल०, वेंक०) । को सो–कैसे (वही) ।
[१८] दुचित–दुखित (लीथो, नवल०, वेंक०) ।
[२०] बलदे–उलंद (सर०) ।

इंद्रवंशा, यथा ऽऽ।ऽऽ।।ऽ।ऽ।ऽ

जान्यो तपस्वी महि मैं न होइ जू। ना तौ हमारो थलु लेइ सोइ जू।
नारीन बंसस्थ बिलोकि सोहनी। की *इंद्रबंसो*परि बिस्वमोहिनी ॥२३॥

विश्वादेवी छंद

गो गो मो रूपो, गो यगानो यगानो। *बिस्वादेवी* के, पाय मैं चित्त आनो।
सोहै आभर्ना, बारहो बर्न जाके। बर्नो है पाँचै, सात बिश्राम ताके ॥२४॥

यथा

सेएँ गौरी के पाय मैं की ललाई। जोगी को होती जोगरागाधिकाई।
राजस्वै पावैं सूर जे होत सेवी। सोहागै लेती सेइकै *बिस्वदेवी* ॥२५॥

प्रभा छंद ।।।।।।ऽ।ऽऽ।ऽ

दुजबर पिय रागिनी रागिनी। करत बिमल चारु मंदाकिनी।
बहुत कहत हैं एही है *प्रभा*। दु दस बरन और धा है अभा ॥ २६ ॥

यथा

सिव-सिर पर तौ ढरी गंग री। तियकुच-सिव पै त्रिबेनी ढरी।
सुरसति जमुना मनी-भामिनी। मुकुतगन-*प्रभा* सु मंदाकिनी ॥२७॥

मणिमाला छंद ऽऽ।।ऽऽऽऽ।।ऽऽ

कर्ना पिय कर्ना, कर्ना पिय कर्ना। आधे बिसरामो, है बारह बर्ना।
बीसै जहँ मत्ता, सोहै अति आला। भोगीपति भाखो, याको *मनिमाला*॥२८

यथा

चंद्रावलि गौरी, लै पूजन जाती। कीजै कि न प्यारे, सीरी अब छाती।
राधा वह आवै, एहो नँदलाला। जाके हिय सोहै, नीकी *मनिमाला* ॥२९॥

---

[२४] यगानो०—यमानै यगानै (लीथो, नवल०, वेंक०)। आनो—आनै (वही)। आभर्ना—आभैं (वही)। पाँचै—पाँचो (वही)।
[२५] राजस्वै—राजस्वो (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[२७] मुकुत०—मुकुटगन (नवल १); मुकुटगन (नवल २, वेंक०)
[२८] भाखो—भाखै (सर०)।

पुट छंद ||||||SSS|SS

पिय दुजबर कर्नो, नंद कर्नो। जति बसु अरु चारै बीच ब्रनों।
दस अरु बिय यामैं बर्न राख्यो। अहिपति *पुट* नामै छंद भाख्यो ॥३०॥

यथा

नहिँ ब्रजपति बातैं, तू सुनावै। सखि मरत समय मैं, मोहिं ज्यावै।
अमिय स्रवत आली, आस्य तेरो। श्रवनपुटन पीवै, प्रान मेरो ॥३१॥

ललिता छंद SS|S|||S|S|S

तो अग्र गैल, पिय नंद नंद गो। बिश्राम लेत, पग पंच सत्त को।
हे मुग्ध द्वै'रु, दस बर्न देहि री। सानंद जानि, *ललिता*हि लेहि री ॥३२॥

यथा

बंसी चोराइ, सु यकंत मैँ गई। कान्हैं बताइ, इन कान मैँ दई।
जैसी बिचित्र, बृषभानलाड़िली। तैसी प्रबीन, *ललिता* सखी मिली ॥३३॥

हरिमुख छंद ||||S||S|S|SS

दुजबर नंद, जगंतु नंद कर्नो। *हरिमुख* छंद, भुजंगराज बर्नो।
दस अरु तीनि, बरंतु चारु सोहै। षट अरु सात, बिराम चित्त मोहै ॥३४॥

यथा

बँधहिँ न जे मृदुहास-पास माहीँ।
बिँधत हिये दृगबान जासु नाहीँ।
धनि धनि ते प्रमदा सदा कहावैँ।
हरिमुख हेरि जु फेरि चेतु ल्यावैँ ॥३५॥

प्रहर्षिणी SSS||||S|S|SS

मै जानौ, दुजबर रग्गनो य है जू।
याही कौं, *प्रहरषिनी* सबै कहै जू।
तीनै औ', बिरति बिचारि पाँच पाँचौ।
तीनै औ', दस अखरानि ठीक जाँचौ ॥३६॥

---

[३०] बीच–बीस (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[३२] द्वै–दौ (लीथो, नवल०, वेंक०)। लेहि–ताहि (नवल २)।
[३५] हास–सास (सर०)।
[३६] पाँचौ–पाँचै (सर०)। जाँचौ–राखै (वही)।

यथा

पायो तूँ, रिस करि कौन सुक्ख राधे।
बौरी बैरिनि कौन बैर साधे।
तेरी तौ अँखियउ अश्रुबर्षिनी है।
सौतिन् की जनिउ महा*प्रहर्षिनी* है ॥३७॥

तनुरुचिरा छंद ।ऽ।ऽ।।।।ऽ।ऽ।ऽ

लगे लगे दुजबर गै लगै लगो। भले अली *तनु रुचिरो* फबै लगो।
त्रयोदसै बरननि सोँ प्रभा बनी। बिराम है लखि नव चारि को धनी ३८

यथा

अनेक धा मनमथ वारि डारिये। किती प्रभा मरकत मैँ बिचारिये।
कहाँ चलै जलधर जोतिमंद की। सकै जु ह्वै *तनुरुचि* रामचंद्र की ॥३९॥

क्षमा छंद ।।।।।।ऽऽ।ऽ।ऽऽ

नगन नगन कर्नो, जगंनु गो गो। बिरति बरन आठै, सरै कहो हो।
त्रिदस बरन नीके, करौ जमा जू। भुजगनृपति याकोँ कहो *क्षमा* जू ॥४०॥

यथा

निज बस बर नारी, सतै जु पालै।
भुवि तरुन धनी ह्वै, भजै गोपालै।
तब धनि धनि जी मैँ कह्यो परै जू।
जब समरथ ह्वैकै, *क्षमा* करै जू ॥४१॥

मंजुभाषिणी ।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।

सगनो जगंनु, सगनो जगंनु है। ग समेति तीनि, दसई बरंनु है।
षट सप्त बीच, जति रीति राखिनी। मृदु छंद होत, है *मंजुभाषिनी* ॥४२॥

यथा

वह रैनिराज,-बदनी निहारिहौँ।
तब 'दास' जन्म-सुफली बिचारिहौँ।

---

[३७] बैरिनि—बैरी (लीथो,नवल०, वेंक०)। अँखियउ—अँखियन (वही)।
[३८] फबै—ह्वै (नवल २)। तनु—× (सर०)।
[४०] कहो—कहै (लीथो, नवल०, वेंक०)।

अँखियाँ बिसाल, छबि कंजनाखिनी।
बतियाँ रसाल, मृदु *मंजुभाषिनी* ॥४३॥

मंदभाषिणी ।ऽ।ऽऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ

धुजा धुजा नंद, सगनो लगे लगे। त्रयोदसै बर्न धरिये पगे पगे।
छ सात के बीच, बिसराम राखिनी। फनी कह्यो छंद सुइ *मंदभाषिनी*॥४४॥

यथा

सुनो करै कान्ह, बर बीनबाद कौं।
कियो करै बाँसुरिहु के निनाद कौं।
बिना सुने बैन तुअ कंदनाखिनी।
भली लगै कोकिलउ *मंदभाषिनी* ॥४५॥

प्रभावती ऽऽ।ऽ।।।।ऽ।ऽ।ऽ

तकार गो दुजबर नंद, रागनो। तीनै दसै, चरननि अख्खरा भनो।
चारै छ है, तिय बिसराम भावती। याकौं कह्यो, अहिपति है *प्रभावती*॥४६॥

यथा

कै गो रसी, बसन 'रु देह सर्ब कौं।
कीबो करै, दिन दिन ग्वारि गर्ब कौं।
जौ पै न तो, तजि उन चित्त भावती।
केती लखी, ससिबदनी *प्रभावती* ॥ ४७ ॥

वसंततिलक ऽऽ।ऽ।।।ऽ।।ऽ।ऽऽ

कर्नो जगंनु सगनो, सगनो यगंनो।
सोहै *वसंततिलका*, दस चारि बंनो।
आठै छ है बरन मैं, जति चारु राख्यो।
भाख्यो भुजंगपति को, यह 'दास' भाख्यो ॥ ४८ ॥

---

[४४] बिसराम—बिराम (सर्वत्र)। सुइ—सु (वही)।
[४५] बर—पर (सर०)। कियो०—हिए धरे बासुरिहु को (वही)।
नाखिनी—राखिनी (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[४७] 'रु—अरु (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[४८] यंगनो—पगंनो (लीथो, नवल०, वेंक०); प्रगनो (सर०)।

यथा

कारी पलास तरु डार सबै भई है।
लाली तहाँ कछुक किंसुक की ठई है।
कैला जग्यो मदनपावक को बिचारौ।
आयो *बसंत तिल* कानन तौ निहारौ ॥ ४९ ॥

अपराजिता छंद ।।।।।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

नगन नगन नंद नंद धुजा धुजा । बिरति सजति चारु चारु दुजा दुजा ।
चतुरदसहि बर्न सों पगआजिता । भुजँगभनित छंद है *अपराजिता* ॥५०॥

यथा

बिनय सुनहि चंडमुंडबिनासिनी । जनदुखहरि कोटि चंदप्रकासिनी ।
सरन सरन है सदा सुख साजिता । द्रवहि द्रवहि 'दास' कों *अपराजिता* ५१

मालिनी छंद ।।।।।।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

नगन नगन कर्नो, गो यगंनो यगंनो।
बिरति रचिय आठै, और सातै बरंनो।
सुमन गुननि लैकै, हारही डालिनी है।
सरस सुरस बेली, पालिनी *मालिनी* है ॥ ५२ ॥

यथा

रहति उर-प्रभा तें स्वर्न की कांति फैली।
बिहँसति निज आभा फेरि पावै चँवेली।
सहजहि गुहि माला बाल के कंठ मेली।
अदभुत छबि छाकी *मालिनी* स्यौं सहेली ॥ ५३ ॥

चंद्रलेखा छंद ऽऽऽऽ।ऽऽऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

चार्‍यो हारा धुजो कर्नो रग्गनो रग्गनो है।
गो संजुक्तो दसै पाँचै अक्खरा पग्गनो है।
चारै चारै मिलै सातै तीनि बिश्राम देखो।
भोगी भाषै, कहै दासौ छंद है *चंद्रलेखो* ॥ ५४ ॥

---

[५२] सुमन–सुगन (लीथो, नवल०, वेंक०) ।
[५४] दासो–दसो (लीथो); दशो (नवल०, वेंक०) ।

यथा

राधा भूले न जानौ यो है लवन्या न मेरी।
जेहा तेहा तिहारी सी तौ प्रभा है घनेरी।
भौंहैं ऐसी कमानै है नैन सो कंज देखो।
नासा ऐसो सुआतुंडै आस्य सो चंद्र *लेखो* ॥ ५५ ॥

प्रभद्रक छंद ।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽ

दुजबर गैल गैल, पिय नंद नंद है। गुरजुत आठ सात, बिश्राम बंद है।
पँदरह बर्न पाय, करतो अनंद है। कहत *प्रभद्रकाख्य*, अहिराज छंद है॥५६

यथा

रिस करि लै सहाइ करि दाप दाँ कई। तबहुँ न कालदंड प्रति बार बाँकई।
जिनहिँ सुभाइ भाइ प्रियरामभद्र को। दुखहरता दयालकरता *प्रभद्र को* ५७

चित्रा छंद ऽऽऽऽऽऽऽऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

जा मैं दीजै आठो हारा, गो यकारो यकारो।
आठै सातै दै बिश्रामै, छंद *चित्रा* बिचारो।
आठौ दीहा माहीँ जीहा, आसु ही दौरि जावै।
भोगी भाखै त्यौं ही, याके पाठ की रीति पावै ॥ ५८ ॥

यथा

फूले फूले फूलेवारी, सेज मैं जो बिहारै।
सीते धूपे डाभे काँटे, मैं सु क्यों पाउ धारै।
सोचै भाखै रोवै झंखै कोसिला औ' सुमित्रा।
कैसे सैहै दुक्खै सीता, कोमलांगी बि*चित्रा* ॥ ५९ ॥

मदनललिता छंद ऽऽऽऽ।।।।।ऽऽऽ।।।ऽ

चार्‍यो हारा, नगन सगनो, करना नगनु है।
अंते दीहा, दस 'रु रसई, बर्ना पगनु है।
चारै मैं अरु छह 'रु छह मैं बिश्राम लहिये।
भोगी भाखै *मदनललिता* यो छंद कहिये ॥ ६० ॥

---

[५५] ऐसी–ऐसे (सर०)। सो–से (वही)।

[५७] जिनहिँ–जिमहि (लीथो, नवल १); जिमिहिँ (नवल २, वेंक०)।

[५८] त्यौं ही०– याको पाठ त्रित्रा कहावै (सर०)।

[६०] मदन–प्रवर (सर०)।

यथा

होने लागी, गति ललित औ', बातैं ललित हैं।
हावो भावो, ललित मिसिरी, मानो कलित हैं।
कानो लागी, ललित अति ही, दोउ दृग री।
दीनो आली, *मदन ललिता*, तो अंग सिगरी॥ ६१॥

प्रवरललिता छंद ।SSSSS।।।।।SS।SS

यगंनो मो आनो, नगन सगनो, गो यगंनो।
दसै छा ही जाके, चरन प्रति मैं, होइ बंनो।
छहै छाओ चारो, बरन महिं या है, बिरामी।
फनिंदै भाख्यो है, *प्रबरललिता*, छंद नामी॥ ६२॥

यथा

तिहारे जौ वासौं, मिलन हित है, चित्तु साधा।
कह्यो मेरो मानौ, चलहु उत ही, बेगि राधा।
जहाँ गाढ़ी कुंजैं, तरनितनया, तीर राजैं।
गई ह्याँ हो देख्यो, *प्रबरललिता*, न्हान काजैं॥ ६३॥

गरुड़रुत छंद ।।।।S।S।।।S।SS।S

दुजबर रागनो, नगन रागनो रागनो।
गरुड़रुतै भनो, बरन सोरहै पागनो।
बिरति बिचारिकै, हृदय सात नौ ठानिये।
भुजगमहीप को, हुकुम 'दास' जौ मानिये॥ ६४॥

यथा

वृक तकि छाग ज्यौं, भजत बृद्ध औ' बालको।
मृगपति देखि ज्यौं, भजत झुंड सुंडाल को।
हरहर के कहे, भजत पाप को ब्यूह यौं।
गरुड़रुतै सुने, भजत ब्याल को जूह ज्यौं॥ ६५॥

---

[६२] छाओ–छाही (सर०)।
[६५] हरहर–हरिहर (सर०)।

पृथ्वी छंद ।ऽ।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽऽ।ऽ

जगंतु सगना धुजा, नगन रग्गना दोइ जू।
बिराम बसु बर्न मैं, बहुरि नौ हि मैं होइ जू।
चरंन प्रति 'दास'जू, बरन सत्रहै ठीक हैं।
अहीस खगनाथ सों, प्रगट छंद *पृथ्वी* कहैं॥ ६६॥

यथा

समर्थ जन कैसेहूँ, करत मंद जो काज है।
बिसेखि तहि पालतै, गहत छोड़तै लाज है।
लिये अजहुँ संभुजू, रहत कालकूटै गरैं।
अजौं उरगनाथजू, रहत सीस *पृथ्वी* धरे॥ ६७॥

मालाधर छंद ।।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽऽ।ऽ

नगन सगना धुजा, नगन रग्गना अंत रो।
भुजगपति भाखियो, प्रगट छंद *मालाधरो*।
बिरति बसु नौ कहै, सुकबिराज के गोत जू।
चरन गनि लीजिये, बरन सत्रहै होत जू॥ ६८॥

यथा

जुवति गिरिराज की, लखन कौं गई दूलहै।
बिकल डरिकै भजी, निरखि संभु को सूल है।
उरग तनभूषनो, बदन आक-पनैं भरे।
बसन गजखाल को, मनुज-मुंड*माला* धरे॥ ६९॥

शिखरिणी छंद ।ऽऽऽऽऽ।।।।।ऽऽ।।।ऽ

यगंनो मो आनो, नगन सगनो, नंद सगनो।
कहै भोगीराजा, बरन दस औ, सत्त पगनो।
छ बिश्रामो पायँ, बहुरि छह औ, पंचकरिनी।
गनौ चार्‍यौ पायँ, तब कहहु जू, है *सिखरिनी*॥ ७०॥

---

[६६] प्रकट-प्रकटि (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[६९] खाल-पाल (नवल०, वेंक०)।

यथा

मृगेंद्रै जीत्यो है, कटिहि अरु नैनानि हरिनी।
सुबेनी ही ब्यालै, रुचिर गति ही, मत्त करिनी।
मिलौ माधौजू सौं, सुचित सजनी ह्वै निडरिनी।
हराएई तेरे, बसत सिगरे, या *सिखरिनी* ॥ ७१ ॥

मंदाक्रांता छंद ऽऽऽऽ।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

चार्‍यौ हारा, नगन सगनो, रग्गना रग्गनं गा।
मंदाक्रांता, भुजगभनिता, सत्रहै बर्नं संगा।
कीजै चौथे, बिरति छठए फेरिकै सातयौं मैं।
आकर्नी है, सतकबिन्ह सौं, 'दास' जू बात यौं मैं ॥ ७२ ॥

यथा

को माघोनी, नलघरनि को, औ' कहा कामनारी।
केती रंभा, बिमल छबि है, का तिलोत्मा बिचारी।
राधाजू के, सरिस कहिये, कौन सी जोषिता कौं।
मंदाक्रांता, करउ जिन है, उर्बसी मेनका कौं ॥ ७३ ॥

हरिणी छंद ।।।।।ऽऽऽऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

नगन सगनो कर्नो, तक्कार भागनु रा धरो।
बिरति बसु मैं नौ मैं, संभारिकै करिबो करो।
बरन दस औ सातै, है पाय मैं चित दै सुनो।
फनिमनि रजा भाख्यो, या छंद कौं *हरिनी* गुनो ॥ ७४ ॥

यथा

लजित करता जे हैं, अंभोज खंजन मीन के।
बसत नित जे ही मैं, गोपाललाल प्रबीन के।
फिरत बन मैं वै तौ, पाले परे पसु हीन के।
त्रियदृगन से कैसे, नैना कहौ *हरनीन* के ॥ ७५ ॥

---

[७१] कटिहि—गतिहि (लीथो, नवल १, वेंक०)।

[७३] कौन०—क्यों न री (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[७४] फनि०—फनिराज (लीथो, नवल १, वेंक०); फनिपति (नवल २)। भाख्यो—मन्त्रो (वही)। कों०—को गुनी (वही)।

[७५] नित—निज (नवल २, वेंक०)।

द्रोहारिणी छंद ऽऽऽऽ।।।।।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽ

चार्‍यौ हारा नगन सगनो, तकार कर्नो लगे।
भागीराजा भनित दस औ, है सात बर्नो पगे।
बिश्रामो कै दिसि मुनिन्ह को, आनंद वोहारिनी।
'दासौ' भाखै सुनहु कबि, यो है छंद *द्रोहारिनी*॥ ७६॥

यथा

मेधा देनी सुचित करनी, आनंद बिस्तारिनी।
प्रायस्चित्तो बहु जनम को, दंडार्ध मैं टारिनी।
दोषै खंडी दुरित हरनी, संताप संहारिनी।
राधा-माधौ-चरित-चरचा, संदोह *द्रोहारिनी*॥ ७७॥

भाराक्रांता छंद ऽऽऽऽ।।।।।ऽ।ऽ।।ऽ।ऽ

चार्‍यौ हारा नगन सगनो, जगंनु जगंनु गो।
भोगी भाखै बिरति दस औ, ति चारि पगंनु जो।
चार्‍यौ पाये गनि गनि धरियै, बर्न सु सत्रहै।
भाराक्रांता कहत जग मैं, जु जत्र सु तत्र है॥ ७८॥

यथा

नीकी लागै सरस कबिता, अलंकृतसूनियौ।
क्रीड़ा मैं ज्यौं सुखद बनिता, सुबस्त्रबिहूनियौ।
नाहीं भावै अरस कबहूँ, सुधीनि एकौ घरी।
भाराक्रांता अभरननि ज्यौं, बिभूषित पूतरी॥ ७९॥

कुसुमितलतावल्लिता छंद ऽऽऽऽऽ।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

कै पाँचौ हारा, नगन सगनो, रग्गना गो य दीजै।
बिश्रामो पाँचै, बहुरि छह मैं, सात मैं फेरि कीजै।
पाये पाये मैं, समुझि धरिये, बर्न अट्ठारहै जू।
भोगींद्रै भाष्यो, *कुसुमितलतावल्लिता* छंद है जू॥ ८०॥

---

[७६] कबि–सुकबि (सर्वत्र)।

[७७] मेधा०–मेधादेवी (लीथो); मेधादेबी (नवल०, वेंक०)। आनंद–आनंदै (लीथो, नवल०, वेंक०) को–के (सर०)। टारिनी–चारिनी (वही)। खंडी–खंडित (वही)।

यथा

बंधूको बिंबो, कमल तिल जू, पाटला औ' चँबेली।
चंपा कस्मीरो, घरिहि बिच ह्याँ, फूलिहै एक बेली।
दीजै आए कौं, सुख दृगन को, कुंज के हौ बिहारी।
बैठौ ह्याँ देखौ, *कुसुमितलताबल्लिता* फूलवारी ॥ ८१ ॥

नंदन छंद ।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।ऽऽ।ऽ

दुजबर रग्गनो, नगन रग्गनो, धुजा रागनो।
जति मुनि मैँ भनो, छहहु मैँ ठनो, 'रु पाँचै तनो।
अहिपति यौँ कहै, बरन पा लहै, सु अट्ठारहै।
सब दुखकंदनै, सुकबि *नंदनै*, रच्यो जौँ चहै ॥ ८२ ॥

यथा

मनु सुनि मो कह्यो, चहत जो दह्यो, बिथा के गनै।
तजि सब आसरै, जगत को करै, एही तूँ धनै।
भवभ्रम कौँ हनै, भगति सौँ सनै, तनै औ' मनै।
जसुमतिनंदनै, गरुड़स्यंदनै, करहि बंदनै ॥ ८३ ॥

नाराच छंद ।।।।।।ऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽ

नगन नगन रग्गनो, आगेहू तीनि दै रग्गनो।
बिरति नवहि मैँ करो, बनै अट्ठारहै पग्गनो।
भनित भुजँगराज को 'दास' भाषै सु तौ साँच है।
मदनबिसिख पाँच है, छट्ठमो छंद *नाराच* है ॥ ८४ ॥

यथा

परम सुभट हो गन्यो, भावती तोहि सो हारियो।
निपट बिबस ह्वै गयो, हाल बंदी दयो डारियो।
कबहुँ डरत नाहिँ जे, तेग सौँ तोप सौँ कोट सौँ।
करत बिकल ताहि तूँ, नैन-*नाराच* की चोट सौँ ॥ ८५ ॥

---

[८१] बंधूको-बंधूवो (सर०, लीथो, नवल १, वेंक०)।
[८५] ह्वै-ह्यौ (सर०); ह्व (अन्यत्र)।

चित्रलेखा छंद ऽऽऽऽ।।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

चार्यौ हारै, नगन नगन गो, गो यगंना य धारो।
बिश्रामो है, चतुर बरन औ' सात सातै बिचारो।
पाये माहीँ, गनि गनि धरिये, बर्न अट्ठारहै जू।
जी मैँ आनौ, भुजगनृपति यौँ, *चित्रलेखा* कहै जू॥ ८६॥

यथा

इच्छाचारी, सधन सदन की, जोबनाढ्या अरोगा।
भर्ताहीना, परमछबिवती, धूर्तनारी - सँजोगा।
भोगी दाता, तरुन जनन के, पास मैँ बास देखो।
ता नारी सोँ, स्वकुल धरम को, राखिबो *चित्र लेखो*॥ ८७॥

सार्धललिता छंद ऽऽऽ।।ऽ।ऽ।।।ऽऽऽ।।।ऽ

मो आनो सगनो जगंनु सगनो, तक्कार सगनो।
बिश्रामो गनि बारहै बरन को, दै फेरि छ गनो।
है अट्ठारहै बरन 'दास' लखिये, चौ पाय बलिता।
याको नाम धर्यो भुजगपति ही, है *सार्धललिता*॥ ८८॥

यथा

सालस्या नयना उठी पलँग तेँ, पा लागि रबि सोँ।
ही मैँ तँ न चली चली सदन कोँ, ऐँडाइ छबि सोँ।
सोहती सिगरे सु भाँति बिगरे, सिंगारबलिता।
बक्त्रांभोजप्रफुल्ल *सार्धललिता*, बेनीबिगलिता॥ ८६॥

सुधाबुंद छंद ।ऽऽऽऽऽ।।।।।ऽऽऽ।।।ऽ

लगो चारो हारा, नगन सगनो, तक्कार सगनो।
छ बिश्रामै ठानौ, छ पुनि गनिकै, तौ फेरि छ गनो।
दसै आठै बर्ना, सुकबिजन कोँ, दातार सिधि को।
सुधाबुंदो छंदै, भुजग बर्नो है, याहि बिधि को॥ ६०॥

---

[८७] स्वकुल–सकुल (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[८६] सोहंती–सोहंते (लीथो, नवल०, वेंक०)।

यथा

चलैं धीरे धीरे, गति हरति है, माते द्विरद की।
उनीदे नैना सों, हरति अरुनता कोकनद की।
किनारी मुक्ता सों, छबि बदन की, या भाँति छलकै।
सुधाबुंदै मानो, उफिनि ससि के, चौ फेर झलकै ॥ ९१ ॥

शार्दूलविक्रीड़ित छंद ऽऽऽ।।ऽ।ऽ।।।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽ

मो आनो सगनो जगंनु सगनो, कर्नो यगंनो धुजो।
हेरो बारह सात मैं चहत हौ, बिश्राम को सोधु जो।
देखे जासु रसाल चाल पद की, पक्षी रहै ब्रीड़ितै।
बर्नो है उनईस ईस सुनिये, *सार्दूलबिक्रीड़ितै* ॥ ९२ ॥

यथा

राजै कुंडल लोल कान ससि की, सोहै ललाटी कला।
आछे अंगनि पीतबास बिलसै, त्यों आँगुली मैं छला।
तीखे अस्त्र अनेक हाथ गिरिजा, लीन्हे महा ईड़ितै।
आवै भाँति भली बढ़ावति चली, *सार्दूल बिक्रीड़ितै* ॥ ९३ ॥

फुल्लदाम छंद ऽऽऽऽऽ।।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

है पाँचो हारा, नगन नगन गो, रग्गना गो य जामै।
पाये मैं बर्ना, दस अरु नव सो, जानिये *फुल्लदामै*।
बिश्रामो पाँचो, पुनि मुनि महियाँ, सात मैं फेरि दीजै।
फैलायो याकौं, भुजगनृपति ही, 'दास'जू जानि लीजै ॥ ९४ ॥

यथा

ब्रह्मा संभू स्यों, सुर मुनि सिगरे, ध्यावते जासु नामैं।
जाके जोरे को, सुनिय न कतहूँ, बीर दूजो धरा मैं।
ताही कौं गोपी, बिबस करति है, नैन आरक्तता मैं।
टेढ़ी कै भौंहैं, बिय कर गहिकै, मारती *फुल्लदामैं* ॥ ९५ ॥

मेघविस्फूर्जित छंद ।ऽऽऽऽऽ।।।।।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ

यगंनो मो आनो, नगन सगनो, रग्गनो रग्गनो गो।
जहाँ पाये पाये, बरन सिगरो, बोनईसै गनो हो।
छ बिश्रामो लैकै, बहुरि छह औ', सात सौं पूजितो है।
यही छंदो भाष्यो, भुजगपति को, *मेघबिस्फूर्जितो* है ॥ ९६ ॥

यथा

थक्यो है बासंती, पवन बहि औ', कोकिला कूकि हारी।
निसानाथो हार्‌यो, हनन हितु कै, चंद्रिका तीक्ष्न भारी।
न आवैगो प्यारो, करति सखि तूँ, बादि संदेह बौरी।
सहैगो नीकेहीँ, कठिन हियरा, *मेघविस्फूर्जितौ* री॥ ९७॥

छाया छंद ।ऽऽऽऽऽ।।।।।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽ

यगंना मो आनो, नगन सगनो, कर्नो लगै गो लगै।
बिरामै दै छा मैँ, बहुरि छह औ', सातै सु नीको लगै।
गनौ यामैँ बर्ना, दस 'रु नवई, पाये पाये बंदु है।
फनीराजा बानी, चितु धरहि तौ, *छाया* यही छंदु है॥ ९८॥

यथा

लियो हाथे बंसी, बसन पहिर्‌यो, गोपाल को आपु ही।
न जाने क्योँ पायो, बरन वहई, कैसी सज्यो जापु ही।
हँसै बोलै मानो, करति अबहीँ, क्रीड़ाहि बिस्तार सी।
यकांता मैं कांता, लखति निज यौँ, *छाया* लिये आरसी॥ ९९॥

सुरसा छंद ऽऽऽऽ।ऽऽ।।।।।।ऽऽ।।।ऽ

चार्‌यो हारा यगंना, नगन नगन गो नंद सगनो।
सातै बिश्राम कैकै, पुनि करि मुनि औ', पंच पगनो।
ठानीजै 'दास' आछो, दस नव बरनो, एक चरनो।
भाखै श्रीनागराजा, इहि बिधि *सुरसा*, छंद तरनो॥ १००॥

यथा

जानै 'दासै' अकेलै, पवनतनय के, नामफल कौँ।
नौँदै जाके भरोसे, कलिकुलमल कौँ, दुख्खदल कौँ।
फालै जानै पयोधै, किहिन कि जिहि कौँ, गाइ खुर सा।
जानै बुध्यौ बड़ाई, बिनय लघुतई, एक *सुरसा*॥ १०१॥

---

[१००] सातै—सातौ (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[१०१] 'सर०' में नहीँ है। जानै—यानै (नवल०, वेंक०)। कुल-मल—कमल (लीथो, नवल०, वेंक०)।

सुधा छंद ।SSSSS।।।।।।SS।SS।SS

थगानो मो आनो, नगन नगन गो, गो यगाना यगानो ।
छ बिश्रामै ठानो, मुनि पुनि करिकै, सातई फेरि तानो ।
गनो पाये पाये, गुर लघु मिलिकै, बर्न हैं 'दास' बीसै ।
सुधा याको नामै, मधुर समुझिकै, आपु राख्यो अहीसै ॥ १०२ ॥

यथा

बसै संभू माथे बिमल ससिकला बेलि ह्याँ तें कढ़ी है ।
मरेहू प्रानी कों अमर करति है साँचु यातें बढ़ी है ।
कहै याकों पानी, गुनगन तनको, 'दास' जान्यो न जाको ।
स्त्रवै सीरो सोतो, सुरसरि महिआँ, स्वच्छ साँचो *सुधा* को ॥१०३॥

सर्बवदना छंद SSSS।SS।।।।।।SSS।।।S

कर्नो कर्नो यगंनो, दुजबर सगनो तकार सगनो ।
ठानो बिश्राम सातै, पुनि मुनि रस है, बिश्राम पगनो ।
बर्ना बीसै सँवारो, चरन चरन मैं, आनंदसदनै ।
भोगीराजा बखान्यो सकल बदन सोहै *सर्बबदनै* ॥ १०४ ॥

यथा

पूजा कीजै जसोदा, हरि हलधर की, मोसों सुनति हौ ।
बाँधौ मारौ बृथा ही, इनकों अपनो, जायो गुनति हौ ।
पालै मारै उपावै, सकल जगत ये हैं दैतकदनै ।
थाके जाके बखानै, करत सुरसती, स्यौं *सर्बबदनै* ॥१०५॥

स्त्रग्धरा छंद SSSS।SS।।।।।।SS।SS।SS

चारयौ हारा यगंना, दुजबर सगनो, रग्गना द्वै बिराजै ।
दीजै ता अंत हारो, मुनि मुनि मुनि मैं, तीनि बिश्राम साजै ।
दीन्हे बर्ना इकीसै, चरन चरन मैं, भ्रांति को बृंद भाजै ।
भाष्यो भोगीसजू को, सकल छबि भरयो *स्त्रग्धरा* छंद छाजै ॥१०६॥

---

[१०२] 'सर०' में नहीं है ।

[१०३] बेलि–पेलि (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

[१०४] सोहै–सी है (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

[१०५] उपावै–उपस्वै (लीथो, नवल०, वेंक०) । ये हैं–येहैं है(वही) ।

[१०६] भरयौ–भयो (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

यथा

मूसो सिंहो मयूरो, डमरु बृषभ औ', ब्याल हैं संग माहीं।
ताके है एक एकै, असन करन कौं, पावते घात नाहीं।
जागे ही मैं बिचारो, कुसल रहति है, संभुजू के घरे मैं।
माथे पीयूषधारी, सुभटसिरनि को, *स्रग्धरै* हैं गरे मैं ॥१०७॥

सरसी छंद ।।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।।ऽ।।ऽ।ऽ।ऽ

नगन जगंनु नंद सगनो, सगनो सगनो लगे लगे।
बिरति बिबेक एकदस मैं, दस मैं करिये पगे पगे।
बरन इकीस 'दास' दर सी, दरसी दरसी लसी लसी।
तिरति सुबुद्धि छंद *सरसी*, सरसी सर सी रसी रसी ॥१०८॥

यथा

भँवर सुनाभि कोक कुच है, त्रिवली बिमली तरंग है।
द्विभुजमृनाल जानि कर कौं, कमलै कहिये सुरंग है।
लहत कपोल कंबु-सरि कौं, अँखियाँ भखियाँ अनूप है।
चिकुर सेंवार रूप जल जू, बनिता *सरसी*सरूप है ॥१०९॥

भद्रक छंद ऽ।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।।।ऽ।ऽ।।।ऽ

गो सगनो, जगंनु सगनो, जगंनु सगनो, जगंनु सगनो।
चारिनि दै, बिराम छ गनो, बहोरि छ गनो, बहोरि छ गनो।
बाइस ही, बिचारि मन मैं, चहूँ चरन मैं, धर्‍यो बरन मैं।
भद्रक है, रसाकरन मैं, गुनागरन मैं, सुन्यो करन मैं ॥११०॥

यथा

कीजिय जू, गोपाल-अरचा, गोपाल-चरचा, सदाहि सुनिये।
मेटन को, महा कलुष को, दरिद्र दुख को, न और गुनिये।
जाहिर है, सुरासुरनि मैं, लहू गुरनि मैं, चराचरनि मैं।
भद्र कहै, यही अरनि मैं, यही ढरनि मैं, यही परनि मैं ॥१११॥

---

[१०७] ही मैं०—है मै बिचारयो (लीथो, नवल०, वेंक०)। सुभट—सुभ (वही)। स्रग्धरै—स्रग्धरा (सर०)।

[१०८] लसी०—रसी रसी (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[१११] ढरनि—टरनि (नवल २, वेंक०)।

अद्रितनया छंद ||||ऽ|ऽ|||ऽ|ऽ|||ऽ|ऽ|||ऽ

पिय सगनो, जगंनु सगनो, जगंनु सगनो, जगंनु सगनो।
जति सर दै, बहोरि छ गनो, बहोरि छ गनो, बहोरि छ गनो।
गनि गनिकै, त्रिबीस मन मैं, चहूँ चरन मैं, धर्यो बरन मैं।
गुनि गुनिकै, जु *अद्रितनया*, सुअक्षरन मैं, कह्यो सरन मैं ॥११२॥

यथा

घट घट मैं, तुँही लसति है, तुँही बसति है, सरूप मति के।
तुअ महिमा, अरी रहति है, सदा हृदय मैं, त्रिलोकपति के।
निज जन कौं, बिना भजनहू, कलेस हननी, बिथा निहननी।
जय जय श्रीहिम*ाद्रितनया* महेसघरनी गनेसजननी ॥११३॥

भुजंगविजृंभित छंद ऽऽऽऽऽऽऽऽ||||||||ऽ|ऽ||ऽ|ऽ

चारो हारा चारो हारा, दुजबर दुजबर सगनो, जगंनु जगंनु गो।
आठै मैं लेतो बिश्रामै, पुनि बिरमत इकदस मैं, करो पुनि सात हो।
पाये मैं छबीसै बर्ना, बरनित भुजगनृपति को, सुखाकर है कितो।
याके नामै जानो चाहो:चित धरि सुनहु बचन तौ, *भुजंगबिजृंभितो*॥११४॥

यथा

साधू मैं साधत्वै पैयै, बहु बिधि बिनय करत हूँ, निरादर कीनेहूँ।
जैसे धेनू दुग्धै देती, कटु तिन अमित चरतहूँ, गुड़ादिक दीनेहूँ।
मंदे सौं मंदी ये होती, जब तब जगत बिदित है, उपाय करो कितो।
जैसे मिस्री छीरै प्याए, बिषमय स्वसन बहत है, *भुजंगबिजृंभितो* ॥११५॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे वर्णवृत्तचश्लोकरीतिवर्णनं नाम द्वादशमस्तरंगः ॥१२॥

———

[११४] चित०-चित दै सुनो (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[११५] सौं-तें (सर०)।

१३

अर्धसम बृत्ति (दोहा)

पहिलो तीजो सम चरन, दूजो चौथ समान ।
करो अर्धसम छंद मैं, इहि बिधि बृत्ति सुजान ॥ १ ॥

पुहपतिअग्र छंद

दुजबर रागनो यगंनो, दुजबर नंद जगंनु गो यगंनो ।
पुहपतिअग्र छंद बर्नो, बिषम दसै त्रिदसै समेति बर्नो ॥२॥

यथा

फिरि फिरि भ्रमिकै कहै नवेली, बिधि यह कौन प्रकार की चँवेली ।
रँग धरति कनैर-पाँखुरी के, छुवति जि *पुष्प ति अग्ग* आँगुरी के ॥३॥

उपचित्रक छंद

सगना सगना सगना लगो, भागनु भागनु भागनु कर्नो ।
अखरा चहु पायनि ग्यारहै, छंद यही *उपचित्रक* बर्नो ॥ ४ ॥

यथा

न उठै कर जासु सलाम सैं, बात कहैं मिल उत्तर नाहीं ।
न करो दुख मानव जानिकै, मित्र सु है *उपचित्रक* माहीं ॥ ५ ॥

वेगवती छंद

सगनो सगनो ल यगंनो, भागनु भागनु भागनु कर्नो ।
बिषमे दस बर्न प्रपंनो, *वेगवती* सम ग्यारह बर्नो ॥६॥

यथा

मिटि गो अधरा-रँगु क्यों है, बाढ़ि गई बकबाद घरी है ।
सिगरो तन स्वेद सनो है, तो डर आवत *वेगवती* है ॥७॥

---

[२] रागनो—रागनो धुआ (सर०) । दसै—द्वादसौ (वही) । समेति—समेनि (वही) ।

[५] सों—से (सर०) ।

[६] ग्यारह—बारह (सर०) ।

हरिणलुप्त छंद

बिषमे अखरा इक हीन है, समनि सुंदरि पायनि लीन है।
भनि पन्नगराज प्रबीन है, *हरिनलुप्त* सुछंद नवीन है ॥ ८ ॥

यथा

बृज की बनिता लखि पाइहै, इकहि की इकईस लगाइहै।
मग-रोकनि की सजि बानि कौं, *हरि न लुप्त* करो कुलकानि कौं ॥९॥

अपरचक्र छंद

दुजबर सगना जगंनु गो, दुजबर गो सगना जगंनु गो।
सिव रबि अखरानि राखियो, सु *अपरचक्र* भुजंग भाखियो ॥ १० ॥

यथा

बृजपति इक चक्र कौं धर्यो, त्रिभुवन कौं निज हाथ मैं कर्यो।
तुअ बस सुभ यौं बिसेषिकै, तिय *बिय* चक्रनितंब देखिकै ॥११॥

सुंदर छंद

सगना सगना जगंनु गो, सगना भागनु रग्गना लगो।
बिषमे अखरा दसै धरो, समपद ग्यारह छंद *सुंदरो* ॥ १२ ॥

यथा

पढ़िकै दिढ़ मोहनमंत्र कौं, सजनी सोधि सिँगारतंत्र कौं।
रचना बिधना-अनंग की, सुषमा *सुंदर* स्याम अंग की ॥ १३ ॥

द्रुतमध्यक छंद

भागनु तीनि गुरू बिय दीजै, पुनि दुज भागनु गो ल य कीजै।
ग्यारह बारह आखर पाएँ, कहि *द्रुतमध्यक* छंद सुभाएँ ॥ १४ ॥

यथा

कौतुक आजु कियो बनमाली, जलबिच कूदि पर्यो सुनि आली।
नाथि फनिंदहि तोषि फनिंदी, प्रगट भयो *द्रुत मध्य* कलिंदी ॥ १५ ॥

---

[८] समनि–सुनि सु (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१२] ग्यारह–बारह (सर०)।

दुमिलामुख-मदिरामुख (दोहा)

सम मदिरा दुमिला बिषम, *दुमिलामुख* पहिचानि।
उलटि सु *मदिरामुख* कहै, इहि बिधि औरौ जानि॥ १६॥
होहि बिषम चारौ चरन, बिजम बृत्ति है सोइ।
बेदनि बीच प्रमान नहिं, भाषा बरनै कोइ॥ १७॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थ कृते छंदार्णवे अर्धसमविषमछंदोवर्णनं नाम त्रयोदशमस्तरंगः॥ १३॥

१४

मुक्तकछंदवर्णनं (दोहा)

अक्षर की गनती जहाँ, कहुँ कहुँ गुर लहु नेम।
बरन-छंद मैं ताहि कबि, मुक्तक कहैं सप्रेम॥ १॥

श्लोक तथा अनुष्टुप् छंद

चारि आगे धुजा एकै दूसरे द्वै धुजा थपो।
आठ आठ चहूँ पाये *स्लोक* नाम *अनुष्टुपो*॥ २॥

यथा

जन दीन सुखी कर्ता, हरता भयभीर को।
लोक तीनिहुँ मैं फैल्यो, *स्लोक* श्रीरघुबीर को॥ ३॥

---

[१६] दुमिलामुख—दुमिलादुख (लीथो, नवल०, वेंक०)।
[१] जहाँ—यहा (नवल०, वेंक०)
[२] 'सर० में नहीं है।
[३] सुखी—दुखी (लीथो, नवल०, वेंक०)।

गंधा छंद (दोहा)

प्रथम चरन सत्रह बरन, दुतिय अठारह आनु ।
यौं ही तीजउ चौथऊ *गंधा* छंद बखानु ॥ ४ ॥

यथा

सुंदरि क्यौं पहिरति नग भूषन असावली ।
तन की द्युति तेरी सहज ही मसाल-प्रभावली ।
चोवा चंदन चंद्रकइ चाहै कहा लड़ावली ।
तेरे बात कहत कोसक लौं फैलै सु *गंधावली* ॥ ५ ॥

घनाक्षरी छंद (दोहा)

बसु बसु बसु मुनि जति बरन, *घनाक्षरी* यकतीस ।
चौ बसु *रूपघनाक्षरी*, बत्तिस गन्यो फनीस ॥ ६ ॥

यथा

जबहीं तें 'दास' मेरी, नजरि परी है वह,
तबही तें देखिबे की भूख सरसति है ।
होन लाग्यो बाहिर कलेस को कलाप उर-,
अंतर की ताप छिनहीं छिन नसति है ।
चलदलपात से उदर पर राजी रोम-,
राजी की बनक मेरे मन में बसति है ।
सिंगार में स्याही सों लिखी है नीकी भाँति,
काहू मानो जंत्रपाँति *घनअक्षरी* लसति है ॥ ७ ॥

रूपघनाक्षरी छंद

दरसि परसि वह, ताप कौं हरति वह,
प्रमदा प्रबीननि कौं, मोहित करत प्रान ।
वह बरसावै हिय, प्रेमरस बूँदनि को,
वह मनु बेझो बेधे, चूकत न जग जान ।

---

[५] सुंदरि–सुंदरि तू (लीथो, नवल०; वेंक०) । तन की द्युति–तन द्युति (वही) । ०कइ–कै (सर्वत्र) ।

[७] पात–पान (सर०) ।

[८] वह प्रमदा–यह प्रमदा (सर०) । चारि–चारु (लीथो, नवल०, वेंक०) । उपमान–गुनमान (सर०) ।

चारु चारि बिधि को बिलोकि गुन चारिहू मैं,
तब 'दास' प्यारे मैं बिचाऱ्यो चाऱ्यो उपमान।
बदन सुधाधर अधर बिंब मेरी आली,
स्वच्छ तन रूप घन अद्य री प्रबल बान॥ ८॥

वर्णझुल्लना छंद (दोहा)

कहूँ सगन कहुँ जगन है, चौबिस बरन प्रमान।
गुरु द्वै राखि तुकंत मैं, *बरनझुल्लना* ठान॥ ९॥

यथा

पानि पीवै नहीँ पान छीवै नहीँ बास अरु बसन राखै न नेरो।
भऱ्यो प्रान के ऐन मैं नैन मैं बैन मैं है गुन रूप 'रु नाम तेरो।
बिरहाबस ऐस ही है वहाँ कै मही राखिहै कै नहीँ प्रान मेरो।
नित 'दास' जू याहि संदेह के *झुल्लना* भूलतो चित्त गोपाल केरो॥१०॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे मुक्तकछंदवर्णनं नाम
चतुर्दशमस्तरंगः॥ १४॥

१५

दंडकभेद (दोहा)

द्वै न सात यगना *प्रचित* दंडक चरननि देखि।
चरन चरन नव सगन मय, *कुसुमस्तवक* बिसेषि॥ १॥

प्रचित दंडक ||||||ISS|SS|SS|SS|SS|SS|SS

जय जय सुखदानी अबिद्यानिदानी सुबिद्यानिधानी ररै बेदबानी।
सरन तु सरन बानी महेंद्री मृडानी दयासील सानी तिहूँ लोकरानी।

---

[१०] पानि—अरी पानि (लीथो, नवल०, वेंक०)। गुन—न गुन (वही)। 'रु—अरु (वही)। बिरहा—बिरह (वही)।

[१] प्रचित—रचित (लीथो, नवल०, वेंक)।

[२] जय जय—जयति जय (सर्वत्र)। सरन तु सरन—सनत असर (सर०); सरन तुव सरन (लीथो, नवल०, वेंक)। जग—जगत (वही)।

धनि जग तेहि बखानी वहै भाग्यवानी वही संत जानी वही बीर ज्ञानी ।
प्रचित कहत जु प्रानी नमस्ते भवानी नमस्ते भवानी नमस्ते भवानी ॥२॥

कुसुमस्तवक दंडक

सखि सोभित श्रीनँदलाल भए निकसे बन तेँ बनितागन संग जबै ।
हरि साथ उरोजवतीनि के हाथनि याहि प्रभाहि धरे गुलदस्त फबै ।
हरिजू के हराइबे को बहु तीर तलास करो अनुमानिकै 'दास' अबै ।
चित चायतेँ लै लै मिली हैं मनो *कुसुमस्तवकै* कुसुमेषु की सैन सबै।३।

अनंगशेखर दंडक (दोहा)

चारि दसै कै पंद्रहै, कै सोरह धुज पाइ ।
लखि *अनंगसेखर* कहो, दंडक भोगीराइ ॥ ४ ॥

यथा

बिलोकि राजभौन के बनाउ कोँ बिधातऊ भ्रमै
न 'दास' चित्त धीर कैसेहूँ धरे रहैँ ।
तहाँ घरी घरी गोपालबृंद बृंद सुंदरीन
जाइ जाइ संग लै तमाल से अरे रहैँ ।
परे बिचित्र छाँह वै जहाँ छजे जराउ से समूह
आरसीन के देवाल मैँ जरे रहैँ ।
प्रभा निहारि कान्ह की छकै सकै न छाँडि
संग सेन स्योँ चहूँ दिसा *अनंग से खरे* रहैँ ॥ ५ ॥

अशोकपुष्पमंजरी छंद (दोहा)

यामैँ पंद्रह नंद हैँ, अंत गुरू सोँ काम ।
ता दंडकहि *असोक* जुत, *पुष्पमंजरी* नाम ॥ ६ ॥

---

[३] चाय-पाय (नवल०, वेंक०) । तेँ-सो (सर०) । कुसुमेषु-कुसुमेधु (सर०); कुसुमेष (लीथो); कुसुमपख (नवल १); कै कुसुमपख (वेंक०); कै कुसुम मयूख (नवल २) ।

[५] छजे-घने (सर०) ।

[६] नंद-बर्न (लीथो, नवल०, वेंक०) ।

यथा

ऊभि ऊभि साँस लेत द्यौस जौ टर्‌यो
कहूँ टरै न कालराति सी कराल आइ सर्बरी।
'दास' ईस वोस तप्त तेल सी लगै
सरीर सर्प स्वास सी लगै बयारि यौं घरी घरी।
रावरे बियोग राम सुक्खदानि बस्तु
सर्ब दुक्खदानि सीय कौं एकंक ही दई करी।
भानु सो हिमांसु सो कृसानु भो सरोजपुंज
सोक भूरि कौं भरै *असोकपुष्पमंजरी* ॥७॥

त्रिभंगी दंडक (दोहा) ||||||||||||||||||||S||SS||SSS||SS

पंच बिप्र भागनु दुगुरु, स गो नंद यो ठाउ।
चरन चरन चौंतिस बरन बरन *त्रिभंगी* गाउ ॥ ८ ॥

यथा

सजल जलद जनु लसत बिमल तनु
श्रमकन त्यौं झलकोहैं उमगोहैं बुंद मनो हैं।
भ्रवजुग मटकनि फिरि फिरि लटकनि
अनिमिष नयननि जोहैं हरषोहैं ह्वै मन मोहैं।
पगि पगि पुनि पुनि खिन खिन सुनि सुनि
मृदु मृदु ताल मृदंगी मुहचंगी झाँझ उपंगी।
बरहि-बरह धरि अमित कलनि करि
नचत अहीरन संगी बहुरंगी लाल *त्रिभंगी* ॥ ९ ॥

मत्तमातंगलीलाकर दंडक (दोहा)

पाय करो नौ रगन तें चौदह लौं चित चाहि।
नाम *मत्तमातंग* को, *लीलाकर* कहि ताहि ॥ १० ॥

---

[७] एकंक–पकंकु (लीथो); पकुंकु (नवल०, वेंक०)।
[८] गो–दो (लीथो, नवल०, वेंक०)। यो–गो (वही)।
[९] उमगोहैं–उमगौ है (लीथो, नवल, वेंक०)।

यथा

पाइ बिद्यानि को बृंद जू भारती ल्याइ सानंद जू
मानुषी कृत्ति सो बंद जू छंद लीला करै तौ कहा।
ह्वै महीपाल को मौर आखेट मैं साँझहूँ भोर लौं
लीन कक्षीन की दौर पक्षी लजीला करै तौ कहा।
सुभ्र सोभा सबै अंग मैं सुंदरी सर्बदा संग मैं लीन ह्वै
राग औ' रंग मैं नृत्य कीला करै तौ कहा।
जौ नहीं ठानिकै तत्तु भौ रामलीलाहि सो रत्त तौ
बाहिरे सै करै *मत्तमातंगलीला* करै तौ कहा॥ ११॥

दंडक-भेद (कुंडलिया)

दोइ नगन करि सातई रगन देहु प्रति पाइ।
चंडब्रिष्टिप्रपात यौं दंडक रचो बनाइ।
दंडक रचो बनाइ, आठ रगगन को अनैं।
नौ अनौं दस *ब्याल* रुद्र *जीमूतहि* बनैं।
लीलाकर बारह *उदाम* तेरहै कहो इन।
'दास' चतुर्दस *संख* सबनि सिर चाहिय दोइ न॥ १२॥

(दोहा)

एकै कबित बनाइकै गन गन पर तुक ल्याइ।
'दास' कहै यौं आठऊ उदाहरन दरसाइ॥ १३॥

यथा

सरन सरन ही सदा ताहि कीनो कृपासिंधु गोपाल
गोबिंद दामोदरो बिष्नुजू माधवो स्यामजू
औ' स्वभू सुखदा सर्नु है 'दास' को।
सदय हृदय ह्वै हमैं पालिहै आपनो जानिकै
सोइ बिस्वेस बिस्वंभरो बिष्नुजू
राघवो रामजू औ' प्रभू दुक्खहा हर्नु है त्रास को।

---

[११] साँझहूँ–साँझ ह्वै (नवल०, वेंक०)। कक्षीन–करसीन (लीथो, नवल०, वेंक०)।

[१२] ब्रिष्टिप्रपात–बृष्टिप्रयात (सर्वत्र)।

सुजस बिदित जासु संसार के बीच मैँ सर्बदा ईस है
देव देवेस को धर्म है पालिबो ज्याइबो
मारिबो जो गनो है चहूँ बेद मैँ।
भजन करिय चित्त मैँ ताहि को नित्य ही दानि है
सिध्धि को लोकलोकेस को कर्म है
घालिबो ज्याइबो तारिबो सो भनो क्यों लहौं भेद मैँ ॥ १४ ॥

(दोहा)

छंदनि दोहरो चौहरो, करि निज बुद्धि-बिबेक।
मनरोचक तुक आनिकै, दंडक रचौ अनेक ॥ १५ ॥
रागन के बस कीजिये, ताहि *प्रबंध* बखानि।
छंद लिये सो *पद्य* है, *गद्य* छंद बिन जानि ॥ १६ ॥
ग्यारह तैँ छब्बीस लगि, बरन दुपद तुक एक।
सो सिर दै बहु छंददल, परे प्रबंध बिबेक ॥ १७ ॥
भेद छंद दंडकनि को, दोऊ पारावार।
बरनन - पंथ बताइ ये, दीन्हो मति-अनुसार ॥ १८ ॥
सत्रह सै निन्यानबे, मधु बदि नवै कबिंदु।
'दास' कियो छंदारनव, सुमिरि साँवरो इंदु ॥ १९ ॥

इति श्रीभिखारीदासकायस्थकृते छंदार्णवे दंडकभेदवर्णनं नाम
पंचदशमस्तरंगः ॥ १५ ॥

———

[१४] लहौं—लहू (सर०) ।
[१९] साँवरो—साँवरे (सर०) ।

परिशिष्ट

१—प्रतीकानुक्रम

रससारांश

[संख्याएँ छंदों की हैं]

शृंगारनिर्णय

छंदार्णव

[पहली संख्या तरंग की और दूसरी छंद की है]

———

२—अभिधान

रससारांश

[संख्याएँ छंदों की हैं]

अंक=गोद । ५४, १२१
अंग=आधार, आलंबनत्व । १४
अंगन=शरीर के अवयव; आँगन (फुलवारी) । २४५
अँगिरात=अँगड़ाते हैं । २८६
अँचवन=आचमन, पीना । ३०६
अंतरभाव=(भावांतर) भिन्नता । १००
अंतरवर्तिनि=अंतरंगिणी । २२६
अँदेस=अंदेशा, शंका । ३६४
अकस=ईर्ष्या । ४०१
अकाथ=व्यर्थ । १४६
अगमनै=पहले ही, पूर्व ही । १४४
अगमौ=(अगम=जहाँ तक जाया न जा सके, जिसको पाया न जा सके) अगम भी । ४
अगोरे=चौकीदारी करते हुए; अ + गोरे । १६३
अचल=पर्वत । २६
अचल-मवास=(आत्मरक्षा के लिए) पर्वतीय शरणस्थल, रक्षा का दृढ़ स्थान । २८
अछकेन्ह=जो छके (नशे में) नहीं हैं, अमत्त । ८८
अजौं=आज भी । ४०१

अटनि=अटारी । ३४६, ३६२
अटनि=घूमना, परित्याग । ३४६
अटा=छत । १४३
अतन=अनंग, कामदेव । १६, २६
अदलखाने=न्यायालय । ५१६
अधर=बिंबाफल का उपमेय । ६६
अधरन=अधरों का । ३८७
अधसँसे=(अर्धश्वास) सँसेट में । ३८७
अधिकारी=अधिकता, विशेषता । १६
अनख=रोष, क्रोध । ४७टि, ५५३
अनख-भरी=क्रोध से भरी । ३२६
अनखुले=बिना कुछ कहे सुने, हेतु का पता बिना दिए ही । २०३
अनखौंहीं=बुरा माननेवाली । २२७
अनिमिष=अपलक, निर्निमेष । ३२४
अनुदिन=प्रतिदिन । ५१७
अनुभव=अनुभाव । ४६८
अनुरागियन=अनुरागियों को । ३८६
अपनाइत=(अपनायत) अपनापा । १०५
अपर=अन्य । १६
अपसमार=अपस्मार । ४८४
अपूरब=अपूर्व, उत्तम; अ + पूरब । २१३
अबार=देर, विलंब । ११३, ४५५

अभरन=आभरण, गहना । १६६
अभार=(आभार) उत्तरदायित्व का बोझ । ८५
अभिसारिय=अभिसारिका । ११८
अमरष=अमर्ष । ४८४
अमल=शासन (व्यंजना से 'निर्मल' भी) । १६
अमल=अ+मल; नशा । ३६१
अमाति=अँटती । २३४
अमान=अपरिमाण, अधिक । २६५
अमान=गतमान । ३२६
अमीर=सरदार । २८
अमोल=अमूल्य, उत्तम । ४२
अयान=अज्ञान, मूर्खता । १३१, १५२
अयाने=अज्ञान, अज्ञानी । ५४१
अरकै=(अरिकै) अड़कर, जिद करके । ३५०
अरथी=स्वार्थसाधक । १८६
अरसीली=(अरस=रोष) रोषीली; (अरस=अरसिकता) असहृदय (विरोध के चमत्कार के लिए) । ४७ टि
अरसीली=आलस्य से भरी; अ + रसीली (चमत्कारार्थ) । ५१
अराति-दल=शत्रु की सेना । ४५७
अरोचक=स्वादहीन; अरुचि उत्पन्न करनेवाली । ३७६
अरोष=रोषहीनता (का) । ५४
अलसई=आलस्य । ५१४
अलान=सिक्कड़ । ६५
अलि=सखी । ८६, १०२
अलि=भ्रमर । १०६
अलि=बिच्छू (यहाँ वृश्चिक राशि); सहेली । २५६ टि
अलीक=झूठा; मर्यादाहीन । ३२६
अवगाहि=नहाकर, डूबकर । २८७
अवदात=उज्ज्वल; विशिष्ट, सुंदर । २४३
अवधि=समय की सीमा । ११८
अवरेष=समझो । ५७८
अवहिथा=अवहित्था । ४८४
असतीन=आस्तीन; अस ती न । २४१
असावरी=वस्त्र विशेष । ३८०
असील=असल, ठीक; अ+सील (विरोध के चमत्कार के लिए) । ४७ टि
अहह=हा ! । ५२५
अहिनी=साँपिन, सर्पिणी । २५६
अहिसंगी=सर्पयुक्त (चंदन के पेड़ पर साँप का रहना कविप्रसिद्धि है) । २६८
अहे=हे । २५४
आँगी=चोली । २७
आखु=मूसा, चूहा । ३
आगतपति=आगतपतिका । ११८
आगम=भविष्य । ४१७
आगार=घर । ८६
आछी=अच्छी । २४३
आठौ गाँठ=सर्वांग से (प्रेमिका); आठ पोर (छड़ी की) । १७६
आड़=तिलक, टीका । ३४८
आड़=टेक । ४७१
आड़्यो=रोका । ३०६
आतप=धूप । ५०७

आतमक=शाला, परक । १
आधी=अर्ध । १११
आधीन=वश में । १११
आन=अन्य, और । १३१
आन=शपथ । १३१
आनन=मुखमंडल । २५८
आनी=ले आई । ७७
आनी कान=सुनी । ७७
आमिषभोगी=मांसभक्षी । ५४१
आरतबंधु=दीनबंधु । ५०६
आरस=आलस्य; आ+रस=रसपूर्ण । २८६
आरसी=(आदर्श) दर्पण । १६६
आली=सखी; आला का स्त्रीलिंग (चमत्कारार्थ) । ४७ टि
आली=हे सखी । १०६
आले=उत्तम; अत्यधिक । ४७ टि
आवनहार=आनेवाला । १४२
आषाढ़ी=आषाढ़ मास की पूर्णिमा की । २७२
आस=आशा से । १६८
आसमुद्र=समुद्र तक के । १०८
आसव=मद, शराब । ५२६
आसा=आशा । ४६६
आसा=(सोने चाँदी का) डंडा । ४६६
आहि=है । ७२
इंदिरा=लक्ष्मी; छटा । २७७
इंदुबधुन=इंद्रबधूटियाँ । ३६४
इतैइ=यहीँ । ३८४
ईँगुरकैसो=ईँगुर के समान लाल, अत्यंत लाल । ३००
ईठि=यत्नपूर्वक, भली भाँति । ३१
ईठि=(इष्ट) सखी (नायिका) । ३०७
उकसौं हैं=उभरने को उन्मुख, उठने को तत्पर । २५६
उघरि जैहै=प्रकट हो जायगा । १३६
उघारु=खुला हुआ, निरावरण । ३०
उछाह=(उत्साह) उत्सव । ६०
उछाह=(उत्साह) उमंग, हर्ष । ६०
उतपल=उत्पल, कमल । ४०६
उत्का=उत्कंठिता । ११८
उत्पन्न है=उत्पन्न होता है । १०
उदारिज=औदार्य । ४३०
उदारिज्ज=औदार्य । ३३७
उदोत=प्रकट, जाहिरा । ३७२
उध्धत=प्रचंड । ४६६
उनमानि=अनुमान करके । ६१
उनीँदे=निद्रा को उन्मुख, निँदासे । ५०१
उनै०=झुक (आया), छा (गया) । २६०
उपावनि=उपायों, प्रयत्नों । २४६
उभर्यो=उभड़ आया, उठ आया । (स्तन के लिए) । ३१
उर=छाती । ३०
उरज=कुच । २६, ३०
उरगिनी=साँपिन । ५३८
उरजातन=कुच । २४५
उरबसी=उर्वशी, एक अप्सरा । १७
उरहने=उपालंभ, उलाहने । ५०
उलाक=हरकारा; ऊँचा (वस्तुगति में) । २८

ऊख=(ऊष्मा) गरमी । ६६

ऊख-रस=ईख का रस । ६६

ऊभि=व्याकुल होकर । ४७४

ऐगुन=अवगुण, दोष । ५२

ऐन=ठीक, पूर्ण । १६६

ऐनिनैनि=मृगनयनी । ६२

ऐनी=ठीक । ६२

ओट=आड़ में । ५३

ओनात=ध्यान से सुनने का प्रयास करता है । १६५

और=अन्य । १०६

और=ओर, तरफ । १०६

औरई=और ही, दूसरा ही । २६५

कंचनलतिका=सुनहली लता; नायिका का शरीर । २१६

कंडू=खुजलाना । ३०७

कदंब=समूह । २२४

कज्जलसंजुत=कालिमायुक्त, काला । ४६६

कत=क्यों । ३७६

कदन=नाशक । २

कनक-दुति=सोने की सी दीप्ति । १८

कनक-प्रभा=सोने की चमक (शरीर में मिल जाती है) । १८

कन्या=कन्याराशि; बेटी, कुमारी । २५६ टि

कपूरमनि=कर्पूरमणि (शरीर की कांति के नाते) । ३१८

कबीस=कवीश, श्रेष्ठ कवि (पंडित) । १००

कमनैत=धनुर्धर । ४१०

कमला=लक्ष्मी । १७

कर=हाथ; महसूल । ५६

करक=कर्कराशि; कड़क (कड़े) । २५६ टि

करकस=(कर्कश) कठोर, कड़ा । ३६टि

करन=कर्ण (कान); राजा कर्ण । १६

करार=चैन । २१०

करि=करके, से । १३०

करिकुंभ=हाथी का मस्तक । २५६

करियै=कीजिए । २७

करुना=दया; करना, सुदर्शन पुष्प । २२४

करेज=कलेजा, हृदय । ४११

कलहो=कलहांतरिता । ११८

कलाद=सोनार । ४०८

कलानिधि=कलावंत । २१८

कलाम=कथन, वादा । ३६

कलाम करना=वादा करना । ३६

कलिंदजा=यमुना । १३६

कसीस=कशिश, खिंचाव । २६५

कहरु=(कहर) आफत, विपत्ति । २६५

कहरु कियो=बला पैदा की, आफत ढाई । २५५

कहा=क्या (हुआ) । २७

कहैं=कहा जाता है, कहते हैं । ३६१

कहै=कही जाती है । २५६ टि

कह्यो=(कहियो) कहो, बताओ । १५१

कात्यागिरि=स्तनों का उपमान ऊँचा पहाड़; चंद्रगिरि जो नेपाल में है । ६५

काठी=ईंधन । ४०८

कान=कान्ह, कृष्ण । ५२४
कानन=वन; (प्रकारांतर से) कानों । ५२४
कानन=कानों । ५४५
कानि=मर्यादा । ३४६
कान्हर=कृष्ण । २२
कामद=मनोरथ पूरा करनेवाला । ४१३
कामदहनि=कामजन्य दाह । १०२
किंकिनिया=करधनी । १३४
किंसुक=टेसू, पलाश का पुष्प । १२३
कित करि=क्योंकर । ३०
किये निलजई= निर्लज्जतापूर्वक, दृढ़तापूर्वक । ३७
किरवान=कृपाण । ३६६
किसान=कृषक । ६६
किहि=किसने । ३६५
कुंभ=कुंभराशि; घड़ा (कुच-कुंभ) । २५६ टि
कुंभकरन=कुंभकर्ण । ५१४
कुचद्वय-संकर-सिर=महादेवरूपी कुच-द्वय के शिर पर हाथ रखकर (वचन दीजिए) । २७१
कुचरचा=बदनामी । ८१
कुबेनी=बंसी, मछली पकड़ने की अँकुसी; कु + बेनी । १६४, २६७
कुरंग=बुरे रंगवाले; मृग (चमत्कारार्थ) ४७ टि
कुलजा=कुलीना । ३४६
कुलिसौं=वज्र को भी । ११७
कृसानु=अग्नि(शंकर के तृतीय नेत्र की अग्नि) । ४०१
केतकी=पुष्प; कितनी । २२४
केतकीउ=केतकी भी, केवड़ा भी । ५२२
केती=कितनी । ५१७
केदार=क्यारी । ११३
केरो=का । ४७८
केसरि=केसर, कुंकुम । ११३
को=कौन । ७४
कोक=(कोकशास्त्र के निर्माता) यहाँ कोकशास्त्र । १५७
कोयन=कोये, आँख के डेले । ५४
कोर=किनारा, छोर । ३३
कोहै=(कोह=क्रोध) क्रोध को । ४८
क्रुध्धित=क्रोधित । ४६६
छिप्र=शीघ्र । ४६४
खंजन=पक्षी; नेत्र । २१६
खंडित=खंडिता (नायिका) । ११८
खटाई=खट्टाई, अप्रसन्नता; खट्टापन । १७२
खत=क्षत, नखक्षत; लेख (लेन देन के अनुबंध का) । ५६
खत=क्षत, घाव । २२६
खरारि=खर + अरि, रामचंद्र । ४६३
खरी=तीखी, अत्यंत । ८३, ६६, १५३
खरोटैं=खरोंच, काँटों से अंग का छिलना । ८०
खायन=(खात) गड्ढे । ४७४
खिझैबो=खिझाना, चिढ़ाना । ३१७
खिसी=विषाद, दुखद घटना । २३०
खीन=क्षीण । १५६
खेह=धूल । १५०
खोयन=(खोह) कंदराएँ । ४७४
खौर=(मस्तक पर चंदन की) आड़ी रेखाएँ । १५६

खौरि=(चंदन का) आड़ा तिलक। ३२
गँठिजोरा=गँठबंधन। ४५४
गत न=गई नहीं, बीती नहीं। ४३
गथ=पूँजी, माल। २४६
गने मैँ=गिनने मैँ, विचार करने मैँ। ४२४
गयंद=गजेंद्र। ६५
गवारि=ग्वालि (गोपिका), नायिका। ३२४
गहिली=(मर्म की बात को) पकड़नेवाली। ३६०
गहे=(आप से) लगे (आपने देर की। १४५
गाँउ=गाँव। १२०
गाँठि=मनमुटाव; ग्रंथि। २०६
गाड़=गड्ढा। ४७१
गात=अंग। १२५
गारि=(गाली) अप्रतिष्ठा। ५४६
गिरद=(गिर्द) आसपास, चारोँ ओर। ५२८
गिलमनहूँ=मोटे मुलायम गद्दोँ पर भी। ३००
गुआ=(गुवाक) चिकनी सुपारी, सुपारी का खंड। ३५६
गुन=गुण; रस्सी। ५२०
गुनही=(गुनाही) अपराधी। ५२०
गुनाह=अपराध। १५२
गुनौती=गुणशालिनी। ४२४
गुर=भारी। ६३
गुरजन=बड़े-बूढ़े लोग। ३४
गुरजन-संग=गुरुजनोँ (बड़े-बूढ़ोँ) का साथ। ६०
गुलिक=गुरिया (मोती)। ३२५
गुवालरियाँ=गोपिकाएँ। १५६
गूँथ्यो=गुंफित किया, गुहा। २२५
गूजरी=गोपी। २१२
गेह=घर। १०७
गेह कियो=घर कर लिया। ५०६
गैयर=(गजवर) श्रेष्ठ हाथी। ४८०
गोइ=छिपाकर। ५०१
गोए=छिपे हुए, अव्यक्त। ५४
गोबरहारी=गोबरकढ़िनी, गोबर पाथने या काढ़ने का कार्य (चाकरी, पेशा) करनेवाली। ४७१
गोयो=छिपाया। १४६
गोरस=दूध, इंद्रियसुख। २२०
गोरी=पार्वती। ४५८
गोहन=साथ-साथ। ५२१
गोहैँ=घातेँ। ४८
ग्वारि=ग्वालिनि। २६६
ग्वैँडेहि=(ग्वैँडा=गाँव के आस पास की भूमि) ग्वैँडे मैँ। १४१
घटि=घटकर, न्यून (होकर)। ५७, ४०१
घनसार=कपूर। ४२७
घने=अनेक, बहुत। १०७
घनेरी=अनेक, बहुत। १७
घरनि=स्त्री। ४६१
घरी साधि=घड़ी साधकर, अनुकूल मुहूर्त साधकर। १४१
घाइ=घाव। २५५
घायन=घावोँ, चोटोँ। ४७४
घिनमै=घृणामय। ४७०

घुमंड=घिराव, आच्छादन । ३
घैरु=अपयश । ३४२
चंड=उग्र, प्रखर । ३
चंद्रभाग=राधा की सखी । २५७
चंपक=चंपा । १२५
चंपकलता=राधा की सहेली । २५७
चकी=चकपकाई । ३०७
चकै=चकपकाती है । ३४
चख=चक्षु, नेत्र । ६७
चख-झख=नेत्ररूपी मछली । २६७
चतुर=पंडित, प्रवीण । १७७
चतुर=चार । १७७
चरचि चरचि=बारंबार बात करके । ६७
चरचनि=(चरचा=बदनामी) । ६७
चर भाव=संचारी भाव । ४१
चवाई=बदनामी करनेवाला । १२०
चाँचरि=वस्त्र विशेष । ३८०
चाँदनी=चंद्रिका; गुलचाँदनी । २२४
चाइ=(चाव) चाह । ४३
चाड़=इच्छा । ३४४
चाड़=रोक के लिए टेक । ४७१
चाय=(चाव) उमंग । ६६
चाय=(चाव) लालसा । ६६
चाह=प्रेम की उत्कंठा । २८
चाहि=बढ़कर, अधिक । ७२
चिकुरन=केशों में । १६६
चिकुरारी=(चिकुर+अवली) केशों का समूह । ५८२
चित्ररेखा=एक अप्सरा । १७
चित्रोपमा=चित्र सम । ११७
चीन्हि=पहचानकर । ५६
चूक=भूल, व्यर्थ । ७६
चूरि=चूर-चूर (हो जाती), टूट (जाती) । ३४१
चूरे=कड़े (कंकण) । ५८२
चेत=होश, चेतना । ५२२
चेषटै=चेष्टा ही । २६२
चोखी=तीखी । ४०१
चोप=उमंग । २७६
चौसर=चौपड़ । ३७०
छकवति=छकाती है, मदमत्त करती है । ५२६
छकाइ देति=मदमत्त कर देती है (सुरा) । ८८
छकी=मदमाती । ३०७, ३३३
छकौहैं=छकने की ओर उन्मुख । ४८
छतिलाभ=हानिलाभ । ६६
छनदा=रात्रि । ४११
छपेहुँ=छिपने पर भी । ५३३
छबिछाँह=शोभा की छाया, कांति-बिंब । ३३३
छवा=एँड़ी । २६
छहरि=फैलकर । ५२१
छाँह=प्रतिबिंब । ३३३
छाम=(क्षाम) क्षीण । २३४, ४०७
छामोदरी=कृशोदरी । २३४
छितिराउ=क्षितिराज, भूपति । १०८
छिपैबो=छिपाना । ४६५
छूँछि=खाली, केवल । ४५४
छूजै न=छुएँ मत, स्पर्श न करें । ४३
छोनि=पृथ्वी । ५३३
छोनिप-छौना=राजकुमार । ५३३
छ्वैहैं=छूएँगी, चोरी करने जाएँगी । ८

जक=भौचक्कापन । ३१७

जकी=चकपकाई । ११४, ३०७

जगभूषन=जग के भूषण (कृष्ण) । ३८४

जज्जल=(जर्जर) दुर्बल, दुबले-पतले । ४६६

जदुराइ=यदुराज, कृष्ण । ५३

जन=प्रिय जन (सौत) । ४४

जनि=मत । ३०

जने=उत्पन्न किए, पाए (सुख) । १०७

जरतारिहू=जरी के कामवाली साड़ी भी । २४

जलजान=जहाज । २६५

जसिन=यशियाँ, यशस्वियाँ । ५१५

जहीँ=जहाँ ही । ३४१

जाइबोऊ=उत्पन्न करना भी । ४७७

जाए=उत्पन्न किए हुए । ५४६

जातनहि=(यातना) पीड़ा को । ५३६

जातरूप=सोना । २४६

जानमनि=ज्ञानिमणि, विद्वान् । ३१६, ५७३

जानुपानि की चालि=बकैयाँ चाल । ४६७

जापक=जप करनेवाले । १८५

जाम=याम, प्रहर । १२६

जामते=जमते हुए; जिसका विचार करने से (जा मते) । २२४

जामिनि=यामिनी, रात्रि । १२६

जार=यार, उपपति । ६१

जिय-भावतो=प्राण को भानेवाला, नायक । ८६

जीहा=जिह्वा । ३७५

जुदे=अलग । ४३१

जुध्ध=युद्ध (मेँ) । ४६६

जुरसाल=जु रसाल (रसिक); ज्वर की वेदना । २२१

जूह=यूथ, समूह । १५६

जेरु=जेर, परास्त । २६१

जोग=प्रकार । १६३

जोतिहारी=छूटा पराजित; जो तिहारी । २२४

जोन्हजुत=चंद्रिकायुक्त । २०

जोर=आधिक्य । ३८८

जोरन=(जोर=बल) । ६५

जोरावर=प्रबल । ५०६

ज्याइ=जिलाकर (सुधा) । ८८

ज्याइबो=जिलाना । ३८७

ज्याइबोऊ=जिलाना भी । ४७७

ज्यान=जियान, हानि । ३७६

झँगा=ढीला कुरता । ५८२

झँझरी=जाली । १६५

झँवावती=झाँवे (झाँवा=जली हुई काली ईँट) से पैर की मैल रगड़वाकर दूर कराती है । ११६

झख=मछली । १६४

झझकारती=झिटक देती है । २२७

झपि=झपकी का संकेत देने के लिए ढककर । १२६

झरि=झड़ । ३६०

झाँवत=झाँवे से रगड़कर मैल छुटाता है । १६८

झाँवरी=झाँवे के रंग की । ३६१

झाईं=परछाहीं, प्रतिबिंब । ३११
झारति=झटकारती है । ३१०
झारन=वृक्षों पर । ४७४
झुकति=रोष करती है । २२७
टाटी=फूस की टट्टी (कुटिया) । ५२८
टारि=हटाकर । ५२८
ठकुराइनि=स्वामिनी । २०२
ठगोरी=(ठगविद्या) जादू, टोना । ३६५
ठठकी=ठिठकी, रुकी । ३०७
ठयो=(ठाना) किया । ५६
ठाँउ=ठौर । १२०
ठान=(चलने का) ढब । ३३
ठायो=निर्मित किया । १५६
ठिकु ठान=साज-बाज, ठाट-बाट । ३१२
ठौनि=स्थिति, मुद्रा । ३३०
डभकारी=डबडबाई हुई (अश्रु से) सजल । ५५४
डरपाइ=डराकर । ३५२
डरुपैबो=डराना । ३७८
डसै=काटे । ८१
डारन=शाखाओं पर । ४७४
डासन=बिछौना । ५०६
डिठौना=काजल का टीका, अनखा । २२७
डीठि=दृष्टि (बाण) । ३१
डीठि जोरि=आँखें मिलाकर । ३३
डोलाइ न सकै=हटा नहीं सकता । १६५
ढर=गिराव, गिरना, उड़िलना । ८८
ढिग=पास । १७
ढिलौहैं=ढीला-ढाला, शिथिल । ४८
ढोटो=बालक । २६०
तई=तपी, तप्त हुई । ६८
तकना=देखना, बाण से लक्ष्य को साधना । ३१
तकरार=टंटा, बखेड़ा । ५१६
तकै=देखता है । ४७४
तन=ओर । १४०
तनसुख=शरीर का सुख; एक प्रकार का कपड़ा । ११५
तनि जैबो=तन जाना । २७
तनु तनु=टुकड़े टुकड़े । ४११
तरनी=नाव । ४७६
तरी=(तटी) निकट, समीप । १६५
तरुनि=तरुणी । १५, २७१
तलफैं=तड़फड़ाएँ । ३६८
तलबेली=आतुरता । ३६४
तलास=खोज, चिंता, फिक्र । २८
तात=पिता ने । ७४
तान=(मुरली की) तान, आलाप । ५२६
तायो=तपा, तप्त हुआ । ४०१
ताल=संगीत का ताल (मंजीरे आदि से ताल देते हैं) । १७
ताल भरना=ताल देना । १७
तासौं=(ताकौं) उसे । ४२
तिन=तिनका, तृण । २२७
तिनि=(तीनि) तीन । १४७
तीखे=चोखे । ५०६
तुअ=तुम्हारा । २३
तुरत=शीघ्र । ६०

दूजो=द्वितीय, दूसरा । ५१३
दूनौ=दोनों प्रकार के । ५०
दृग-अरथानि=नेत्ररूपी अर्थ्यो । ४१३
दृगमिहिचिनी=आँखमिचौली (का खेल)। ३०१
दृगाधे=दृग+आधे । १६५
दृष्टि-चेषटा=नेत्रों की मुद्रा । ५६
देवाल=दीवार । १६५
दोषाकर=चंद्रमा । ४६६
द्विज=ब्राह्मण (सुदामा)। ५२८
द्विजराज=चंद्रमा; दाँतों का राजा । ४०१
द्विजराज=श्रेष्ठ ब्राह्मण; चंद्रमा । ४१२
द्विजराजी=दाँतों की पंक्ति । ४०१
धनंजय=अग्नि । ३८५
धन=द्रव्य; धन्या (नायिका)। २१०, २२२
धनु=धनु राशि; धनुष । २५६ टि
धर=धड़, शरीर । ३२०
धर्मनि=धर्मगत भेदों में । २१
धाइहौं=दौड़ूँगी, धाइ हौं (दाई हूँ)। २०१
धारजुत=धारसहित, प्रवाहयुक्त । ३६५
धुन्यो=पीटा (सिर)। ६८
धृग धृग=धिक् धिक् । ६५
धौरहर=धवलगृह, महल । १४०
धौरे=धवल, सफेद । १४०
धौहरे=धवलगृह में । २७३
नखछद=नखक्षत । २२७
नखत=नक्षत्र । १५६
नख-रद-दानु=नख-दंत के क्षत देना। ४४५
नगबलित=रत्नजटित । ३
नजरि बंद=नेत्रों में बंद; नजरबंद (कैद)। १२६
नजीकें=नजदीक (में)। ५०२
नटति=इनकार करती है। ३२६
नवी= नवी) नहीं। ५१३
नय=नीति । १५६
नवारी=(निवारण) बिताई; नेवाड़ी पुष्प । २२४
नवोढ़=नवोढ़ा । २५
नहि रह्यो=नथ रहा है । ३१०
नहे=लगे, नधे हुए । १३०
नाँउ=नाम । १२०
नाँउ धरै=बदनामी करता है । १२०
नाँगे=नंगे, बिना पादत्राण के । ४८०
नाइ=नवाकर, झुकाकर । ४७८
नाकै=लाँघता है । ४७४
नादर=(न+आदर) अनादर । २६३
नारी=नाड़ी; स्त्री । २२१
नारे=ऐ नाले । ६५
नासा=नासिका, नाक । ५१४
नासु= नाश) मिटना । २४४
नाह=नाथ, पति । १५२
नाहक=व्यर्थ । १५२
नाहर=बाघ । ५८३
निकेत=घर । १२४
निगोड़ी=दुष्टा, अभागिन (स्त्रियों की गाली)। ३०६
निचल=निश्चल । २४४
निजु=निश्चय । १८६
निभझल=(निझोल) हाथी । ४६६
नितंब=कटि के पीछे का उभरा भाग चूतड़ । २८

निदरि=निरादर करके, उपेक्षा करके। ३७
निदरैं=अपमानित करती हैं। ५८१
निधरक=बेखटके। १२१
निपात=पतन, अप्रतिष्ठा; पत्तों से रहित होना। ५४२
निबसे=निवास किया। ५४५
निरंग=विवर्ण। ११४
निरगुन=बिना डोरे की; गुणहीन (चमत्कार के लिए)। ४७ टि
निरगुन माल=वह दाग जो आलिंगन से माला के दानों का छाती में उभर आता है। ४७ टि
निरदई=निर्दय। ३२१
निरमई=निर्मित की। ३२१
निलजई=निर्लज्जता (लज्जा निर्लज्ज होकर रहती है)। ३७
निसनि=(निशा) रातों में। ७१
निसरिहौं=निकालूँगा। ५०६
निसवादिल=स्वादुहीन, अस्वादु। ५४३
निसा=(निशा) रात्रि; तृप्ति। १६२
निसासिनि=(निःश्वास) निर्दय। ४१०
निसिमुख=(निशिमुख, निशामुख) संध्या, साँझ। १२८
निसि-रंग=रात्रि का वर्ण (साँवला)। ३४
निहारु=नीहार, कोहरा। १३७
निहोरौं=प्रार्थना करती हूँ। ८३
नीदि=निंदा करके। ४१७
नीरहि=पानी में। ३५६
नीरें=(नियरे) निकट। ३५६
नीलकंज=इंदीवर, नील कमल। ५०८
नेकौ=थोड़ा भी। ४०६
नेरो=(निकट) समीप। ५०६
नेवाती=(निवाती—निवात=कवच) सनद्ध भट। २८
नेह=प्रेम; तैल। १३२, १७४, २२२, ३६७
नेहकारनी=स्नेहकारिणी; प्रेमिका। १४६
नेह-नहनि=प्रेम में नधना (लीन होना)। ३१०
नैननि नाच नचायो=आँखें (मुझे) नचाती रहीं। ५२४
न्याइ=न्याय, उचित। ३६८
न्यारी=अनोखी, निराली। १७
न्यारी=पृथक्। १४१
पंच=नर-समूह, लोग। ६७
पखान=पंख। ३१२
पखान=पाषाण। ४१५
पगनत=पदनत, पराजित। १०८
पगभूषन=पैर का गहना (मान-मोचनार्थ पैरों पर पतित)। ३८४
पगोहैं=पगा हुआ, विलीन। ४८
पत्याइ=विश्वास करे। २५
पद्मिनी=पद्मिनी नायिका; कमलिनी। १२१
पनिच=धनुष की डोरी, प्रत्यंचा। २६५
पयान=प्रयाण, प्रस्थान। १४५, ५५५
पर-उदेस=(परोद्देश) दूसरे को

इंगित करना, उँगली उठाना। ४६३

परचयन=परिचय (बहुवचन)। २२०

परतीत=प्रतीति, विश्वास। ६४, १०५

परबाह=प्रवाह। ४६६

परसन=(स्पर्श), दान। ७१

परसधर=परशुराम। ५३३

परसन=स्पर्श करने, छूने। २६

परसि जात=स्पर्श हो जाता है। ६०

परिधान=वस्त्र। ३२६

परिपंच=प्रपंच, बखेड़ा। ६७

परिवा=प्रतिपदा। २७

परिहरि=त्याग कर। ३८५

परिहै=(दिन में) पड़ेगी। ३८८

परे=पड़े हुए (मीन=मछली)। ६७

परेहुँ=पड़ने (सोने) पर भी। ४०६

पलकौ=पल के लिए भी। ३६६

पलनि=पलकों में; पलड़ों में। ३६३

पलिका=पलंग। ४०५

पसीजति=पसीने पसीने होती है। ४०२

पहाऊँ=(प्रभात) सबेरे। ५१०

पहुँची=पहुँच गई; एक गहना। २०५

पांडु=लाली लिए पीला रंग। ३

पाँवरी=पदत्राण, जूती। ३८०

पा=पैर। ३२७

पाइयै=पिलाइए। ६६

पाउ=पाद, पैर। १०८

पाग=पगड़ी (संध्या का संकेत)। ८६

पाती=पत्र (विवाह-संबंध के लिए) ७४

पान धरति=पान (पाणि) अर्थात् हाथ मारती हूँ, शर्त करती हूँ; पान (तांबूल)। २१०

पानि=पानी, प्रस्वेद। ३५६

पानिप=आब; प्रतिष्ठा। ५१६

पान्यो-घाट=पानी (पानी चढ़ी हुई तलवार) का घाट। ३६५

पारन=धारा के उस ओर। ४७४

पारियत=डालते हैं। ५१७

पास=पार्श्व, नैकट्य। ३७५

पाहि=पास; से। १००

पिचकी=पिचकारी। ३२८

पिछौरी=दुपट्टा। ३१६

पिड़ि कै=पीड़ित करके। ४६६

पियराति जाति=(चंद्र को निकले देर हो जाने से) पीली पड़ती जाती है। १२८

पुष्कर=दिग्गज, हाथी। २

पुष्कर=कमल; पुष्कर तीर्थ। १६६

पुष्करपाउ=पुष्करपाद, कमल से चरणवाले। २

पूजैगो=पूरा होगा। ४३

पूर=पूर्ण। २१३

पूरन=पूर्ण; माला पूरना, गुहना। २०५

पूरब राग=पूर्वराग, पूर्वानुराग। २१३

पूरि=पूर्ण होकर। ४०१

पेँच=सिरपेच, सिर पर का एक गहना। ४८

पेखन=खेल, नाटक । ५४४
पेखि=देखकर । २८६
पेच=यत्न, उपाय । ७५
पेसखेमा=सेना की (खेमा आदि) सामग्री जो सेना पहुँचने के पहले ही पड़ाव पर पहुँच जाती है । २७
पेसो=(पेशा) । ४०८
पैंडो=राह, मार्ग । ५०३
पै=(देखने) पर । ५४
पै=द्वारा, से । ३७७
पैबो=पाना । ३१७
पौढ़ी=सोई । १२७
पौरि=द्वार, ड्योढ़ी । ३८०
प्रजंक=पर्यंक, पलंग । १७, १४०
प्रवत्सत्प्रेयसी=प्रवत्स्यत्प्रेयसी, जिसका पति परदेश जा रहा हो । ११८
प्रबाल=प्रवाल, मूँगा (हाथ की ललाई से) । ३१८
प्रभाकर=सूर्य । १५१
प्रभापट=(यौवन के) सौंदर्य का आवरण । २५
प्रमान=(प्रमाण) रूप, प्रकार । १४८
प्रसंग=भेद, रहस्य । १३६
फटिक=स्फटिक । २३५
फिटकत=(मुट्ठी में लेकर) फेंकता है । ३५२
फुरो=सत्य । १६१
फुरयो=सत्य सिद्ध हुआ । ४७
फूल=पुष्प; चिराग का गुल । १८३
फेरिबो=फेरना । २६४
बंक अवलोकनि=तिरछी चितवन, कटाक्ष । २६५
बंकुर=बंकता, वक्रता, टेढ़ापन । २७
बंचक=धोखा देनेवाला । १२७
बंदन=सिंदूर । ३२
बंदनजुत=सिंदूरयुक्त । २
बंदनि की=सेवकों की । ४७७
बंधि=तू बाँध । ५४८
बंस=वंश, परिवार; परंपरा, शास्त्र । ५
बंस=कुल; बाँस । २०४
बंसी=मुरली; मछली फँसाने की कटिया । २५०
बकसी=दी हुई; बक (बगुले) के रंग सी । ११५
बकी=बगुले के रंग का, उज्ज्वल । ११४
बक्रतुंड=टेढ़े मुखवाले (गणेश का विशेषण) । ३
बगवान=बागवान, माली । ८५
बगारि दीन्हो=फैला दिया । १४०
बगारें=फैलाए हुए है । २४४
बजाइ=डंके की चोट । १६५
बजनी=बजनेवाली, ध्वनि करनेवाली । ४३
बजनी=नूपुर, घुँघरू (पायजेब) । ४३
बढ़त=बुझता है (दीपक); विकसित होता है (तन) । ३६७
बतान=बात करना । ३३
बतिआनि=बात; बत्ती । १८३
बतिया=बात; बत्ती । १७४
बधायो=बधावा, नाच-गान, खुशी । २७
बनमाल=पैरों तक लंबी माला । २३६

बनमाली=उपवन का माली; श्रीकृष्ण। २२४
बनमाली=कृष्ण। ३०६
बनाउ=बनाव २५६ टि
बनाय=बनाव, ठाठ। ६६
बनिक=बानक, सजधज। ३२४
बनी=बन गई; दूल्हन। २०
बफारो=बफारा, मुँह की भाप की सेंक। ५२७
बयसंधि=शैशव और यौवन की संधि, वयःसंधि। ४०
बर=वर श्रेष्ठ; नायक। २२६
बरइहि=वर इहि (वर=प्रिय को इस रात में); बरई (तमोली) को। २१०
बरजो=मना किया हुआ। १०६
बरजो=मना करे। ३६६
बरजोर=बरबस। १०६
बरजोरी=जबर्दस्ती। ३६६
बरत=व्रत; (वरत्रा) रस्सी। २०४
बरत=जलते हुए। ४००
बरतहू=जलते हुए, प्रकाश देते हुए (दीपक); जलते हुए, दाह का अनुभव करते हुए (तन)। ३६७
बरनन=वर्णों, रंगों से। १५
बरनि बरनि=सराहना (वर्णन) कर करके। ३४८
बरी=जली; वरण की हुई। २२१
बर्न्य=वर्णनीय, आलंबन। १५७
बर्याई=बरिआई, बरबस। १८६
बलया=चूड़ी। १३४
बलाय=बला। ६६
बलाय सों=बला से (आपको क्या चिंता है)। ६६
बलि=बलिहारी। ७१, १२५, २३१
बसन=वस्त्र। ११४
बसन=बसना; वस्त्र। २१८
बसि=वश में। ३०५
बसि=बसकर। ३०५
बसी करन=कान में बसी। ४०३
बसीकरन=वशीकरण (मंत्र)। ४०१
बसीकरि=वश करनेवाली। २१२
बसीठी=दूतत्व; रोचक बात। ४७६
बस्य=वश्य, वश में। ११८
बहसि बहसि=बहसकर करके, तर्क-वितर्क कर करके। २५७
बहाल=यथावत् अर्थात् सुखी। ४६७
बहिक्रम=(वयःक्रम) वय (उम्र) का क्रम। २४
बहिरभाव=बहिर्भाव। ५६३
बहुरत=लौटते, वापस आते (हैं)। ३७६
बाँचि=बचकर। २१६
बाँचि=पढ़ (लो)। २३६
बात=वार्ता; वायु। २२८
बात बजी=बात सुनाई पड़ी। १४५
बादि=व्यर्थ। ३८०
बानगी=नमूना। ३२८
बानि=टेव, स्वभाव। २१, ५१०
बानो=(बाना) भेस। ५०६
बाम=वामा, स्त्री। २५८
बार=द्वार। २५१
बार=केश। ४००
बारन=ओट, सहारा। ४७४

बारहो लगन=बारहो लग्न (राशि)। २५६ टि
बारि=कुमारी। १२४
बारि=रोककर, बाधा देकर। ५२६
बारि गो=जला गया। २४६
बारिचर=जलचर (मछली)। ५२६
बारी=वाटिका; पुत्री। २२४
बाल=बाला, नायिका। २६
बालपन=शैशव। २६
बाससेज्या=वासकसज्जा। ११८
बिंब=बिंबाफल; ओठ। २१६
बिगलित=गिरा हुआ। ३०
बिघ्नखंड=विघ्नसमूह। ३
बित=वित्त, धन। ६८, ४६१
बिथको=स्तब्ध। ३०७
बिथा=व्यथा। २५५
बिद्रुम=मूँगा। २३५
बिधान=विधि, रीति। ५४
बिधान=विन्यास। ४०१
बिधि=ब्रह्मा। १३५
बिनिंद=प्रशंसनीय। १५६
बिभात=प्रभात, सवेरा। ३६
बिभावरी=रात्रि। ३८०
बिभूति=ऐश्वर्य; राख। ४६६
बिमला=सरस्वती। १७
बिमान-बनिता=अप्सरा। २७७
बिरमि=बिलंब करके। १३०
बिरसैनि=नीरस, रसहीन; उदासीन। ५४१
बिरह-कतल-कार्ती=बिरह को कत्ल (समाप्त) करनेवाली तलवार। २६४
बिरी=(पान की) बीरी, बीड़ा। ३५५
बिरुद्धित=विरुद्ध होने का भाव धरे हुए। ४६६
बिलगात=पृथक् होते, अलग रहते हुए। ११०
बिलपन=विलाप, रोदन। ४५६
बिषधर=भुजंग, सर्प। ४५४
बिसन=(व्यसन) प्रवृत्ति, जगत् के विषयों के प्रति रुचि। ४५५
बिस-फूल=विष (पानी; जहर) का पुष्प। २६८
बिसवासी=विश्वासघाती; विष के साथ बसनेवाला (चंद्रमा)। ५१२
बिसाखा=सखी का नाम; विशाखा नक्षत्र। २७२
बिसारी=भूलने पर; विषैली। २५१
बिसासिनी=विश्वासघातिनी; विष खानेवाली। २४४
बिसूरि=चिंता करके। ५१०
बिसेखि=विशेष रूप से। ११
बिस्रब्धनवोढ़ै=विश्वास करनेवाली नवोढ़ा ही, विस्रब्धनवोढ़ा। २५
बिस्तर=विस्तार। १५५
बिहाल=बेचैन। ४७७
बी=प्रकार का। ५१३
बीते=समाप्त हो गए। २२४
बीभच्छ=वीभत्स। ४७०
बीर=सखी, सहेली। ५१२
बीरन=(पान के) बीड़े। १७
बूझति=समझती (नहीं)। २२८
बूझति=पूछती (अर्थात् बुलाती)। २२८

मंडलित=(मंडल-) युक्त । ३
मकर=मकर राशि; मगर के आकार का । २५६ टि
मगरूरि=अभिमानिनी । ११६
मदन=मद का बहुवचन । ४४
मदन=काम । ४४
मधुव्रत=भौंरे; शराब पीनेवाले । ५४
मधु-मास=मद्य और मांस; मधु मास (चैत्र, वसंत) । ४१२
मन धरी न=मन में धारण न की, स्वीकृत न की । ३५
मन लेना=मन वश में करना । ३३
मनि कपूर=कर्पूरमणि, एक रत्न । १८
मनुहारि=मनुहार, खुशामद । १८६, ३३२
मने=मना (वर्जन) । १०७
मयूखपी=किरणों को पीनेवाला (चकोर का विशेषण) । ३८८
मरकत=पन्ना, यहाँ नीलम । १५६
मरे=मरने पर । ३३६
मलयज=चंदन । २६८
मलिंद=भ्रमर । १५१
मलै=मलय, चंदन । १३२
महर-किसोर=नंद के बेटे, कृष्ण । २५०
महाउर=अलक्तक, जावक; लाल रंग । ४८
माखन=मक्खन; माख (बुरा) मत (मानो । २२०
मागननि=भिक्षुकों को । ४८०
मति रहे=मत्त हो रहे हैं । ४४
मानस=सरोवर; मन । १६४
मारवार=मारवाड़, मरुभूमि (कृष्ण के पास) ४५५
माह=में । २८६
माहि=में । ३६४
मिड्डिकै=मरोड़कर, मींजकर । ४६६
मित्त=मित्र । २४
मिथुन=मिथुन राशि; जोड़ा । २५६ टि
मिथ्यामान=झूठा अथवा बनावटी मान । ३१३
मिस=बहाना । १२६
मिसि=बहाना १४१
मीड़त=मलती है, मसलती है । १०२
मीन=मीन राशि; मछली । २५६ टि
मुकुत-माल-हित=मोतियों की माला के लिए (नंदलाल को ला) । ८७
मुक्कित=मुक्के मारते हुए । ४६६
मुख=चंद्र का उपमेय । ६६
मुखागर=(मुँह-) जबानी । २३६
मुद्रित=मुँद गई, दब गई । ५५१
मुरारि=(मुर+अरि=कृष्ण) हे कृष्ण । ३३२
मूरि=बूटी । १०३
मृगमद=कस्तूरी । ३१४
मृनाल=कमलनाल । ५२
मेखला=मेष राशि; करधनी । २५६ टि
मेनका=एक अप्सरा । १७
मै=मय, युक्त । १५८
मैन=मदन, काम । २७
मैन=मैं न; मदन (काम) । २२१
मो=मेरा । ३०६
मोहनी=जादू । ३६६

मोहनै=(मोहनहि) मोहन को । २५४
मोहि=मोहित कर । १११
मोहि=मुझे । १११
मोहै=मो है (मुझे है); मोहता है । २१८
मौन गहाऊँ=चुप करूँ । ५१०
मौर=मंजरी, बौर । ६६
या=यह । ३०३
यो=यह । ३६७
रंक=दरिद्र । १८०
रंक=(रंकु) सफेद चित्ती वाला मृग । १८०
रँग=वर्ण; आनंद । २१८
रंग=क्रीड़ा; आनंद । ५२६
रंभा=एक अप्सरा । २७
रगमगी=रत, लीन । २८७
रगमगे=तल्लीन; लोभी । १८४
रजनिचर=राक्षस; रात को चलनेवाला (चंद्र) । २६८
रजमै=रजोगुणमय । १५८
रजाइ=आज्ञा । ४७८
रति=काम की पत्नी । १७
रतीक=एक रत्ती, परिमाण मैं बहुत थोड़ी । २५६ टि
रदछद=ओठ । २२७
रदछद=दाँत का क्षत । २२७
रमि=रमकर, रमण कर । ११८
रली=युक्त । १५७
रस=आनंद, हर्ष । ४२
रस=जल; आनंद । ६६, १६४
रसऐन=रसिक । २६६
रस-बाहिर=जल के बाहर; रस से बाह्य ५२६
रसमोए=रससिक्त । ५३४
रसाइ=टपकाकर; दूर कर । १७४
रसाल=आम । ६६
रसाल=आम; रसिक । २२४, ३२२
रसाल=रसमय । २८७, ४०७
रसीली=रसमयी, आनंदमयी । ५१
रसी=रसने लगी, बहाने लगी । ३५६
रस्यो=रसा हुआ, डूबा हुआ । २८६
रहत=अब भी है । ६४
रही=पहले थी । ६४
राखवारन को=भस्म या धूलवालोँ का । ४५५
राजराज=राजोँ के राजा; कुबेर । ५६
रात=(रक्त) लाल । २८६
राव-राने=छोटे बड़े राजा । ५१६
रितै दीन्हो=समाप्त कर दिया । १६८
रिसि=रोष । ११६, १४१
रिसौँहैँ=रोषोन्मुख । १८७
रूखी=उदासीन; चिकनाहट-रहित । १३२, २२२
रूखे=रूक्ष; वृक्ष । ५४१
रूप=सौंदर्य; चाँदी । १८४
रूपन=चाँदी । २४६
रूपो=चाँदी । १८
लक्ष=लक्ष्य, उदाहरण । १६२
लक्षि=लक्ष्य, उदाहरण । २४
लखाउ=लक्षित होना । १५५
लखि=देखकर । ६१
लखि लीन्ही=लक्षित कर ली । ६१

लखै न=लक्षित नहीँ कर पाता (गुरुजन–एकवचन) । ६०
लखैबो=दिखाना । ४६५
लगन=प्रीति । २५६ टि
लगन=लग्न (ज्योतिष) । २५६ टि
लगि-लगि=झट झटकर । ३११
लगु=पास । १३४
लज्जासील=लज्जावती । २१
लटू=मुग्ध । १६३
लटू=लट्टू; मुग्ध । २१६
ललिता=राधा की सहेली । २५७
लली=वृषभानुलली, नायिका । ८६
लसै=शोभित है । ११२
लाइ=आग । १७४
लायक=ठीक, उचित । १७१
लाल=रोष से । ५२
लाल=लाल रंग के (रात जागने से) । ५२
लाल=श्रीकृष्णलाल, प्रिय, नायक । ५२
लाल=रक्त; प्रिय । २०५
लाल=लाल रंग के; प्रिय ।८३, २०३ २२४
लालरियाँ=लाल नगीने । १५६
लावै पलकौ न=पलकें भी नहीँ लगाती । ३६६
लाहन=(लाह=लाभ) लाभोँ को । ३
लीक=रेखा; चिह्न । १४६
लीन्ही उन मानि=उन्होँने मान लिया । ६१
लेखि=लिखकर । ३०८
लोइ=(लोक) लोग । ६१
लोनो=नमकीन; सलावण्य । ४११
लोयन=(लोचन) नेत्र । ५५
वहै=वही । ३१६
वा=उस । ३४४
वारती=निछावर करती । ३६३
वाही=उसी से । ३६६
श्रीखंडपरसुनंदन=महादेव के पुत्र । ३
श्रीफल=बेल; कुच । २१६
श्रीफल=बेल (कुच का उपमान) । २४५
श्रुति=कान । २६, ५१४
श्रौन=(श्रवण) कान । ५१०
सँकित=शंकित । १८७
संकेत=संकेत-स्थान । ७६
सँजोगी=(संयोगी) मिलनेवाले (कान के पक्ष में); साथी (राजा कर्ण के पक्ष में) । १६
संज्ञा=नाम से ही । १६३
सँभारु=सँभालो । ३०
सकज्जल=कज्जलमय, काले । १२५
सकसि=अड़सकर, कसकर । ३०४
सकात=शंकित होता है । ५३७
सकी पकी=सकपकाई, आगा पीछा करती । ३०७
सगुन=शकुन । १४२
सची=शची, इंद्राणी । १७
सजाइ=सजा, दंड । १३२
सजीवन=सजीवनी । १०३
सदन=(सद=टेव) आदतों से (लाचार होकर) ४४
सदन=घर, गृह । ४४
सनख=नख (-क्षत) सहित । ४७ टि

सनेह=प्रेम । १७०
स-नेह=प्रेमपूर्वक । १७०
समयी=अवसर के अनुकूल आचरण करनेवाला । १८६
समर=स्मर; समरभूमिवाली । ३६५
समै=समय, अवसर । ४७१
सयान=चतुराई । १२७
सर=पत्ती; बाण । ११३
सर=बाण । १३२
सर-मरेन्ह=बाण से मरे हुए । ८८
सरबंग=सर्वांग । ४६६
सरवर=सरोवर । ६५
सरसाइ=बढ़ाकर । १७४
सरसान=सरसाना, बढ़ाना । ३३
सरसि जात=हर्षित हो जाते हैं । ६०
सरोज=कमल; मुख । २१६
सलाम=प्रणाम । ३६
सलामहू को चोर=प्रणाम करने से पराङ्मुख रहनेवाला । ४७८
सलाह=परामर्श; षड्यंत्र । २८
सलोनी=सुंदरी । ५८
सवाई=अधिक । २४६
ससिमुख=शशिमुख; चंद्रबिंब । १२८
सहिदानि=चिह्न, निशानी । ४२४
सहेट=मिलन का संकेत-स्थल । १२३, १२७
साँति=शांति, चैन । ४४
साथ=(चलने के) साथ ही । १४६
सान=(शान) ठसक की भव्यता । ३३
साननि=तीक्ष्ण कटाक्षों से । २४६
सारस=कमल । २८६
सारसनैनी=कमलाक्षी । ३३३
साहिबी=बड़प्पन । १६
सिंजित=करधनी और नूपुर की ध्वनि । १३४
सिंह=सिंह राशि; शेर । २५६ टि
सिखापन=सिखावन, शिक्षा । ४६०
सिरभूषनहि=(जो) सिर के भूषण (शिरोमणि) हैं उनको । ३८४
सीतकर=ठंढी किरणवाला; चंद्रमा । २६८
सीतभानु=शीतल किरणोंवाला, चंद्रमा । १२४
सीरे=ठंढे । ४००
सील=(शील) सद्व्यवहार । २३
सीलसदन=सद्व्यवहार-संपन्न । ४७ टि
सु=सो, वह । ३६३
सुकिया=स्वकीया । २१
सुकृतसील=सत्कर्तव्यपरायण । २१
सुखकंद=सुख की जड़, सुखदायक । १४०
सुखधाम=सुख का घर; प्रिय, नायक । ३६
सुगति=सुंदर चालवाली (प्रेमिका); चलते समय अच्छा सहारा देने वाली (छड़ी) । १७६
सुघरई=चतुराई । २३
सुघराई=चातुर्य । २१२
सुछंद=स्वच्छंद, निर्बाध । १४०
सुढार=सुसंघटित, सुंदर । २२५
सुदेस=सुंदर देश (व्यंजना से 'रमणीय' भी) । १६
सुधाई=भोलापन, सिधाई । २३

सुधाधर=सुधा धारण करनेवाला (चंद्रमा)। २५८
सुपास=सुभीता, आराम। १६१
सुबंस=उत्तम वंश (कुल); अच्छा बाँस। १७६
सुबरन=सोना; सु+वर्ण। १६६
सुबरन=स्वर्ण; सुंदर वर्ण। २५६ टि
सुबरन-बरनि=हे सुवर्ण-वर्णी। २३
सुबरनबरनी=सुवर्ण-वर्णी। १६६
सुबेनी=सु—सुंदर, + बेनी—वेणी। २६
सुभाइ=स्वाभाविक। ३०२
सुमति=सद्बुद्धि। १५
सुमन=पुष्प। ३५, ५३
सुमन=फूल; सु+मन। २२३
सुमन कौं=फूल तोड़ने के लिए। ८१
सुमनमई=पुष्पमयी, कोमल। ५०७
सुमारु=शुमार, गणना ३६७
सुमिरन=स्मरण; सुमिरनी, माला। २०६
सुरंग=लाल; एक प्रकार का घोड़ा (चमत्कारार्थ)। ४७ टि
सुर=स्वर। १७
सुरत=रति-क्रीड़ा। ३६
सुरसती=अरुणिमा; सरस्वती नदी। १६५
सुवा=सुग्गा; नासिका। २१६
सुहाग=सौभाग्य; सोहाग। २३
सूरो=शूर। ३४६
सूल=त्रिशूल। ४६६
सूल=शूल (पीड़ा)। ४३६
सेंति=बिना दाम के। ४२
सेज=शय्या। १३२
सेपुर=(शेखर) माथा। ४०१
सैन=संकेत। ८६
सैन=शयन, सोना। १२३
सैननि=संकेतों। ५८
सैनहू=शयन (शय्या) पर भी। ३७०
सो=वह (कथा)। १२५
सोग=शोक। ५६६
सोचन=चिंताओं से। ४५८
सोभाश्रित=शोभाश्रित। ५६६
सोरन=(शोर) कोलाहलों। १३४
सौं=सौंह, शपथ। २०६
सौंहैं=शपथ। ३५
सौंहैं=संमुख। १८७
सौंतुख=प्रत्यक्ष। १६४
सौंगंध=सुगंध। १५७
सौतुख=प्रत्यक्ष। ४२०
सौधरंध्र=गवाक्ष। ४०७
सौहैं=संमुख, सामने। ३५, ४८
सौहैं=शपथें। ४८
स्याम=श्रीकृष्ण; काले रंगवाला। ३४
स्याम घन=काले बादल; श्रीकृष्ण। ८५
स्यामा=सोलह वर्ष की तरुणी; हरे रंग की (छड़ी)। १७६
स्वयंभु=ब्रह्मा। ११६
स्वतःसंभवी=अपने आप घटित। २७६
स्वसन=उसास लेना। ४५३
स्वास=रत्नगंध का उपमेय। ६६
हठि=हठपूर्वक, बरबस। १३४, ३७६
हतन=हत्या, वध। २६
हरगर=महादेव के गले में की। ४५४

हरा=हार, माला । ४८
हरि=हर (प्रत्येक) से; श्रीकृष्ण । २२०
हरि=प्रत्येक (हर) । २५६
हरि=कृष्ण । २५८
हरि गयो=छिन (गया) । ४५५
हरित=हरा । २८५
हरितन-जोति=कृष्णके तन की ज्योति । ४०७
हरिनख=बाघ के नख; कृष्ण के नख । २५६
हरियारी=हरे रंग की; हरि (श्रीकृष्ण) वाली । २०८
हरिराइ=बंदरराज; सुग्रीव । ५१४
हरी=हरे रंग की; हरि (श्रीकृष्ण) । ८३
हरी हरी=हरो हरी (लताएँ) । ३६४
हरी हरी=हे हरि हे हरि । ३६४
हरेँ हरेँ=धीरे धीरे । १३४
हाँती=पार्थक्य, विमुखता । ३८२
हार=शैथिल्य । ४००
हाल=तुरंत । ८७, ४६७
हावै=हाव ही । २६२
हित=प्रेम; लिए । ४६
हिय=छाती । ४७ टि
हिरिकि न (सकै)=पास नहीँ जा सकता । ४७४
ही=(हिय) हृदय । ५६
हीती=(हित) प्रिय । ३८२
हीरा=हीरा, वज्रमणि । ४१८
हीरा=(हियरा) हृदय । ४१८
हीरो=हियरा, हृदय; हीरा (रत्न) । ४६
हुतासन=अग्नि । ५०६
हुन्यो=आग मेँ जलाया । ६८
हूक=पीड़ा । ७६
हेत=(हेतु) प्रेम । ८
हेत=कारण । ४०१
हेरौ=देखो । ३१६
होने=होनेवाला (भविष्य मेँ) । ७६

शृंगारनिर्णय

अंक=चिह्न । ४६
अंक=गोद । २४५
अंकुरिबो=अंकुरित होना, उगना । १८१
अंगराग=सुगंधित द्रव्य का लेप । १७६
अँगिराति=अँगड़ाई लेती है । २४५
अँगोटिकै=रोक रखकर । २२०
अंत=भेद, रहस्य, पता । ३०६
अंतर=बीच, मध्य । २२३
अंतर=भीतर, अंदर । २४५
अँदेस=अंदेशा, शंका । २६८
अंबफल= आम । ६०
अकस=बैर, विरोध, डाह । १७७
अकह=अकथनीय, अवर्णनीय । २४८
अकुलैबो=व्याकुल होना । १७३
अखरिहै=बुरा लगेगा । २६६
अखारो=अखाड़ा । ५५
अगाऊँ=पहले ही । १५७
अगीठि=अग्रभाग । ४२
अगोटि=छेककर, घेरकर । ३०७
अगाँहैँ=आगे ही, पहले ही । १८८

अघानी=तृप्त हुई। २६५
अचकाँ=अचानक। १०६
अछेह=(अछेद्य) लगातार। २३३
अजिर=आँगन। ३१४
अजू=अजी। ६६
अज्वाल=ज्वालाहीन, लपटरहित। १७८
अटारिन=अट्टालिकाओं। २३७
अतन=कामदेव। ६७, २६४
अतन को सरीर=भस्म। ६७
अतरौटा=अंतरपट, महीन साड़ी के नीचे पहनने का वस्त्र। २७३
अतूल=अतुलनीय, अनुपम। ५१
अथाइ=चौपाल, बैठक। ६३
अदेह=कामदेव। २३३
अधरा=आधार ? २६०
अधरा=निराधार ? २६०
अधरात=अर्धरात्रि, आधी रात। १७३
अधिकारी=आधिक्य, बाहुल्य। १६८
अधीन=नम्र, विनीत। २७१
अधसाँसी=अर्धजीविता, अधमरी। ३१६
अनंगकला=केलिलीला, कामकला। १७
अनखाइकै=रुष्ट होकर। १२०
अनखानी=अमर्ष, झुँझलाहट। २१०
अनचाही=अनिच्छित। २६४
अनत=अन्यत्र। ३३, १६६
अनाकानी=आनाकानी। २५७
अनारी=(अनाड़ी) अज्ञान, अजान। ४६
अनारीदाना=अनार के दानों के रूप। ४६
अनी=नोक। २६२
अनुराग-रली=रागोन्मत्त, प्रेम-विभोर। ३८
अनेग=अनेक, बहुत, अधिक। ३१३
अनैसो=अनिष्ट, बुरा। २६६
अनोट=पैर के अँगूठे में पहना जानेवाला आभूषण। ६६
अन्यास=अनायास, व्यर्थ, नाहक। २६२
अपति=अप्रतिष्ठा, छीछालेदर। ५६
अपसमार=अपस्मार, मृगी रोग। २३८
अबकै=इस बार। १७४
अबलानन=अबलाओं के मुख। ५६
अवहित्था=आकारगुप्ति, भावगोपन। २३८
अबार=विलंब, देर। १६६
अभरन=आभरण, आभूषण। २५०
अमर=देवता (ब्रह्मा)। २२८
अमरष=अमर्ष, क्रोधाभास। २३८
अमात=समाता है। १०६
अमान=बेहद, अत्यधिक। ५४
अमाहिर=अनाड़ी, अकुशल। १३१
अमी=अमृत। २२६
अमोली=अमूल्य। २५५
अयानी=अजान, नादान। २१०
अरन्य=अरण्य, वन, जंगल। ५२
अरुनोदै=अरुणोदय। १७६
अलख=अगोचर, अदृश्य। २२४
अलप=(अल्प) थोड़ा, कम। ३१४

अली-अवली=भ्रमरपंक्ति । ३८
अलीक=मिथ्या (हार का दाग होने से) । १७७
अवदात=सुंदर, निर्मल । १७६
अवराधे=आराधना, उपासना । ३११
अवलोके=देखने पर । २२६
अवास=आवास, घर । १३८
असकति=(अशक्ति) बेबस । ६४
असन=(अशन) खाद्य, भोजन । २१४
असाधिता=असाध्य । २३२
असूया=डाह, द्वेष । २३८
अहिछौने=साँप के बच्चे । १३१
अहिछौना=साँप का बच्चा । ५८
आँगी=अँगिया, कंचुकी, चोली । २४५
आँसी=अंश, हिस्सा । ३१६
आकरषि=खींचकर । ३३
आखर=अक्षर, वर्ण । २२५
आगैं=सामने, तुलना मैं । ६
आछे=अच्छी तरह । १७०
आड़=तिलक, टीका । १५४
आतमधर्म=आत्मधर्म । २७
आतुर=जल्दी, शीघ्र, अविलंब । १७४
आतुर=घबराया हुआ । २७०
आतुरिया=आधिक्य । १४६
आदरस=(आदर्श) दर्पण । २५५
आधि=मानसिक क्लेश । २३२
आधक=आधी, अर्ध । ३१२
आन=दूसरे । ८६
आनन=शपथैं, अनेक सौगंध । ८६
आनन चाहिबो=मुख देखना । ८६
आपनी दाउ=अपनी बारी । २६६
आपरूप=मूर्तिमान् , साक्षात् । ३०६
आभरन=आभरण, गहना । ३१
आभा=शोभा, छटा । ३१
आरसी=(आदर्श) काच, शीशा । ३२
आलै=ताक, ताखा । २८०
आवंती=आगमन । १५६
आवा=आँवा । ३१४
आवागौन=आवागमन, आना जाना । २६०
आसव=मद, नशा । २३३
आसिक=आशिक, प्रेमी । १०
आहट=आने का शब्द, चाल की ध्वनि । २१६
इकंक=(एक आँक) निश्चय । १२५
इकंत=एकांत, अकेले । ३०६
इतौत=इत-उत, इधर उधर । २७४
इरखाति=ईर्ष्या करती हैं । २३६
इरिषा=ईर्ष्या, डाह । २६६
इहि लेखै=इसलिए । २७५
ईठि=(इष्ट) सखी । २३३, ३२४
उकसौं हैं=उत्थानशील । १२६
उचकति=उछलती है । २३७
उचरिबो=उच्चारण करना, कहना । २६८
उछंग=उत्संग. गोद । ११६
उठै मचि=लद उठे, जमा हो जाय । २५३
उठ्यो खचि=खिँच उठा, खिँच गया । २५३
उतंग=(उत्तुंग) ऊँची । ५१
उतलाई=शीघ्रता, उतावलापन । २७३
उदर बिदारते=पेट फाड़ते । २२८

उदास कै=उद्वास कर, उजाड़कर। ५२
उदाहर्न=उदाहरण, नमूना। २३६
उदीची=उत्तर दिशा। १६६
उदीपति=उद्दीप्त करनेवाली। २६४
उद्दारिजो=औदार्य। ६२
उद्वेग=व्याकुलता, बेचैनी। ३१३
उनमान=अनुमान। ६६, २८०, २६२, ३२५
उनीदता=(उन्निद्रा), उन्निद्रता। २३२
उनीदति=जागती है,सोती नहीं। २३६
उन्माद=चित्तविभ्रम, विक्षेप, पागलपन। २३८
उपमान-तलासी=उपमान ढूँढ़नेवाली। ६१
उपरैनी=ओढ़नी, चादर। १६८
उपाइन=उपायों को। ६३
उपाए=उत्पन्न कर ली है। १७८
उपाधि=उपद्रव। २३२
उपालंभ=उलाहना। २१६
उपावै=उपाय, बहाना। ११२
उमंडि रहे=उमड़ रहा था। २२३
उमहत=उमंगित होते हैं। ५८
उमहैं=उमड़ते हैं। २६५
उरज=उरोज, स्तन। २२६
उरजातथली=वक्षःस्थल। १२४
उरजातनि=उरोज, स्तन। १२४
उरझाए=उलझे, लिपटे। ५८
उरमी=ऊर्मि, तरंग, लहर। ५१
उरोजवतीन=उन्नतपयोधरा (नायिका)। १८
उलही=उल्लसित हुई, उमड़ी। १२५
उसास=उच्छ्वास। ६४, २२५, ३२६
उसुआसनि=खुचड़। ६४
उहि=उस। १८१
ऊख=ईख, गन्ना। ४८
ऊढ़=विवाहित। ७४
ऊभि=व्याकुल होकर। १६४, २३३
एकपटी=एक पाट की। २७३
एती=इतनी। ३७
एती=ऐ स्त्री (सखी)। ३७
एनी=एणी, हरिणी। १४३
एवी एवी=एजी. 'ए वी ए वी' शब्द। १४३
ऐंचत=खींचती है। १४६
ऐवे की=आने की। २००
ऐवो करै=आया करती है। १७३
ओट=आड़, गुप्त स्थान। ६६
ओप=चमक। ३४
ओप=चमक, तेज। १३४
औधि=अवधि, सीमा २००
औनि=अवनि, स्थान। २६०
कंचुकि=चोली। १६३
कंटन को=काँटों का। १६६
कंदरप=कंदर्प, कामदेव। ५६
कंबु=शंख। ४३
कच=केश। २६२
कच्छ=(कच्छप) कूर्मावतार। २
कज्जलकलित=काजल से शोभित। ५४
कटाछ=कटाक्ष। १२
कटीले=कंटकित, पुलकित। २३५

कांठनाति=कठोर बनती है । २३६
कढ़त=निकलते ही । ६३
कथन=कहना । ३०२
कदंबिनि=कादंबिनो, काली घटा । २१४
कद=डीलडौल । ३०
कनखा=कटाक्ष । १०२
कनौड़ी=दबैल । ६३
कपटवारे=कपटी, छली । २३१
कपूर-धूरि=(कर्पूर धवल) कपूर सी उजली (ओढ़नी) । ४७
कबहुँक=यदा कदा, कभी कभी । २६३
कर=महसूल । २०
कर=हाथ । २६६
करता=ब्रह्मा, दैव । ८८
करतार=ब्रह्मा । ५३
करन-सँजोगी=कर्णालंबित; राजा कर्ण के साथी । २४४
करवीर=कनेर । १६१
करभ=हस्ति-शावक । ३४
करभ=मणिबंध से कनिष्ठिका तक हाथ का बाहरी हिस्सा । ३४
करवाल=कृपाण । १
करहाट=कमल का डंठल, मृणाल । ३२५
करामति=करामात । १६०
करिकुंभ=गजमस्तक । २२८
करेर=कड़े, कठोर । १५
करोट=करवट । ६६
करोर तैँतीस=परंपरागत तैँतीस कोटि देवताओं का समुदाय । १८
कल=शांति, चैन । ७१
कलकी=कल्कि अवतार । २
कलप=कल्पांत का ताप । ३१४
कलपैये=दुःख दीजिए, पीड़ित कीजिए । ७१
कलस=घड़ा १३८
कलहंतरिता=कलहांतरिता । १८०
कलाइछिमी = (कलाइ = मणिबंध, गट्टा+छिमी=फली) मणिबंध रूपी फली । ४१
कलामैँ=बातेँ १५५
कलामैँ=वादे । २४२
कलिंदजा=यमुना । १६
कलेवर=शरीर, देह । ६४
कलोल=क्रीड़ा । १३६
कसीस=कर्षण, कशिश, खिंचाव । ५४
कसौटिन=कसौटियाँ, निकष । २१६
कहकह=आनंदरव (केका) । २६६
कहर-कमान=विपत्ति ढानेवाला धनुष । ५४
कहरत=कराहती है । २३६
कहल ह्वै कै=अकुलाकर । १६६
कहा=क्या । २२
कहा=क्योँ । २३१
कहीँ की कहीँ=एक जगह से दूसरी जगह, अन्यत्र । १८३
काँख=कक्ष, बगल, पास । ७३
काँगहि=कंघी, कंकतिका । १५४
काग-भरोसो=कौए के बोलने का भरोसा या विश्वास । २०१
कागर=(पंख), चित्रपट । २६०

कानन न आनती=सुनती नहीं। २०७

कान्ह=श्रीकृष्ण (कृष्णावतार)। २

कान्हर=श्रीकृष्ण। ८८

कामपाल=बलराम, कृष्ण के बड़े भाई। २१३

कारो=काला। ८८

कासौं=किससे। २२

किंकर=सेवक, दास। १

किंसुक=(किंशुक) पलाश। ५१

कितै=कहाँ। २५८

किन=क्यों न। ७२, १८७

किल=निश्चय, अवश्य। २१४

की=(कि) अथवा। ४१

कीने=किए हुए। २५०

कीबी कहा=करें क्या। १२७

कुँदुरू=बिंबाफल। १०८

कुंभ=भांड, घड़ा। ३६

कुगोल=पृथ्वी, भूमंडल। २

कुच संभु=कुच रूपी शंभु। २२४

कुठाकुर=बुरा मालिक, उग्र स्वामी। १७६

कुपंथिनि=कुमार्गी के पास। २३१

कुमुदबंधुबदनी=(कुमुद+बंधु+बदनी) चंद्रमुखी। २१३

कुरबान=न्यौछावर, बलिदान। १३८

कुरि जाइ=राशीभूत हो, ठहर सके, डट सके। ४५

कुलजाता=सद्वंशसंभवा। ६२

कुलनासी=कुल का नाश करनेवाली। ३१६

कुलसानन=(कुल+सान=शान+न बहुवचन) कुल की प्रतिष्ठा। ८६

कूर=निकम्मा, दुर्बुद्धि। ५६

कृत=किया हुआ काम; की हुई बात। २१०

कृसान=कृशानु, अग्नि। २६६

केतनी=कितनी ही। १७८

केस-तम-बंस=केश रूपी अंधकार का समूह, बालों की गाढ़ी श्यामता। १२५

केसरि=केसर, जाफरान। ६७

केसरि-खौरि=केसर का तिलक। १३६

कै=अथवा। १५८

कैबर=तीर का फल, गाँसी। १२

कैवा=कई बार। १५५

कैसे धौं=किस प्रकार। २७१

कैसेहुँ=किसी प्रकार, चाहे जैसे। ३०५

कौंरी=कोमल, सुकुमार। २१४

कोइ=कोई। २०२

कोक=चक्रवाक। ६०

कोटि=अनी। २६२

कोल=वराह (वराहावतार)। २

कोह=क्रोध। ११०

कौने की=किसी की। ३४

कौल=कमल। १८, ३२५

कौहर=इंद्रायण, इसका फल पकने पर अत्यंत लाल होता है। ३३

क्षपेस=चंद्रमा। १६६

खंडनी=नष्ट करनेवाली, तोड़नेवाली। ४८

खए=बाहुमूल, पखौरा। २७७

खनकैंगी=खनखनाएँगी, बजेंगी। १४७
खरके=खड़कने से। १७३
खरको=गाय बैलों का फूस का वाड़ा। १७३
खराद चढ़ाई=खरादी हुई। ४०
खरे=प्रगाढ़, अतिशय। २२२
खरे=खड़े होकर। २८०
खवाए=खिलाने से, सेवन करने से। २६६
खवासिनी=परिचारिका। ३०
खिनक=क्षणैक, एक क्षण। ५६
खीझिबे की=चिढ़ने की, झुझलाने की। २१०
खीनी=क्षीण, पतली। ३६
खीस=विनाश। १
खीस खोइबे काँ=विनाश करने के लिए। १
खुलित=खिली हुई, सुशोभित। ३१
खुले=फैले, व्याप्त। २४५
खोयो=नष्ट हो गया। १८१
खोरि=खराब करके, बिगाड़कर। २११
गँवारो=गँवार, मंदबुद्धि। ८८
गँसि जाती=बँध जाती, फँस जाती। २१६
गँसी गाँसी=कपट की गाँठ पड़ गई। २३३
गई करती=टाल जाती हूँ। २३
गई करि जाहु=भुला दो, भूल जाओ। ३१८
गजमोतीहरा=गजमुक्ता का हार। ४३
गरुआई=बोझ, भार। ३६
गरे पर्यो=गले पड़ा, जबरदस्ती मिला। ७२
गल=गला, कंठ। २८६
गली=मार्ग, रास्ता। २०५
गलीपथगामी=गली के रास्ते से जानेवाला। १७६
गहगह=उमंग से भरा। २६६
गहति है=(धारण) करती है। २२४
गहने=आभूषण। २६३
गाँसनि=गाँठें। २१६
गाइ=गाय। ३१२
गाड़=गड्ढा। १७६
गाढ़े=अच्छे प्रकार से। ३६
गाढ़े=कड़े, कठोर। ३६
गाढ़्यो=गाढ़ा, उत्तम। २
गानि गानि=गा गाकर। १६०
गिरिराज=हिमालय की नुकीली चोटी। ३६
गिरीस=शिव। १
गुंमज=गुंबद। ३६
गुआरनि=ग्वालों को। ३२१
गुच्छ=गुच्छा। ३६
गुनहीन हरा=आलिंगनजन्य माला के दानों से उपटा हुआ बिना सूत्र का हार (दाग)। २५
गुरौं=गुरुवार को। ४
गुलीक मालै=गोले रत्नों की माला। २७३
गूँदी=गूँथी, गुही। १६४
गूजरी=पैर का एक आभूषण। २५२

गेँडुरी=गेँडुरी, घड़ा रखने का मूँज आदि का उपकरण । १३८

गोफ=कोमल आरंभिक अंकुर, पत्ते के क्रोड़ से निकलनेवाला कोमल पत्ता । ४१

गोयो=छिपाया । १८१

गोविंद-तन-पानिप=कृष्ण के शरीर का जल (लावण्य) । २८६

गोहन=साथ । २२६

गौनो=जाना । ११५

ग्वालि=ग्वालिन, आभीर-बालाएँ । १४८

घनसोर=मेघ-गर्जन । २६६

घनेरे=बहुत से, अनेक । २६३

घरघाइ=घर की ओर । ३१२

घरी=घड़ी भर में, झट । २०६

घरीक=घड़ी भर में, थोड़ी देर में । २२१

घरी घरी=घड़ी घड़ी, बार बार । ३१७

घरी भरै=घड़ियाँ गिनता है । ६६

घहघह=बादल के गर्जन की अनुकरणात्मक ध्वनि । २६६

घाई=ओर, उन्मुखता । २२७

घातैं=चालें, चोटें । १८३

घाम=घर्म, धूप । २०६

घायक=घातक, नष्ट करनेवाला । १७

घुमरि=घूमकर, घूम फिरकर । २५७

घुरि=घुलकर, पिघलकर । २०६

घृताची=एक अप्सरा । ३०

घैरुहारिनि=निंदा करनेवाली । ६३

चंद-उदौत=चंद्रोदय । २७४

चंद-ओप=चंद्र-कांति । ६

चँदोवन कोँ=वितानोँ को । ३२

चंद्रक=कपूर । २६६

चंद्रिका=चाँदनी । ४७

चंपलता=चंपे की लता । २२६

चकति=चकित होती है, अचंभित होती है । २३७

चकी=चकित हुई, अचंभित हुई । २७४

चक्र=चक्र नामक अस्त्र । ३५

चक्रवती=चक्रवर्ती । ३६

चख-चारु-चकोरी=आँखरूपी सुंदर चकोरी । २७४

चटकीलता=चटक, दीप्ति, तेज । ३०६

चलदल-पात लौं=पीपल के पत्ते के समान (चंचल) । ६३

चलन=व्यवहार, चालचलन । २२६

चल - विचल=अस्त-व्यस्त, बिखरा हुआ । १४३

चली मन तें=मन से निकल गई । १६६

चले पिलि=एकबारगी झुक पड़े, सहसा ढल पड़े, यकायक खिंच गए । २२३

चवाइ=अपवाद, निंदा । ८३

चवेली=चमेली । १६१

चवैबो करौ=बदनामी करो । ८३

चहचह=चहचहाने का शब्द । २६६

चहुघाँ=चारो ओर । २२३

चाँदनी=सफेद चद्दर। ३२
चाइ=चाह, इच्छा। १०२
चातिक=(चातक) पपीहा। ३०२
चाय=चाह। २२३
चाय सौं=चाव से, तृष्णा से। १७३
चारु=चारुता, सौंदर्य। १६३
चारो=चारा, जोर, वश। ८८
चाहि=बढ़कर। १६
चाह्यो=देखा। २२१
चिकुरारिन मैं=अलकों मैं। १६३
चित चढ़ि आई=अच्छी लगी, मन को आकर्षित किया। १६५
चित चाइन (पूरे)=उमंगों से भरी। ३०
चितैबो करै=देखा करती है। १७३
चितौत=देखते हुए। २७४
चित्त-रमावन=चित्ताकर्षक। ४८
चिरी-धुनि=चिड़ियों की ध्वनि। २६६
चिलकै=चमकती है। ५७
चीन्हो=पहचाना। ४६
चीर=वस्त्र। २३५
चुनौटी=उत्पीड़न करनेवाली। ७०
चूरन=चूर्ण, चूरचूर। १६५
चूरि (गई)=चूरचूर हो गई। १०४
चेपटा=(चेष्टा) मुद्रा। १४१
चोखन=तेज, तीव्र, प्रचंड। ३१५
चोप=चाव। ६
चोरति=चुराती है। २३५
च्वै चलती=चू चलती। ७६
छत्रनास=क्षत्रियों का संहार। २
छपनो=छिपना। २३०
छपनो बन्यो=छिपना पड़ा। २३०
छबीले=सुंदर। १३८
छरोर=छिलोर, चमड़ा उकिल जाना। १०५
छलकौं हैं=छलकने पर आए हुए। २३७
छवान=एड़ियाँ। १३८
छबि के जल मैं=सौंदर्य के जल समूह मैं। २६५
छबिताल-गड़ारे=सौंदर्यरूपी तालाब के गड्ढे मैं। ४४
छहरैं=फैलें। १३८
छामता=क्षामता, क्षीणता, दौर्बल्य। ३२५
छामोदरी=क्षामोदरी, कृशोदरी। ३७
छार=क्षार, धूल। २२८
छिति=पृथ्वी। २
छिनक=क्षणैक, थोड़ी देर का। २६३
छीछी छिया=निंद्य कर्म, बुरे व्यवहार। २०५
छुही=रँगी। ११०
छोटौंहैं=छुटाई की ओर उन्मुख, छोटे छोटे। १२६
छोर=अंत, समाप्ति-स्थल। १३८
छोरि लेत हौ=छीन लेते हो। १५४
जऊ=यद्यपि। २६५
जक=रट। ६६
जकति=घबराती, डरती। ६४
जकाति=चकपकाती है, अंचभे मैं आती है। २३६

जकी=विस्मित, चकित । १३०
जक्तगुरू=जगद्गुरु । १
जगजग=जगमग, जाज्वल्यमान । १६५
जगत-प्रान=वायु, हवा । २६६
जग-नैन=दुनिया की आँख । ७६
जजला=जाज्वल, जलती हुई । १५५
जतन=यत्न, प्रयत्न । १८६
जद्दक्षा=(यद्दक्षा) मनमानी । २१६
जनी=दासी । ६५
जरकसवारी=जरी के काम से सुसज्जित। १३८
जरतारी=जरी के काम से युक्त साड़ी । ३१
जरायन की=रत्न-जटित । २५२
जरी=जली । २२५
जलजा=लक्ष्मी ३२५
जलप=उक्ति, कथन । ३१४
जल्पति=बकती है, बड़बड़ाती है । २३६
जवाहिर-ज्योति=रत्नप्रभा, जवाहिरात की चमक । १२
जसन=जश्न, प्रकाश, ज्योति । ३१४
जा=जिस । ५६
जात भई=नष्ट होगई । १८६
जातरूप=सोना । ३१
जातैं=जिससे । १८३
जाम जाम=प्रत्येक प्रहर पर । ६३
जावक=महावर । १७६
जिकिर=जिक्र, चरचा । ३६
जित=जहाँ २०
जियरो=मन, जी । ६७
जिहि=जिसको । ६
जिहि=जिसका । १३
जिहि=जिसने । १४
जीबो=जीना । १५
जीबो न जीबो=जीना जीना नहीं है मरने के समान है । १५
जीय=जी, हृदय । १४
जीवनमृत=मृतवत्, जीती पर मरी के समान । ३२८
जीहा=जिह्वा, जीभ । ३१८
जु=जो, कि, जिससे । ३०५
जुक्ति=युक्ति ,उपाय । २१६
जुगल=दो । ६
जुगुति=युक्ति, तरकीब । २४२
जुझारो=युद्धालु, लड़ाका, लड़ाकू । ३०७
जुत=युत, साथ । २१६
जुन्हाई=ज्योत्स्ना, चाँदनी । २७३
जुरैं=जुड़े, जुटे । १८४
जुवा=युवती, जवान । २६
जुवा=युवापन, यौवन । १२४ ।
जेठिन के=ज्येष्ठ स्त्रियों के । २६५
जैबो=जाना । २०
जोइकै=देखकर । २०२
जोई=जो ही । १८७
जोति=(ज्योति) प्रभा, कांति । ६१
जोन्ह=चाँदनी, ज्योत्स्ना । ३१४
जोम के तोम=उत्साह का प्राबल्य । ३६
जोयो=देखा । १८१

जोरावरी=जबरदस्ती, बलप्रयोग । १८४
जोरी=जोड़ी, युग्मक । १८४
जोहैं=प्रतीक्षा करती हैं। ३०
जौन=जो । १९६
ज्यारी=जिलानेवाली, जीवनदायिनी। २०५, २२५
ज्यावति=जिलाती । २२४
ज्यावन-जतन=जिलाने का यत्न, जिलाने का उपाय। २९४
ज्यौं=सदृश, समान, तुल्य । २२२
ज्वाल=ज्वाला, गरमी । १२
ज्वैहै=तलाश करेगा, ढूँढ़ेगा । १३१
झखियाँ=(झष) मछलियाँ । २६५, ३०३
झनकैंगी=झनझनाएँगी, बजेंगी । १४७
झपि=झंपित कर, ढककर । २२३
झर=झड़ी । २३३
झरि लाई=झड़ी लगा दी। २५७
झलकैं=चमकैं । २४५
झलकौहैं=झलकने पर आए हुए। २३७
झाँझरियाँ=पायल की झुनझुनियाँ। १४७
झीन=पतला, बारीक, महीन । २५३
टरिकै=हटकर । १४३
टरो=टल गया, हट गया । २०१
टहल=सेवा, शुश्रूषा, परिचर्या । १८७, १९९
टेक=ढंग, प्रकार । ६८
टेरति=पुकारती है, चिल्लाती है । ३१२
ठई=ठटी, भरी, युक्त । ९६, १३०
ठकुराइनि=स्वामिनी । ३०
ठहरैबो करै=स्थिर करती है । १७३
ठाली=खाली, बिना काम के । १५८
ठिलि ठिलि=ठेल-ठेलकर, धकेलकर । २९८
ठौन=ढंग, मुद्रा । १३०
डंबर=सजावट । १६७
डहडह=हरा भरा । २६६
डारो=डाल । २१४
डावरी=लड़की, कन्या । ३१७
डीठि=दृष्टि, आँख । २११
ढलैत=ढाल लेकर चलनेवाला । २४४
ढहै=खुलकर गिर जाती है । १२७
ढारती=झलती, डुलाती । ३०
ढारैं=ढालते हैं, गिराते हैं। १६८
ढाहै=गिराता है । २४४
ढिग=पास । २५, २४४
ढीठ=ढीठे, धृष्ट । ६४, २७१
तंत=(तंतु) रेशे । ३२५
तकत=ताकती है । २११, २३७
तताई=ताप, गरमी । ३२९
तनको, तनकौ=तनिक भी, थोड़ा भी । १४७, १७३
तनीन, तनीनि=बंधन, बंद । १४४ २३५
तनु=सूक्ष्म, पतली । ३६
तनु छाँह=शरीर की छाया । ७९

तनुजा=कन्या । ६
तमी=रात । ५७
तरति=पार करती है । २३६
तरासि=तराशकर, खरादकर । ४६
तरैयन=तारागण । ३१५
तरौना=ताटंक, कर्णभूषण । २७७
तर्योनन=ताटंक । १६५
तलप=तल्प, शय्या । ३१४
तलफत=तड़पता है । ६६
ताको=उसका । ६
तापर=तिसपर (भी) । ३५
ति=वे । २०३
तित=वहाँ, उस ओर । २०, ६०
तिन=तृण के । १७३
तिनके=उनके । १७३
तिय नातै=स्त्री होने के कारण । २३२
तिय-पाइनि=स्त्री के पैरों पर । २७०
तीछ=तीक्ष्ण, चोखा । १२
तुंगतनी=(तुंग + तन=स्तन) तुंग-स्तनी, उन्नत पयोधरा । ७६
तुंदहि=प्रचंडता को । ३०३
तुनीर=(तूणीर) तरकस । ६७
तुमैं=तुम्हें । १८६
तुलसीवन=वृंदावन । १८
तुली=तुल सकी, समान हो सकी । ३४
तुव=तुम्हारी । २२४
तूरन=शीघ्र, झट । १६५
तेरी खीझिबे की रुख रीझि मन मोहन की=तुझे चिढ़ाने में मोहन को मजा आता है । २१०
तेह=(तेहा) रोष, क्रोध । १६५
तैये=तपाऊँ । ७१
तो=तव, तेरे । १४
त्रिरेख खचाई=तीन रेखाएँ खींचकर, बल देकर, जोर देकर । ४३
थरु थरु=स्थल-स्थल, जगह-जगह । २४४
थहरात है=काँपती है, अनवरत प्रकंपित है । १०६
थाईभाव=स्थायीभाव । २४१
थाकी=रुक गई । ३२६
थिर थाप=स्थिर कर । ६७
थिराति=स्थिर होती है, शांत होती है । २३६
थोरी घनी=थोड़ी बहुत । २३
दई=दैव, विधाता । २०१
दई दई=दैव ने दी (दिया) । ६६
दगदग=चमाचम । १६५
दगनि=दग्ध होना, जलना । ६०
दरप=दर्प, घमंड । ५६
दरप=चाह, इच्छा । ५६
दरस=छुटा । १७६
दरसति है=देखती है । २५५
दरी=कंदरा । २८६
दरीची=खिड़की । २१६
दरी दरी=द्वार-द्वार । २७४
दवरि=दौड़कर । २६६
दसा=बत्ती । ४१
दसास्यबंस=दशानन (रावण) का वंश । २
दह=ह्रद, गहरा जल । ५१
दहनीरनि=गहरे पानी में । ५२
दाँव=अवसर, मौका । १६१

द्विजेस=परशुरामावतार। २
धनुषाकृति=धनुष का आकार। ५३
धाइ=दौड़कर। २४६
धृति=धैर्य, धीरज, सब्र। २३८
धृष्टिति=धृष्ट इति। १३
धोरे=पास, निकट, समीप। १४७
धौल=(धवल) ऊँची। १६६
ध्वै=धोकर (भीगकर)। २५
नख-घाइ=नखाघात, नखक्षत। २४४
नखच्छत=नखक्षत, नखचिह्न। १७८
नग=आभूषणों में जड़े मणिखंड। २४४
नगजाल=मणि-समूह। ३२
नजरि-भार=नजर या निगाह का भार। ३६
नटनागर=नृत्यकला में प्रवीण, नटराज। २३
नत=नहीं तो, अन्यथा। २६८
नयो दिवसोऊ=दिन भी ढल गया है। १०१
नल=(अत्यंत रूपवान्) राजा नल। ६
नवलान=युवतियाँ, नवेली स्त्रियाँ। १७
नहरनि=नहरों (में)। ३२
नहीं नहीं कीबो=न न करना। २६८
न ह्वै सकै हातै=दूर नहीं हो सकती। २३२
नाउँ=नाम। १८७
नाक=नासिका; स्वर्ग, देवलोक। ५१
नाख्यो (जात)=लाँघा जाता है। २६०
नागलली=नागकन्या। ३८
नातरु=अन्यथा, नहीं तो। ७५
नाते की=नातेदारी की, रिश्तेदारी की। २५०
नाम छ्वै=नामोच्चारण करके, नाम लेकर। २६०
नारी=नाड़ी। ३२६
नाह=नाथ, पति। १४
नाहक हीं=व्यर्थ ही। १८३
निकलंक=निष्कलंक। ५३
निकाई=सौंदर्य। ३४
निखिलै=संपूर्ण, खूब। १६१
निखोटि=निर्दोष, अच्छी। २४२
निचोने=निचोड़ने। १३२
निज=निश्चय। ८४
निजोदर-रेख=(निज+उदर+रेख) अपने पेट पर पड़ी त्रिवलि की रेखा १२७
निति=नित्य, प्रतिदिन। १८४
निदाहै=गरमी ही। ३२४
निधरक=निर्भय, बेखटक। ७८
निनारे=(न्यारा) विलक्षण। २६४
निपट=घोर, प्रगाढ़, अत्यंत। १६८
निप्राप्यता=निष्प्राप्यता, दुर्लभता। ११३
निबसै=निवास करे, रहे। ८५
निबेरे=निर्णय किया, तय किया। १२४
निभीची ह्वै=निर्भय, बिना डर के। १६६
निमेष=पलक। ७५

निरदै=निर्दय, कठोर । २६४
निरनय=निर्णय, निश्चय । ३
निरवेद=दुःख, अनुताप । २३८
निलै=निलय, घर । १४०
निवारे रहौ=हटाए रहो, दूर किए रहो । २२७
निसा=प्रबोध । २१२
निहचल=निश्चल, दृढ़ । ८५
निहचै=निश्चय । ७५
निहोरै=के लिए, निमित्त । ३१८
निहोरो=प्रार्थना । १०१
नीठि=कठिनाई से । ४२
नीवी=स्त्रियों के अधोवस्त्र का बंधन, फुफुँदी । १२७
नेक=थोड़ा भी, जरा भी । २०६
नेम=नियम, व्रत, संकल्प । १६१
नेरे=पास, समीप । ७२
नेह=स्नेह; तैल । ५१
नेहनिकाय=स्नेह-विस्तार, प्रेम-प्रपंच । ३११
नैया=नाईं, समान, तरह । १४५
नैसुक=थोड़ा । ३६
नैहर-गेह=मायके का घर, मातृगृह । १३५
नौल=(नवल) सुंदर । १६६, ३१७
न्यान=निदान, अंत में । २१
न्यारो=दूर, नष्ट । २०६
न्हान-थली=स्नान-स्थली । २०
पंच=पाँच । ४१
पंचलरा=पाँच लड़ों का हार । ४३
पखियाँ=छाती के दाहिने बाएँ छोर । २५२
पखियान=शलभ, पतिंगे । १३६
पखेरुन मैं=पक्षियों में । ३०५
पग-पाँवरियाँ=पैरों की जूतियाँ । १२८
पगनि=पगना । ६०
पगनि=पाँव, चरण । ६०
पगारनि=(प्राकार) रखवाली के लिए बनी चारो ओर की दीवार । ३२१
पघिलि परै=पिघल पड़ती है । ३२४
पचि पचि=परेशान हो होकर । २२८
पजावा=ईंट पकाने का भट्ठा । २१४
पट=वस्त्र, कपड़ा । २४५
पटतर=बराबरी, समता । ४५
पति=प्रतिष्ठा । २
पतिया=पत्रिका, चिट्ठी । २२५
पतियाइ=विश्वास करके । २०१
पतियात है=विश्वास करता है । २०१
पतियाहिं=विश्वास करती हैं । १४२
पत्यारो=प्रतीति, विश्वास । २०६
पत्रिकादान=चिट्ठी-पत्री पहुँचाना । २१५
पदिक=हीरा । ३२
पदुम=पद्म, कमल । ३३
पदुमराग=पद्मराग मणि । ३१
पनिच=(पतंचिका) पनच, प्रत्यंचा । ५४
परजंक=पर्यंक, शय्या । २४५
परतछ=प्रत्यक्ष । २८५ ।

परपंच=प्रपंच, आडंबर। २११

परपिंड - प्रवैसी = परकायप्रवेशकारी, दूसरे के शरीर में प्रवेश करानेवाला। ३११

परबीननि=प्रवीण, जानकार। १३१

परमान=परमाणु, अत्यंत कम। ३६

परसति है=स्पर्श करती है, छूती है। २२५

पराध=अपराध, त्रुटि, गलती। २०४

परिमान=परिमाण, तौल। ३६

परोसो=पड़ोस। २०१

पलटे=बदले में। २३५

पलन की पीक=पलकों में नायिका के चुंबन से लगी पान की पीक। १७७

पवरि=ड्योढ़ी, घर। ३१४

पहपह=तड़के ही। २६६

पहिराव=पहनावा। २८०

पँखुरी=पंखुड़ी, दल। ३३

पाँति=पंक्ति। २६०

पँसुरी=पसली। २३३

पाइ=पाँव, पैर। ८७

पाइ परौं=पैरों पर गिर पड़ूँ। १८७

पाग की चीठी=पगड़ी में रखी हुई चिट्ठी (पहले चिट्ठी-पत्री को सुरक्षा की दृष्टि से पगड़ी में बाँध रखते थे)। १८५

पाटी=केशों की पट्टी। ५७

पाटी=पट्टी, पटिया। ५७

पातखिन=(पातकिन) पापी लोगों को। ५६

पान=पत्ता (तांबूल का)। ३७

पानि=पाणि, हाथ। २१४

पानिच=प्रत्यंचा। ५४

पानिप=शोभा, सौंदर्य। ५६

पानिप-सरोवरी=पानी की तलैया, छोटा तालाब। ५१

पाय=पाँव, पैर, चरण। ८७

पाल=ओहार,ढकनेवाला कपड़ा। ५१

पाला=तुषार। २०६

पावँरी=जूती। ३०५

पास=पार्श्व, तरफ। १८

पास=पाश, फंदा, बंधन। ४०

पासब्रती=पार्श्ववर्तिनी, सहचरी, साथ रहनेवाली। ३२७

पाहरू=पहरा देनेवाला। १५

पिछानिकै=पहचानकर। ६६

पिय-पराध=प्रिय का अपराध, प्रिय की चूक। १८२

पिय-पागी=प्रिय के प्रेम में पगी (डूबी) हुई। ८०

पिय-भाव=प्रिय के समान, प्रिय की तरह। २८०

पियूष=अमृत। २६८

पिलि पिलि=ठेल-ठेलकर, त्यागकर। २९८

पीउ=प्रिय। १५३

पुरिया=परिपूरित, सनी हुई। १४६

पुरै=(पुरै न सकौ) पूरा, पूर्ण (न कर सको)। ८७

पूतरी=पुत्तलिका, पुतली। ६१

पूनो=पूर्णिमा। २६४

पूरति=पूर्ण करती है, भरती है। १३८

पेखि=देखकर। १६५

पेट पेट ही पकति हौं=भीतर ही भीतर गल पच रही हूँ। ६४

पै=पैर। ५४

पैठि=प्रवेशकर। १२

पैरत=तैरते हैं। २८६

पोखराज=पुखराज नामक (पीला) रत्न। ३२

पोच=नीच। ८६

पोटि पोटि=फुसला-फुसलाकर, बहका बहकाकर। २४२

पौरि=ड्यौढ़ी। ७६

प्यो=प्रिय, पति। १३५

प्रकास=प्रत्यक्ष। १३६, ३१२

प्रगलभता=प्रगल्भता, ढिठाई। ७६

प्रजंक=पर्यंक, पलंग। १६१

प्रति=हर एक, प्रत्येक। २३३

प्रतिमासनि=हर महीने। २२८

प्रबरु=प्रचंड, घनघोर। २४४

प्रबास=प्रवास, विदेशस्थिति। २६७

प्रबीनताई=प्रवीणता, निपुणता। २६२

प्रमान=(प्रमाण , फल। २०१

प्रमान=समान। ३६

प्रमान करैहौं=प्रमाणित कराऊँगी। १७४

प्रयोग-प्रबीनी=कार्य-कुशला। ११

प्रलै=प्रलय। २३६

प्राणनि-दान=प्राणों का दान। २६०

प्रान चले=प्राण निकले। १६६

प्रीतम=प्रियतम। १७३

प्रेम-असक्ता=प्रेमासक्ता, प्रेम मैं अनुरक्त। ८६

प्रेम-प्रतीति=प्रेम मैं विश्वास। ३११

प्रेम-प्रमान=प्रेम की मात्रा, स्नेह का वेग। २००

प्रेमरस-धुनि को कबित्त=प्रेम की रस-ध्वनि की कविता। १५८

फबिता=शोभा। ५३

फलकैं हैं=विकासोन्मुख। २३७

फल-बेल-फली=बिल्वफल से फली (युक्त)। ३८

फूँदी=फंदा, गाँठ। १६४

फेरि=फिर, अनंतर, बाद मैं। २७६

बंक=टेढ़ी। ५४

बंकुरता=टेढ़ापन। १३०

बंधुजीव=दुपहरिया नामक फूल। ४५

बसंजुत=बाँस लगी। ५१

बगर=घर। २३३

बगर्यो=बिखरा, फैल गया। ३१५

बगारिबो=फैलाना, बिखेरना, फेंकना। २६८

बगारी=फैलाई; गंजीफे की बिसात बिछाई। ६६

बजनी=बजनेवाली चीजें, नूपुर आदि। १६७

बड़ारिन=बड़ी, मुख्य, प्रधान। ६०

बड़ी गौं=बड़ी घात। १८६

बड़ीनि=पद मैं बड़ी स्त्रियाँ ने। ६६

बड़ीयै=बड़ी ही। १८६

बढ़ती=वृद्धि, बाढ़ । १६३
बतलात हौ=बातेँ करते हो । १८४
बतान लगी=बातेँ करने लगी । १२६
बदैया=स्थिर करनेवाला । १६३
बदौ=कहो, बताओ । १७४
बधिक=वध करनेवाला, मारनेवाला । २६६
बनक=सजावट, वेश, बनावट । १३२
बनाय=बनाव । २५२
बनाव=बंधान । १८६
बनि=बनी, छजी । २५२
बयारि=पवन, हवा । २५३
बरजोरे=बलपूर्वक, जबरदस्ती । ३१८
बरबस=हठपूर्वक । ५४
बरराती=बर्राती है, बड़बड़ाती है । ३१७
बरसगाँठि=सालगिरह । २१३
बराइ=बराकर, बचाकर । ३२८
बराइहौँ=अलग करूँगी, दूर रखूँगी । २१३
बरिहै=जलेगा, संतप्त होगा । २६६
बरी बरी=बली बली, जली जली । ३१७
बरैतैँ=(बढ़ैता-बढ़ैतिन) ज्येष्ठा स्त्रियाँ, बड़ी बूढ़ी स्त्रियाँ । २६६
बरोरिकै=बलपूर्वक समेटकर । १०६
बर्न=अक्षर (ब्रिं बं बि=पवर्ग होने से ओष्ठ्य होने से मुख बंद होता है) । ४५
बलकौं हैँ=(वचन) बोलने को उन्मुख । २३७
बलया=कंकण, वलय । १६६
बलाइ ल्यौँ=बलैया लेती हूँ, बलि जाती हूँ । २१२
बलि=सखी; निछावर होती हूँ । ३२१
बसीठी=दौत्य, दूत-कर्म । १८५, २०६
बहबह=चमाचम । २६६
बहराइकै=भुलवाकर, भुलावा देकर । २२१
बहराए=बहलाने से, समझाने से । २५७
बहरानी है=बाहर हुई है, दूर हुई है । २५७
बहरावै=बहलाती है । २६५
बहुर्यौ=तदनंतर । १६४
बाइ=बायु । १४०
बाट=मार्ग, रास्ता । २६६
बात चली=चरचा छिड़ी । १६६
बात-बस=बातचीत के सहारे; पवन-प्रेरित । ४७
बादि=व्यर्थ, नाहक ही । ८०
बादिहीँ=व्यर्थ ही, नाहक ही । १६६
बानक=बाना, वेश-रचना । ३०६
बानन=बाणों से । ८२
बानी=बोली । ४८
बानी=सरस्वती । ४७, ४८
बानी=बनिया, व्यापारी । ११६
बानो=वेश-भूषा, बनावट । ४८
बाम=विपरीत । ६७
बार=बाल, केश । ३६
बार=बाल, बालक । ११८
बारनि पै=बालोँ पर । २६८

बारी=बाला, स्त्रियाँ। २४६
बालकता=लड़कपन, बचपन। १२४
बालपनो=बाल्यावस्था, लड़कपन। २२६
बालम=(वल्लभ) प्रियतम। १७४
बावन=वामन (वामनावतार)। २
बावरी=पागल, भोली, नादान। २०७
बिंबा-फल-लालच-उमंग=बिंबाफल लेने के उत्साह मैं। ५१
बिकली=विकल, व्याकुल। २१४
बिछित्त=बिच्छित्ति। २४७
बिछुरन=पार्थक्य, बिछोह, वियोग। २६३
बिजायठ=भुजा पर का एक गहना। ६
बिज्जु=विद्युत्, बिजली। ४७
बितर्क=संदेह, शक। २३८
बितान=चँदोवा। १६
बितानती=फैलाती (करती) है। ३०६
बितौने लगी=विस्तार करने लगी, बढ़ाने लगी। १३२
बिथकी=विशीर्ण, थकी, हैरान। १३०
बिथानि=व्यथाएँ। २८०
बिथोरि=बिखेरकर। २११
बिद्रुम=प्रबाल, मूँगा। ४५
बिधु=चंद्रमा। ४६
बिन कौड़ी को कौतुक=बिना पैसे का खेल। २७०
बिना काज=अकारण, बिना प्रयोजन, नाहक। २२६
बिपरीति=रति विपरीति। २२१
बिफली=विरत, असफल। ३८
बिमलाई=निर्मलता, स्वच्छता। २७३
बिरद बोलै=यशगान करती है। २४४
बिरी=पान की गिलौरी, बीड़ा। २१८
बिलखाति=बिलाप करती है। २३६
बिलगाइ=अलग करके। ४६
बिललाति=बिलखती है, बिलाप करती है। २३६
बिलसै=बिलास करती है। ३२
बिस बीसनि=बीसो बिस्वे, संपूर्ण, यथेष्ट। ६५
बिसानी=सिर पर आ पड़ी, फट पड़ी। २३३
बिसासिनि=विश्वासघातिनी। १७८
बिसूरति=सोचती है। १६५
बिसूरति रहै=तू सोचती रहती है। २२०
बिसेषक=माथे पर लगाया जानेवाला तिलक। ५५
बिहाइकै=छोड़कर। २७१
बिहान=सवेरा। २००
बिहाय=त्यागकर, छोड़कर। ७८
बीच=अंतर, फासला, दूरी। २००
बीनै=वीणा ही। १५८
बीर=सखी। १२०
बीस बिसै=सब तरह से, पूर्ण रूप से। ७५
बुद्धिनिधान=बुद्धिमान्। ३१०
बृजडावरियाँ=ब्रज की लड़कियाँ। १२८
बृषभान महरानी=वृषभानु की पत्नी। २५७

भीर=कष्ट, तकलीफ । १४८
भूषननि=गहनों को, आभूषणों को ही । ३१
भेंटन पैहौं=मिल पाऊँगी, भेट कर सकूँगी । १७४
भेट कै ऐहौं=भेंट कर आऊँगी, मुलाकात कर लूँगी । १७४
भेदनि=प्रकार (भौंह-विक्षेप के) । ५३
भोगभामिनी=भोगविलास के लिए स्त्री । ६३
भोर ही=सबेरे ही । १८१
भोराई=भोलापन । ११
भोराई=भुलावा दिया, बहकाया । २४२
भोरि=भोली, अज्ञान । २११
भोरे=सबेरे, प्रातःकाल । १४७
भौंर=आवर्त । ६०
भ्रमै=भ्रमण करता है । १८
भ्रुव=भौंह । १२
मंडई=मंडलाकार घेरे हुए, छाए । ५८
मंडन=शृंगार । २१५
मंडी=मंडित, ठनी, मची, छिड़ी । २४४
मकलिका-पत्रन=मकरिका नामक शृंगाररचना, मछली के आकार का चंदन का चिह्न जो स्त्रियाँ कनपटी पर बनाती थीं। २६२
मखतूल=काला रेशम । २२६
मखाति है=माख करती है, रोष करती है । २३६
मगहि=मार्ग में ही । ३२४
मग जोहत=रास्ता देखने में। १७४
मच्छ=(मत्स्य=मछली) मत्स्यावतार । २
मजीठी=मंजिष्ठा या मजीठ से बना (लाल रंग)। १८५
मढ़ती=समाती । १६३
मत्त-सत-गजगामिनी=मदासक्त गजगामिनी या सौ मत्त गजों के समान मस्तानी चाल वाली । १६८
मधि=में । २०४
मधुरारे=माधुर्य-भरे । ४५
मनकाम=अभिलाष, मनोरथ । १७४
मन के मकान=मनरूपी मकान । ३७
मनभाई=मनभावती; मन में भाई हुई । २६
मनमथ साहि=मन्मथ शाह, कामदेव महाराज । ५१
मनसूबन=मनोरथ । १७१, ३०४
मनावन=समझाना-बुझाना । १८६
मनु=मन भर, एक मन या पूरे ४० सेर का । ३६
मनोजहिंकी अबला=साक्षात् रति । ६१
मनोभव=कामदेव । ५७
मयंक=चंद्रमा । ४६
मयंकबदनी=चंद्रमुखी । २४५
मरू करि=कठिनाई से । १०४
मरोरति=मरोड़ती है, मोड़ती है । २३५
मरोरि=ऐंठ कर । २५५
मर्मरन='मरमर' शब्द करके । २४४

मलिंद=भ्रमर, भौंरा । ४४
मलिनी=मैली, गंदी । २०२
मसि=स्याही, कालिमा । ४४
महताव=(माहताव) चंद्रमा । ४७
महति=बड़ी । २२४
महमह=सुगंध के साथ । २६६
महलसरा=अंतःपुर, रनिवास । ७०
महलै=महल मैं । १८७
महाउर=यावक । १५७
महातम-गात की=अंधकाररूपी शरीर की । १७६
महारुन=(महा+अरुण) खूब लाल । ४१
महै=(महा) अत्यंत । १२
माचे=फैले । १०८
माति=मत्त होकर । २३६
मानप्रवर्जन=मानत्याग । २१५
मांनसाँति=मानशांति, मानोपशम । १८६
मानिक=पद्मराग, लाल रंग का रत्न । ३२
मारनी=मारण-कला । ३२६
मारू=युद्ध-वाद्य, धौंसा, नगाड़ा । २४४
माह=चाँद, चंद्रमा । ३२४
मिचाइ=मूँदकर, बंद करके । २४२
मित्त=(मित्र) नायक । ४४
मिस=बहाना । ७६
मिसिरियो=मिस्री भी । ४५
मीच=मृत्यु, मौत । ८२
मीली=ढँकी, दबी, छिपी । २७३
मुकताइ दीनी=मुक्त कर दी, छोड़ दी । ४६
मुकरै=नट जाता है । २२
मुकुत=मुक्त, दूर । १६३
मुकुत=मोती, हार के मोती । १६३
मुकुराभ=आइने सा चमकीला । १०८
मुकुले=अर्धविकसित, अधखिले । १३०
मुक्ताहल=(मुक्ताफल) मोती । ५०
मुखजोग=मुख के योग्य । ४६
मुरचो=जंग, मैल । १०८
मुरार=कमलनाल (तोड़ने मैं दिखाई पड़नेवाले पतले तार)। ३६
मुरि जाय=मुड़ जाती है, लौट जाती है । ४५
मुहूरत=मुहूर्त, समय, क्षण । ३२७
मूदी=ढँकी, छिपी । १६४
मृगेस=(मृगेश) शेर । १
मेचकताई=कालिमा, श्यामता । ५७
मेलि=डालकर, पहनकर । २२२
मेह=वर्षा । २३३
मैं=सर्वनाम । ३२४
मैं=मैं । ३२४
मैन=(मदन) कामदेव । १२
मैनमद=कामविकार । १६०
मैनसर-गाँसी=मदन-शर का फल । २८६
मोजरे=दर्शन । ११
मोह-बैन=अंडबंड, बेसिर पैर का, निरर्थक वचन । ३१६
मोहि रहिए=मोहित हो जाइए । २२६

मौजन=तरंगैं, लहरैं । १५
रँगभू=(रंगभूमि) केलिस्थली । १४८
रँगभूमि=रंग-स्थल ५५
रँग राती=रंग मैं रँगी । ७५
रंजिकै=प्रसन्न होकर । ६६
रंभा=एक अप्सरा । ३४
रंभा=कदली । ३४
रगमगे=मुग्ध, लट्टू, अनुरक्त । १६५
रतन=(चौदह) रत्न । २
रतनारी=लाल, रक्त वर्ण । ३०६
रति=कामदेव की स्त्री । ३०
रतिरंग=कामक्रीड़ा, केलि । १७
रद=दाँत । २
रद=रद्दी, अनाकर्षक । ६
रमि=रमकर । १८
ररै=रटती है, बार बार कहती है। ११४
रसना=(रशना) करधनी । १६६
रसफैली=(रस+फेल) रसरंग, काम-क्रीड़ा । १४३
रसबात=प्रेम-वार्ता, अनुराग, कथा । १२६
रसभीर=रससमूह । २३५
रसराज=श्रृंगार रस । ३८
रसराव=रसराज, श्रृंगार । २४१
रहरह=रह रहकर, ठहर ठहरकर। २६६
रहस=रहस्, एकांत, अकेले, सूने। १७७
राखति अगौटि है=रोक रखती है। २६२
रावरे ही=आपके ही । १७६
रिसौंहैं=रोषोन्मुख । २४६
रीझि=प्रसन्नता, आनंद । २१०
रीति=प्रकार, ढंग, भाँति, तरह । ८५
रीतौ=खाली । ६६
रुख=ओर । २१०
रुचि राची=शोभा छजी । ३०
रूप=चाँदी (रूपन के=चाँदी के)। ३१
रूरो=रुचिर, सुंदर । १३४
रेत=रेता, बालू । १५४
रोगन=तेल । १३४
रौन=रमण, प्रियतम । १६५
लंक=कमर, कटि । ३६
लंक-बासर=कमररूपी दिन । १२५
लकी=कबूतरी । २५७
लकुट=लगुड़, लाठी, छड़ी । २४६
लखियाँ=देखती हैं। ३०३
लगाइहिबी=लगाएँगे ही । ८०
लगि=पास, तक, निकट । ६०
लचि जात है=झुक जाती है । २५३
लच्छ=लक्ष्य, उदाहरण । १७०
लपनो=कथन, कहना । १३१
लरबरी=लड़खड़ानेवाली, लटपटाने-वाली । २४२
ललकैं=ललचते हैं, तरसते हैं । २४५
ललितै=ललिता को । २८०
लवला=(लोला=लक्ष्मी) ज्योति, छटा । ६१
लहने=प्राप्तव्य, प्राप्य (संपत्ति)। २६३
लहलह=लहलहाती, हरी भरी । २६६
लहे को=प्राप्य, प्रारब्ध । २१०

लाइकै=लगाकर। २२१

लाए जाति=लगाए लिए जाती है। १६७

लाज=लज्जा। १६३

लाज=(लाजा) लावे (के समान)। १६३

लाज-गढ़ी=लज्जा का छोटा दुर्ग, शर्म का किला। ३०७

लालरी=(लालड़ी) लाल नग। ४१

लालस=लालसा, तीव्र इच्छा। ३०२

लाव-उपजावन-इलाज=ज्वाला उत्पन्न करनेवाली दवा, जलानेवाला उपचार। १६३

लियोई=ले ही लिया। १८७

लिलारू=(ललाट) मस्तक। ५५,१६५

लीन ह्वै=लीन होकर, एकचित्त होकर। १३६

लीन्हे कखियान मैँ=बगल मैँ दावे। १३६

लीली के=(नीली के) श्याम वर्ण के। ४४

लुगाई=स्त्री। ८०

लेरुआन=गाय के डेढ़ साल की उम्र तक के छोटे बच्चे। १०१

लेस=लेश, थोड़ी भी (लाज उन्हैँ छू तक नहीँ गई है)। २५

लेहि लै=ले ले। २८६

लोन=लवण, नमक। १८४

लोपि जाति=दब जाता है, लापता हो जाता है। २६३

लोरति=नचाती है, फिराती है। २३५

लोलनैनी=चंचलनयनी। ४६

लौँ=तक, भी। ६३

लौट=त्रिबली, उदररेखा। १३८

वापै=उसके पास। १८८

वै=वे। २०

वोउ=वे भी। १४

श्रीनिमि=निमि नामक राजा, प्राचीन सूर्यवंशी राजा निमि। ७५

श्रीफल=विल्व, वेल। १५६

श्रीभामिनि के=साक्षात् लक्ष्मी के, धनसंपन्न। ६३

श्रुतिदरसन=सुनकर देखना, श्रवणदर्शन। २६१

श्रुतिसेवी=कान तक फैली। २२६

श्रुतौ=सुनना। २८५

श्रोनित-भीने=शोणित से भीगे, रक्तरंजित। ४१

संकेत=संकेतस्थली। ११३

संगम=मिलन। २४३

संघट्टन=मिलाना। २१५

सँजोग, संजोग=संयोग शृंगार। १४२, २४३

संज्ञा=संकेत, इशारा। १२०

संदरसन=दिखाना। २१५

सँदेसिया=संदेशहर, वार्ताहर। २०१

सँदेह=(संदेह) शंका, शक। २२२

संनिधि=पास, समीप। १६७

संमत=राय। २७०

सँवार=सुधार। २१२

सँपूरन=(सपूर्ण) प्रगाढ़। १३७

सकंज मृनाल=कमलयुक्त (कमल-) नाल। ४०

सकेलियै=समेटिए, आलिंगन कीजिए। २२२

सकोचि=संकुचित होकर, सिकुड़कर । ५२
सकोरति=संकुचित करती है, सिकोड़ती है । २३५
सगिलानि=(सग्लानि) ग्लानिसहित, अफसोस से । २३६
सगुनौती-कहैयन=शकुन विचारनेवाले, भविष्य बतानेवाले । २०१
सचि=भरकर । २५३
सची=(शची) इंद्राणी । ३०
सटक्यो=भागा (भागी) । ४५
सठो=शठ । १३
सतगुरु=सद्‌गुरु, मंत्रोपदेष्टा । २०७
सति=सत्य । ५६
सद्वार=द्वार के सहित । १४०
सधीर=धैर्यपूर्वक । २३६
सपूरन=संपूर्ण, सब । १७४
सबार=सवेर, शीघ्र, जल्द । ११५
सबारे=शीघ्र । ४५
सबिता=सूर्य । ५३, ३१५
सबिसेष=खासकर । ६
सभाग=भाग्यशाली । १७६
सभागन=सौभाग्यशालितापूर्वक ।१४०
समर=(स्मर) कामदेव । २६६
समरकला=युद्ध-विद्या; स्मर-विद्या । २४४
समरु=(समर) युद्ध, लड़ाई । २४४
समान=घुसा, व्याप्त । ५४
समुहाती=संमुख होती, सामने आती । ७५
समूरो=समूल, संपूर्ण, सब । १३४
सर=शर, तीर । २२६
सरबंग=सर्वांग । ४६
सराहतीं=प्रशंसा करतीं । १४
सरि=सादृश्य, समानता । ४३
सरूप=स्वरूप । २०२
सरोजमुखी=(हे) कमलमुखी । ३५
सवार्‌यो=सँवारा, सजाया । ४६
ससि-रेख=शशिरेख, नखक्षत । २७७
सहबासिनी=सखी, सहेली । ३०
सहलै=सरल ही, आसान ही । १८७
सहसह=सहस्रों । २६६
सहेट=संकेत, अभिसार के लिए नियत स्थान । १७४
साइकै=(सायक) बाण ही । ३५
साज=ठाट, सजावट । २२७
सात्वकी=सात्विक । २३६
साध=प्रबल कामना । १५७
साधारनै=साधारण रूप से । ८
सान=(शान) शोभा । १३८
सामुहें=सामने । २१६
सारद=शरद् ऋतु का । ६८
सारदी=शारदीय, शरद् ऋतु की । ६८
सारी=सारिका, मैना । २५०
सावक=बच्चा । १०८
सिँगार=(श्रृंगार) इसका रंगश्याम है । ५७
सिंजित=नूपुर या करधनी की ध्वनि । २४४
सिक्षा=(शिक्षा) सीख । २१६
सिगरी=सब २१२
सिधाई=सिधारी, चली गई । ३२६

सिरताज=श्रेष्ठ । ६६
सिरावौ=शीतल करो, जुड़ाओ । १५६
सीठा=निःसार, निस्तत्त्व, कड़वा । १८५
सीरक=शीतल पदार्थ । ६६
सीरी=ठंढी । ३२६
सीरे जतन=शीतल उपचार । ३२४
सीस भरि=सिर के बल । ३४
सु=(सो) वह । १७१
सुआसिनी=(सुवासिनी) सौभाग्यवती । ३०
सुऔसर=सुअवसर, अच्छा मौका । २१७
सुकतुंड=शुक पक्षी की चोंच (नासिका का उपमान ।) । ६
सुकिया=स्वकीया । ६२
सुखब्योंत=सुख का अवसर । १२०
सुखजोग=सुख का योग, सुखावसर । ७२
सुघर=चतुर । ८
सुघराई=चातुरी, चालाकी । १६०
सुघरी=सुंदरी । ७६
सुचिताई=स्वस्थचित्तता, स्थिरता । ३०६
सुजान=निपुण, दक्ष । ३४
सुढार=सुडौल, सुंदर । १२४
सुधर्म=स्वधर्म, नारीधर्म, नायिका-धर्म । ७४
सुधि=स्मरण, याद, होश । २३३
सुधिसुधा=स्मृतिरूपी अमृत । २२४
सुबंस=सद्वंश; अच्छे बाँस । २३१
सुभडोल=सुडौल । ४६
सुभाइ=स्वाभाविक । ४६
सुमनबृंद=(सु+मन+वृंद) अच्छे मन वाले लोग; पुष्प समूह ; देवगण । ३७
सुमनावलि=फूलों की पंक्तियाँ । २३३
सुमिरन=स्मरण, याद । २६१
सुमृति=स्मृति, स्मरण, याद । ३१०
सुर=देवता; स्वर । २३१
सुरति=स्नेह, अनुराग । २०६
सुरनायक सदनवारी=स्वर्ग की, (सुरनायक=इंद्र + सदन=निवास, सुरनायकसदन=स्वर्ग ।) ३४
सुरभित=सुगंधित । ६
सुरसंग=स्वरयुक्त (दाहिना बायाँ स्वर) । ५१
सुरस=सुंदर जल वाला । ६
सुही=लाल । २५२
सूखी=रूखी सूखी । २७५
सूझि=समझ । १६६
सूने=एकांत में । ६४
सूमैं=कंजूस को १४८
सेजकली=शय्या में बिछी फूलों की कली । २१४
सेत=(श्वेत) सफेद । ७०
सै करि=सौ प्रकार से, अनेक उपाय करके । ४६
सैन=शयन, बिछौना, शय्या । १६१
सोइ रहौंगी=सो रहूँगी । १६१
सोच-सकोच-बिधानन=सोचने, संकोच करने के नियम, सोच समझकर चलने की रीतियाँ । ८६

सोदर=सहोदर। ५०
सोध=शोध, खोज। २७४
सोध=(सौध) अट्टालिका, अँटारी। २७४
सोभन की=शोभाओँ की। ५५
सोभासर=(शोभा+सर) शोभा का तड़ाग। ३७
सोमवती=सोमवार को होनेवाली अमावास्या। ११८
सोहाग=सौभाग्य, सुभगता। ४४
सोहाग-थली=सौभाग्यस्थली। ५५
सोहागभरी=सधवा। २५२
सौँ=शपथ, कसम। १५
सौँहैँ=सामने। १८८
सौँहैँ खाइकै=कसमैँ खाकर। २२
सौहर=सुघरता। ३३
स्तंभ=अंगावरोध, जड़ता। २३६
स्रावक-प्रकास=बौद्धधर्म की ज्योति। २
स्याम-सरोरुह-दाम=नीले कमल की माला। ८३
स्वाधीनापतिका=स्वाधीनपतिका। १५१
स्वेदजलकन=पसीने की बूँदेँ। २४५
हँहाँ करिबो=हाँ करना, स्वीकार करना, मानना। २६८
हठ-आराधन=हठ की आराधना, गहरा हठ करना। २०७
हत=हतप्रभ, शोभाहत। ६८
हति=मारकर, वधकर। २
हथौटि=हस्तकौशल। २६२
हदन मैँ=सीमाओँ मैँ, नियत स्थानोँ मैँ। ३०
हर=महादेव। २०
हरि-दरसन-घात=कृष्ण के दर्शन का अवसर ढूँढ़ना। ६३
हलके करि दीनो=तीक्ष्णताविहीन कर दिया। ५२
हलाहल-सौति=विष की सोती (धारा)। ६६
हली=हलधर, बलराम। ५५
हवाईकृसान=आतिशबाजी की आग। २०६
हवेलहार=हुमेल हार, कंठ का एक आभूषण। २५२
हाँती करि=दूर कर। २११
हाइ भरे=हा हा करती है, हाय हाय करती है। ११४
हाइ भाइ=हाव भाव। ३१
हारन=हारोँ। ३७
हिंदूपति-रीझि-हित=राजा हिंदूपति की प्रसन्नता के लिए। २
हिमकर=चंद्रमा। २२८
हिमभानु=चंद्रमा। ५५
हिमभानु को भाग लसै=चंद्रखंड सुशोभित है। ५५
हियरे=हृदय, वक्षःस्थल। २२२
हियो हियो=मन ही मन। ३१२
हिर्दै=हृदय, चित्त। २६४
हिलि हिलि=लगे रहकर, मग्न हो कर। २६८
हीँ=थीँ। १८३
ही=(हृदय) मन। ४७
ही=थी। २५७

हीय=हृदय । २१२
हुती=थी । १२८
हुत्यो=था । १२६
हुलास=उल्लास । १८
हेत=हेतु, कारण । २७०
हेरति=देखती है । ३१२
हेरि=देखिए, समझिए । १९८
हेरि=देखकर । २७६
होवतीँ=होतीँ । १४
हौँहूँ=मैँ ने भी । ५
हौले=धीरे धीरे । ३१७
ह्याँ=यहाँ (कृष्ण मेँ) । २२७

छंदार्णव

अंगना=स्त्री । ५–१७८
अंग-बलित=अंग से घिरी । ८–१७
अँगिराति=शरीर तोड़ती है, अँगड़ाई लेती है । ५–१६३
अंतरबरन=बीच के अक्षर । १–६
अंबर=वस्त्र । ५–६७
अंभोज=कमल । १२–७५
अँमर=(अंबर) सुगंधित । २–५
अंस=(अंशु) किरण । ६–६
अगारु=आगार, समूह । ५–६६
अगोटनको=छिपाने का । १०–५६
अघंनिका=पापिनी । ५–३२
अचल=पर्वत (स्तन) । ५–१५६
अजगुत=आश्चर्यजनक, अचंभे की बात । ७–४१
अजोखैँ=अपरिमाण, अत्यधिक । ६–३
अजोग=अयोग्य, अनुपयुक्त । ५–२२१
अड़ु=आड़, रोक । ८–२४
अतर=इत्र । २–५
अतेव=अतीव । १०–३१
"अद्यापि नोज्झति" इत्यादि=आज भी शिवजी विष का त्याग नहीँ कर देते, कछुआ पीठ पर पृथ्वी लिए हुए है; समुद्र असह्य बडवानल रखे हुए है, सुकृती स्वीकृत का निर्वाह करते ही हैँ । २–४
अध=नीचे । ३–१८, ७–३०
अधरात=(अर्द्धरात्रि) आधी रात । ६–४६
अधिकारी=अधिक । ५–२२०
अध्रुव=अनिश्चित । ७–१५
अनंग से खरे=कामदेव के समान खड़े (रहते हैँ); 'अनंगशेखर' छंदनाम । १५–५
अनकन=अन्न का कण । ५–२३७
अनियम=नियम रहित । ५–१६३, २०२
अनी=सेना । ५–१०८
अनुकूलो=पक्ष मेँ; 'अनुकूल' छंदनाम । ५–१४१
अनुरूपी=विचारा, सोचा । ५–११८
अपजस वा सन=उससे अपयश है; 'सवासन' छंद नाम । ५–५३
अपराजिता=अजेय (दुर्गा); छंदनाम । १२–५१
अप्प=आत्म, अपनी । ३–२

अब तो टक लाइ=अब तो टक-टकी लगाकर; 'तोटक' छंदनाम। १०–४२

अबिधा=अविधान, विधिरहित; छंद-नाम। ६–२८

अब्द=बादल। ७–४२

अब्दनिनद=मेघ के समान गर्जन। ७–४२

अभा=प्रभाहीन। ११–१४

अभिनव=नया। ५–१४८

अमल=स्वच्छ। ५–१२

अमिय=अमृत। ७–१३

अमियमय=अमृतयुक्त। ५–६२

अमृतगती=अमृत के समान गति वाली, अमृत तुल्य; 'अमृतगति' छंदनाम। ५–८७

अमृतधुनि=(अमृतध्वनि) मीठी वाणी से; छंदनाम। ७–४२

अरचा=पूजा। १२–१११

अरधंग=अर्द्धांग में, वाम अंग में। ७–४१

अरनि=अड़ना। १२–१११

अरब्बिन=(अर्बुद) अरब। ६-३७

अरसात=(अलसाना) आलस्य का अनुभव करते हैं; छंदनाम। ११–१७

अरिकै=अड़कर। ५–१५०

अरिन=शत्रुओं ने। ५–१७८

अरी=अड़ी। ५–१५२

अरुन बरन=(अरुण=लाल, बरन=वर्ण, रंग। ५–४२

अरै=अड़ती है, बसती है। ७–३१

अलंकृत सूनियौ=अलंकार से रहित भी। १२–७६

अलि लालन=हे अलि, नायक, (लालन) 'अलिला' छंदनाम। ७–३४

अली= हे सखी। १०–३५

अलीक=(अ+लीक=अवरोध) बेरोक-टोक। ३–२६

अलेख=(लेख) देवता। ७–४४

अवगाहा=अगाध, अथाह; 'उग्गाहा' (वगाहा) छंदनाम। ८–५

अवगाहिनी=थहानेवाली; 'गाहिनी' छंदनाम। ८–८

अवगाहू=(अवगाह) अगाध, अथाह; 'गाहू' छंदनाम। ८–४

अवतंसा=(अवतंस) कान का गहना, श्रेष्ठ। ५–५२

अवरेखि=खींचो, समझो। २–२५

अवरेखिए=समझिए। ५–२००

अवली=पंक्ति, कतार। ५–१६६

अविद्यानिदानी=अविद्या का अंत करने-वाली। १५–१

असंबाधा=सब बाधाओं से रहित; छंदनाम। ५–१६०

असतीन=जो सती न हों, कुलटाएँ। ५–६३

असन=भोजन। १२–१०७

असावली=रुपहली साड़ी। १४–५

असित=काली। ५–१०७

असेष=(अशेष) अनगिनत। १–२, ७–४४

अशोकपुष्पमंजरी=अशोक के फूलों की मंजरी; छंदनाम । १५–७
अस्य=इसकी । ३–७
अस्व=(अश्व) घोड़ा । ५–१७४
अहित मति=अकल्याणकारी बुद्धि । ७–३६
अहिनाह=शेषनाग । १०–६
अहिप=शेषनाग । ५–१७६
अहिभूप=पिंगलाचार्य । ३–६
अहीर=श्रीकृष्ण; छंदनाम । ५–७६
आक-पर्नै=मदार के पत्ते । १२–६६
आकर्नी=(आकर्णन) सुन रखा है । १२–७२
आखेट=शिकार । १५–११
आगार=घर । ६–६
आभरन=आभूषण । ६–५
आभर्ना=आभरण । १२–२४
आभार=बोझ, उत्तरदायित्व; छंद-नाम । ११–१०
आम्रमौरमधु=आम की मंजरी का मकरंद । ५–१६४
आरक्तता=ललाई । १२–६५
आरत=आर्त, दुखी । १०–५०
आरतबंधु=दीनबंधु; 'बंधु' छंदनाम । १०–५०
आरतिवंत=दुखिया, विपन्न । १०-५०
आरन्य=अरण्य, वन । ५–७८
आरसी=(आदर्श) दर्पण । १२-६६
आराजी=खेत, भूमि । ५–२३०
आला=उत्तम, श्रेष्ठ । ५–७८, १६१
आली=अलि, सखी । ५–१६५, १७०, १६६

आसु=(आशु) शीघ्र । ५–१८०
आस्य=मुख । १२–३१
इंदीवर=नीलकमल । ७–३१
इंदुवदना=चंद्रमुखी; छंदनाम । ५–१७०
इंद्रवज्रा=इंद्र का वज्र; छंदनाम । १२–६
इंद्रवंसोपरि=इंद्रवंशा (अप्सरा या देवी) से बढ़कर; 'इंद्रवंशा' छंद-नाम । १२–२३
इडा=बुद्धि । ६–३७
इथ=(अत्र) यहाँ पर (इस । २–२
ईड़ितै=प्रशंसित (अस्त्र) को । १२–६३
उक्ता=कथिता, कही हुई । ५–८५
उघरिया=उघाड़कर, खोलकर, स्पष्ट करके, अथवाउधरिया, उद्धृत करके। ३–२
उचाट=उच्चाटन । १०–४५
उचित हंस रे=रे हंस, उपयुक्त (उचित); 'चितहंस' छंदनाम । ६–१४
उज्जला=उज्ज्वल; छंदनाम । ५–१२३
उज्यारो लागत=प्रकाशवान् लगता है; 'रोला' छंदनाम । ५–२०७
उडुगन=तारागण । ५–२३६
उतर=उत्तर । ३–३
उदंड=उद्दंड, प्रचंड, जबरदस्त । १–२
उद=उदासीन । २–२५
उदिष्ट=उद्दिष्ट । ३–८
उद्धरै=प्रकट करे, बताए । ३–१४
उधारन=उद्धारक । ५–४६

उनमनि=अनुमान करके, कल्पना करके। ५–११६

उपंगी=नसतरंग बाजा। १५–६

उपचित्रक=साधारण चीता; छंद-नाम। १३–५

उपजित=उत्पन्न। ४–७

उपर=पहले। ५–१२०

उपाय कुलकानि=कुल की मर्यादा (किस) उपाय (से); 'पायकुलक' छंदनाम। ७–३३

उपावै=उत्पन्न करते हैं। १२–१०५

उफिनि=उफनकर, फेन के साथ फेंके जाकर। १२–६१

उबरे=बचे, अवशिष्ट। ३–१

उरगनाथ=शेषनाग। १२–६७

उरजतुंगा=ऊँचे स्तनोंवाली; 'तुंगा' छंदनाम। ५–६८

उरजन=(उरोजन) कुच। ५–२१३

उरमाए=लटकाए। ५–१६०

उहि=उसको। ५–८७

ऊन=कम। ३–२४

ऊपरहूँ तर=नीचे और ऊपर दोनों स्थानों में। ३–८

ऊभि=व्याकुल होकर। ५–१५०

ऊभि ऊभि=व्यग्रता से लंबी लंबी साँस लेकर। १५–७

एकमत्त=एक मात्रा। २–१

एकहि की इकईस=एक के स्थान पर इक्कीस, बहुत बढ़ा चढ़ाकर बात करना। १३–६

एनमद=मृग का मद, कस्तूरी। ५–१७६

ऐकंक=निश्चय। ११–१०

ऐगुन=अवगुण, दोष। ५–८३

ऐतु=(अयुत) दस सहस्र। १०–४

ऐन=अयन, घर। ६–३

ऐनि=मृगी। ५–११

ओट=आड़। ५–१६३

कंचुकी=चोली। ५–२२३

कंज=कमल। ५–७८

कंजनाखिनी=कमल को पराजित करनेवाली। १२–४३

कंत=(कांत) स्वामी। ६–८

कंद=मूल, जड़; छंदनाम। १०–४६

कंदनाखिनी=मिस्री को पराजित करनेवाली। १२–४५

कंबु=शंख (गर्दन)। ५–१८१

ककाररूप=ककहरा, प्रारंभिक ज्ञान। ५–२२७

कखीन की दौर=काँखों से काम लेने में। १५–११

कच्छ=कच्छप। ६–८

कटक=सेना। ५–१७४

कटि=कमर। ७–३६

कढ़ति=काढ़ती है, निकालती है। ५–१५६

कदन=नाशक। ५–४७

कदलिजुग=दो केले के खंभे (दोनों जाँघें)। ५–१८१

कन=कण। ५–१५२

कनकवरनि=सोने के समान वर्ण (रंग) वाली। ५–६८

कनीनी=(कनीनिका) आँख की पुतली। ६–३

कबहि=कभी । ५–२७

कमल=कमल का फूल; छंदनाम । ५–१२

कमल=कमल का फूल; छंदनाम । ५–७०

कमल=पद्म (पाँव) । ५–१८१

कमलदल=कमल की पँखुड़ी । ५–१४८

कमला=लक्ष्मी; छंदनाम । ५–७१

कमान=धनुष । ५–१७४

करटी=हाथी । ७–३६

करता (कर्ता)=करनेवाला, देनेवाला; छंद नाम । ५–३४

करतार कवै=हे ब्रह्मा, कब; 'तारक' छंदनाम । १०–५१

करन=कर्ण, कान । १–२

करन=दो गुरु (ऽऽ) । ५–१६८

करनो=दो गुरु (ऽऽ) । ५–६५

करभोरुह=हाथी की सूँड़ जैसी जाँघोंवाली । ११–५

करम=भाग्य (से) । ५–१०८

करिनी=हथिनी । १२–७१

करिया=काला । ६–३८

करी=की । ५–१००

करी=हाथी । ५–२२०

करै कीबो=किया करें । ६–१७

कर्न=दो गुरु (ऽऽ) । ५–५६

कर्नो=दो गुरु (ऽऽ) । ५–४६

कर्म=भाग्य । ५–१०६

कल=मात्रा । २–८

कलधौत=स्वर्ण, सोना । ५–१६६

कलनि=कलाएँ, क्रीड़ाएँ । १५–६

कलबंकी=गौरैया, चटका पक्षी । ५–२३७

कलरव=मधुर ध्वनि । ६–१०

कलहंस=मधुर वाणीवाले हंस; छंदनाम । ५–१६६

कला=मात्रा । ३–७

कला=क्रीड़ा; छंदनाम । ५–३३

कलापी=मयूर, मोर । ५–१७५

कलिंदी=कालिंदी, यमुना । १०–१७

कलुख=(कलुष) कालिमा (अंधकार) । ५–२३६

कलेवर=शरीर । ७–३१

कलेश=क्लेश, कष्ट, पीड़ा । १–२

कविजिष्न=कविजिष्णु, कविश्रेष्ठ । १०–१४

कहा कलिकाल=क्या कलयुग (करेगा); हाकलिका छंदनाम । ५–११५

कहिबी=कहना । ६–१६

कहुँ छोड़तो मरजाद=कहीं मर्यादा छोड़ देता है; 'तोमर' छंदनाम । ५–६३

काँखासोती=बाएँ कंधे और दाहिनी काँख में से पड़ा दुपट्टा । २–२०४

कांचनी=सोने के रंग सा पीला । ६–६

काँचो=कच्ची बुद्धि का, मंदबुद्धि । ७–२२

कांता=स्त्री । १२–६६

कार्तिकी=कार्त्तिक की पूर्णिमा । ११–१०

काव्य=कविता; छंदनाम । ७-३८
कामकलोलैँ=काम-क्रीड़ा; 'लोला' छंदनाम । ५-२०५
कामद=कामना को देनेवाला । ६-३६
कामनारी=रति । १२-७३
कामै=कामना; छंदनाम । ५-१३
कामै=काम (मदन) ही । ५-६६
कारी=काली । ५-१७५
कालकूटै=विष को । १२-६७
कास=एक प्रकार की घास जिसका फूल सफेद होता है । ६-६
किंसुक=पलाश । ११-१६
किते=कितने । ३-६
कितो=कितना भी । १२-११५
कित्ती=कीर्ति, यश । ५-१८६, २३४
किनारी=किनारे पर की । १२-६१
किमि=किस प्रकार । ५-५८
किरीट=मुकुट; छंदनाम । ११-१२
किहिन=किया । १२-१०१
कीला=क्रीड़ा । १५-११
कुंजर-मोतिय-हारवती=गजमुक्ता के हारवाली । ५-११०
कुंडलिय=सर्प; 'कुंडलिया' छंद-नाम । ७-४१
कुच=स्तन । ५-६६
कुबंद=भद्दी रचना । २-२६
कुमार=स्कंदकुमार । १०-३६
कुमारललिता=कुमार श्रीकृष्ण, ललिता राधा की सखी; छंदनाम । ५-६५
कुररै=कलरव करती है । ५-७८
कुरव=कुत्सित ध्वनि । ६-१०
कुलकानि=कुल की मर्यादा । ५-६३
कुलिस=(कुलिश) वज्र, हीरा । ५-१५६
कुसुमबिचित्रा=विचित्र विचित्र फूलोँ से युक्त; छंदनाम । ५-१४०
कुसुमस्तवकै=फूलोँ का गुच्छा; 'कुसु-मस्तवक' छंदनाम । १५-३
कुसुमितलताबल्लिता=पुष्पित, लता से युक्त; छंदनाम । १२-८१
कुसुमेषु=पुष्पबाण, कामदेव । १५-३
कुहूजामिनी=अमावास्या की (अँधेरी) रात । ६-५
कूकै=कूकता है, केका ध्वनि करता है । ५-१६६
कूबर=कूबड़ । ५-१४१
कृत्ति=यश (कीर्ति) । ७-४२
कृतेंद्रबंसोपरि=इंद्रवंशा (अप्सरा) से अधिक (विश्वमोहिनी) माना । ११-२२
कृष्नै=कृष्ण को; 'कृष्ण' छंदनाम । ५-३८
कृस=(कृश) क्षीण । ५-५७
कृसोदरि=पतली कमरवाली । ११-५
केदलीपत्र=केले का पत्ता (पीठ) । ६-६
केदारा=केदार राग । ५-११६
केसा=(केश) बाल । ५-८२
केहूँ=किसी प्रकार भी । ५-१६५
कै गो रसी=रसमय कर गया । १२-४७
कैटभारि=(कैटभ + अरि) कैटभ दैत्य के शत्रु । ६-८

कैलासा=कैलास पर्वत । ५–१८६
को=कौन । १२–५७
कोक=चकवा पक्षी । ५–२०७
कोकनद=लाल कमल । १२–६१
कोकिल को=कोयल का; 'कोकिलक' छंदनाम । ५–१६४
कोट=परकोटा । १२–८५
कोपस्थिति=कोप की स्थिति; 'उपस्थित' छंदनाम । १२–१३
कोल=सूकर । ६–८
कोस=कोश, धन । ५–३६
कोसक=(कोस+एक) कोस भर । १४–५
कोहा=क्रोध । ५–६४
कोहि कोहि=क्रोध कर करके । ६–४६
कौल=कमल । ११–४
कौलपानि=कमलपाणि, विष्णु । १–५
क्रउंचो=क्रौंच पक्षी; 'क्रौंच' छंदनाम । ५–२४०
क्रीड़ा=खेल; छंदनाम । १०–१७
क्रीड़ा=खेल, आमोद-प्रमोद; छंदनाम । १०–५४
क्रोरि=करोड़ । १०–८
क्षमा=क्षांति; छंदनाम । १२–४१
ख=खं, आकाश । २–२४
खंज=खंजन पक्षी । ५–१४२
खंज=खंजन पक्षी; छंदनाम । ८–१५
खंड=आधा । ७– ६
खंडी=खंडित करनेवाली । ५–१४४
खगासन=गरुड़ासन, विष्णु । १–१५
खग्ग=खड्ग । ७–४२
खचै=खींचकर, बनाकर । ३–१
खरको=खटका, आशंका । ४–५
खरजूथ=(खरयूथ) गदहों का समूह । ५–१८२
खरिये=विशुद्ध । ३–१७
खरौ=खड़ा । ६–३७
खर्ब=कम, थोड़ा । १०–२४
खल=दुष्ट (राक्षस) । ७–४२
खल-गन-घायक=दुष्ट-निकंदन । १–१
खौरनि=आड़ा तिलक । ५–२०४
घत्ता=घात; छंदनाम । ७–१८
घनअक्षरी=अनेक अक्षरोंवाली; 'घनाक्षरी' छंदनाम । १४–७
घनो=अत्यधिक । ५–१४७
घरहाइनि=बदनामी करनेवाली; स्त्रियों को । १०–४२
घरी भरै=घड़ी गिनती है, कष्ट से समय बिताती है । ११–७
घाँएँ=ओर, तरफ । २–५
घाइ=घात, चोट, घाव । १०–३८
घायक=संहारक । ५–४६
घाव=प्रहार । ११–८
घाव (री)=चोट । ११–८
घालिबो=मारना, मिटाना, नष्ट करना । १५–१४
घूघरवारे=घुँघराले । ११–१६
घूघू=उलूक । ५–२०७
घैरु=(घैर) निंदा । ७–२८
घैर=बदनामी । १०–४२
गंज=ढेर, राशि, समूह । ६–८
गंड=गंडस्थल, कनपटी; छंदनाम । १०–३६

गंनिका=(गणिका) पिंगला वेश्या; 'नगंनिका' छंदनाम । ५–३२
गग=गुरु गुरु । ५–१३०
गजबिलसित=(उसकी) विलसित (गति) हाथी (है); छंदनाम । ५–१७६
गति=चाल । ५–१२२
गद=गदा । ५–१४५
गन०=गुरु नगण० । ५–१६८
गगनंगना=(गगन+अंगना) अप्सरा; छंदनाम । ५-२१०
गनाख्यनि=गणों के नामों को । १–८
गनागन=गण और अगण । १–८
गनिबी=गिनें, गिनिए । २–४
गनेस=गजानन । १०–३६
गनै=गण (समूह) को । १२–८३
गन्य=गणना-योग्य । १०–१६
गरउ=गर्व, अभिमान । ५–२१०
गरल=विष । ५६११६
गरुड़रुतै=गरुड़ की ध्वनि को; 'गरुड़रुत' छंदनाम । १२–६५
गरेरि=घेरकर । ८–२१
गलितान=(गलित) शिथिल, ढीला। ६–४१
गसी=ग्रस्त । ११–७
गहरु=देर । ५–१५४
गहि=गुरु ही; ग्रहण कर । ५-१३१
गाइ-खुर=गाय के खुर से भूमि में बना गड्ढा । १२–१०१

गाथे=गुँथे । ११–१६
गाहि=थहाकर । ६–१५
गित्त=गीत । ७–४२
गिरिजुगल=दो पर्वत (स्तन) । ५–१८१
गिरिधारी=श्रीकृष्ण; 'धारी' छंदनाम । ५–१६०
गिलत=निगलता है, खाता है । ८–१५
गीता=गाथा; छंदनाम । ६–३८
गीतिका=गीत; छंदनाम । ५–२१६
गुंगा=गूँगा, मूक । ५–६८
गुज्जर-युवति=गुर्जर-युवती । ५–२२२
गुनसदनं=गुणों के आगार । ५–१४८
गुनागर=गुणागार । १२–११०
गुरुजुक्त=गुरुयुक्त, गुरुवाले । ३–६
गुलदस्त=(गुलदस्ता) फूलों का गुच्छा । १५–३
गुदरी=गुदड़ी । ६–३६
गृह-बिजन=घरेलू पंखा । १–२
गैबै मैं=गाने में । ५–२३४
गोइ=छिपाकर । ५–२२३
गोन=गुरु नगण; (गवन) गमन, जाना । ५-१७७
गोपाल=श्रीकृष्ण; छंदनाम । १०–२०
गोबिंद=गाय खोजनेवाला ग्वाला, श्रीकृष्ण । १०–२६
गोवावहू=छिपाती हो । ५–२१६
गोसभसोगो=गुरु सगण भगण

सगण गुरु; सब शोक चला गया। ५–१३०

गौन=गमन। १४–१०

गौरत्व=उज्ज्वलता (प्रकाश)। ६–६

ग्वारि=ग्वालिन। ५–८६

चंग=डफ के आकार का छोटा बाजा। ५–२२६

चंडी=दुर्गा; छंदनाम। ५–१४४

चंचरी=होली मेँ गाया जानेवाला गीत विशेष; छंदनाम। ५–२१३

चंचरीक=भौँरा; छंदनाम। ६–८

चंचला=बिजली; छंदनाम। १०–३५

चंदर=रामचंद्र। ५–१७

चंद्र=चंद्रमा (मुख); छंदनाम। ५–१८१

चंद्रक=कपूर। १४–५

चंद्रलेखो=चंद्रमा समझो; 'चंद्रलेखा' छंदनाम। १२–५५

चंद्रिका=चाँदनी; छंदनाम। ६–१०

चंपकमाला=चंपे की माला; छंदनाम। ५–१३६

चंपा कस्मीरो=कश्मीरी चंपा (शरीर का रंग)। १२–८१

चँवेली=चमेली। १२–५३

चँवेली=चमेली (हास)। १२–८१

चकल=चार मात्राएँ। २–१३

चकितौँ=अंचभित; 'चकिता' छंदनाम। ५–२०४

चकोर=पक्षी विशेष; छंदनाम। ११–४

चक्र=चक्र सुदर्शन; छंदनाम। ५–१४५

चख=(चक्षु) नेत्र। ५–७०

चतुग्पद=चतुर, बुद्धिमान का पद (स्थान); 'चतुष्पद' छंदनाम। ५–२२७

चलत=चलता हुआ। १–३

चलदल=पीपल। १४–७

चहुँधा=चारो ओर। ५–१६६

चाउ=(चाव) उमंग। ५–१८५

चामरो=गाय की पूँछ के बालोँ का गुच्छा; 'चामर' छंदनाम। १०–३१

चाय=चाव। १५–३

चारिक=चार। ५–२४३

चारु=सुंदर। ५–११

चाहि=बढ़कर। ६–४

चाहि=देखकर। ६–१५

चिकनई=चिकनाहट। ५–१२२

चिकुर=बाल। १२–१०६

चित्र पदारथ चारो=चारो पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) चित्रवत् प्रत्यक्ष हैं; 'चित्रपदा' छंदनाम। ५–८४

चिबुक=ठोड़ी। ७–३६

चुरिया लाखन=लाख की चूड़ी; 'चुरियाला' छंदनाम। ७–१३

चुरी गई चूरि=चूड़ियाँ चूर-चूर हो गईँ। ११–११

चूड़ामनि=श्रेष्ठ; 'चूड़ामणि' छंदनाम। ८–२१

चेटुअन=बच्चे। ५–१६६

चेतु=चित्त, चेतना । ५–६२
चैतौ=चैत्र मास । ५–२०३
चोखैं=तेज । ६–३
चोज=सूक्ति । ५–२२३
चोवा=बनाया हुआ सुगंधित द्रव्य । १५–५
चौकल=चार मात्राएँ । ५–४
चौप=उत्साह, उमंग । ५–१२१
चौपाइठि=उमंग (चौपा) सखी (इठि); 'चौपाई' छंदनाम । ५–१२८
चौहाँ=चारो ओर । ५–१३५
छंडि=छोड़कर । १–६
छकल=छह मात्राएँ ५–४
छनकु=एक क्षण । ५–२१०
छनरुचि=बिजली । ५–२३६
छबि=शोभा; छंदनाम । ५–५८
छबिसेनी=शोभा की श्रेणी, छबिसमूह । ७–२५
छरी=छली हुई । ११–७
छाग=बकरा । १२–६५
छाजै=शोभित होता है । ५–६७
छापा=शंख, चक्रादि का चिह्न । ५–३५
छाया=प्रतिबिंब; छंदनाम । १२–६२
छीवै=छूए । ६-३, १४–१०
जंग=युद्ध, लड़ाई । ५–१७८
जक्त=जगत्, संसार । ५–१०२
जगत्प्रान=जगत् के प्राण, पवन । १०–४६
जगहदनि=सारे संसार मैं । ८–१६
जति=यति, चरणांत का विश्राम । ६–७
जत्ता=जितनी, जो । ५–१३०
जन=दास । २–२५
जनदरदहरी=भक्तों का दुःख हरने-वाली । ५–८६
जन-प्रन-रच्छन=दास के व्रत के पालक । १–१
जनिउ=जनी (दासी) भी । १२–३६
जब ही तब=जब देखो तब, अकसर, बहुधा । ५–२४३
जमक=यमक; 'यमक' छंदनाम । ५-२७
जमाति=(जमात) समूह । १–६
जराउ=नगजटित । १५–५
जरे=जड़े । १५–५
जलचर=जलजीव (मछली) । ५–१४२
जलधरमाला=बादलों का समूह । ५–१७५
जलहरन=आँसू गिराने (लगीं); 'जलहरण' छंदनाम । ७–३०
जलोद्धतगती=जल की उद्धत गति, जल की प्रचंड लहरें; छंदनाम । ५–१४७
जस=यश । ५–१२३
जसी=यशस्वी । ५–२०
जसुमतिनंदनै=श्रीकृष्ण को; 'नंदन' छंदनाम । १२–८३
जसु-गीत=यश का गान; 'सुगीतिका' छंदनाम । ६–३७

जाँत=(जांत=ज+अंत) जगण जिसके अंत मेँ हो । ५–६५
जाति=मात्रिक । ८–१
जान=यान, सवारी । ७–४४
जानि=जानो, समझो । ५–१७४
जापु=जप, साधना । १२–३६
जामैं=जिसमेँ । ५–३६
जायो=जन्माया हुआ, पुत्र । १२–१०५
जारक=जलानेवाला । १०–५२
जारै=जलाती है । ५–१७५
जाल=घात, गौँ । ५–१८०
जावक=महावर । ५–१५४
जासु=जिसके । ५–१४३
जाहिर=प्रकट । ३–१३
जाहिरे=प्रकट । ५–१७६
जित तितो=जितना तितना, जितना उतना । ३–१०
जी=(जीव) प्राण । ५–१०६
जीवी=जीऊँगी । ५–१३६
जुग=(युग) दो । ५–२३२
जुदी रखिये=पृथक् रखिए । ११–८
जुन्हाई=ज्योत्स्ना, चाँदनी । ५–२४१
जूह=यूथ, समूह । १२–६५
जेलनि=झंझट, जंजाल । ८–२४
जेहा तेहा=जहाँ तहाँ । १२–५५
जेहि=जिसको । ५–६८
जै=जितने । ३–७
जैबो=जाना । १–३
जोगरागाधिकाई=योग के अनुराग का आधिक्य । १२–२५
जोटीजोटाँ=जोड़ा-जोड़ी होकर । ५–२३५
जोवनाढ्या=(यौवन+आढ्या) यौवन से युक्त । १२–८७
जोराजोरी=जबरदस्ती, बलपूर्वक, विवश होकर (अवश्य) ५–२०३
जोरे=प्रतिद्वंद्वी । १२–६५
जोवै=देखे । ५–२२१
जोषिता=(योषिता) नारी । १२–७३
जोसतो=जोश मेँ आता (उमड़ता है) । ६–४०
जोहै=दिखती है । ५–१७२
जौन=जो । ३–७
जौ लगि=जब तक । ५–१५०
ज्यान=हानि, नुकसान । ५–२३०
झख=(झष) मछली । ८–१५
झखि=विवश होकर । ८–१५
झखियाँ=मछलियाँ । १२–१०६
झखै=झीँखती है, दुख करती है । ५– ८४, ६–४३
झारि=झारो, दूर करो । ५–३६
झालरि=झाँझ । ५–२३५
झिगरो=झगड़ा, झंझट । ७–२८
झीन=पतला । ५–१६६
झुल्लना=झूला; 'वर्णझुल्लना' छंद-नाम । १४–१०
झूलना=झूला; छंदनाम । ६–३
टकी=टकटकी । ७–२५
टेसू=(किंशुक) पलाश । ५–१३६
ठवीजै=स्थापित कीजिए, लिखिए, रखिए । ३–१०
ठाईँ=स्थान पर । ७–४१
ठाउ=स्थापित करो । ५–१२४

ठानीजै=रखो। १२-१००
ठाया=रखा। ८-६
डगर=रास्ता, मार्ग। ५-२४०
डाभे=दर्भ मेँ,कुश-काँस मेँ। १२-५६
डारगहित=डाल मेँ लगा हुआ। ७-३६
डौंडौं=डमरू की ध्वनि। ५-२३६
डौर=(डौल) मार्ग, उपाय। ३-१६
ढरनि=ढलना। १२-१११
ढारनि=कान का गहना। ६-६
ढिग=पास। ३-१८
तंत=(तंत्र) रहस्य, भेद। ३-२८, ५-१०२
तंबु=(तंबू) खेमा, शिविर। ५-१७४
त=तगण (SSI)। २-२६
तत्तु=तत्त्व। ११-८
तत्र=वहाँ। ६-६
तन=तगण नगण; शरीर। ५-१७२
तनुरुचि=शरीर की शोभा; 'तनुरुचिरा' छंदनाम। १२-३६
तन्वी=कोमलांगी; छंदनाम। ५-२४१
तपकि तपकि=धड़क धड़ककर। ७-३०
तमोर=तांबूल, पान। २-५,
तमो लहै=अंधकार पाता है (सूर्य); तगण, मगण और लघु होता है (सूर छंद)। ५-६०
तर=तल, नीचे। ३-८
तरनि=(तरणि) सूर्य। ५-१४७
तरनिजा=(तरनि=सूर्य + जा= पुत्री) यमुना नदी (श्यामवर्ण); छंदनाम। ५-२२
तरनो=पूर्ण होना। १२-१००
तरलनयनि=चंचल नेत्रोँ वाली; 'तरलनयन' छंदनाम। ५-६८
तरहरि=नीचे पीछे। ५-१२०
तरि जानै=तैरना जानता है, पार करना जानता है। १-८
तरुनि=(तरुणी) स्त्री। ५-४२
तरैया=तारा, तारिका। ५-२२७
तख्योना=तरौना, कान का गहना। ७-६
तलफै=तड़पन को। १०-४२
तल-बितल=सप्त पातालोँ मेँ से दो अतल-वितल। ७-२२
तसु=उसके। ३-१२
तातर=उसके नीचे। ३-१०
तानो=फैलाओ। १२-१०२
तामरसो=कमल; 'तामरस' छंदनाम। ५-१४२
तारकतारक=ताड़का को; तारनेवाला 'तारक' छंदनाम। १०-५२
ताली=थपोड़ी; छंदनाम। ५-३०
ताही=उसी। ५-८८
ति=त्रि, तीन। ३-६
तिकल=तीन मात्राएँ। ५-४
तिती=उतनी। ६-३४
तितोइ=तितना ही, उतना ही। ५-१०१
तिन=तृण। १२-११५
तिन्ना=चार गुरु (SSSS)। ५-१२०

तिन्नो=तीनोँ; 'तिर्ना' छंदनाम। १०–१६

तिय=(विरहिणी) स्त्री। ५–६

तियानि=स्त्रियोँ को। ५–१८४

तिरग=तीन रगण (ऽ।ऽ) और गुरु। ५–१५६

तिल=तिल का फूल (नासिका)। १२–८१

तिलक=व्याख्या, टीका। ३–७

तिल काजर=(तिल=काली बिंदी के आकार का गोदना+काजर=काजल); 'तिलका' छंदनाम। १०–२५

तिलको=तिल मात्र। ५–१६४

तिलोत्मा=(तिलोत्तमा) एक अप्सरा। १२–७३

ती=स्त्री, नायिका। ५–६७

तुंग=ऊँचे; छंदनाम। ५–६७

तुंगतनी=(तुंगस्तनी) ऊँचे स्तनोँ वाली, उन्नतपयोधरा। ११–५

तुअ=तव, तुम्हारा। ५–६२

तुक=पद्यखंड। २–२२

तुलनि=तुला पर, तराजू पर। ५–१६६

तूल=तुल्य, समान। ५-११५, २४०

तृष्नाहिन्नो=तृष्णाहीन, तृष्णा से रहित। १०–१६

तृष्नै=तृष्णा को। ५–३८

तेतनीयै=उतनी ही। ३–७

तेतो=तितना, उतना। ५–८३

तेहु=तेहा, क्रोध। ११–११

तैँ=तू ने। ५–१००

तो=(तव) तुम्हारे। ५–१७६

तौलो=तौल लो। ५–६३

त्रपा=लज्जा। १०–४०

त्रिजयो=तीन जगण और यगण। ५–१५६

त्रिवली=पेट मेँ पड़नेवाली तीन परतेँ। १२–१०६

त्रिभंगी=तीन स्थानोँ से टेढ़े होनेवाले (श्रीकृष्णलाल); छंदनाम। ७–२८, १५–६

त्रिय=स्त्री, नायिका। ५–१३८

त्रैलोक्य-अवनीप=तीनोँ लोकोँ के राजा। ५–७३

थकित=मुग्ध। ५–५८

थपो=रखो। १४–२

थरि देहु=फैला दो, जमा दो। ४–६

थरो=फैलाओ। ३–१

थल अभय=निर्भय स्थान। १–३

थानथित=स्थान पर स्थित (बैठा)। ७–३६

थाल्हो=थाला, वह गड्ढा जिसके भीतर पौधा लगाया जाता है। ५–१६४

थिति=स्थिति। ५–१४५

थिरकाए=नचाते हुए। ५–१६०

थुलिका=स्थूल, मोटा। ५–१३१

दंड=चार। ५–२३२

दंडकलोग=दंडकारण्य के लोग; 'दंडकला' छंदनाम। ७–२७

दंडार्ध=आधे दंड मेँ, थोड़े समय मेँ। १२–७७

दधि-सारवती=दधिसार (नवनीत,

मक्खन) वाली; 'सारवती' छंदनाम। ५–११०

दनुज-दमनकरी=दानवों का दमन करनेवाली; 'दमनक' छंदनाम। ५–८६

दमकै=चमकती है। ५–१७८

दयाल करता=दयालु और कर्ता। १२–५७

दरियाउ=समुद्र। ६–३८

दर्भजाल=कुश का समूह। ५–१५

दल=चरण। ८–३

दल=पत्ता; सेना। ११–६

दह=(ह्रद) गहरे पानी का कुंड। ८–१५

दह दिसि=दशो दिशाओं में, सब ओर। ५–१११

दाँ=बार। १२–५७

दातार=देनेवाला। १२–६०

दान=द्रव्यादि का देना (दानवीर के लिए)। ५–६१

दानवारि=विष्णु। ५–३६

दामिनी=बिजली। ५-१७८, ६-१०

दायाल=दयालु। १०–२०

दास मानिकै=सेवक मानकर, ('दास' छाप भी है); 'समानिका' छंदनाम। १०–३०

दिगईस=(दिगीश) दिशाओं के स्वामी; छंदनाम। ५–६७

दिगपाल=दिशाओं के पालक; छंद-नाम। ६–२५

दिढ़=दृढ़। १३–१३

दिनमनि=सूर्य। ५–१४८

दिवि=आकाश। ७–४४

दीप=दस मात्रा का एक छंद। ५–१७२

दीप=दीपक, दीया; छंदनाम। ५–७३

दीप की जोति=दीपक की ज्योति, दीये का प्रकाश; 'दीपकी' छंदनाम। ५–१७३

दीपमाला=दीपों की माला; छंदनाम। ६–५

दीसी=दिखाई पड़ी। ५–१६६

दीह=दीर्घ, बड़ा। ५–५१

दुखकंदनै=दुख को मारनेवाले को। १२–८२

दुखगंज=दुख का समूह। १०–५२

दुगति=दो गति (सात मात्राओं का शुभगति छंद)। ५–११४

दुचिताई=व्यग्रता। ५–१६५

दुज=(द्विज) चार लघु (।।।। ।५–६३

दुज जामिनी अपवाद=यदि ब्राह्मण को रात्रि में अपवाद (झूठा आरोप) लगे तो। ५–६३

दुमंदर=दो (दु) पर्वत (मंदर); छंदनाम। १०–२८

दुमत्त=दो मात्राएँ। २-१

दुरदगति=(द्विरदगति) हाथी की चाल। ५–१०

दुरदगमनि=(द्विरदगामिनी) गज-गामिनी। ५–६८

दुर्मिल=दुर्लभ; छंदनाम। ७–२६

दृढ़पटु=दृढ़ वस्त्र (पट); 'दृढ़पट' छंदनाम। ५–१६६

दै=देकर । ५–३०
दैतकदनै=दैत्य के संहारकर्ता । १२–१०५
दोरादोरी=दौड़ादौड़ी । ५–२०३
दोषकर=(दोषाकर) रात्रि करनेवाला; दोषोंका आकर (खानि) । ५–१७०
दोहरो=दुहरा; 'दोहरा' छंदनाम । ७–६
दोही=केवल दो; छंदनाम । ७–८
द्यौस गवावई=दिन गँवाता है, दिन बिताता है, समय काटता है । ५–१८५
द्यौसो=दिन । ५–१६०
द्रुत पाउ=शीघ्र पावँ (रखो); 'द्रुतपाद' छंदनाम । ५–१२४
द्रुत मध्य कलिंदी=शीघ्र यमुना के बीच; 'द्रुतमध्यक' छंदनाम । १३–१५
द्रोहारिनी=द्रोह को हरनेवाली; 'द्रोहारिणी' छंदनाम । १२–७७
द्विज, द्विजवर=चार लघु (।।।।) । ५-६६, ४६
धन्वी=धनुर्धर । ५–२४१
धर=धरा, पृथ्वी । ७–४४
धरनी=(धरणी) पृथ्वी । ५–१५
धरै=धारण करे; 'धरा' छंदनाम । १०–१६
धर्‍यौ=रखा हुआ । ५–७६
धवल=उज्ज्वल । ५–१२३
धवल=स्वच्छ, उज्ज्वल; छंदनाम । ५–१७६
धा=प्रकार । १२–२६
धाइ=(धात्री) धाय । ७–६
धारि=धारो । ५–३६
धारि=(कोश=म्यान वाली) धार अर्थात् तलवार; छंदनाम । ५–३६
धीर=धैर्य । ५–३३
धुज, धुजा=लघु-गुरु (।ऽ) । ५–१२०, १२४
धुनिधुनि सिर=सिर पीटपीटकर । ७–४२
धृत=धारण किया हुआ; (अचल) धृत छंदनाम । ५–१५६
धौँ=न जाने । ११–१०
ध्रुवहु=निश्चित भी; 'ध्रुवा' छंदनाम । ७–१५
नंद=गुरु-लघु (ऽ।) । ५–६६
नंद=ननद; छंदनाम । १०–१८
नक्रिम=नाक । ५–१६२
नगधर=गिरिधारी, श्रीकृष्ण । १–५
नच्चै=नाचती है । ५–१३५
नदरूप=बड़ी नदी के रूप में । ५–२२१
नदो=बड़ी नदी । ५–२२१
नदो वै=वे नद; 'दोवै' छंदनाम । ५–२२१
नभजया=नगण भगण जगण यगण; नभ को विजित करनेवाली (रेणु) । ५–१३३
नभजरीहिं=नगण भगण जगण रगण ही; आकाशवेलि (नभजरी) को । ५–१३३

नयनय=नगण-यगण नगण-यगण। ५-१३०
नरसिर=नरमुंड। ७-४१
नराच=बाण; छंदनाम। १०-३८
नराचिका=छोटा बाण; छंदनाम। ५-१००
नराचु=नाराच (बाण)। १०-३८
नरिंद=नरेश; छंदनाम। ५-१६
नरिंदकुमारी=(नरेंद्रकुमारी) राजकुमारी; 'नरिंद' छंदनाम। ५-२२०
नलघरनि=राजा नल की स्त्री दमयंती। १२-७३
नवमालिनी=नई मालिन; छंदनाम। ५-१४३
नवै=नवमी। १५-१६
नष्टोद्दिष्टनि=छंदःशास्त्र-गत नष्ट और उदिष्ट नाम के प्रत्यय। १-३
नसान्यो=बिगड़ा, नष्ट हुआ। ५-२१६
नांदीमुखी श्राद्ध=वह आभ्युदयिक श्राद्ध जो पुत्रजन्मादि मांगलिक अवसरों पर किया जाता है; 'नांदीमुखी' छंदनाम। ६-१२
नाथे=गूथे हुए। ११-१६
नाराच=बाण; छंदनाम। १२-८५
नारे=बड़े नाले। ५-२२१
नाहक=व्यर्थ। ५-५३
नि=निश्चय। ६-४
निअर=निकट, पास। ५-१३६
निज=निश्चय ही। ५-१८८
निज जरि=नगण जगण जगण रगण; अपनी जड़। ५-१३३
निजभय=नगण जगण भगण यगण; अपडर, अपना भय। ५-१३१
निजु=निश्चय। ५-१३१
निदरै=निरादर करती है। ७-३१
निबेरि=तै करो, समझो। ६-१६
निमि=निमेष, पलक। ८-१५
निरमाया=निर्माण किया; 'माया' छंदनाम। ५-१६५
निरसंके=बेखटक, निर्भय। ३-१२
निरसंचय=सारा संचय, सर्वस्व। ७-२६
निसा-रंग=रात्रि में आनंदोत्सव; 'सारंग' छंदनाम। १०-४३
निसि=(निशि) रात; छंदनाम। ५-२६
निसि पा लगत=रात को पाँव पड़ने से; 'निशिपाल' छंदनाम। ५-१८०
निसिमुख=गोधूलि, संध्या। ५-२३६
निहननी=संहार करनेवाली। १२-११३
निहारि=देखो, समझो। ५-५६
नींदै=निंदा करे। १२-१०१
नीके=भले। ५-६७
नीबी=फुफुँदी। ५-२४३
नीरसु=नीरस, रसबाह्य। ५-१२५
नीरे=निकट। ५-१३५
नील=नीली; छंदनाम। १०-५५
नूत=नवीन। २-६
नेरो=निकट। ६-३
नेसुक=थोड़ा। ५-२०४
नेहा=(स्नेह) प्रीति। ५-१६४
नै=नदी। २-२

नैनि=नेत्र वाली । ५-११
नोयो=नगण यगण । ५-१३०
न्हानवसी=(पानी में) नहाने पैठी। ५-७६
न्हैये=स्नान करते हो । ५-१६६
पंकअवलि=कीचड़ का समूह; छंद-नाम । ५-१५५
पंचार=पंचाल, छंदनाम । ५-१६
पंचाल=(पंचाली) एक गीत; छंद-नाम । ५-२३
पंती=पंक्ति । ३-२
पकल=पाँच मात्राएँ । ५-४
पक्ख=पंख । ५-१६१
पक्खिराजा=गरुड़ । १०-४१
पगनो=पगना, लीन होना । ५-१३२
पटओट=वस्त्र का परदा । ५-१६३
पटतर=समता । ५-२१०
पटुता=कौशल, निपुणता । १-३
पढमं=प्रथम, पहले । ३-२
पतिया=पत्री, चिट्ठी । ५-८७
पत्र=पत्ता; तीर या पुंख । ११-६
पथार=प्रस्तार । १०-१५
पथारनिं=(प्रस्तार) प्रस्तार आदि प्रत्यय । १-८
पथारु=प्रस्तार । ४-२
पद्धरिय=पाँव धरती है, जाती है; छंद-नाम । ५-१५८
पद्मावति=पद्मिनी; 'पद्मावती' छंदनाम। ७-२५
पद्मी=हाथी । १२-६२
पनारे=(प्रणाली) छोटे नाले । ५-२२१

पनु=(पन) प्रण, प्रतिज्ञा । ६-१४
पन्नगीकुमार=सर्पिणी का बच्चा । १०-३१
पपिहौ=पपीहा भी । ५-१७५
पवि=वज्र । ६-४
पय=पद, चरण । ८-११
पयनिधि=क्षीरसागर । ५-१२३
पयोधै=पयोधि ही, समुद्र ही । १२-१०१
पर=मैं । १-५
पर=परायण । १-५
परकार=प्रकार, भेद । ४-१
परजंक=(पर्यंक) शय्या । ६-४६
परनि=प्रतिज्ञा, टेक । १२-१११
पर-भूमिहि=दूसरे के स्थान पर । ५-१०१
पराजय=हार । ५-१४२
परिंद=पक्षी । ५-१६
परिट्ठवेहु=परिस्थापय, रखो, लिखो । ३-२
परितक्ष=प्रत्यक्ष । १०-८
परुष=कठोर । ५-१५६
परेवा=कबूतर । १०-२३
पलान लाद=व्यवसाय करता है । ५-२३०
पवंगम=वायु के साथ चलनेवाली; छंदनाम । ५-१८४
पहँ=पास । ११-६
पहुँची=कलाई में पहनने का आभूषण । ११-१६
पाँखुरी=पंखड़ी । १३-३
पाँवरिया=जूतियाँ । ११-१२

पाइ=पाय, पावँ । ७–६
पाइत्ता=पाता; छंदनाम । ५–१०८
पागत=पगता है, अनुरक्त होता है । ५–२०७
पाग्यो=अनुरक्त । ५–२३७
पाटला=गुलाब (ढुड्ढी) । १२–८१
पाटीर=चंदन । ६–६
पाटीरी=चंदन की । ५–२०४
पानि=(पाणि) हाथ । ५–१६६
पाय=पाकर अथवा पैर (पड़कर) १०–३१
पाया=पाद, चरण । ८–६
पास=(पाश) रस्सी । ५–११७, १२–३५
पासधरं=पाशधर; पाश या फंदा लिए रहनेवाले । १–१
पासो=पास में । ५–१०८
पाहि=रक्षा करो । ५–१०२
पिका=(पिक) कोयल । ५–११३
पिय=प्रिय । ५–७०
पिय=दो लघु (।।) । ५–१३२
पियारी=प्यारी । ५–६०
पी=प्रिय । १२–६
पीन=स्थूल । ११–५
पीन-पयोधर-भारवती=ऊँचे स्तनों के भार वाली । ५–११०
पीम=प्रिय (दो लघु) मगण । ५–२३२
पीरिय=पीली । ११–१२
पीरो=पीला । ५–८२
पुट=दोना; छंदनाम । १२–३१
पुतरी=पुतली । ५–८५
पुत्ता=पुत्र । ५–५२
पुरुषारथुद्धतौ=(पुरुषार्थ+उद्धत); 'रथोद्धता' छंदनाम । ५–१५३
पुष्पति अग्ग=वे पुष्प (अंगुली के अग्रभाग से छूने पर) 'पुहपतिअग्र' (पुष्पिताग्रा) छंदनाम । १३–३
पूतरी=(पुत्तलिका) पुतली । ६–१७
पूर्वजुअलंक=पूर्वयुगल अंक । ३–८
पूर्वजुगल=पहले की दो संख्याएँ । ३–५
पृथ्वी=भूमि; छंदनाम । १२–६७
पेंच=(पेच) चक्कर, उलझन । ५–१६६
पेलनि=झगड़ा, बखेड़ा । ८–२४
पै सुथित=निश्चय ही अच्छी तरह स्थित,'पयस्थित'छंदनाम । १२–१४
पैसुन्य=(पैशुन्य ; दुष्टता । ६–४०
पोखर=(पुष्कर) तालाब । ५–५१
प्रचित=सावधानी से; छंदनाम । १५–२
प्रति=से । ५–१७८
प्रथम=सबसे पहले । १–३
प्रवरललिता=श्रेष्ठ ललिता (राधाजी की सखी); छंदनाम । १२–६३
प्रभंजन=वायु; तोड़फोड़ । ११–६
प्रभद्र=अत्यंत शिष्ट;'प्रभद्रक' छंदनाम । १२–५७
प्रभा=आभा, प्रकाश; छंदनाम । १२–२७
प्रभावती=प्रभावाली; छंदनाम । १२–४७

प्रमदा=सुंदर नारी । १२–३५

प्रमिताक्षर=थोड़े अक्षर; छंदनाम । १२–२०

प्रस्तार=छंदशास्त्र का एक प्रत्यय जिससे छंदों के रूप और भेद जाने जाते हैं । १–३

प्रहरन कलि=कलियुग को हरण करने-वाला । ५–१४६

प्रहर्षिनी=अत्यंत हर्षित; 'प्रहर्षिणी' छंदनाम । १२–३७

प्रानप्रिया=प्राणों को प्यारी (नायिका); छंदनाम । ६–१६

प्रियंवदा=मृदुभाषिणी; छंदनाम । ५–१५२

प्रिया=प्रेयसी, नायिका; छंदनाम । ५–२१

प्रीसो=प्रिय और मगण (||SSS) । ५–२३२

फंद=युक्ति, ढंग, बहाना । ११–६

फनिंद=भारी सर्प (कालिय) । १३–१५

फनिंदी=नागिन । १३–१५

फनिईस=(फणीश) पिंगलाचार्य जो शेष के अवतार थे । ५–६५

फबै=शोभित होता है । १५–३

फलंगना=उछाल, छलांग । ५–२१०

फालै=डग को, फलाँग को । १२–१०१

फुल्लदामै=फूल की माला; 'फुल्लदाम' छंदनाम । १२–६५

बंक=टेढ़ा (ऽ) । २–१

बंद=बंध; रचना । ५–७

बंद-बंद=जोड़-जोड़ । ६–४१

बंधूको=दुपहरी नामक फूल (पैर की ललाई) । १२–८१

बंनो=वर्ण, अक्षर । १२–८

बंस=समूह । ६–६

बंसपत्र=बाँस का पत्ता; छंदनाम । ५–१६२

बसस्थ बिलोकि=बाँस पर चढ़ी देखकर; 'वंशस्थविल' छंदनाम । १२–२२

बंसावरी=वंशावली, (वंश की) मर्यादा, कुलकानि । ११–८

बकबंस=बगुले का परिवार । ६–१४

बकसत=देते हैं । ५–२३८

बक्त्रांभोजप्रफुल्ल=मुखकमल खिला हुआ । १२–८६

बक्षोपरि=(बक्ष+उपरि) छाती के ऊपर । ५–१२२

बगारन दे=फैलाने दे । १०–४२

बदन=मुँह । ५–५८

बदि=बदी (कृष्णपक्ष) । १५–१६

बधु=बधिक । ५–६

बनक=वेश, भेस । ५–१४५

बनमाली=श्रीकृष्ण; 'माली' छंद-नाम । ५–१६५

बनलती=बन की लता । ५–५४

बनीनी=बनिए की स्त्री; छंदनाम । ६–३

बपु=शरीर । ५–११३

बरन=वर्ण, रंग । ५–१२

बरन=(वर्ण) अक्षर । १०–६

बरनि जा=जिसका वर्ण (रंग)। ५-२२
बरन्न=(वर्ण) अक्षर। १-८
बरह=मोरपंख। १५-६
बरहि=वर्ही, मयूर। १५-६
बरु=बल। ५-२४
बर्त्म=मार्ग, पथ; 'चंद्रवर्त्म' छंदनाम। ५-१५०
बलाहक=बादल, मेघ; बलशाली। ५-५३
बलि=बलिहारी जाती हूँ। ५-१५०
बसंत तिल कानन=थोड़ा वसंत के आने पर वन देखो; 'वसंततिलका' छंदनाम। १२-४८
बसन=वस्त्र। ६-३, ५-१७६
बसुवास=निवास। ६-१४
बसुमती=(वसुमती) पृथ्वी; छंद-नाम। ५-६१
बहराई=देखी अनदेखी की। ५-१४३
बाँकई=टेढ़ा होता है। १२-५७
बाँच=बाँचो, पढ़ो। ५-६३
बाँचो पैश्रा (लागेँ)=(श्रीरामचंद्र जी के) पैराँ लगने से बचा (अपनी रक्षा की); 'चौपैया' छंदनाम। ७-२२
बाँटो=बटखरा। ५-६६
बा= बार। ११-८
बाइ बकत=वायु के प्रकोप से अंड-बंड बोलती है। १-१५५
बागत=घूमता है। ५-२०७
बाच्यो=बचा, बच सका। ५-१०६
बाज नहिं आयउ=बाज न आया, न छोड़ा, न माना। ५-१७३
बाचा=वाणी। ५-१६५
बातोर्मी=हवा (वात) की लहर (उर्मि); छंदनाम। १२-७
बादि=व्यर्थ ही। ११-८
बाननी=बनिये की स्त्री; छंदनाम। ५-१६१
बानी=सरस्वती। १५-२
बाम=वामा, स्त्री, नायिका। ६-४
बाम-सोभ-सरसी=स्त्री की शोभा रूपी सरोवरी। ५-१६६
बारक=एक बार। १०-५२
बारदारा=वेश्या। १०-५४
बारनि=बालों की। ६-६
बाल=बाला, नायिका। ५-७०
बाला=नायिका (गोपी); छंदनाम। ५-१६१
बाला=ऊँची। ६-५
बासंती=माधवी लता; छंदनाम। ५-२०३
बास=सुगंध। ६-३
बास=वस्त्र। ६-६
बासर=दिन। ५-५१
बासा=बसना। ५-१८६
बाहहि=खे दो, नाव चला दो। २-२
बाहिर=बाहर। ३-१३
बिंब=बिंबा फल; छंदनाम। ५-६२
बिंबो=कुँदरू (लाल अधर)। १२-८१
बिघन=विघ्न, बाधा। १-२

बिचित्रा=विलक्षण; 'चित्रा' छंद-नाम । १२-५६
बिजय=जीत; 'विजया' छंदनाम । ६-६
बिडारहु=तितर-बितर कर दो, भगा दो । १०-५३
बित=धन । ८-२४
बित्थ=वित्त । १-५
बिथा=(व्यथा) पीड़ा । ५-४०
बिद्याधारी=विद्या को धारण करने-वाला, विद्वान्; छंदनाम । ५-२०६
बिद्युन्माला=बिजली की पंक्ति; छंद-नाम । ५-१३५
बिद्रुम=मूँगा । ५-२००
बिधना=ब्रह्मा । १३-१३
बिधि=रीति, ढंग । ५-६६, ६-४१
बिधि-घरनि=ब्रह्मा की स्त्री, सरस्वती । ५-१७६
बिधुबदन=चंद्रमुख । ५-७०
बिनतासुत=गरुड़ । १-३
बिन हरहासिल=बिना लाभ के । ५-२३०
बिपिनतिलकै=वन में श्रेष्ठ ही; 'बिपिन-तिलक' छंदनाम । ५-१७८
बिपुल=अनेक, बहुत । ५-१७५
बिप्र=चार लघु (।।।।); ब्राह्मण । ५-१७२
बिबि=(द्वि) दो । १-३
बिबि गिरि=दो पर्वत (स्तन) । ५-१८१
बिभावरी=रात्रि । ७-६
बिय=दो । २-८, ५-१४५
बिय चक्र नितंब=नितंबरूपी दोनों चक्र; 'अपर (बिय) चक्र' छंदनाम । १३-११
बिरति=वैराग्य । ७-११
बिरति=विश्राम (चरण के मध्य का) । ६-७
बिरतिउ लाल=विरक्ति भी (श्रीकृष्ण) लाल के; 'उलाल' (उल्लाला) छंदनाम । ७-११
बिरतिहि=वृत्ति को । ८-१३
बिरद=बाना, यश । ५-१४६
बिरमत=विश्राम करता है । १२-११४
बिषधर-धर=विषैले सर्पों को धारण करनेवाले, शिव । ५-८६
बिष्नुपद=विष्णु के चरण; छंदनाम । ५-२१४
बिष्नुरथ=विष्णुरथ, गरुड़ । १-४
बिसासिनि=विश्वासघातिनी । ६-४६
बिसु=विष । ६-३०
बिस्तरती= विस्तार करती । ५-१३८
बिस्वरूप=सर्वरूप । ५-६६
बिहूनियौ=(विहीन) रहित भी । १२-७६
बींधै=बिद्ध हो, छिद जाए । ५-६४
बीर=सखी । ११-८
बीर-बिचक्षण= वीरश्रेष्ठ । १-१
बुलाक=नाक में का एक गहना जो मोती का होता है । ५-१६२

बुद्धि=समझ; छंदनाम । ५–२५
बुध्यौ=बुद्धि भी । ५–२३४
बृक=भेड़िया । १२–६५
बृत्त=(वृत्ति) छंदसंख्या । ५–२६, ७४
बृत्त=गोल (चिबुक) । ७–३६
बृत्ति=छंदसंख्या, सूची, अंक । ५–५
बेँदा=टीका, माथे पर का एक गहना । ७–६
बेगवती=वेगवाली; छंदनाम । १३–
बेझो=वेध्य, लक्ष्य, निशाना । १४–८
बेताली=वेताली, शिवगण । ५–३०
बेधे=बेधने में । १४–८
बेनीबिगलिता=खुली हुई वेणीवाली । १२–८६
बेनु=(वेणु) वंशी । १०–५६
बेली=वेलि, लता । ५–१६४
बेसर=छोटी नथ । ६–६
बैठक=आसन । ६–१४
बैसनो=वैष्णव (नारद) । १०–४१
ब्यूह=समूह । १२–६५
ब्योँत=उपाय । ५–१५०
ब्यौंत=उपाय । १०–५६
ब्रजअधिप=ब्रज के स्वामी, श्रीकृष्ण । ८–१७
ब्रजचंदु मिलावहि=श्रीकृष्ण से मिला दे; 'दुमिला' छंदनाम । ११–६
ब्रह्मप्रिया=सरस्वती । ६–२१, २२, २३
ब्रह्मा=ब्रह्मा; छंदनाम । ५–२३४
ब्रीड़ितै=लज्जित ही । १२–६२
भंजो=भंग करो; त्याग दो । ५–६४
भगरु=(भगर) इंद्रजाल । ५–१४७
भटारकटारक=(काँटेदार) भटकटैया-वाली । १०–५२
भटै=भट (योधा) को । ११–६
भनि जोजल=भगण नगण जगण लघु; जो जल है वह (कीचड़ समूह-पंक-अवलि) कहा जाएगा । ५–१३४
भद्र कहै=श्रेष्ठ कहता है; 'भद्रक' छंद-नाम । १२–१११
भभ=भगण भगण । ५–१३०
भरता=भरण-पोषण करनेवाला । ५–३४
भरि उसासो=लंबी साँस भरकर । ५–६५
भाँति=(भाति) छटा । ११–१२
भा=शोभा । ११–१४
भाइ=भाव, प्रकार । ५–५७
भाग=भाग्य । ५–१७०
भाग भारु=भारी भाग्य, अत्यंत भाग्य-शाली । ५–६६
भागु=भाग्य । ७–२७
भानहि=तोड़ दो, हटा दो । १२–१८
भानि=मिटाकर, नष्ट कर । ५–२६
भानौ=तोड़ो । ५–२०५
भामरो=भ्रमर, भौंरा । १०–३१
भामिनी=स्त्री, नायिका । ६–१०
भाय=भाव (दर) । ६–३
भाय=(भाव) मोल; चेष्टा । ५–१६१
भारती=सरस्वती । ६- ६
भाराक्राँता=भार से आक्रांत, बोझ से दबी; छंदनाम । १२–७६

भावती=भानेवाली (नायिका)। ६–३२

भास गहु=भगण, सगण गुरु (से 'तुंग') भी (होता है)। ५–६३

भीजै=(रात भीजना=अधिक रात हो जाना) रात अधिक होती जा रही है। ७–६

भीर=आपत्ति। ५–२४

भुक्त=भुक्ति, लौकिक सुखभोग। ५–१५३

भुजंगविजृंभितो=सर्प का कढ़ा फन; 'भुजंगविजृंभित' छंदनाम। १२–११५

भुजंगी=सर्पिणी (वेणी); छंदनाम। ६–६

भुजंगै=साँप द्वारा; 'भुजंग' छंदनाम। ११–७

भुजंगो प्रयातो=सर्प चला गया; 'भुजंगप्रयात' छंदनाम। १०–४०

भुवजनित=पृथ्वी से उत्पन्न। ५–२२७

भूपर्यौ=पृथ्वी पर पड़ा हुआ ; 'भूप' छंदनाम। ६–३२

भूरि=बहुत। ७–३१

भूलो=भ्रमित, भूला हुआ। ५–१४१

भूषनमृगलच्छन=चंद्रभूषण। १–१

भेद=रहस्य; छंदनाम। १५–१४

भेरी=नगाड़ा। ५–२२६

भौंर=भौंरा। ११–४

भो=हुआ। १५–७

भोगहि=भगण गुरु ही। ५–२३२

भोगीपति=सर्पराज, शेषनाग। १२–२८

भोगीराजा=(भोगी=सर्प+राजा) सर्पराज। ५–२३६

भोभासोमो=भगण भगण सगण मगण; मुझे (मो) चंद्र-छटा (सोम-भा)। ५–१७२

भोर=प्रातःकाल। ५–७०

भोरन=भगण रगण नगण; रण हुआ। ५–१७२

भौन=भवन। ११–१०

भ्रमर बिलसिता=भौंरों से विलसित (घिरी); छंदनाम। ५–१३८

भ्रमरसंजुक्ता=भौंरों से युक्त; 'युक्ता' छंदनाम। ५–८५

भ्रमरावलि=भौंरों की पंक्ति; छंदनाम। १०–५३

भ्रुवजुग=भ्रू युगल, दोनों भौंहें। १५–६

मंजरि=(मंजरी) बौर; 'मंजरी' छंदनाम। ११–१६

मंजीरा=(मंजीर) एक बाजा, ताल; 'मंजीर' छंदनाम। ५–२३५

मंजुभाषिनी=सुंदरभाषिणी; छंदनाम। १२–४३

मंडि=मंडित करके, मिलाकर। १–६

मंडिकै=छाकर, करके। ५–२००

मंत=मंत्र, रहस्य। ५–११४

मंथानु=मथानी। १०–२६

मंदभाषिनी=कम बोलनेवाली; 'मंदभाषिणी' छंदनाम। १२–४५

मंदर=पहाड़ (ल्यावत=लाते हैं); छंदनाम। ५–१७

मंदाकिनी=गंगा। १२–२७

मंदाक्रांता=मंद और पराजित; छंद-नाम । १२–७३

मचै=फैलाए । ४–२

मच्छ=मत्स्य । ६–८

मटक=नखरे से चलने का भाव । ६–४५

मत्त=मात्रा । १–८

मत्तगयंदगती=मतवाले हाथी की चाल (सी चालवाली); 'मंत्तगयंद' छंदनाम । ११–५

मत्तप्रथार=मात्राप्रस्तार । ३–१

मत्तमयूरो=मतवाला मोर; 'मत्तमयूर' छंदनाम । ५–१६६

मत्तमातंगलीला करै=मतवाला हाथी क्रीड़ा करे; 'मत्तमातंगलीलाकर' छंदनाम । १५–११

मत्ता=मात्रा । ५–५६

मत्ता=मत्त, मतवाले; छंदनाम । ५–१३६

मत्ताक्रीड़ा=मतवाला (मत्ता) खेल (क्रीड़ा); छंदनाम । ५–२३८

मदनकरन=कामोद्दीपक; 'मदनक' छंदनाम । ५–४२

मदधारी=मद को धारण करनेवाला । ५–२२०

मदन-सर=काम का बाण । ८–१५

मदमदन हरै=कामदेव का गर्व हरण करता है; 'मदनहरा' छंद-नाम । ७–३१

मद लेखो=(मैंने) मद समझा; 'मदलेखा' छंदनाम । ५–८३

मदिरा=मादक पेय; छंदनाम । ११–३

मधु=वसंत; छंदनाम । ५–६

मधु=वसंत । ११–१४

मधुकर=भौंरा (उद्धव) । ५–१४१

मधुभार=मधु (मकरंद, पुष्परस) का भार; छंदनाम । ५–५७

मधुमती=मादक; छंदनाम । ५–५४

मधुरिपु=मधु दैत्य के शत्रु । ६–८

मध्या=वह नायिका जिसमें लज्जा और काम समान हों; छंदनाम । ५–६६

मनमत्थ=मन्मथ, कामदेव । ५–११७

मनमथ=(मन्मथ) कामदेव । ५–२४१

मन-मोटन=मन रूपी मोटों (गठ-रियाँ); 'मोटनक' छंदनाम । १०–५६

मन लीन्हेउ=(मन लेना) मोह लिया, वश में कर लिया । १–३

मन हंस=हंस के मन में; 'मनहंस' छंदनाम । ५–१८५

मनि बाँध्यो=मणि को बाँध लिया है; 'मणिबंध' छंदनाम । ५–१०६

मनिमाला=मणि की माला; 'मणि-माला' छंदनाम । १२–२६

मनी=मणि (लाल और काली) । १२–२७

मनोभव=कामदेव । १०–५५

मनोरमा=मानो लक्ष्मी; छंदनाम । ५–११२

मयूरपखा=मोर के पंख (का मुकुट) । ५–१६०

मरकत=नीलम । ८–१७

मरहट्टबधू=मरहठिन; 'मरहट्टा' छंद-नाम । ५-२२३

मरू करि=कठिनाई से । ११-११

मर्कट=बंदर । ७-४२

मल्लिका=बेला; छंदनाम । १०-३४

महरि=आर्या, यशोदा । ७-४४

महर्ष=महँगा, महार्घ; छंदनाम । ५-१०१

महारी=(महा=अत्यंत, री=अरी); 'हारी' छंदनाम । ५-६०

महालक्ष्मीवंत=अति धनाढ्य; 'महा-लक्ष्मी' छंदनाम । ५-१२६

महि=मध्य मैं । ५-१८

महिआँ=मैं । १२-१०३

मही=पृथ्वी; छंदनाम । ५-१०

मही=छाछ, मट्ठा । १०-२६

महेंद्री=इंद्राणी । १५-२

माघोनी=इंद्राणी । १२-७३

माधवि=माधवी लता; 'माधवी' छंद-नाम । ११-१४

मान=रूठना (नायिकादि का); प्रतिष्ठा । ११-६

मानव को क्रीड़ करे=मानवोचित क्रीड़ा करता है; 'मानवक्रीड़ा' छंदनाम । ५-६१

मानस=मन; मानसरोवर । १०-२८

मानिनि=मान करनेवाली; 'मानिनी' छंदनाम । ११-६

मानु=मान, रूठना । ५-६०

मानुष्य=मनुष्य द्वारा निर्मित । ५-७८

मालति=मालती पुष्प; 'मालती' छंद नाम । १०-२७

मालतियौ=मालती लता भी; 'मालती' छंदनाम । ११-१५

मालती=लता विशेष; छंदनाम । ५-१५१

मालत्ती की माला=मालती (पुष्प) की माला; 'मालतीमाला' छंदनाम । ५-१८६

मालिनी=मालिन; छंदनाम । १२-५३

माहिर=कुशल । ११-१५

मित्त=हे मित्र । ५-७४

मिथ्याबादन=झूठ बोलना । ५-८३

मिलिंद-जाल=भौंरों का समूह । १०-३६

मीचु=मृत्यु । १०-३५

मीचौ=मृत्यु भी । ५-१०६

मुंडमाला धरे=मुंडों की माला धारण किए हुए; 'मालाधर' छंदनाम । १२-६६

मुकुतमाला=मुक्ता की माला; 'माला' छंदनाम । ८-१७

मुक्तअवलि=(मुक्त=मोती, अवलि-पंक्ति) मोतियों का हार । ५-६७

मुक्तद्युति=मोती की चमक । ५-१६२

मुक्तहरा=मोती का हार; छंदनाम । ११-११

मुखग्र=मुखाग्र । ६-३७

मुधा=असत्य, व्यर्थ । १०-५५

मुनि=ऋषि; सात । १२-१०४

मुद्रा=अंग की विशेष स्थिति; छंद-नाम । ५-३४

मुहचंगी=मुँह से बजाने का एक बाजा, मुरचंग । १५-६

मूर=(मूल) असल मैँ । ५–६४
मूसै=मूस लेता है, चुरा लेता है। १०–५६
मृगपति=सिंह । १२–६५
मृगसावकनयनी=मृगछौने के नेत्रोँके से नेत्र वाली । ११–५
मृडानी=पार्वती । १५–२
मेखला=करधनी । ७–६
मेघओघ=बादलोँ का समूह । १०–३५
मेघविस्फूर्जितौ=बादल का गर्जन भी; छंदनाम । १२–६७
मेधा=बुद्धि । १२–७७
मेरुसिखर=पर्वत की चोटी । ५–६७
मैनगर्वहर मुखकोँ=सौंदर्य मैँ कामदेव का गर्व हरण करनेवाले मुँह को; 'हरमुख' छंदनाम । ५–८६
मोतियदाम=मोती की माला; 'मोती-दाम' छंदनाम । १०–४४
मोदक=लड्डू; छंदनाम । १०–४५
मोरै=मोर ही, मयूर ही । ७–२५
मोहनी=मोह लेनेवाली; छंदनाम । ६–३४
म्रीदंगी=मृदंग बाजा । ५–२२६
यई=यही । ११–१२
यक=एक । ५–१२४
यकांता=एकांत । १२–६६
यामै=इसमैँ । ५–१४
रंक=दरिद्र । ५–१७०
रई=अनुरक्त हुई । १२–३
रग्गना=रगण । ५–१८३
रघुनायक=राम; 'नायक' छंदनाम । ५–३६
रघुबीर=रामचंद्र; 'वीर' छंदनाम। ५–२४
रड्ड=नीच, पामर; छंदनाम । ८–२४
रजत=चाँदी । ५–१२३
रजा=राजा । १२–७४
रति लेखो=प्रेम (रति) समझो (लेखो ; रतिलेखा छंदनाम । ५–१६२
रती=रत्ती, थोड़ा । ५–१५१
रत्त=लाल (अधर) । ७–३६
रत्त=रक्त, अनुरक्त । १५–११
रत्ता=रक्त, लाल । ५–१३६
रथुद्धता=रथ से उड़ाई हुई। ५–१३३
रनभास=रगण नगण भगण सगण; रण का संकेत । ५–१३२
रवि=सूर्य; बारह । ५–६५, ८–३
रमनी=स्त्री । ५–१५
रमनी=रमणीय; छंदनाम । ५–१५
रमावै=लीन करे, आनंदित करे। ५–८८
रयनि=(रजनी) रात। ५–१५८
रटै=रटे, जपे । ५–११५
रस=षट् रस; छह । १२–१०४
रस भीजिए=आनंद लीजिए । ३–७
रसाकर=रस की खानि । १२–११०
रसाल=रसीला, मधुर। १०–३२, १२–६२
रसिक=रसवेत्ता; छंदनाम । ८–१३
रागी=अनुरागी, प्रेमी । ५–६४
राजी=पंक्ति । १४–७
राजै=शोभित होता है। ५–६७, २३६

रात=रक्त, लाल । ११–१२, १७
राती=लाल । ५–१३८
रात्यो=रात । ५–१६०
राधहि=राधा को । ५–६५
रिच्छ=भालू । ७–४२
रिपु=शत्रु । २–२५
रीते परचो=खाली पड़े । ३–७
रुक्मवती=सोने की; छंदनाम । १२–३
रुचि=छटा । ५–२३६
रूख रुखी= (रूच्छ + रुख=मुख) रूच्छमुखीत्व । ५–१११
रूप=सौंदर्य । १२–१०६
रूप घन अच्छरी=एरी (सखी शरीर) बादलरूप और आँखें (बाण हैं); 'रूपघनाच्छरी' छंदनाम । १४–८
रूपसेनिका=रूप की सेना; छंदनाम । १०–३२
रूपामाली=रूप (सौंदर्य) माली (है); छंदनाम । ५–१६४
रूरी=बढ़िया । ७–२७
रेखिए=लिखिए । ३–१८
रेखु=रेखो, लिखो, खींचो । २–६
रेनु=(रेणु) धूल । ५–१५२
रेनुरेल गहि है=रगण नगण रगण लघु गुरु ही है; धूल की अधिकता पाएगा । ५–१३३
रेलनि=रेला, प्रवाह, समूह, ढेर । ८–२५
रैनिराज=चंद्र । १२–४३
रोजनि=विषाद । १०–४५
रोजनि=प्रतिदिन । १०–४५
रोन भाग गहि=रगण नगण भगण गुरु गुरु ही; रमणीय भाग्य प्राप्त करो । ५–१३२
रोमराजी=रोमावलि । १४–७
रोमाटोना=रोम के छोर में । ५–२३४
लंक=कमर । ५–२२०
लकुट=लकड़ी, लाठी । ५–१६५
लच्छिये=देखिए; 'लच्छी' छंदनाम । ११–८
लच्मी=विष्णुपत्नी; छंदनाम । ५–१०१
लच्मी धरे=लच्मी को धारण किए हुए; 'लच्मीधर' छंदनाम । १०–४१
लखन=देखने । १२–६६
लग्गिय=लगा । ७–४१
लज्या=लज्जा । ५–६६
लटक=अंगों की मनोहर चेष्टा, लचक । ६–४५
लटेहूँ=दीन हीन होने पर भी । ५–५१
लड़ावती=लाड़-प्यारवाली । १४–५
लती=लता । ५–१५१
लमकारो=लघु तथा मगण । ६–२७
लमलम=लघु-मगण लघु-मगण (।SSS।SSS) । ५–११४
लरिकई=लड़कपन । ५–१२२
ललन=लघु-लघु नगण; लला, नायक । ५–१७७
ललिता=राधा की सखी; छंदनाम । १२–३२

लवढ़ी=लिपटी । ८–१७
लवन्या=लावण्य, लुनाई । १२–५५
लव लाउ=प्रेम कर । ६–३८
लसै=शोभित होती है । ५–१७६
लसै न=सुशोभित नहीं होता । १०–३५
लहुआ=लघु । ३–२
लागी=तक । १२–६१
लाजित=लज्जित । ११–१२
लाल जो हाथ मैं=नायक यदि मुट्ठी में है; 'जोहा' छंदनाम । १०–२४
लावति=लगाती है । ६–८७
लिपि=भाग्य की रेखा । ५–१६५
लीला=क्रीड़ा, खेल; छंदनाम । ५–७७, ५–६६
लीलावती=लीलावाली; छंदनाम । ६–४५
लेस=तनिक, थोड़ा । ५–१६३
लो=लघु । ५–१२०
लोभा=लोभ, लालच । ५–६४
वहै=वही । ५–६५
वाकि=वाक्य, वचन; छंदनाम । ५–३७
वारतहि=न्यौछावर करती हुई । ५–८६
वारि वारि=न्यौछावर कर कर । ६–७
विष्नु=भगवान् विष्णु; छंदनाम । ५–४१
विस्वदेवी=सब देवी; 'विश्वादेवी' छंदनाम । १२-२५
वोढ़िकै=ओढ़कर, अंगीकार कर । ६–१४
वोर=ओर, तरफ । ५–५८, १११
वोस=(अवश्याय) ओस । १५–७
वोहारिणी=(उद्घाटन) खोलनेवाली, बढ़ानेवाली । १२–७६
श्री=लक्ष्मी; छंदनाम । ५–८
श्री=लक्ष्मी । ५–६४
श्रुति=वेद । ५–२७
षटपद=भ्रमर, भौंरा; 'षटपद' (छप्पै) छंदनाम । ७–३६
संखकर=विष्णु । ५–१८८
संखनारी=शंख की मादा, छोटा शंख; 'शंखनारी' छंदनाम । १०–२३
सँग=सगण और गुरु । ५–६३
संगर=युद्ध । ७–२६
सँघाती=साथी, संगी । ६–२६
संजुत=(संयुत) सहित; 'संयुता' छंदनाम । ५–११५
संतरस=शांतरस । ६–६
संतारि दै=पार कर दे, निकाल दे । २–२
संदोह=समूह, झुंड । १२–७७
संपा=बिजली । २–५
संभुप्रिया=पार्वती । ६–२१, २२, २३
संभू=शिव; 'शंभु' छंदनाम । ५–२३६
संमोहा=मोह, ममता, माया; छंद-नाम । ५–६४
सचावति=संचित करवाती है । ७–३४
सचीपति=इंद्र । ७–४४
सचै=संचित करे । ४–२
सठ=(शठ) दुष्ट । ५–३८
सतै=सतीत्व को । १२–४१
सत्ति=सत्य । ७–२६

सदय=दयायुक्त । ५–८६
सन=से । ६–१०
समदबिलासिनी=मदयुत विलास करनेवाली; छंदनाम । ५–१६३
समा=समान । ५–१०
समुद=समुद्र । ५–२२१
समुद्रिका=मुद्रिका (अँगूठी) सहित; छंदनाम । ५–११३
सर=शिर, ऊपर । ४–५
सर=सरोवर, तालाब । ५–७८
सर=बाण । ५–१७४
सर=पाँच । १२–११२
सरघनि=(सरघा) मधुमक्खियाँ । ५–१५१
सर नमैं=सिर झुकाए । १२–११२
सर लहित=सरोवर में लगा हुआ । ७–३६
सरवर=तालाब (नाभि) । ५–१८१
सरसति=बढ़ती । १४–७
सरसी=सरोवरी; छंदनाम । १२–१०६
सरि=पंक्ति । ३–१८
सरि=समान, समता । ५–२३६, १२–१०६
सरिष्यु=सदृश, समान । ८–१६
सरिसा=सदृश, समान । ३–२
सरिसै=सदृश, समान, तुल्य । ३–२२
सरै=संपन्न हो । ५–३५
सरोजनयनी=कमलवत् नेत्रोंवाली । ५–१५२
सर्नु=शरण । १५–१४
सर्बबदनै=सभी मुखों से; 'सर्ववदना' छंदनाम । १२–१०५
सर्वरी=(शर्वरी), रात्रि । १०–५४
सवारु=(शृंगार) सँवारो, सजाओ । ५–१६
सवैया=सबै या (यह सब); छंदनाम । ५–२३०
ससिधर=(शश+धर) चंद्रमा । ५–७१
ससी=शशि; छंदनाम । ५–२०
सहजउ=सहज ही । ५–२३७
सहि=सगण ही । ५–८१
साँचौबोल=सत्य बात; 'चौबोल' छंदनाम । ५–२२८
साँवरो इंदु=श्रीकृष्णचंद्र । १५–१६
साधत्वै=साधुता ही । १२–११५
सायक=बाण; छंदनाम । ६–३०
सारंगिय=सारंगी; छंदनाम । ५–८८
सारंगी=वाद्य विशेष; छंदनाम । ५–२२६
सारंस=(सार+अंश) तत्त्वांश;मक्खन । १०–२६
सारद=शरद ऋतु का । ७–३६
सारसपात=कमलपत्र । ११–१७
सारिका=मैना । ५–२१३
सारी=मैना । ५–२४०
सारु=सार, तत्त्व; छंदनाम । ५–११
सार्दूलबिक्रीड़ितै=क्रीड़ा करते हुए सिंह; 'शार्दूलविक्रीड़ित', छंदनाम । १२–६३
सार्धललिता=ललिता सखी के साथ; छंदनाम । १२–८६
सालिनी=सालनेवाली, पीड़ा करनेवाली; छंदनाम । १२–५
साली=चुभी हुई; छंदनाम । १२-१६

सालूरँग=लाल साड़ी; 'सालूर' छंद-नाम । ५–२३६
साहि=सगण ही; शाह (राजा)। ५–१७२
सिंजित=करधनी । ७–३४
सिंह बिलोकित=सिंह अवलोकित; 'सिंहविलोकित' छंदनाम । ७–३५
सिंहिनी=शेरनी; छंदनाम । ८–८
सिखरिनी=श्रेष्ठ नारी; 'शिखरिणी' छंदनाम । १२–७१
सिख्या=शिखा, ललाट, भाल; छंद-नाम । ५–१०६
सिगरे=सब, सभी । १२–६५
सित=श्वेत, उज्ज्वल । ६–६
सितलाई=शीतलता, ठंढक । ५–१४३
सितासित=उजली और काली । ११–१२
सिपाह=सिपाही । ५–१७४
सियरैहै=शीतल होगा । १०–५१
सिरान=(सिराना) समाप्त हो गया । ५–२३०
सिलीमुख=भौंरा; बाण । ११–६
सिष्यु=सीखो; 'शिष्या' छंदनाम । ८–१६
सिसिकिन=सी सी (सीत्कार) की ध्वनि । ७–३४
सीतकर=चंद्रमा । ६–६
सीताबरै=सीतापति (श्रीरामचंद्र)। १०–१६
सीते=शीत मैं, ठंढे मैं । १२–५६
सीरी=शीतल । १२–२६
सीरो=शीतल । १२–१०३
सीवा=सीमा । १०–२३
सीसहि सीस=केवल ऊपर । ३–८
सुंडादंड=सूँड़ । १–२
सुंडाल=हाथी । १२–६५
सुंदर=सौंदर्ययुक्त; छंदनाम । १३–१३
सुंदरि=(सुंदरी) सुंदर स्त्री; 'सुंदरी' छंदनाम । ५–२४३
सुंदरी=सुंदर स्त्री; छंदनाम । १२–१८
सु=से, मैं । ३–८
सुआतुंडै=सुग्गे का ठोर । १२–५५
सुकृति=पुण्यकर्म (से) । ५–६८
सुकेसि=सुंदर बालों वाली । ११–५
सुक्र=शुक्र । ५–२२८
सुछिप्र मानि कामिनी=हे कामिनी अति शीघ्र मान जाओ; 'प्रमाणिका' छंदनाम । १०–३७
सुखारी=सुखी, आनंदित । ५–६०
सु गंधावली=अच्छी गंध का समूह; 'गंधा' छंदनाम । १४–५
सुघर=चतुर । ६–५
सुठौनि=सुंदर मुद्रा (अदा) वाली । ११–५
सुत=पुत्र । ८–२४
सुदि=सुदी, शुक्ल पक्ष । ७–३०
सुदेश=सुंदर । १०–३१
सुधा=अमृत; छंदनाम । १२–१०३
सुधाधर=चंद्रमा । १४–८
सुधाबुंदै=अमृत की बूँदें; 'सुधाबुंद' छंदनाम । १२–६१
सुधासार=अमृततत्त्व । १–२

सुद्ध गावै=शुद्ध (गाना) गा; 'शुद्धगा' छंदनाम। ५–११६, ६–४३
सुबिचित्र=अति विचित्र; 'चित्र' छंदनाम। ६–३
सुबृत्ती=(सुवृत्त+ई)सुंदर गोलाई वाले; सदाचारी; छंदनाम। ५–१०७
सुभगति=सद्‌गति; छंदनाम। ५–४४
सुभगीत=मंगलगान; 'शुभगीता' छंदनाम। ६–३६
सुमुखि=सुंदर मुखवाली। ५–१०७
सुमुखी=सुंदर मुखवाली; छंदनाम। ५–१११
सुरंग=लाल। १२–१०६
सुर=स्वर। ५–१६२
सुरत=रति। ७–३४
सुर तरुनि=देवी। ६–६
सुरति=ध्यान, स्मरण; 'रतिपद' छंदनाम। ५–७२
सुरनि=स्वरों से। ५–८८
सुरपतिसुत=इंद्र का पुत्र, जयंत। ७–२२
सुरभि=गंध। ५–५४
सुरसा=नागमाता जिसने समुद्र पार करते हनुमान् को रोका था; छंदनाम। १२–१०१
सुरूपमाला=स्वरूप की माला को; 'रूपमाला' छंदनाम। ६–३६
सुरूपी=स्वरूपी; छंदनाम। ५–११८
सुलगन जुत्ता=शुभ लग्नयुक्त। ५–५२
सुश्रोनि=सुंदर कमरवाली। ११–५
सुषमा=अति शोभा; छंदनाम। ५–१३७
सुसैनी=अच्छे संकेतों वाली। ११–५
सुसोभधर=अच्छी शोभा धारण करनेवाला। ७–३६
सू=सो। ५–१६०
सूची=तालिका, बतानेवाली। ३–२७
सून=शून्य। ३–२४
सूर=(शूर) वीर, बली; छंदनाम। ५–६४
सूरो=(शूर) बली, पराक्रमी। ५–१२६
सृंगीधारो=विषाण बजानेवाले, श्रीकृष्ण। ५–१३५
सेंति=बिना मूल्य के। ५–१६१
सेइकै=सेवा करके। १२–२५
सेत=श्वेत। ५–२४१
सेल=बरछी। १२–१६
सेवाइ=(सिवा) अतिरिक्त। १०–१५
सेवार=(शैवाल) पानी में होनेवाली घास। १०–३१
सेषा=नाग; छंदनाम। ५–८२
सैन=सेना। ५–१८४
सैवै=सेवा करता है, रहता है। ६–४
सैहै=सहेगी। १२–५६
सो=से। ५–६५
सो=वह। १०–१७
सोतो=स्रोत, धारा। १२–१०३
सोर ठानि (है)=शोर मचाएगी; 'सोरठा' छंदनाम। ७–६
सोहागै=सौभाग्य ही। १२–२५
सौदामिनी=बिजली। ५–२३६
स्मरै=कामदेव को। ११–७
स्यौं=सहित। १२–६५
स्रग्धरे=माला धारण किए हुए;

'स्रग्धरा' छंदनाम। १२–१०७
स्लोक=कीर्ति; छंदनाम। १४–३
स्वसन=श्वास, साँस। १२–११५
स्वाँग=बनावटी वेश। ५–१४३
हंस=पक्षी विशेष; छंदनाम। ५–५१
हंसगति=हंस उसकी चाल सीखता हुआ; छंदनाम। ५–१७३
हंसमाला=हंसों की पंक्ति; छंदनाम। ५–७८
हंसी=हंसिनी; छंदनाम। ५–१२२ ५–२३७
हर=हरण करते हैं। १०–२८
हरनीन=हीरणियाँ; 'हरिणी' छंदनाम। १२–७५
हरहि=हर लो; 'हर' छंदनाम। ५–४०
हराएई=पराजित किए हुए ही। १२–७१
हरि=विष्णु भगवान्; छंदनाम। ५–१८
हरि=श्रीकृष्ण; 'हरिणी' छंदनाम। ५–१२५
हरिगीत=ईश्वर का गुणगान; छंदनाम। ६–४०
हरिजनहि=भगवान् के दास को। ५–२७
हरि न लुत्त=हे कृष्ण (कुलमर्यादा का लोप न (करो); 'हरिणलुत्त' छंदनाम। १३–६
हरिपद=विष्णु के चरण; छंदनाम। ५–२१६
हरिप्रिया=लक्ष्मी; छंदनाम। ६–२१, २२, २३
हरिमुख=श्रीकृष्ण का मुख; छंदनाम। १२–३५
हरुअ=(लघुक?) हलका (फूल होने से)। ८–१५
हरै=शिव को। ५–२५
हायल=मूर्च्छित, शिथिल। ६–३२
हारा=गुरु (ऽ)। ५–२३२
हाल=तुरंत। १०–३६
हित=मित्र। २–२५
हित=कल्याणकारी बात। ५–१५६
हिमाद्रितनया=हिमालयपुत्री, पार्वती; 'अद्रितनया' छंदनाम। १२–११३
हिया=हृदय। ५–२१
ही=हृदय। ५–१३६, १६४, १२–७५
हीरक=हीरा; छंदनाम। ५–२००
हीरकी=हीरे की; छंदनाम। ६–६
हीरवरहार=हीरे का श्रेष्ठ हार। ६–६
हुअ=हुआ। ५–५७
हुजियत=होते हो। ५–५३
हुटे=मुड़ गए, पीठ फेर दी। १०–४०
हुतभुक=आग। ५–२३६
हुतासन=अग्नि। ५–५३
हुति=थी। ५–१२३
हुतेउ=था। ५–१२३
हुलास=(उल्लास) उमंग; छंदनाम। ७–४४
हेट्ठाणे–अधःस्थाने, नीचे। ३–२
हैहयसहस=सहस्रार्जुन। ५–२१४
ह्याँ=यहाँ। ११–१०
ह्यौ=हृदय। ११–१०

———